क ।म ।ले ।श ।व ।र

क क क
क क
क

क क

क क

कमलेश्वर

सम्पादक मधुकर सिंह

भूमिका

पिछले दिनों 'इनक्रेजिंग एक्सलेंस' के भारतीय केन्द्र की ओर से कमलेश्वर का सम्मान करते हुए सनद म कहा गया था 'हिंदी म युवा लखकों के हृदय म आपके लिए वही प्यार और आदर है जो प्यार और आदर रूस के युवा लखकों म मक्सिम गार्की के प्रति था।' इनके रचनात्मक व्यक्तित्व और इनके मानवीय व्यवहार मे अपूर्व सामजस्य है। किसी भी रचनाकार के लिए यही क्षमता उसके लखन के लिए स्थायी ऊर्जा होनी है। कमलेश्वर की रचनाएँ प्रगतिशील लेखन के भीतर के तात्कालिक सवालो से ही निर्देशित होनी हैं। एक लेखक के लिए रचना और व्यक्तित्व का रिश्ता बडा ही अतरग होता है। फलस्वरूप कमलेश्वर एक सश्लिष्ट (composite) चरित्र का ही नाम है। इन्होने लिखने के लिए विषय वस्तु सीधे जन-जीवन के अनुभवो स ली है। मक्सिम गार्की कहते हैं 'मेरे लिए आदमी से बाहर कोइ भी भाव या विचार अपना अस्तित्व नही रखते। मनुष्य ही सारी वस्तुओ, समस्त भावो और समस्त विचारों का स्रष्टा है वही प्रकृति की सम्पूर्ण शक्तियो का भावी स्वामी है। ससार मे जो कुछ भी सुदर और श्रेष्ठ है वह सब मानव-श्रम की उपज है श्रम की समस्त प्रक्रिया ही समस्त भावो और विचारो का उद्गम है। कला विज्ञान और शिल्प का समस्त इतिहास हम उक्त तथ्यो के प्रति आश्वस्त करता है। मैं इस मनुष्य के प्रति पूरी तरह समर्पित हूँ। यह ससार उसी की कल्पना उसी के विवेक और उसी के अनुमान का भूत रूप है। स्वत ईश्वर भी उसी के मानस का आविष्कार है। कमलेश्वर न अपनी रचना और वैचारिकता को प्रेमचद और गोर्की के विचारों के आलोक म ही परिष्कृत किया है तथा आदमी और साहित्य का एक-दूसरे का पर्याय मानकर अपनी साहित्य यात्रा की शुरुआत की है। समकालीन कथा चेतना को एक सार्थक मोड देनेवाले रचनाकारो म यह एक ऐसा नाम है जिसने कहानी के माध्यम स आदमी की जाग्रत चेतना और समय की सच्चाई को पहचानकर रेखाकित किया है। कमलेश्वर की दृष्टि म लखक आदमी और 'समय की चिताओं' के साथ ही सम्बद्ध होता है तथा "कहानी निरतर परिवर्तित होती रहनेवाली एक निर्णय केंद्रित प्रक्रिया है।

पिछले पच्चीस वर्ष इस बात के प्रमाण है कि कमलेश्वर अपनी रचनात्मक क्षमता और जनसामान्य के साथ घुले मिले रहने के कारण किस प्रकार सम्पूर्ण कथा साहित्य के लिए एक अनिवार्य ताकत बन गये हैं। अनुभव जब वस्तु रूपान्तरित होते है तब रचना का आकार ग्रहण करते हैं। मात्र विचारो में उलझे रहने से लेखकीय भूमिका स्पष्ट नही होती। इसके लिए संगठन और सहचिन्तन जरूरी होता है। इधर कमलेश्वर ने मार्क्सवादी चिन्तन धारा के तहत वस्तु जगत की पहचान स्थिर करते हुए भारतीय कहानी को तेजी के साथ केन्द्रीय विधा के रूप मे प्रतिष्ठित करने का काम किया है। ये मानते है कि "इधर की रचनाओ मे निश्चित रूप से कही न कही गाधीवाद की ट्रस्टीशिप थ्योरी को बिलकुल रिजेक्ट कर दिया गया है। यह बात बिलकुल साफ है कि मार्क्सवादी सिद्धान्तो के आधार पर और इतिहास में उसके कारण खोजने के बाद ही कहानी एक नये समाज की रचना के लिए संघर्षरत है।' एक सही और ईमानदार रचनाकार की तरह कमलेश्वर हमेशा इतिहास की प्रगतिशील वैचारिकता के साथ अपने को सशोधित, परिवर्तित कर गलत पडते जा रहे अशो को छोडते और नकारते हुए, सच्चाई को लगातार स्वीकार करते रहे हैं। यही कारण है कि ये समकालीन रचनाकारो के बीच हमेशा ताजा और नये हैं। सच पूछिए तो कहानी को केन्द्रीय माध्यम रखने के कारण भी कमलेश्वर को सगत विसगत स्थितियो से गुजरना पडा है। यही कारण है कि वैचारिक स्तर पर कम, वयक्तिक स्तर पर ज्यादा कमलेश्वर के विरोधी रहे है। अधिकाश की आँखें इसलिए भी फटी रही हैं कि कमलेश्वर पूंजीवादी संस्थान मे काम करता है और मार्क्सवादी चिंतनधारा से जुडकर नयी कहानी से लेकर समातर कहानी तक—प्रगतिशील ताकतो का लगातार रेखांकित करते हुए कमलेश्वर कहानी का पर्याय बन गया है। यह इसका ढोग नही तो और क्या है? लेकिन तब आश्चर्य इस बात पर भी है कि कमलेश्वर फिर समकालीन लेखको के केन्द्र मे कैसे हैं? कमलेश्वर की केन्द्रीयता तोडने के लिए दर्जनो कोशिशें और साजिशें चालू है, क्योकि रचना के स्तर पर जनेन्द्र अज्ञेय की व्यक्तिवादी धारणा और मुद्राओ से ही कमलेश्वर नही लडे है—वाम पथी अमूर्तताओ और भटकाव के कारण अतिवादियो की वैयक्तिक आकाक्षाओ, कुठाओ को भी कमलेश्वर ने नगा किया है। कमलेश्वर के लिए कहानिया मूलत असहमति का माध्यम हैं। इस असहमति के स्तर और क्षेत्र क्या रहे हैं इसका सही बयान इनकी कहानियाँ ही खुद देती हैं। वे कहते है जब से अपने चारों तरफ की दुनिया की ओर देखना शुरू किया तो पाया कही कुछ भी बदल नही रहा था। इसलिए मुझे बदलना पडा। मुझे मेरे चारो ओर के कटु यथार्थ ने बदल दिया। दसवां पास करते-करते क्रान्तिकारी समाजवादी पार्टी के सम्पर्क मे आया, मार्क्सवाद की सक्रिय पाठशाला मे शामिल हुआ और जनक्रान्ति मे

शहीदा व जीवन-चरित्र पर छोटे छोटे लेख लिखन शुरू किये। वहीं से शायद लेखन की विधिवत् दीक्षा मिली, और उसी म अपन निणय जुडते गय। यानी कहानियाँ 'निणया' का पर्याय बनती गयी। मरे लिए कहानियाँ समय की धुरी पर घूमती सामान्य सच्चाइया के प्रति और पक्ष मे लिय गये निणयो की कहानियाँ हैं। कुछ लोगो की ओर स कमलेश्वर की कहानिया म डायरेक्टनस' के अभाव की शिकायत है। मगर कमलेश्वर अपनी सहज एप्रोच और निणयों के साथ प्रतिबद्धता के कारण स्पष्ट और खुल भी रह हैं और पाठक सहज ही उनके दृष्टि-कोण और नीयत की ईमानदारी से जुडता चला जाता है। सभवत बयान' कहानी उसकी वास्तविकता भी है, क्योकि "सिवा मेरी जिन्दगी के—और जवाब मेरे पास नही है। जो कुछ भी है वह मरी जिन्दगी म ही बिखरा हुआ है। अब मुझे छिपाना क्या है? किसके लिए और क्यो?" कमलेश्वर तो यहा तक कहत हैं कि अपनी बात कहने के लिए पैम्फलेट भी लिखना पडे तो भी हम लिखने के लिए तैयार हैं—आप हमारी रचना को कहानी, नाटक उपन्यास कविता पम्फलेट जो चाहे कह लें, लेकिन पाजिटिव दृष्टि और यथास्थिति को ध्वस्त करन क लिए हम कुछ भी लिखने को तैयार हैं। हमारे देश में धम पथ चातुवण्य पर आधारित जातिव्यवस्था है, वह श्रम और श्रमिको का बँटवारा ही नही करती, इनके प्रति घृणा और नफरत का वातावरण भी बनाये रखती है। भारतीय सामतों के लिए यह व्यवस्था सबसे बडा कवच है। पुराणपथी आध्यात्मिक और पुरोहितवादी इन अवधारणाओं की क्रूरता के खिलाफ कमलेश्वर ने आवाज उठायी कि मनुष्य से परे साहित्य का कोई अस्तित्व नही है। पूँजीवादी अथ व्यवस्था दिन प्रति दिन नयी-नयी साजिशो और चमत्कारो और नाबालिग भगवानों (बालयोगेश्वरों, भगवान रजनीशा सतोषी माताओ आदि) को जन्म देती रही है। कुछ साल पूव दलित पथम के जो एक खास ढग पर आन्दालन शुरू हुए थे उनम प्रतिक्रियावादी भारतीय शक्तियो की साजिशा के फलस्वरूप वणवादी स्वरूप ग्रहण कर लने का खतरा था। तभी मराठी दलित साहित्य के जागरूक लखको बाबुराव बागूल प्र० श्री० नरहकर दया पवार आदि के साथ मिलकर कमलेश्वर ने मराठी दलित साहित्य को मार्क्सवादी चिन्तनधारा से जोडन म अपनी जनवादी चेतना का ही परिचय दिया है। दलित और समानर लेखको का संयुक्त घोषणा पत्र कहता है—'हम विविध भारतीय भाषाओं क समकालीन लखक साहित्य का सौन्दयवादी कलावादी या अमूर्त मानवतावादी बुद्धि के विलास का माध्यम न मानकर व्यापक मानव मुक्ति के लिए सही मानसिकता निर्माण का एक कारगर जरिया मानते हुए वग सघष के इतिहास-सम्मत निणय को अगीकार कर लना जरूरी समझते हैं। इसलिए हम सौन्दयवादी, कलावादी, अमूर्त मानवतावादी और बुद्धि विलासी साहित्य को नकारकर दलित, वचित, शोषित, बाधित, और

अपमानित सर्वहारा वर्ग-संघर्ष में रचनात्मक भूमिका अदा करने वाले समय सापेक्ष साहित्य को अपना मूलाधार मानते हैं।

कमलेश्वर ने औरों से अपेक्षाकृत कम कहानियाँ नहीं लिखी हैं, परन्तु उपन्यास की तुलना में कहानियों के साथ उनका यह अदम्य विश्वास काम करता है कि कहानी इस वक्त ज्यादा कारगर जरिया है जो संघर्षरत शोषित पीड़ित जन की आकांक्षाओं का सही प्रतिनिधित्व करती है। इन कहानियों में वैचारिक संघर्ष प्रेमचन्द से ही विरासत में मिला है। सन् १९३६ में जब लखनऊ में प्रगतिशील लेखक संघ का पहला अधिवेशन हुआ था तब अध्यक्ष पद से प्रेमचन्द ने साहित्य के अन्तर्गत वैचारिक संघर्ष को पहली बार रेखांकित किया था 'हमारे लिए कविता के वे भाव निरर्थक हैं जिनसे संसार की नश्वरता का आधिपत्य हमारे हृदय पर और दृढ़ हो जाय जिनसे हमारे हृदय पर नैराश्य छा जाय। हम उस कला की आवश्यकता है जिसमें कर्म का संदेश हो। अतः हमारे पथ में अहंवाद अथवा अपने व्यक्तिगत दृष्टिकोण को प्रधानता देना वह वस्तु है जो हमें जड़ता, पतन और लापरवाही की ओर ले जाती है और ऐसी कला की आवश्यकता हमारे लिए न व्यक्ति रूप में उपयोगी है न समुदाय रूप में। प्रेमचन्द की अधिकांश रचनाएँ इसे सिद्ध करती हैं कि वे किस प्रकार अवास्तव और आध्यात्मिकता को छोड़कर समाज के संघर्ष को वाणी दे रहे थे। कमलेश्वर ने मुझे एक पत्र में लिखा था, यही हमारे लेखन के आदर्श हैं। नूतन स्थितियों और तमाम विषमताओं के खिलाफ हम इसी आलोक में अपनी रचनाओं के अन्तर्गत संघर्ष जारी रख सकते हैं। प्रेमचन्द आज भी हमारे लिए बहुत बड़ी ताकत है

कमलेश्वर की पहले दौर की कहानियों में 'सीखचें' 'मुर्दों की दुनिया' 'आत्मा की आवाज़', 'राजा निरबंसिया' 'देवा की माँ' 'भटके हुए लोग', 'कस्बे का आदमी' 'गर्मियों के दिन' 'एक अश्लील कहानी' 'अकाल' 'पीला गुलाब' आदि कहानियाँ है जो ५२ से ५६ के बीच मैनपुरी में और इलाहाबाद में लिखी गयी है। इन कहानियों का मुख्य स्वर परम्परागत आदर्शो और पिछड़े मूल्यों के प्रति घोर असहमति का स्वर है। दरअसल स्थितियाँ अथवा वस्तुजगत ही किसी भी रचना के कारण बनते हैं और रचनाकार समय की धार पर अपने निर्णित संकल्प की रक्षा के लिए लिखता है। 'नई कहानियाँ' के सम्पादन-काल में अथवा उसके दूर-पास में लिखी गयी 'जार्ज पंचम की नाक' 'दिल्ली में एक मौत' 'खोयी हुई दिशाएँ' 'पराया शहर' 'एक रुकी हुई जिन्दगी' 'तलाश' 'दुखभरी दुनिया', 'जो लिखा नहीं जाता' 'एक थी विमला' 'अपने देश के लोग' 'मांस का दरिया' 'युद्ध' इत्यादि कहानियाँ उस दौर की कहानियाँ हैं जबकि हिन्दी में ढेर ही कहानियों के समानान्तर निहायत वैयक्तिकता कुंठा, मानसिक विलास पराजय और जिन्दगी के निर्णयों से अलग और तटस्थ बहुत सारी कहानियाँ लिखी जा रही थी। सन्

६५ ६६ के आस पास सोचने समझने के ढग म बदलाव जरूर आया है। देश म बढती हुइ अशिक्षा, गरीबी, वगभेद, साम्प्रदायिकता धर्मांधता और भ्रष्ट शिक्षा प्रणाली के कारण आम आदमी की लडाई म भी तेजी आती गयी। फलस्वरूप कहानी भी आम आदमी की उस जुझारू चेतना से सीधे जुडती चली गयी और सामूहिकता ही कहानी की सच्ची विषय-वस्तु बन गयी। कमलेश्वर की इस दौर की कुछ कहानिया— या कुछ और', 'नागमणि' 'लडाई', 'बयान', जोखिम 'रातें लाश में, अपना एकान्त', कितने पाकिस्तान आधी दुनिया मानसरोवर के हस साँप इतने अच्छे दिन परिवेश-जीवी, व्यक्ति के दारुण और विसगत सदर्भों को समय के परिप्रेक्ष्य म समझने' और यातनाओ के जगल से गुजरते हुए मनुष्य के साथ और समातर चलने की कहानिया हैं।

खोयी हुई दिशाएँ बयान शर्तें लडाई' 'जोखिम', आज पचम की नाव', लाश 'मानसरोवर के हस ,'साप , इतने अच्छे दिन' आदि कहानिया पूजीवादी व्यवस्था और उसके अन्तगत सामाजिक-आर्थिक दबावो से टकराहट की कहानिया हैं। यह तो सच है ही कि पूजीवाद की तपिश ने तमाम प्रगतिशील लेखको को तिल मिलाया है और लेखक भी अपनी वर्गीय चेतना के साथ व्यवस्था पर लगातार चोटें करता जा रहा है। ऐसे जागरूक और सही लेखकों के सामने भाषा और शिल्प का कोई सवाल नही होता। लेखन हमेशा अपनी परिवेशगत सजगता मे ही व्यक्त होता है। लेखक स्थितिया और क्रूर यथार्थताओ के प्रति अपने रुख स स्पष्ट होता है। तभी तो कमलेश्वर भी सोचते है कि इस व्यवस्था की अनिवाय स्थितियो म जीने के लिए मजबूर मनुष्य ही उसकी अनिवार्यता को तोडने के लिए कटिबद्ध होता है। जो यह कहते है कि वे इस व्यवस्था म नही हैं या उसके अग नही हैं उनका यह कहना सरासर साहसहीनता है और छल से भरा हुआ एक वक्तव्य है। इन्हें साहस के साथ कहना चाहिए कि वे आम आदमी की तरह ही व्यवस्था के अग बनने के लिए मजबूर हैं पर वे इस मजबूरी को तोडने के लिए प्रतिबद्ध और सक्रिय हैं।' यह सही है कि बयान' कमलेश्वर का ही अपना बयान है जिसे वे भी स्वीकार करते हैं। यह व्यवस्था आदमी को अकेला होने के लिए क्रूर यातनाएँ देती है और फोटोग्राफर जैसे व्यक्तित्व को अधिकार सुख से अभिभूत गलत आदमी की जिन्दगी जीते हुए यथास्थिति के दलाल के रूप मे एक झटका देता है 'फसना कुछ तो होगा ही। और वह व्यक्ति के खिलाफ ही हो सकता है। जो व्यक्ति माने अकेला आदमी जसी अकेली मैं या आप या आप । परन्तु पूजीवाद बराबर इस व्यक्ति का अपमानित या शासित करता रहा है और तीन पीढिया तक ('रातें) के अस्तित्व को पूंजी से कुचलता रहा है। विश्व की अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाएँ होती हैं—भारतीय स्वाधीनता सग्राम जालियाँवाला बाग १९३४ का भूकम्प विश्व-युद्ध, बांडुग सम्मेलन, पचशील, अणुबम परीक्षण, भारत चीन लडाई, वियतनाम

म अमरीकी दमन—मगर पूँजीपति मगननाल छगनलाल दाम्वाला एक के बाद एक भरी-पूरी रातें खरीदता हुआ व्यक्ति और आम आदमी के अस्तित्व का विनाश कर रहा है। यानी भारतीय स्वाधीनता के बाद पूँजीवाद लगातार इस देश म मजबूत होता रहा है। मक्सिम गोर्की ने कहा था कि सबो की खुशहाली के लिए हम कुछ स नफरत करनी चाहिए। कमलेश्वर न भी नफरत की है—पूँजीवाद से नफरत की है। कुछ लाग कहत हैं कि प्रेमचन्द की कहानियो से जो वैचारिक सघर्ष की शुरुआत हुई उसकी एतिहासिक पहचान कफन म हुई थी और कमलेश्वर की कहानी इतने अच्छे दिन उसी पहचान को स्थिर करती हुई युगबोध की परम्परा की अगली कडी है। यह कहानी सामान्य आदमी की यातना पूर्ण जिन्दगी को ताडती है और चेतना के स्तर पर उस नये आदमी स जोडती है जो सम्पूर्ण पूँजीवादी ढाचे के खिलाफ सघर्ष करता है। मिसाल के तौर पर कहानी की आखिरी पंक्तियाँ— वह अपने गालो को रगडने लगी तो बाला ने देखा उसके बायें गाल की साँवली चमडी पर खून की सूखी बूद चिपकी हुई थी। वह उस पर उगली फिरान लगी तो बाला ने पूछा—क्या हुआ ? उस साल लाला ने फिर काटा इतने जार से ? नहीं कमली न मामूली तरह से कहा उसका वो एक दात मोने का है न, वही गड जाता है। कहते कहते वह ट्यूबवेल की तरफ मुह धोने के लिए चली गयी।

कुछ नये आलोचक यह मानते है कि कमलेश्वर भी प्रेमचन्द की तरह पैदाइशी किस्सागो है। परन्तु इतना तो तय है कि कमलेश्वर ने कहानी का सह चिंतन का विषय बनाया है तथा कहानी की कहानीगत सौन्दयवादी साहित्य शास्त्रीय आध्यात्मिक और भाववादी अवधारणाओ स मुक्ति के लिए निरन्तर सघर्ष किया है। उनके लिए 'कलाओ के विकास का आधार ही सामाजिक *साम्बन्धिक अस्तित्व है। यदि यह अस्तित्व उनसे निरपेक्ष होता तो केवल* अन्तर्विरोधो म जी सकना ही सभव होता। जो निरपेक्ष है वे उन अन्तर्विरोधो म मतक की तरह ही जी रह है अपने सलीब कधो पर उठाए हुए कब्रिस्तान की ओर उन्मुख हैं। यहाँ रहते हुए मौत को छलना मेरा काम है और इस काम म सारी दुनिया मेरा हाथ बँटा रही है—बौद्धिक सामाजिक वैज्ञानिक, यान्त्रिक आदि स्तरो पर। जो मेरे लिए किसी भी रूप म मौत पैदा करता है वह तत्त्व अमित्र है। इसीलिए मेरी उससे सहमति नही है और उसका प्रतिवाद करते रहना मेरा धर्म है।

आखिर म मुझे मात्र इतना ही कहना है कि मैंने यह सब जो कुछ भी किया है वह मेरे भीतर कमलेश्वर के प्रति आदर और प्यार का ही व्यावहारिक पक्ष है—कमलेश्वर का अभिनन्दन या प्रशस्ति अगर लक्ष्य होता तो बडा ही दूषित लक्ष्य होता। मेरे प्यार और विश्वास को आप तमाम पाठकों का प्यार और विश्वास

मिले—इसी म मेरे इम श्रम की साथकता भी है। बडे भाई जवाहर चौधरी ने मर श्रम और प्यार का साकार रखने क लिए यह जा भारी बोझ उठाया है इसक लिए मैं आभार ता व्यक्त नही कर सकता, मगर इतना तो जानता हूँ कि मेरा और उनका सम्बन्ध दो मजदूरो के अन्तरग रिश्त का ही प्रतीक है।

१५ जलाई, १९७७ मधुकर सिंह

खण्ड-क्रम

अनुक्रम

खण्ड १

कहानियाँ : कमलेश्वर

राजा निरबसिया

'एक राजा निरबसिया थे " माँ कहानी सुनाया करती थी। उनके आस-पास ही चार-पाच बच्चे अपनी मुट्ठियो म फूल दबाये कहानी समाप्त होने पर गौरो पर चढाने के लिए उत्सुक से बैठ जाते थे। आटे का सु दर सा चौक पुरा हाता उसी चौक पर मिट्टी की छै गौरें रखी जाती जिनम स ऊपरवाली के बिंदिया और सिंदूर लगता बाकी पाँचो नीचे दबी पूजा ग्रहण करती रहती। एक ओर दीपक की बाती स्थिर-सी जलती रहती और मगल घट रखा रहता जिस पर रोली से सथिया बनाया जाता। सभी बठे बच्चो के मुख पर फूल चढाने की उतावली की जगह कहानी सुनन की सहज स्थिरता उभर आती।

"एक राजा निरबसिया थे,' माँ कहानी सुनाया करती थी, 'उनके राज म बडी खुशहाली थी। सब वरण के लोग अपना-अपना काम काज देखते थे। कोई दुखी नही दिखायी पडता था। राजा के एक लक्ष्मी-सी रानी थी च द्रमा सी सु दर और और राजा का बहुत प्यारी। राजा राजकाज देखते और सुख से रानी के साथ महल म रहते "

मेरे सामन मेरे खयालों का राजा था राजा जगपती! तब जगपती से मेरी दाँतकटी दोस्ती थी, दोनो मिडिल स्कूल म पढने जाते। दोनो एक से घर के थे इसलिए बराबरी की निभती थी। मैं मट्रिक पास करके एक स्कूल म नौकर हो गया और जगपती कस्बे के ही वकील के यहा मुहर्रिर। जिस साल जगपती मुहर्रिर हुआ उसी वप पास के गाँव म उसकी शादी हुई पर ऐसी हुई कि लागा ने तमाशा बना देना चाहा। लडकीवालो का यह विश्वास था कि शादी के बाद लडकी की बिदा नही हागी। ब्याह हो जायगा और सातवी भाँवर तब पडेगी जब पहली बिदा की सायत होगी और तभी लडकी अपनी ससुराल जायगी। जगपती की पत्नी थोडी-बहुत पढी लिखी थी, पर घर की लीक का कौन मटे। बारात बिना बहू के वापस आ गयी और लडकेवाला ने तै कर लिया कि अब जगपती की शादी

कही और कर दी जायगी चाहे कानी लूली से हो, पर वह लडकी अब घर मे नही आयगी। लेकिन साल खत्म होते-होते सब ठीक ठाक हो गया। लडकीवालो न माफी माग ली और जगपती की पत्नी अपनी ससुराल म आ ही गयी।

जगपती को जैसे सब कुछ मिल गया और सास ने बहू की बलइया लेकर घर की सब चाबियाँ सौंप दी गृहस्थी का ढग चार समझा दिया। जगपती की मा न जाने कब से आस लगाये बैठी थी। उन्होने आराम की साँस ली। पूजा पाठ म समय कटने लगा दोपहरिया दूसरे घरो के आगन म बीतने लगी। पर सास का रोग था उन्ह, सो एक दिन उन्होने अपनी अतिम घडियाँ गिनते हुए चन्दा को पास बुलाकर समझाया था—'बेटा जगपती बडे लाड प्यार का पाला है। जब से तुम्हारे ससुर नही रह, तब से इसके छोटे छोटे हठ का पूरा करती रही हूँ अब तुम ध्यान रखना।' फिर रुककर उन्हान कहा था, जगपती किसी लायक हुआ है तो रिश्तदारो की आँखो मे करकने लगा है। तुम्हारे बाप ने ब्याह के वक्त नादानी की जो तुम्ह विदा नही किया। मेरे दुश्मन देवर जेठा को मौका मिल गया। तूमार खडा कर दिया कि अब विदा करवाना नाक कटवाना है। जगपती का ब्याह क्या हुआ उन लोगो की छाती पर साप लोट गया। सोचा घर की इज्जत रखने की आड लेकर रग म भग कर दें। अब बेटा इस घर की लाज तुम्हारी लाज है। आज जो तुम्हारे ससुर होते तो भला ' कहते कहत मा की आखो म आसू आ गये और वह जगपती की देख भाल उसे सौंपकर सदा के लिए मौन हो गयी थी।

एक अरमान उनके साथ ही चला गया कि जगपती की सतान को चार बरस इन्तजार करने के बाद भी वह गोद म न खिला पायी। और चन्दा न मन म सब्र कर लिया था यही सोचकर कि कुल देवता का अश ता उसे जीवन भर पूजने को मिल गया था। घर मे चारा तरफ जसे उदारता बिखरी रहती अपनापा बरसता रहता। उसे लगता जसे घर की अधेरी एकान्त कोठरियो मे वह शात शीतलता है जो उसे भरमा लेती है। घर की सब कुडियो की खनक उसके काना मे बस गयी थी हर दरवाजे की चरमराहट पहचान बन गयी थी।

'एक रोज राजा आखेट को गये," माँ सुनाती थी, 'राजा आखेट को जात थे ता सातवें रोज जरूर महल म लौट आते थे। पर उस दफा जब गय तो सातवाँ दिन निकल गया पर राजा नही लौटे। रानी को बडी चिन्ता हुई। रानी एक मत्री को साथ म लेकर खोज मे निकली '

और इसी बीच जगपती को रिश्तदारी की एक शादी म जाना पडा। उसके दूर के रिश्ते के भाइ दयाराम की शादी थी। कह गया था कि दसवें दिन जरूर

वापस आ जायगा। पर छठे दिन ही खबर मिली कि बारात घर लौटने पर दयाराम के घर डाका पड गया। किसी मुखबिर ने सारी खबरें पहुँचा दी थी कि लडकीवालो ने दयाराम का घर सोने-चादी से पाट दिया है आखिर पुश्तनी ज़मीदार की इकलौती लडकी थी। घर आये मेहमान लगभग विदा हो चुके थे। दूसरे रोज़ जगपती भी चलने वाला था। पर उसी रात डाका पडा। जवान आदमी भला खून मानता है। डाकेवालो ने जब बन्दूकें चलायी तो सब की घिग्घी बँध गयी। पर जगपती और दयाराम ने छाती ठोककर लाठिया उठा ली। घर मे कुहराम मच गया। फिर सन्नाटा छा गया। डाकेवाले बराबर गोलियाँ दाग रहे थे। बाहर का दरवाज़ा टूट चुका था। पर जगपती ने हिम्मत बढाते हुए हाक लगायी 'ये हवाई बन्दूकें इन तेल पिलायी लाठिया का मुकाबला नही कर पायेंगी, जवानो!'

पर दरवाज़ तड-तड टूटते रहे और अत मे एक गोली जगपती की जाँघ को पार करती निकल गयी और दूसरी उसकी जाँघ के ऊपर कूल्हे मे समाकर रह गयी।

चन्दा रोती-कलपती और मनौतियाँ मानती जब वहा पहुँची, तो जगपती अस्पताल मे था। दयाराम के थोडी चोट आयी थी। उसे अस्पताल से छुट्टी मिल गयी थी। जगपती की देख भाल के लिए वही अस्पताल मे मरीज़ों के रिश्तेदारो के लिए जो कोठरिया बनी थी उन्ही मे चन्दा को रुकना पडा। क़स्बे के अस्पताल से दयाराम का गाँव चार कोस पडता था। दूसरे-तीसरे वहाँ से आदमी आते-जाते रहते जिस सामान की ज़रूरत होती पहुँचा जाते।

पर धीरे धीरे उन लोगो ने भी खबर लेना छोड दिया। एक दिन मे ठीक होने वाला घाव तो था नहीं। जाँघ की हड्डी चटख गयी थी और कूल्हे मे आपरेशन से छ इच गहरा घाव हो गया था।

क़स्बे का अस्पताल था। कम्पाउण्डर ही मरीज़ो की देख भाल रखते। बडा डाक्टर तो नाम के लिए था या क़स्बे के बडे आदमियो के लिए। छोटे लोगो के लिए तो 'कम्पोटर साहब' ही ईश्वर के अवतार थे। मरीज़ों की देख भाल करने-वाले रिश्तेदारो की खाने-पीने की मुश्किलो से लेकर मरीज़ की नब्ज़ तक सभालते थे। छोटी-सी इमारत मे अस्पताल आबाद था। रोगियों के लिए सिर्फ़ छँ-सात खाटें थी। मरीज़ो के कमरे से लगा दवा बनाने का कमरा था उसी मे एक ओर एक आरामकुर्सी थी और एक नीची-सी मेज़। उसी कुर्सी पर बडा डाक्टर कभी-कभार बैठता नहीं तो बचनसिंह कम्पाउण्डर ही जमे रहते। अस्पताल मे या तो फ़ौजदारी के शहीद आते या गिर गिराकर हाथ-पैर तोड लेनेवाले एक-आध लोग। छठे-छमासे कोई औरत दिख गयी तो दिख गयी, जब उन्हें कभी रोग घेरता ही

नही था। कभी कोई बीमार पडती तो घरवाले हाल बताक आठ-दस रोज की दवा एक साथ ले जाते और फिर उसके जीने-मरने की खबर तक न मिलती।

उस दिन बचनसिंह जगपती के घाव की पट्टी बदलने आया। उसके आने म और पट्टी खोलने मे कुछ ऐसी लापरवाही थी, जसे गलत बँधी पगडी को ठीक से बाँधन के लिए खोल रहा हा। चन्दा उसकी कुर्सी के पास ही साँस रोके खडी थी। वह और रोगियो से बात भी करता जा रहा था। इधर मिनट भर को देखता, फिर जस अभ्यस्त से उसके हाथ अपना काम करने लगते। पट्टी एक जगह खून से चिपक गयी थी जगपती बुरी तरह कराह उठा। चन्दा के मुह से चाख निकल गयी। बचनसिंह न सतक हाकर देखा तो चन्दा मुख म धोती का पल्ला खोंसे अपनी भयातुर आवाज दबाने की चेष्टा कर रही थी। जगपती एकबारगी मछली-सा तडपकर रह गया। बचनसिंह की उँगलिया थोडी सी थरथरायी कि उसकी बाँह पर टप से चन्दा का आँसू चू पडा।

बचनसिंह सिहर-सा गया और उसके हाथो की अभ्यस्त निठुराई को जैसे किसी मानवीय कोमलता न धीरे से छू दिया। आहा, कराहो दद भरी चीखो और चटखत शरीर के जिस वातावरण मे रहते हुए भी वह बिरकुल अलग रहता था, फोडों को पके आम सा दाब लेता था खाल का आलू मा छील देता था उसके मन से जिम दद का एहसास उठ गया था वह उसे आज फिर हुआ और वह बच्चे की तरह फूक फूक कर पट्टी को नम करके खोलने लगा। चन्दा की ओर धीरे स निगाह उठाकर दखते हुए फुसफुसाया 'च च रोगी की हिम्मत टूट जाता है ऐसे।"

पर जस यह कहते-कहत उसका मन खुद अपनी बात से उचट गया। यह बेपरवाही तो चीख और कराहों की एकरसता से उसे मिली थी रोगी की हिम्मत बढाने की कत्तव्य निष्ठा स नही। जब तक वह घाव की मलहम-पटटी करता रहा तब तक किन्ही दो आँखो की करुणा उसे घेर रही।

और हाथ धोत समय वह चन्दा की उन चूडिया से भरी कलाइयो को वझिझक दखता रहा जो अपनी खुशी उससे माँग रही थी। चन्दा पानी डालती जा रही थी और बचनसिंह हाथ धाते धोते उसकी कलाइयो हथलिया और परो को देखता जा रहा था। दवाखाने की ओर जाते हुए उसन चन्दा को हाथ के इशारे से बुलाकर कहा, फिक्र मत करना जाँघ का घाव तो दस रोज म भर जायगा। कूल्ह का घाव कुछ दिन जरूर लेगा। अच्छी से अच्छी दवाई दूगा। दवाइया तो ऐसी हैं कि मुर्दे को चगा कर दें पर हमारे अस्पताल म नही आती फिर भी

'तो किसी दूसरे अस्पताल से नही आ सकती वो दवाइयाँ?' चन्दा न पूछा।

आ तो सकती हैं पर मरीज़ को अपना पसा खरचना पडता है उनम

बचनसिंह ने कहा।

चन्दा चुप रह गयी तो बचनसिंह के मुह से अनायास ही निकल पडा 'किसी चीज की जरूरत हो तो मुझसे बताना। रही दवाइयाँ सो कही-न कही से इन्तजाम करके ला दूगा। महकमे से मँगायेंगे तो आते-अवाते महीनो लग जायेंगे। शहर के डाक्टर से मँगवा दूगा। ताकत की दवाइयो की बडी जरूरत है उन्हे। अच्छा, देखा जायगा " कहते-कहते वह रुक गया।

चन्दा ने कृतज्ञता भरी नजरो से उसे देखा और उसे लगा जैसे आधी मे उडते पत्ते को कोई अटकाव मिल गया हो। आकर वह जगपती की खाट से लगकर बैठ गयी। उसकी हथेली लेकर वह सहलाती रही। नाखूनो को अपने पोरो से दबाती रही।

धीरे धीरे बाहर अँधेरा बढ चला। बचनसिंह तेल की एक लालटेन लाकर मरीज़ा के कमरे के एक कोने मे रख गया। चन्दा ने जगपती की कलाई दाबते दाबते धीरे-से कहा, कम्पाउण्डर साहब कह रहे थे " और इतना कहकर वह जगपती का ध्यान आकृष्ट करने के लिए चुप हो गयी।

'*क्या कह रहे थे ?' जगपती अनमने स्वर मे बोला।*

'कुछ ताकत की दवाइयाँ तुम्हारे लिए जरूरी हैं।"

"मैं जानता हूँ।"

पर '

देखो चन्दा, चादर के बराबर ही पैर फैलाये जा सकते है। हमारी औकात इन दवाइयो की नही है।'

औकात आदमी की देखी जाती है कि पैसे की, तुम तो '

देखा जायगा।"

कम्पाउण्डर साहब इन्तजाम कर देंगे उनसे कहूँगी मैं।'

'नही चन्दा, उधारखाते से मेरा इलाज नही होगा चाहे एक के चार दिन लग जायें।

इसम तो "

'तुम नही जानती कर्ज़ कोढ का रोग होता है, एक बार लगने से तन तो गलता ही है मन भी रोगी हो जाता है।'

'लेकिन " कहते-कहते वह रुक गयी।

जगपती अपनी बात की टेक रखने के लिए दूसरी ओर मुह घुमा कर लेट रहा।

और तीसरे रोज़ जगपती के सिरहाने ताकत की कई दवाइयाँ रखी थी, और चन्दा की ठहरनेवाली कोठरी मे उसके लेटने के लिए एक खाट भी पहुँच गयी थी।

चन्दा जब आयी तो जगपती के चेहरे पर मानसिक पीडा की असख्य रेखाएँ उभरी थी, जसे वह अपनी बीमारी से लडने के अलावा स्वय अपनी आत्मा से भी लड रहा हो चन्दा की नादानी और स्नेह से भी उलझ रहा हो और सबसे ऊपर सहायता करनेवाले की दया से जूझ रहा हो।

चन्दा न देखा तो जसे यह सब सह न पायी। उसके जी मे आया कि कह दे, क्या आज तक तुमन कभी किसी स उधार पैसे नही लिये ? पर वह तो खुद तुमने लिये थे और तुम्हे मेरे सामने स्वीकार नही करना पडा था। इसीलिए लेते झिझक नही लगी पर आज मरे सामने उसे स्वीकार करत तुम्हारा झूठा पौरुष तिल मिलाकर जाग पडा है। पर जगपती के मुख पर बिखरी हुई पीडा म जिस आदर्श की गहराई थी, वह चन्दा क मन म चोर की तरह घुस गयी और बडी स्वाभाविकता से उसने उसके माथे पर हाथ फेरते हुए कहा 'ये दवाइयाँ किसी की मेहरबानी नहीं हैं मैंने हाथ का कडा बेचने को दे दिया था। उसी से आयी है।"

'मुझसे पूछा तक नही और जगपती ने कहा और जसे खुद मन की कमजोरी का दाब गया—कडा बेचने से तो अच्छा था कि बचनसिंह की दया ही ओढ ली जाती। और उसे हल्का सा पछतावा भी था कि नाहक वह रौ मे बडी बडी बातें कह जाता है, ज्ञानियो की तरह सीख दे देता है।

और जब चन्दा अँधेरा हात उठकर अपनी कोठरी म सोने के लिए जाने को हुई तो कहत कहते यह बात दब गयी कि बचनसिंह न उसके लिए एक खाट का इन्तजाम भी करा दिया है। कमरे से निकली तो सीधी कोठरी मे गयी और हाथ का कडा लेकर सीधे दवाखाने की ओर चली गयी जहाँ बचनसिंह अकेला डाक्टर की कुर्सी पर आराम से टागें फलाये लम्प की पीली रोशनी म लटा था। जगपती का व्यवहार चन्दा को लग गया था और यह भी कि वह क्यों बचनसिंह का एहसान अभी से लाद ले, पति के लिए जेवर की कितनी औकात है। वह बेधडक सी दवाखाने म घुस गयी। दिन की पहचान के कारण उसे कमरे की मेज-कुर्सी और दवाओ की अलमारी की स्थिति का अनुमान था वसे कमरा अँधेरा ही पडा था, क्योकि लैम्प की रोशनी केवल अपने वृत्त म अधिक प्रकाशवान होकर कोनो के अँधेरे को और भी घनीभूत कर रही थी। बचनसिंह ने चन्दा को घुसत ही पहचान लिया। वह उठकर खडा हो गया। चन्दा ने भीतर कदम तो रख दिया, पर सहसा सहम गयी, जसे वह किसी अँधेरे कुएँ म अपने आप कूद पटी हो ऐसा कुआ, जो निरन्तर पतला होता गया है और जिसम पानी की गहराई पाताल की पर्तों तक चली गयी हो जिसम पडकर वह नीचे धँसती चली जा रही हो नीचे अँधेरा एकान्त घुटन पाप!

बचनसिंह अवाक ताकता रह गया और चन्दा ऐसे वापस लौट पडी जैसे किसी काल पिशाच के पजो से मुक्ति मिली हो। बचनसिंह के सामने क्षण भर म

सारी परिस्थिति कौंध गयी और उसने वहीं से बहुत सयत आवाज म जबान का दावते हुए जैसे वायु म स्पष्ट ध्वनित करा दिया—'चन्दा !' वह आवाज इतनी बेआवाज थी और निरथक होते हुए भी इतनी सायक थी कि उस खामोशी म अय भर गया।

चन्दा रुक गयी।

वचनसिंह उसके पास जाकर रुक गया।

सामने का घना पेड स्तब्ध खडा था, उसकी काली परछाइ की परिधि जैसे एक बार फैलकर उन्ह अपने वृत्त म समेट लेती और दूसरे ही क्षण मुक्त कर देती। दवाखाने का लैम्प सहसा भभककर रुक गया और मरीजो के कमरे से एक कराह की आवाज दूर मैदान के छोर तक जाकर डूब गयी।

चन्दा ने वसे ही नीचे ताकते हुए अपने को सयत करते हुए कहा, 'ये कडा तुम्हें देने आयी थी।"

ता वापस क्यो चली जा रही थी ?"

चन्दा चुप। और दो क्षण रुककर उसने अपने हाथ का सोने का कडा धीरे से उसकी ओर बढा दिया, जैसे देने का साहस न होते हुए भी यह काम आवश्यक था।

वचनसिंह ने उसकी सारी काया को एक बार देखते हुए अपनी आखें उसके सिर पर जमा दी जिसके ऊपर पड़े कपडे के पार नरम चिकनाई से भरे लम्बे-लम्बे बाल थ, जिनकी भाप-सी महक फलती जा रही थी। वह धीरे से बोला, 'लाओ।'

चन्दा ने कडा उसकी ओर बढा दिया। कडा हाथ म लेकर वह बोला, 'सुनो।

चन्दा ने प्रश्न भरी नजरें उसकी ओर उठा दीं।

उनम झाँकते हुए पर अपने हाथ से उसकी कलाइ पकडते हुए उसने वह कडा उसकी कलाई म पहना दिया और बोला, 'ब्याही औरतें हमेशा मेरी कमजोरी रही हैं चन्दा !'

चन्दा चुपचाप कोठरी की ओर चल दी और वचनसिंह दवाखाने की ओर। कालिख बुरी तरह बढ गयी थी और सामने खडे पेड की काली परछाइ गहरी पड गयी थी। तारों नीचे गय थ। पर जसे उस कालिख म कुछ रह गया था छूट गया था। दवाखाने का लम्प आ जलते जलते एक बार भभका था, उसम तेल न रह जाने के कारण बत्ती की लौ बीच से फट गयी थी, उसके ऊपर धुएँ की लकीरें बल खाती साँप की तरह अँधेरे म विलीन हो जाती थीं।

सुबह जब चन्दा जगपती के पास पहुँची और बिस्तर ठीक करने लगी तो

जगपती को लगा कि चन्दा बहुत उदास थी। क्षण क्षण में चन्दा के मुख पर अनगिनत भाव आ जा रहे थे जिनमें असमंजस था, पीड़ा थी और थी निरीहता। कोई अदृश्य पाप कर चुकने के बाद हृदय की गहराई से किये गये पश्चाताप जैसी धूमिल चमक!

'रानी मंत्री के साथ जब निराश होकर लौटी तो देखा राजा महल में उपस्थित थे। उनकी खुशी का ठिकाना न रहा' माँ सुनाया करती थी 'पर राजा को रानी का इस तरह मंत्री के साथ जाना अच्छा नहीं लगा। रानी ने राजा को समझाया कि वह तो केवल राजा के प्रति अटूट प्रेम के कारण अपने को न रोक सकी। राजा रानी एक दूसरे को बहुत चाहते थे। पर दोनों के दिलों में एक बात शूल सी गड़ती रहती कि उनके कोई सन्तान तक न थी राजवंश का दीपक बुझने जा रहा था। सन्तान के अभाव में उनका लोक परलोक बिगड़ा जा रहा था और कुल की मर्यादा नष्ट होने की शंका बढ़ती जा रही थी।'

दूसरे दिन बचनसिंह ने मरीजों की मलहम पट्टी करते वक्त बताया था कि उसका तबादला मनपुरी के सदर अस्पताल में हो गया है और वह परसों यहाँ से चला जायगा। जगपती ने सुना तो उसे भला ही लगा। आये दिन रोग घेरे रहते हैं, बचनसिंह उसके शहर के अस्पताल में पहुंचा जा रहा है तो कुछ मदद मिलती ही रहेगी। आखिर वह ठीक तो होगा ही और फिर मनपुरी के सिवा कहाँ जायगा? पर दूसरे ही क्षण उसका दिल अकथ भारीपन से भर गया। पता नहीं क्या चन्दा के अस्तित्व का ध्यान आते ही उसे इस सूचना में कुछ ऐसे नुकीले काँटे दिखायी देने लगे जो उसके शरीर में किसी भी समय चुभ सकते थे ज़रा सा बेखबर होने पर बींध सकते थे। और तब उसके सामने आदमी के अधिकार की लक्ष्मण रेखाएं धुएं की लकीर की तरह काँपकर मिटने लगीं और मन में छुपे संदेह के राक्षस बाना बदल योगी के रूप में घूमने लगे।

और पन्द्रह बीस रोज़ बाद जब जगपती की हालत सुधर गयी तो चन्दा उसे लेकर घर लौट आयी। जगपती चलने फिरने लायक हो गया था। घर का ताला जब खोला तब रात झुक आयी थी। और फिर उनकी गली में तो शाम से ही अंधेरा भरना शुरू हो जाता था। पर गली में आते ही उन्हें लगा जैसे कि बनवास काटकर राजधानी लौटे हों। नुक्कड़ पर ही जमना सुनार की कोठरी में सुरही फिंक रही थी जिसके दराज़दार दरवाज़े से लालटेन की रोशनी की लकीर झांक रही थी और कच्ची तम्बाकू का धुआं रुंधी गली के मुहाने पर बुरी तरह भर गया था। सामने ही मुंशीजी अपनी ज़िंगला खटिया के गड्ढे में कुप्पी के मद्धिम प्रकाश में खसरा-खतौनी बिछाये मीज़ान लगाने में मशगूल थे। जब जगपती के घर का

दरवाजा खड़का तो अँधेरे मे उसकी चाची ने अपने जगले से दखा और वही से बैठे-बठे अपने घर के भीतर ऐलान कर दिया—'राजा निरबसिया अस्पताल से लौट आये कुलमा भी आयी हैं।"

ये शब्द सुनकर घर के अँधेरे बरोठे मे घुसते ही जगपती हाँफकर बैठ गया, झुझलाकर च दा से बोला 'अँधेरे म क्या मेरे हाथ-पैर तुडवाओगी भीतर जाकर लालटेन जला लाओ न।"

'तेल नही होगा, इस वक्त जरा ऐसे ही काम '

तुम्हारे कभी कुछ नही होगा न तेल, न ' कहते कहते जगपती एकदम चुप रह गया। और च दा को लगा कि आज पहली बार जगपती ने उसके व्यथ मातत्व पर इतनी गहरी चोट कर दी, जिसकी गहराई की उसने कभी कल्पना नही की थी। दोनो खामोश, बिना एक बात किये अन्दर चले गये।

रात के बढते सन्नाटे म दोनो के सामने दो बातें थी

जगपती के कानो म जसे कोई व्यग्य से कह रहा था—राजा निरबसिया अस्पताल से आ गये।

और चन्दा के दिल म वह बात चुभ रही थी—तुम्हारे कभी कुछ नही होगा

और सिसकती सिसकती चन्दा न जाने कब सो गयी। पर जगपती की आँखा में नीन्द न आयी। खाट पर पडे पडे उसके चारो ओर एक मोहक, भयावना सा जाल फल गया। लटे लेटे उसे लगा, जसे उसका स्वय का आकार बहुत क्षीण होता होता बिन्दु सा रह गया, पर बिन्दु के हाथ थे पर ये और दिल की धडकन भी। कोठरी का घुटा घुटा सा अँधियारा, मटमैली दीवारें और गहन गुफाओं-सी अलमारियाँ जिनमे से बार बार कोई झाककर देखता था और फिर न्हना था फिर जसे सब कुछ तबदील हो गया हो। उस लगा कि उसका आकार बन्ता जा रहा है बढता जा रहा है। वह मनुष्य हुआ, लम्बा-तगड़ा [illegible] पुरुष हुआ, उसकी शिराओं म कुछ फूट पडने के लिए व्याकुलता म [illegible]। उसके हाथ शरीर के अनुपात स बहुत बडे डरावने और भयानक [illegible], [illegible] लम्बे लम्बे नाखून निकल आय वह राक्षस हुआ दत्य हुआ आदिम दद्र।

और बडी तेज़ी से सारा कमरा एकबारगी चक्कर काट गया। फिर सब धीरे धीरे स्थिर होने लगा और उसकी साँसें ठीक होती जान पड़ी। फिर जब बहुत कोशिश करने पर घिग्घी बँध जाने के बाद उसकी आवाज़ फूटी, 'चन्दा!'

चन्दा की नरम मासो की हल्की सरसराहट कमर म आने जाने लगी। जगपती अपनी पाटी का सहारा लेकर झुका। काँपते पैर उसने ज़मीन पर रख और चन्दा की खाट के पाय स सिर टिकाकर बठ गया। उसे लगा, जैसे चन्दा की इन साँसा की आवाज़ म जीवन का सगीत गूज रहा है। वह उठा और चन्दा के

मुख पर झुक गया। उस अँधेरे मे आँखें गडाये गडाये जसे बहुत देर बाद स्वय चन्दा के मुख पर आभा फूटकर अपने-आप बिखरने लगी उसके नक्श उज्ज्वल हो उठे और जगपती की आँखो को ज्योति मिल गयी। वह मुग्ध सा ताकता रहा।

चन्दा के बिखर बाल जिनम हाल के जन्मे बच्चे के गबुआरे बालो की सी महक दूध की क्चाइँध शरीर के रस की सी मिठास और स्नेह सी चिकनाहट और वह माथा जिस पर बाला के पास तमाम छोटे छोटे नरम नरम से रोएँ रेशम से और उस पर कभी लगायी गयी सिन्दूर की बिन्दी का हल्का मिटा हुआ सा आभास नन्हे नन्हें निद्र द्व सोये पलक ! और उनकी मासूम सी काँटो की तरह बरौनियाँ और साँस म घुलकर आती हुई वह आत्मा की निष्कपट आवाज की लय फूल की पखुरी से पतले-पतले आठ उन पर पडी अछूती रेखाएँ जिनम सिर्फ दूध सी महक !

उसकी आँखो के सामने ममता-सी छा गयी केवल ममता और उसके मुख स अस्फुट शब्द निकल गया, बच्ची !

डरत डरते उसके बाला की एक लट को बडे जतन से उसन हथेली पर रखा और उँगली से उसपर जसे लकीरें खीचने लगा। उसे लगा जैसे कोई शिशु उसके अक म आने के लिए छटपटा कर निराश होकर सा गया हो। उसने दोना हथेलियों को पसारकर उसक सर को अपनी सीमा म भर लेना चाहा कि कोई कठोर चीज़ उसकी उँगलियो से टकरायी।

वह जसे होश म आया।

बडे सहारे से उसने चन्दा के सिर के नीच टटोला। एक रूमाल म बँधा कुछ उसके हाथ म आ गया। अपने को सयत करता वह वही ज़मीन पर बठ गया उसी अँधेरे म उस रूमाल को खोला, ता जसे साप सूघ गया। चन्दा के हाथ के दोना सोने के कडे उसम लिपट थे !

और तब उसके सामन सब सृष्टि धीरे धीरे टुकड टुकडे होकर बिखरने लगी। ये कडे तो चन्दा बचकर उसका इलाज कर रही थी। वे सब दवाइयाँ और ताकत के टानिक उसन ता कहा था ये दवाइयाँ किसी की मेहरबानी नहा है मैंने हाथ के कडे बचने को दे दिये थे पर उसका गला बुरी तरह सूख गया। ज़बान जसे तालू स चिपककर रह गयी। उसने चाहा कि चन्दा को झकझोरकर उठाये पर शरीर की शक्ति बह-सी गयी थी रक्त पानी हा गया था।

थाडा सयत हुआ उसने वह कडे उसी रूमाल मे लपेटकर उसकी खाट के काने पर रख दिय और बडी मुश्किल स अपनी खाट की पाटी पकडकर लुढक गया।

चन्दा झूठ बोली ! पर क्यों ? कडे आज तक छुपाये रही। उसने इतना बडा दुराव क्या किया ? आखिर क्यों ? किसलिए ? और जगपती का दिल भारी हो

आया। उसे फिर लगा कि उसका शरीर सिमटता जा रहा है और वह एक सींक का बना ढाँचा रह गया नितान्त हल्का, तिनके-सा, हवा में उड़कर भटकने वाले तिनके सा।

उस रात के बाद रोज़ जगपती सोचता रहा कि चन्दा से कड़े माँगकर बेच ले और कोई छोटा मोटा कारबार ही शुरू कर दे, क्योंकि नौकरी छूट चुकी थी। इतने दिन की गैरहाज़िरी के बाद वकील साहब ने दूसरा मुहर्रिर रख लिया था। वह रोज़ यही सोचता। पर जब चन्दा सामने आती, तो न जाने कैसी असहाय-सी उसकी अवस्था हो जाती। उसे लगता जैसे कड़े माँगकर वह चन्दा से पत्नीत्व का पद भी छीन लेगा। मातत्व तो भगवान ने छीन ही लिया वह सोचता, आखिर चन्दा क्या रह जायगी? एक स्त्री से यदि पत्नीत्व और मातत्व छीन लिया गया, तो उसके जीवन की सार्थकता ही क्या? चन्दा के साथ वह यह अन्याय कैसे करे? उससे दूसरी आँख की रोशनी कैसे माँग ले? फिर तो वह नितान्त अंधी हो जायगी। और उन कड़ों को माँगने के पीछे जिस इतिहास की आत्मा नंगी हो जायगी कैसे वह उस लज्जा को स्वयं ही उघार कर ढाँपेगा?

और वह इन्हीं ख्यालों में डूबा सुबह से शाम तक इधर उधर काम की टोह में घूमता रहता। किसी से उधार ले ले? पर किस सम्पत्ति पर? क्या है उसके पास जिसके आधार पर कोई उसे कुछ देगा? और मुहल्ले के लोग जो एक-एक पाई पर जान देते हैं कोई चीज़ खरीदते वक्त भाव में एक पैसा कम मिलने पर मीलों पैदल जाकर एक पैसा बचाते हैं। एक एक पैसे की मसाले की पुड़िया बँधवाकर ग्यारह मतबा पैसों का हिसाब जोड़कर एक-आध पैसा उधार कर मिन्नतें करते सौदा घर लाते हैं। गली में कोई खोंचेवाला फँस गया तो दो पैसे की चीज़ को लड़ झगड़कर—चार दाने ज्यादा पाने की नीयत से—दो जगह बँधवाते हैं। भाव के ज़रा से फर्क पर घंटों बहस करते हैं। शाम को सड़ी-गली तरकारियाँ किफायत के कारण लाते हैं ऐसे लोगों से किस मुँह से माँगकर वह उनकी गरीबी के एहसास पर ठोकर लगाये!

पर उस दिन शाम को जब वह घर पहुँचा तो ओसारे में ही एक साइकिल रखी नज़र आयी। दिमाग़ पर बहुत ज़ोर डालने के बाद भी वह आगन्तुक की कल्पना न कर पाया। भीतरवाले दरवाज़े पर जब पहुँचा तो सहसा हँसी की आवाज़ सुनकर ठिठक गया। उस हँसी में एक अजीब-सा उन्माद था। और उसके बाद चन्दा का स्वर—

'अब आते ही होंगे, बैठिए न दो मिनट और! अपनी आँख से देख लीजिए और उन्हें समझाते जाइए कि अभी तन्दुरुस्ती इस लायक नहीं जो दिन दिन भर घूमना बर्दाश्त कर सकें।'

'हाँ भइ कमजोरी इतनी जल्दी नही मिट सकती, खयाल नही करेंगे, तो नुकसान उठायेंगे।" कोई पुरुष स्वर था यह।

जगपती असमंजस मे पड गया। वह एकदम भीतर घुस जाय? इसमे क्या हर्ज है? पर जब उसने पैर उठाये तो वे बाहर को जा रहे थे। बाहर बरोठे मे साइकिल का पकडते ही उसे सूझ आयी वही से जैसे अनजान बनता बडे प्रयत्न से आवाज को खोलता चिल्लाया 'अरे चन्दा! यह साइकिल है? कौन मेहरबान ?'

चन्दा उसकी आवाज सुनकर कमरे से बाहर निकलकर जैसे खुशखबरी सुना रही थी अपने कम्पाउण्डर साहब आये हैं खोजते खोजते आज घर का पता पाये हैं तुम्हारे इन्तजार मे बैठे है!

'कौन बचनसिंह? अच्छा अच्छा। वही तो मैं कहूँ भला कौन' कहता जगपती पास पहुँचा। और बातो मे इस तरह उलझ गया जैसे सारी परिस्थिति उसने स्वीकार कर ली हो।

बचनसिंह जब फिर आने की बात कहकर चला गया, तो चन्दा ने बहुत अपनेपन से जगपती के सामने बात शुरू की, जाने कैसे कैसे आदमी होते हैं'

'क्या क्या हुआ? कैसे होते हैं आदमी?' जगपती ने पूछा।

इतनी छोटी जान-पहचान मे तुम मर्दों के घर में न रहते घुसकर बैठ सकते हो? तुम तो उल्टे पैरो लौट आओगे। चन्दा कहकर जगपती के मुख पर कुछ इच्छित प्रतिक्रिया देख सकने के लिए गहरी निगाहो से ताकने लगी।

जगपती ने चन्दा की ओर ऐसे देखा जैसे यह बात भी कहने की या पूछने की है! फिर बोला बचनसिंह अपनी तरह का आदमी है अपनी तरह का अकेला

होगा पर कहते कहते चन्दा रुक गयी।

आडे वक्त काम आनेवाला आदमी है लेकिन उससे फायदा उठा सकना जितना आसान है उतना मेरा मतलब है कि जिससे कुछ लिया जायगा उसे दिया भी तो जायगा। जगपती ने आँखें दीवार पर गडाते हुए कहा।

और चन्दा उठकर चली गयी।

उस दिन के बाद से बचनसिंह लगभग रोज ही आने जाने लगा। जगपती उसके साथ इधर उधर घूमता भी रहता। बचनसिंह के साथ वह जब तक रहता, अजीब सी घुटन उसके दिल को बाँध लेती और तभी जीवन की तमाम विषमताए भी उसकी निगाहो के सामने उभरने लगती आखिर वह स्वय एक आदमी है बेकार यह माना कि उसके सामने पेट पालने की कोई इतनी विकराल समस्या नहीं वह भूखा नही मर रहा है जाडे मे काँप नही रहा है पर उसके दो हाथ-पैर

है शरीर का पिंजरा है जो कुछ माँगता है कुछ! और वह सोचता, यह कुछ क्या है? सुख? शायद हाँ, शायद नहीं। वह तो दुख में भी जी सकने का आदी है, अभावों में जीवित रह सकनेवाला आश्चयजनक कीडा है। तो फिर वासना? शायद हाँ शायद नहीं। चन्दा का शरीर लेकर उसने उस क्षणिकता को भी देखा है। तो फिर धन? शायद हाँ शायद नहीं। उसने धन के लिए अपने को खपाया है। पर वह भी तो उस अदृश्य प्यास को बुझा नहीं पाया। तो फिर? तो फिर क्या? वह कुछ क्या है जो उसकी आत्मा में नासूर सा रिसता रहता है अपना उपचार माँगता है? शायद काम! हाँ, यही बिलकुल यही जो उसके जीवन की घडियों को निपट सूना न छोड़े जिसमें वह अपनी शक्ति लगा सके अपना मन डुबो सके, अपने को सार्थक अनुभव कर सके, चाहे उसमें सुख हो या दुख, अरक्षा हो या सुरक्षा शोषण हो या पोषण उसे सिर्फ काम चाहिए! करने के लिए कुछ चाहिए। यही तो उसकी प्रकृत आवश्यकता है पहली और आखिरी माँग है, क्योंकि वह उस घर में नहीं पैदा हुआ जहाँ सिर्फ जबान हिलाकर शासन करनेवाले होते हैं। वह उस घर में भी नहीं पैदा हुआ जहाँ सिर्फ माँगकर जीनेवाले होते हैं। वह उस घर का है, जो सिर्फ काम करना जानता है, काम ही जिसकी आस है! वह सिर्फ काम चाहता है काम!

और एक दिन उसकी काम धाम की समस्या भी हल हो गयी। तालाबवाले ऊँचे मैदान के दक्षिण की ओर जगपती की लकड़ी की टाल खुल गयी। तक्त टँग गया। टाल की जमीन पर लक्ष्मी-पूजन भी हो गया और हवन भी हुआ। लकड़ी की कोई कमी नहीं थी। गाँवों से आनेवाली गाड़ियों का इस बाजार में परे हुए आदमियों की मदद से मोल-तोल करवा के वहाँ गिरवा दिया गया। गाठें एक ओर रखी गयी, चैलों का चट्टा करीने से लग गया और गुद्दे चीरने के लिए डाल दिये गये। दो-तीन गाड़ियों का सौदा करके टाल चालू कर दी गयी। भविष्य में स्वयं पेड़ खरीदकर कटान का तय किया गया। बड़ी-बड़ी स्कीमें बनीं कि किस तरह जलाने की लकड़ी से बढ़ाते बढ़ाते एक दिन इमारती लकड़ी की कोठी बनेगी। चीरने की नयी मशीन लगेगी। कारबार बढ़ जाने पर बचनसिंह भी नौकरी छोड़कर उसी में लग जायगा। और उसने महसूस किया कि वह काम में लग गया है अब चौबीसों घंटे उसके सामने काम है उसके समय का उपयोग है। दिन भर में वह एक घंटे के लिए किसी का मित्र हो सकता है कुछ देर के लिए वह पति हो सकता है पर बाकी समय? दिन और रात के बाकी घंटे उन घंटों के अभाव को सिर्फ उसका अपना काम ही भर सकता है और अब वह कामदार था

वह कामदार तो था लेकिन जब टाल की उस ऊँची जमीन पर पड़े छप्पर के नीचे तख्त पर वह गल्ला रखकर बैठता, सामने लगे लकड़ियों के ढेर कटे हुए पेड़ के तने, जड़ों को लुढ़का हुआ देखता तो एक निरीहता बरबस उसके दिल को

बाँधने लगती। उसे लगता, एक व्यर्थ पिशाच का शरीर टुकडे-टुकडे करके उसके सामने डाल दिया गया है। फिर इन पर और कुल्हाडी चलेगी और इनके रेशे रेशे अलग हो जायेंगे और तब इनकी ठठरियो को सुखाकर किसी पैसेवाले के हाथ तक पर तौलकर बेच दिया जायगा।

और तब उसकी निगाहे सामने खडे ताड पर अटक जाती जिसके बडे-बडे पत्ता पर सुख गदनवाले गिद्ध पर फडफडाकर देर तक खामोश बठे रहत। ताड का काला गडरेदार तना और उसके सामने ठहरी हुई वायु म निस्सहाय कापती, भारहीन नीम की पत्तिया चकराती झडती रहती धूल भरी धरती पर लकडी की गाडिया के पहियो की पडी हुई लीक धुधली सी चमक उठती और बगलवाले मगफली के पेच की एकरस खरखराती आवाज कानो मे भरने लगती। बगलवाली कच्ची पगडडी से कोई गुजरकर टीले के ढलान स तालाब की नीचाई म उतर जाता, जिसके गँदले पानी म कूडा तैरता रहता और सुअर कीचड म मुह डालकर उस कूडे को रौदते रहत

दोपहर सिमटती और शाम की धुध छाने लगती, तो वह लालटेन जलाकर छप्पर के खभे की कील मे टाग देता और उसके थोडी ही देर बाद अस्पतालवाली सडक से बचनसिह एक काले धब्बे की तरह आता दिखायी पडता।

गहरे पडत अँधेरे म उसका आकार धीरे धीरे बढता जाता और जगपती के सामने जब वह आकर खडा होता तो वह उसे बहुत विशाल सा लगने लगता, जिसके सामने उसे अपना अस्तित्व डूबता महसूस होता।

एक-आध बिक्री की बातें होती और तब दोनो घर की ओर चल देते। घर पहुँचकर बचनसिह कुछ देर जरूर रुकता बैठता इधर उधर की बातें करता। कभी मौका पड जाता तो जगपती और बचनसिह की थाली भी साथ लग जाती। चन्दा सामने बठकर दोना को खिलाती।

बचनसिह बोलता जाता, 'क्या तरकारी बनी है! मसाला ऐसा पडा है कि उसकी भी बहार है और तरकारी का सवाद भी नही मरा। होटलो मे या तो मसाला-ही मसाला रहगा या सिरफ तरकारी-ही-तरकारी। वाह! वाह! क्या बात है अन्दाज की!'

और चन्दा बीच बीच म टोक कर बोलती जाती इन्हे तो जब तक दाल म प्याज का भुना घी न मिल तब तक पेट ही नही भरता।

या—'सिरका अगर इन्हे मिल जाय, तो समझो सब-कुछ मिल गया। पहले मुझे सिरका न जाने कसा लगता था पर अब ऐसा जबान पर चढा है कि

या— इन्ह कागज-सी पतली रोटी पसन्द ही नही आती। अब मुझसे कोई

पतली रोटी बनाने को कहे तो बनती ही नहीं, आदत पड गयी है, और फिर मन ही नहीं करता ''

पर चन्दा की आखें बचनसिंह की थाली पर ही जमी रहती। रोटी निबटी, तो रोटी परोस दी दाल खतम नहीं हुई, तो भी एक चमचा और परोस दी।

और जगपती सिर झुकाये खाता रहता। सिर्फ एक गिलास पानी मांगता और चन्दा चौंककर पानी देने से पहले कहती, "अरे तुमने तो कुछ लिया भी नहीं।' कहते-कहते वह पानी दे देती और तब उसके दिल पर गहरी सी चोट लगती, न जाने क्या वह खामोशी की चोट उसे बडी पीडा दे जाती पर वह अपने को समझा लेती, कोई मेहमान तो नहीं हैं माग सकते थे। भूख नहीं होगी।

जगपती खाना खाकर टाल पर लेटने चला जाता क्योंकि अभी तक कोई चौकीदार नहीं मिला था। छप्पर के नीचे तख्त पर जब वह लेटता, तो अनायास ही उसका दिल भर भर आता। पता नहीं कौन कौन से दर्द एक-दूसरे से मिलकर तरह-तरह की टीस चटख और ऐंठन पैदा करते लगते। कोई एक रग दुखती तो वह सहलाता भी जब सभी नसें चटखती हो तो कहा कहाँ राहत का अकेला हाथ सहलाये।

लेटे-लेटे उसकी निगाह टाल के उस ओर बनी पुख्ता कब्र पर जम जाती, जिसके सिरहाने कँटीला बबूल का एकाकी पेड सुन्न-सा खडा रहता। जिस कब्र पर एक पर्दानशीन औरत बडे लिहाज से आकर सबेरे-सबेरे बेला और चमेली के फूल चढा जाती घूम घूमकर उसके फेरे लेती और माथा टेककर कुछ कदम उदास-उदास-सी चलकर एकदम तेजी से मुडकर बिसातिया के मुहल्ले में खो जाती। शाम होते फिर आती। एक दिया बारती और अगर की बत्तिया जलाती। फिर मुडते हुए ओढनी का पल्ला कधो पर डालती तो दिये की लौ कांपती, कभी कांपकर बुझ जाती, पर उसके कदम बढ चुके होते पहले धीमे, थके उदास से और फिर तेज मध्ये सामान्य-से। और वह फिर उसी मुहल्ले में खो जाती और तब रात की तनहाइयों में बबूल के काटो के बीच, उस सांय-सांय करते ऊँचे नीचे मैदान में जैसे उस कब्र से कोई रूह निकलकर निपट अकेली भटकती रहती।

तभी टाल पर बैठे सुख गानेवाले गिद्ध मनहूस सी आवाज में किलबिला उठते और टाल के पत्ते भयानकता से खडखडा उठते। जगपती का बदन काप जाता और वह भटकती रूह जिन्दा रहे सकने के लिए जैसे कब्र की ईटो में, बबूल के साथ-तले दुबक जाती। जगपती अपनी टाँगों को पेट से भींचकर, कम्बल से मुंह छुपा औंधा लेट जाता।

तडके ही ठेके पर लग लकडहारे लकडी चीरने आ जाते। तब जगपती कम्बल

लपेट, घर की ओर चला जाती।

"राजा रोज सवेरे टहलन जात थे," मां सुनाया करती थी एक दिन जसे ही महल से बाहर निकलकर आये कि सडक पर झाड़ू लगानेवाली महतरानी उन्ह देखते ही अपना झाड़ू-पजा पटककर माथा पीटने लगी, और कहने लगी, हाय राम! आज राजा निरवसिया का मुह देखा है, न जाने रोटी भी नसीब होगी कि नही न जाने कौन-सी विपत टूट पडे! राजा को इतना दु ख हुआ कि उल्टे परो महल को लौट गये। मत्री को हुकुम दिया कि उस महतरानी का घर नाज से भर दें। और सब राजसी वस्त्र उतार राजा उसी क्षण जगल की ओर चले गये। उसी रात रानी को सपना हुआ कि कल की रात तेरी मनोकामना पूरी करनेवाली है। रानी बहुत पछता रही थी। पर फौरन ही रानी राजा को खोजती खोजती उस सराय म पहुँच गयी जहाँ वह टिके हुए थे। रानी भेष बदलकर सेवा करनेवाली भठियारिन बनकर राजा के पास रात म पहुँची। रात भर उनके साथ रही और सुबह राजा क जागन स पहले सराय छोड महल म लौट गयी। राजा सुबह उठकर दूसरे देश की ओर चल गये। दो ही दिना म राजा के निकल जाने की खबर राज भर म फल गयी राजा निकल गये चारों तरफ यही खबर थी "

और उस दिन टोले मुहल्ल के हर आँगन म बरसात के मह की तरह यह खबर बरस कर फल गयी कि चन्दा के बाल-बच्चा हानेवाला है।

नुक्कड पर जमुना सुनार की कोठरी म फिंकती सुरही रुक गयी। मुशीजी ने अपना मीज़ान लगाना छोड विस्फारित नेत्रो से ताककर खबर सुनी। बसी किराने वाले ने कुए म से आधी गयी रस्सी खीच डोल मन पर पटककर सुना। सुदशन दर्जी ने मशीन के पहिए को हथली से रगडकर रोककर सुना। हसराज पजाबी ने अपनी नील लगी मलगुजी कमीज़ की आस्तीनें चढाते हुए सुना। और जगपती की बवा चाची ने औरतो के जमघट म बडे विश्वास, पर भेद भरे स्वर म सुनाया—'आज छ साल हो गये शादी को न बाल न बच्चा न जाने किसका पाप है उसके पेट मे! और किसका होगा सिवा उस मुसटण्ड कम्पोटर के! न जाने वहाँ से कुलच्छनी इस मुहल्ले म आ गयी! इस गली की तो पुश्तो से ऐसी मरजाद रही है कि गैर मरद औरत की परछाइ तक नही देख पायें। यहाँ के मरद तो बस अपने घर की औरतो का जानते हैं उन्ह तो पडोसी के घर की जनानो की गिनती तक नही मालूम!' यह कहते कहते उनका चेहरा तमतमा आया और सब औरतें देवलोक की देवियो की तरह गम्भीर बनी अपनी पवित्रता की महानता के बोझ से दबी धीरे धीरे खिसक गयी।

सुबह यह खबर फलने से पहले जगपती टाल पर चला गया था। पर सुनी

उसने भी आज ही थी। दिन भर वह तखत पर कोने की ओर मुह किये पडा रहा। न ठेके की नवडिया चिरवायी न बिक्री की ओर ध्यान दिया न दोपहर का खाना खाने ही घर गया। जब रात अच्छी तरह फल गयी, तो वह एक हिंसक पशु की भांति उठा। उसने अपनी अँगुलियाँ चटकायी, मुट्ठी बांधकर बाहु का ओर देखा, तो नसें तनीं और बाँह म कठोर कम्पन सा हुआ। उसने तीन चार पूरी सांसें खीची और मज़बूत कदमो से घर की ओर चल पडा। मैदान खत्म हुआ ककड की सडक आयी सडक खत्म हुई, गली आयी। पर गली के अँधेरे म घुसते वह सहम गया जसे किसी ने अदृश्य हाथो से उसे पकडकर सारा रक्त निचोड लिया उसकी फटी हुई शक्ति की नस पर हिम शीतल ओठ रखकर सारा रस चूस लिया। और गली के अँधेरे की हिकारत भरी कालिख और भी भारी हो गयी जिसम घुसन मे उसकी सास रुक जायगी घुट जायगी।

वह पीछे मुडा पर रुक गया। फिर कुछ सयत होकर वह चोरो की तरह निशब्द क़दमो से किसी तरह घर की भीतरी देहरी तक पहुँच गया।

दायी ओर की रसोईवाली दहलीज म कुप्पी टिमटिमा रही थी और चन्दा अस्त-व्यस्त-सी दीवार से सिर टेके शायद आसमान निहारते निहारते सो गयी थी। कुप्पी का प्रकाश उसक आधे चेहरे को उजागर किये था और आधा चेहरा गहन कालिमा मे डूबा अदृश्य था।

वह खामोशी से खडा ताकता रहा। चन्दा के चेहरे पर नारीत्व की प्रौढ़ता आज उसे दिखायी दी। चेहरे की सारी कमनीयता न जाने कहाँ खो गयी थी उसका अछूतापन न जाने कहाँ लुप्त हो गया था! फूला फूला मुख। जैसे टहनी से तोडे फूल को पानी मे डालकर ताज़ा किया गया हो जिसकी पखुरियो में टूटन की सुरमई रेखाएँ पड गयी हो, पर भीगने से भारीपन आ गया हो।

उसके खुले पैर पर उसकी निगाह पडी, तो सूजा-सा लगा। एडियाँ भरी, सूजी-सी और नाखूना के पास अजब-सा सूखापन। जगपती का दिल एक बार मसोस उठा। उसने चाहा कि बढकर उसे उठा ले। अपने हाथो से उसका पूरा शरीर छू-छूकर सारा कलुष पोछ दे, उसे अपनी साँसो की अग्नि म तपाकर एक बार फिर पवित्र कर ले। और उसकी आँखो की गहराई म झाँककर कहे—देवलोक स किस शापवश निर्वासित हो तुम इधर आ गयो, चन्दा? यह शाप तो अमिट था।

तभी चन्दा ने हडबडाकर आँखें खोलीं। जगपती को सामने देख उसे लगा कि वह एकदम नगी हो गयी हो। अतिशय लज्जित हो उसने अपने पर समेट लिये। घुटनों स धोती नीचे सरकायी और बहुत सयत सी उठकर रसोई के अँधेरे मे खो गयी।

जगपती एकदम हताश हो, वहीं कमरे की देहरी पर चौखट से सिर टिका

बैठ गया। नजर कमरे म गयी, तो लगा कि पराये स्वर वहाँ गूँज रहे हैं, जिनमे चन्दा का भी एक है। हर तरफ, घर के हर कोने से अँधेरा सलाब की तरह बढता आ रहा था एक अजीब निस्तब्धता असमजस ! गति, पर पथभ्रष्ट ! शक्लें, पर आकारहीन।

'खाना खा लेते" चन्दा का स्वर कानो मे पडा। वह अनजाने ऐसे उठ बठा जसे तयार बैठा हो। उसकी बात की आज तक उसने अवज्ञा न की थी। खाने तो बैठ गया पर कौर नीचे नही सरक रहा था। तभी चन्दा ने बडे सधे शब्दो मे कहा, 'कल मैं गाँव जाना चाहती हूँ।'

जसे वह इस सूचना से परिचित था, बोला "अच्छा।'

चन्दा फिर बोली 'मैंने बहुत पहले घर चिट्ठी डाल दी थी भया कल लेन आ रहे है।'

ता ठीक है, जगपती वसे ही डूबा-डूबा बोला।

चन्दा का बाँध टूट गया और वह वहीं घुटनो म मुह दबाकर कातर-सी फफक फफक कर रो पडी। न उठ सकी, न हिल सकी।

जगपती क्षण भर को विचलित हुआ पर जैसे जम जाने के लिए। उसके होठ फडके और क्रोध के ज्वालामुखी को जबरन दबाते हुए भी वह फूट पडा, 'यह सब मुझे क्या दिखा रही है? बेशम ! बेगरत ! उस वक्त नही सोचा था जब जब मरी लाश तले "

तब तब की बात झूठ है ' सिसकियो के बीच चन्दा का स्वर फूटा, 'लकिन जब तुमने मुझे बेच दिया '

एक भरपूर हाथ चन्दा की कनपटी पर आग सुलगाता पडा। और जगपती अपनी हथेली दूसरी से दाबता, खाना छोड कोठरी म घुस गया। और रात भर कुण्डी चढाये उसी कालिख म घुटता रहा।

दूसरे दिन चन्दा घर छोड अपने गाँव चली गयी।

जगपती पूरा दिन और रात टाल पर ही काट देता उसी वीरान मे तालाब के बगल, कब्र, बबूल और ताड के पडोस मे। पर मन मुर्दा हो गया था। जबरदस्ती वह अपन को वहीं रोके रहता। उसका दिल होता कहीं निकल जाय। पर ऐसी कमज़ोरी उसके तन और मन को खोखला कर गयी थी कि चाहन पर भी वह जा न पाता। हिकारत भरी नजरें सहता पर वहीं पडा रहता। काफी दिनो बाद जब नही रहा गया तो एक दिन जगपती घर पर ताला लगा नजदीक के गाँव मे लकडी कटाने चला गया। उसे लग रहा था कि अब वह पगु हो गया है बिलकुल लगडा एक रेंगता कीडा जिसके न आँख है न कान, न मन न इच्छा।

वहं उस बाग मे पहुँच गया जहा खरीद पेड कटने थे। दो आरेवालो ने पतले पेड के तन पर आरा रखा और कर कर का अबाध शोर शुरू हो गया। दूसरे पेड पर बन्न और शकूर की कुल्हाडी बज उठी। और गाव से दूर उस बाग मे एक लयपूर्ण शोर शुरू हो गया। जड पर कुल्हाडी पडती, ता पूरा पेड थर्रा जाता।

क़रीब के खेत की मेड पर बठे जगपती का शरीर भी जैसे काप-काप उठता। चन्दा ने कहा था, लेकिन जब तुमने मुझे बेच दिया—' क्या वह ठीक कहती थी? क्या बचनसिंह ने टाल के लिए जा रुपये दिये थ, उसका ब्याज इधर चुकता हुआ? क्या सिफ वही रुपये आग बन गये, जिसकी आँच म उसकी सहनशीलता, विश्वास और आदश मोम से पिघल गये।

'श कूरे!' बाग स लग दडे पर से किसी न आवाज़ लगायी। शकूरे ने कुल्हाडी रोककर वही स हाक लगायी 'कोने के खेत से लीक बनी है, जरा मेड मारकर नँघा ला गाडी।

जगपती का ध्यान भग हुआ। उसने मुडकर दडे पर आखें गडायी। दा भैंसा-गाडियाँ लकडी भरन के लिए आ पहुँची थी। शकूरे ने जगपती क पास आकर कहा "एक गाडी का भत ता हो गया, बल्कि डेढ का अब इस पतरिया पेड को न छाँट दें?'

जगपती ने उस पड की ओर देखा, जिसे काटने के लिए शकूर न इशारा किया था, पेड की शाख हरी पत्तिया से भरी थी। वह बोला अरे यह तो हरा है अभी इसे छाड दो।'

हरा होने से क्या, उखट ता गया है। न फूल का, न फल का। अब कौन इसमे फल-फूल आयेंगे, चार दिन म पत्ती झुरा जायेंगी। शकूर ने पेड की ओर देखत हुए उस्तादी अन्दाज़ से कहा।

'जसा ठीक समझो तुम' जगपती ने कहा, और उठकर मेड-मेड पक्के कुएँ पर पानी पीन चला गया।

दोपहर ढलत गाडियाँ भरकर तैयार हुइ और शहर की ओर रवाना हो गयीं। जगपती का उनके साथ आना पडा। गाडियाँ लकडी से लदी शहर की ओर चली जा रही थी और जगपती गदन झुकाये कच्ची सडक की धूल म डूबा भारी कदमों स धीरे धीर उन्हीं की बजती घटियों के साथ निर्जीव-सा बढता जा रहा था

कई बरस बाद राजा परदेस स बहुत-सा धन कमाकर गाडी म लादकर *अपने देस की आर लौट,' माँ सुनाया करती थीं,* 'राजा की गाडी का पहिया महल से कुछ दूर पतन की भाडी मे उलझ गया। हर तरह की कोशिश की पर पहिया न निकला। तब एक पडित ने बताया कि सकट के दिन का जन्मा बालक

पर पथरायी सी जडी थीं ।

मुशीजी बोले, 'अदालत से बच्चा तुम्हे मिल सकता है। अब काहे का शरम लिहाज !'

अपना कहकर किस मुह स मागू बाबा ? हर तरफ से कर्ज से दबा हूँ । तन स मन स पसे से, इज्जत से किसके बल पर दुनिया सँजोने की कोशिश करूँ ?" कहते कहते वह अपने म खो गया।

मुशीजी वहीं बठ गये । जब रात झुक आयी तो जगपती के साथ ही मुशीजी भी उठे। उसके कन्धे पर हाथ रखे वह उस गली तक लाये । अपनी कोठरी आने पर पीठ सहलाकर उन्होने उसे छोड दिया। वह गदन झुकाये गली के अँधेरे म उन्ही खयाला म डूबा ऐसे चलता चला आया जसे कुछ हुआ ही न हो। पर कुछ ऐसा बोध था, जो न सोचन दता था और न समझने। जब चाची की बैठक के पास से गुजरने लगा, तो सहसा उसके काना म भनक पडी— 'आ गये सत्यानासी ! कुलबोरन !"

उसने जरा नजर उठाकर देखा, तो गली की चाची भौजाइयाँ बठक मे जमा थी और चन्दा की ही चर्चा छिडी थी। पर वह चुपचाप निकल गया।

इतने दिनो बाद ताला खोला और बरोठे के अँधेरे मे कुछ सूझ न पडा, तो एकाएक वह रात उसकी आखों के सामने घूम गयी जब वह अस्पताल से चन्दा के साथ लौटा था। बवा चाची का वह जहर बुझा तीर, आ गये राजा निरबसिया अस्पताल से।' और आज सत्यानासी ! कुलबोरन ! और स्वय उसका यह वाक्य, जो चन्दा का छेद गया था 'तुम्हारे कभी कुछ न होगा !' और उस रात की शिशु चन्दा !

चन्दा के लडका हुआ है। वह कुछ और जनती, आदमी का बच्चा न जनती ! वह और कुछ भी जनती, कक्कड-पत्थर ! वह नारी न बनती, बच्ची ही बनी रहती उस रात की शिशु चन्दा ! पर चन्दा यह सब क्या करन जा रही है ? उसके जीते जी वह दूसरे क घर बैठने जा रही है ? कितने बडे पाप म ढकेल दिया चन्दा को पर उस भी तो कुछ सोचना चाहिए ! आखिर क्या ? पर मेरे जीते जी तो यह सब अच्छा नहीं। वह इतनी घृणा बर्दाश्त करके भी जीने को तयार है ! या मुझे जलाने को ? वह मुझे नीच समझती है कायर नहीं तो एक बार खबर तो लती। बच्चा हुआ तो पता तो लगता। पर नहीं वह उसका कौन है ? कोई भी नहीं ! औलाद ही तो वह स्नेह की धुरी है जो आदमी-औरत के पहियों को साधकर तन के दलदल से पार ले जाती है—नहीं तो हर औरत वेश्या है और हर आदमी वासना का कीडा। तो क्या चन्दा औरत नहीं रही ? वह जरूर औरत थी पर स्वय मैंने उसे नरक म डाल दिया ! वह बच्चा मरा कोई नहीं, पर चन्दा तो मरी है। एक बार उसे ले आता फिर यहाँ रात के माहक

अँधेरे म उसके फूल से अधरो को देखता निद्र द्र सोये पलको को निहारता साँसो की दूध-सी अछूती महक को समेट लेता ।

आज का अँधेरा ! घर म तेल भी नही जो दिया जला ल। और फिर किसके लिए कौन जलाये ? चन्दा के लिए पर उसे तो उसने बच दिया था। सिवा चदा के कौन-सी सम्पत्ति उसके पास थी, जिसके आधार पर कोई कज देता ? कज न मिलता, तो यह सब कसे चलता ? काम पेड कहाँ से कटते ? और तब शकूरे के वे शब्द उसके कानो म गूज गये, हरा हान से क्या उखट तो गया है ' वह स्वय भी तो एक उखटा हुआ पेड है न फल का न फूल का सब व्यथ ही तो है। जो कुछ सोचा, उस पर कभी विश्वास न कर पाया। चन्दा को चाहता रहा पर उसके दिल म चाहत न जगा पाया। उसे कही से एक पसा माँगने पर डाँटता रहा पर खुद लेता रहा और आज वह दूसरे के घर बठ रही है उसे छोडकर वह अकेला है हर तरफ बोझ है जिसम उसकी नम नस कुचली जा रही है रग रग फट गयी है। और वह किसी तरह टटोल टटोलकर भीतर घर मे पहुँचा ।

रानी अपने कुल देवता के मदिर म पहुँची ' माँ सुनाया करती थी "अपने सतीत्व को सिद्ध करने के लिए उन्होने घोर तपस्या की। राजा देखते रहे ! कुल देवता प्रसन्न हुए और उन्होने अपनी दवी शक्ति से दोनो बालको को तत्काल जन्म शिशुओ म बदल दिया। रानी की छातियो मे दूध भर आया और उनम से धार फूट पडी जो शिशुओ के मुह म गिरन लगी। राजा को रानी के सतीत्व का सबूत मिल गया। उन्होन रानी के चरण पकड लिये और कहा कि तुम देवी हो ! ये मेरे पुत्र है ! और उस दिन से राजा ने फिर से राजकाज सभाल लिया ।

पर उस रात जगपती अपना सारा कारबार त्याग अफीम और तेल पीकर मर गया। क्योकि चन्दा क पास कोई दवी शक्ति नहा थी और जगपती राजा नही बचनसिंह कम्पाउन्डर का कजदार था !

राजा न दा बातें की माँ सुनाती थी एक तो रानी क नाम से उ हाने बहुत बडा मन्दिर बनवाया और दूसर राज के नये सिक्का पर बडे राजकुमार का नाम खुदवाकर चालू किया जिससे राज भर म अगले उत्तराधिकारी की खबर हो जाय

जगपती ने मरत वक्त दो परचे छाडे एक चन्दा के नाम दूसरा कानून के नाम।

चन्दा को उसने लिखा था—चन्दा मेरी अंतिम चाह यही है कि तुम बच्चे को लेकर चली आना अभी एक दो दिन मेरी लाश की दुर्गति होगी तब तक तुम आ सकोगी। चन्दा आदमी को पाप नहीं पश्चाताप मारता है। मैं बहुत पहले मर चुका था। बच्चे को लेकर ज़रूर चली आना।

कानून को उसने लिखा था—किसी ने मुझे मारा नहीं है किसी आदमी ने नहीं। मैं जानता हूँ कि मेरे ज़हर की पहचान करने के लिए मेरा सीना चीरा जायगा। उसमें जहर है। मैंने अफीम नहीं, रुपये खाए हैं उन रुपयों में कर्ज़ का जहर था उसी ने मुझे मारा है। मेरी लाश तब तक न जलाई जाय जब तक चन्दा बच्चे को लेकर न आ जाय। आग बच्चे से दिलवायी जाय। बस।

माँ जब कहानी समाप्त करती थी, तो आसपास बैठे बच्चे फूल चढ़ाते थे। मेरी कहानी भी खत्म हो गयी, पर

जोखिम

दूर-दूर तक फैला हुआ समुद्र। सफेद लकीर की तरह पानी की सतह का छोर और उसके बाद एकदम ऊपर उठता हुआ आसमान। मीलों दूर जब सतह के छोर पर किसी नाव का पाल परचम की तरह उभरता था, तो मैं सतर्क हो जाता था। शायद उन्हीं की हो। पर यह वक्त उनके आने का नहीं होता। समुद्र में बारह मील बाद अन्तर्राष्ट्रीय जल सीमा शुरू हो जाती है। तस्कर व्यापारी उस सीमा के बाहर रहते हैं। फिर वक्त बेवक्त वे आते हैं। गज सुनायी पडता था कि करोडों रुपयों का सोना और सामान बम्बई के तटों पर तस्करी से उतरता है कि वे लोग अरब सागर में पालदार नावों या मोटरबोटों में आते हैं—वे कब और कहां आते हैं वे कैसे होते हैं यह देखने के लिए मेरा मन अधीर था।

इसी इच्छा से मैं सूने किनारों पर जाता था। काफी रात गये तक उनकी बाट जोहता था कि शायद कहीं वे दुस्साहसी मल्लाह दिखायी पड जायें, पर वे कभी नजर नहीं आये। वे बार बार आये और तटों पर लाखों का माल उतारकर चले गये पर मुझे छलते रहे।

कभी कभी आसमान में चांद होता था। मैं किनारे पर खडा-खडा देखा करता था। असीम तक फैला हुआ समुद्र। हर समय मेरी ही तरह अकुलाता हुआ। रह रहकर उफनता हुआ। फिर शांत होकर लौटता हुआ। जब-जब समुद्र था और मैं था—तब तब मुझे कभी डर नहीं लगा। आसमान में चांद हुआ तो और भी अच्छा लगता था। तब, जहां मैं खडा होता था वहां से कुछ ही दूर सागर पर एक चमकती हुई सडक शुरू होती थी और अनंत तक जाती थी। इस सडक को मैं कभी पकड नहीं पाया। कुछ दूर पानी में जाता तो वह चमकीली सडक फिर कुछ दूर से शुरू हो जाती। दूरी बहुत जरा सी थी पर वह सरकती जाती थी।

अपने इस बचपने पर मुझे तरस आता था। मैं जानता था कि यह समुद्र है और चांदनी की यह झिलमिलाती सडक न कहीं शुरू होती है न कहीं पहुंचाती

है, पर मन जब उदास होता है और शहर की सडकें काटनी है, तब ऐसी ही किसी पानी की सडक पर कदम बढाने का पागलपन हावी हो जाता है।

यह उदासी और बदहवासी भी अब बहुत बेकार-सी लगने लगी है। राहत मिलती ही नही। मैं किस तरह की राहत चाहता हूँ—यह भी बता सकना काफी मुश्किल हो जाता है। अपने को आर्थिक कष्ट कभी ज्यादा होता है। कभी किसी के साथ के लिए जी घबराता है। कभी किसी दोस्त के लिए मन परेशान होता है। कभी मां का खयाल आता है। इज्जत सुविधा और मानसिक तृप्ति के लिए कभी कभी छटपटाता हूँ। कभी मैं पेंटर हो जाना चाहता हूँ—कभी हारकर बूट लेगर बन जाने की कल्पना मे राहत मिलती है। पनाह की यह कोशिश कही ले नही जाती। सारी दुनिया की तरह मैं कभी भी क्यो नही समझौता कर लेता और सुख पाता ?

बस चारो तरफ धुआं धुआं सा होता है। भीड और शोरगुल होता है। कुछ इच्छाएँ याद आती हैं कुछ कामनाएँ घुमडती रहती है। इच्छाएँ अरूप होती हैं। कामनाएँ शब्दहीन। कोई सतत कामना नही होती। वह भीतर ही भीतर टूटती और पिघलती रहती है।

ऐसे म मैं उन्ह याद करता हूँ जिनसे कुछ बात की जा सकती है। कोई पास तो नही होता, पर मैं अकेले म ही उनसे सुविधापूवक बातें कर लेता हूँ। क्योकि उनके उत्तर मुझे लगभग मालूम हैं। मां को ही लू। अगर मैं उससे कहूँ कि मैं बहुत परेशान हू और बम्बई मे भी मुझे जीने की राह नही मिल रही है तो वह करीब करीब यही कहेगी—'तब यही रहो—वहाँ क्यो अपनी जिन्दगी बरबाद कर रहे हो ? अगर मैं कहूँ कि मैं बहुत आराम से हूँ और मुझे बम्बई म आगे की राह दिखायी दे रही है तो वह कहगी— जसा तुम ठीक समझो। मैं क्या कह सकती हूँ। तुम्हारी खशी मे मरी खुशी है '

अकेले म मैं यह बातें आसानी स कर लेता हूँ—एसे म मरा झूठ या अदरूनी परेशानी पकडी नही जाती। मैं काफी सुरक्षित महसूस करता हूँ। अपना अँधेरा मैं सहज लेता हूँ। और अपन अँधेरे मे ही मुझे वह झिलमिलाती हुई पानी की सडक दिखायी देती है जिस पर अनत तक जाने को दिल मचलता है। पर वह होता नही।

तब ये इमारतें—सहसा और ऊपर उठ जाती ह। आसमान म बने घरो की रोशनी मुझे त्रस्त करती है। उनकी झिलमिलाती दूधिया रोशनी। रेशमी तन छोटे छोटे पत्थरो पर बहते झरने के पानी की तरह गूजती मदमस्त खिलखिलाहट, बेपरवाही का आलम और उनके चेहरो की निश्चितता मुझे कचोटती है। इनके दुख कहाँ हैं ?

अब न मैं मां से अपने दुख कहता हूँ न मां मुझे अपने दुख बताती है। हम

दोनो एक दूसरे के दु खो यातनाओ से कतराते हैं। वह अपने शहर म सबको यही बताती है कि मैं बडे आराम से हूँ और मुझे अगर बताने की जरूरत पड ही गयी, तो कहता हूँ— माँ है वह बडे आराम से गुजर कर लेती है। धीरे-धीरे हम इस दारुण समझौते पर पहुँच गये हैं। अवशता म हमारा यह आपसी समझौता हम राहत देता है।

माँ के खत अब भी आते हैं। उनकी लिखावट फिर बदल गयी थी। इसलिए नही कि माँ बूढी हो गयी थी। इसलिए कि जगन्नाथ पोस्टमैन मर गया था। वही माँ के खत लिपिबद्ध करता था। जब भी दो-एक या तीन चार साल बाद कभी माँ के खत की लिखावट बदलती थी मैं समझ जाता था बस्ती मोहल्ले का कोई और चल बसा। अक्सर यही होता था। मेरी माँ बहुत अनुदार किस्म की है—यानी ऐसी कि जो अपने सम्बन्ध और आस्थाएँ जल्दी जल्दी नही बदलती। एक ही व्यक्ति उसके खत तब तक लिपिबद्ध करता था जब तक कि मर नही जाता था या बस्ती छोडकर कही चला नही जाता था।

पाँच बरस पहले जब एक बार खत की लिखावट बदली थी तो मुझे धक्का सा लगा था। तब वह अपने खत मास्टरजी से लिखवाया करती थी। मास्टरजी की लिखावट म आनेवाले खतो म दोहरी खुशी थी। उसमे सब-कुछ लिखा जा चुकता था तो बची हुई जगह म माँ की तरफ से ही एक वाक्य और लिखवाया हुआ (या लिखा हुआ) होता था—'अम्माजी कह रही हैं कि अब तुम लौट जाओ। जस भी हो चले जाओ। इस लाइन की लिखावट फरक होती थी। तब यह वाक्य दोहरा अर्थ देने लगता था। यह लाइन पुनीता लिखती थी। मास्टरजी की लडकी पुनीता के लिए कोई खास लगाव मेरे मन म उस वक्त नही था जब मैं शहर छोड कर आया था। कोई खास बात थी भी नही। पर धीरे धीरे अम्मा के खतो मे एक लाइन लिखते लिखते उसने अजीब-सी जगह मेरे आसपास बना ली थी। शुरू शुरू म उसका यह लिखना मुझे जरा रोमांटिक लगने लगा था जिसका मेरी सच्चाइयो से कोई मेल नही बैठता था। अगर मैं यह मान लूँ कि कोई लडकी मुझे चाहती है तो क्या फरक पडता है? यह 'चाहना' मेरी जिन्दगी म कहाँ फिट बठता है? कहाँ है वह वक्त कि मैं किसी को चाह सकूँ? दादर या वी० टी० प्लेटफार्म की भीड म या बसो मे चढ़ते उतरते, या पैदल दौडते भागते—कहाँ मैं उसे चाह सकूँगा? उतरती शाम को क्रॉस मैदान के अँधेरे म उसे घास पर लेकर बैठ भी जाऊँ तो ज्यादा से ज्यादा लिपटा लूँगा चूम लूँगा—पर रात होते उसे कहाँ ले जाऊँगा? कहाँ सुलाऊँगा? यह सब निक्कत की बात है। अपने हालात से ऊपर की स्थिति।

तमाम लोग एक दूसरे को चाहने जाते हैं। वे क्रास मैदान के अँधेरे म घास

पर, या चौपाटी की चट्टानों की आड में, या महालक्ष्मी के पीछे समुद्र की बौछार मे भीगते पत्थरो की गोद मे या कमला गार्डेन्स की अँधेरे में पडी बेंचो पर बैठकर कुछ थोडा बहुत प्यार कर लेते हैं। फिर लडकी अपने घर चली जाती है, आदमी अपने घर। पर किसके पास है घर ? किस काम आता है घर ?

मैंने एक दूकान का पता दे रखा था। मा के खत वही आते थे। हर वार वह मुझे वापस बुलाती थी। उसकी यह आदत-सी पड गयी थी

उस रोज़ सागर पर धुध छायी हुई थी। मानसून चारो तरफ था। मलाबार पहाडी उस धुध म खो गयी थी। सिर्फ मेरे चारो ओर पचास-पचास गज़ तक साफ साफ दिखायी दे रहा था। उसके बाद कुछ नही। एक मिनट बाद सागर का भी एक छोटा-सा टुकडा भर रह गया था। बाकी अदृश्य हो गया था। एक निहायत छोटी सी धुध की दुनिया म मैं घिर गया था। तब मैं था, धुध थी और सागर के टुकडे पर दो जल पक्षी। सफेद प्रकृति म ज्यादा सफेद पखोवाले। व टीस की तरह चमक रहे थे।

तब मैंने हिसाब लगाया था यह शहर मुझे और कितने दिनो के लिए पनाह दे सकता है ? तीन दिन पूरे और एक सुबह ! इससे ज्यादा नही।

जब भी ऐसा मौका आता था, मैं दौड भाग शुरू कर देता था। लोगो से मिलता था बडी बडी और छोटी मामूली कम्पनियो के चक्कर काटता था। लोग मुझे काफी आदर स लेते थे। उन्होंने कभी मेरा अपमान नही किया। हमेशा मेरी दिक्कतें और जरूरतें बडे ध्यान और सवेदना से सुनी हैं और जवाब मे अपनी दिक्कतें बयान की हैं। ऐसे म हमेशा उनकी दिक्कतें ज्यादा बडी होती थी और मैं क्षण भर क लिए अवसन्न रह जाता था—लगता था कि उनकी दिक्कतो के सामने मेरा दस दिन फाका कर लेना भी मुनासिब और मामूली है। व बडी-बडी बातो को मुलझा रहे होते हैं। तब मैं खुद को बहुत हकीर बात के लिए खडा पाता था। और मन ही मन मुरझा जाता था और तब अपने म ऊब उबकर पता नही क्या ऐसा होता था कि मैं उन लोगो के नाम तक भूल जाता था। कभी कभी तो चेहरे भी। शायद मेरे असफल होते जाने की एक बडी वजह यह भी थी। बेकार होने के कारण मैं ज्यादातर अच्छे और प्रतिष्ठित व्यक्तियो से ही मिलने की कोशिश म रहता था। जब उनकी दिक्कतें मुझे छोटा और खुदगर्ज साबित कर देती थी तो न मालूम उनके चेहरे क्या मेरी याद से उतर जाते थ। फिर कभी व मिलते तो मैं उन्हें पहचानने और याद करने की बेतरह कोशिश करता पर कुछ होता नहीं था। उनम से कुछ भले लोग मुझे पहचान लेते थे और मुस्कराकर मेरा हाल भी पूछ लेते थ। मैं उनम बातें भी कर लेता था पर यह याद नही कर पाता था कि वह या व व्यक्ति कौन था या थ।

दोनो एक दूसरे के दु ख। यातनाआ स बतरात हैं। वह अपने शहर म सबको यही बताती है कि मैं बडे आराम से हूँ और मुझे अगर बतान की जरूरत पड ही गयी, तो कहता हूँ—'माँ है वह बडे आराम से गुज़र कर लेती है।' धीरे-धीरे हम इस दारुण समझौते पर पहुँच गये हैं। अवशता म हमारा यह आपसी समझौता हम राहत देता है।

माँ के खत अब भी आते हैं। उनकी लिखावट फिर बदल गयी थी। इसलिए नही कि माँ बूढ़ी हो गयी थी। इसलिए कि जगन्नाथ पोस्टमन मर गया था। वही माँ के खत लिपिबद्ध करता था। जब भी दो एक या तीन चार साल बाद कभी माँ के खत की लिखावट बदलती थी मैं समझ जाता था बस्ती मोहल्ल का कोई और चल बसा। अक्सर यही होता था। मरी माँ बहुत अनुदार किस्म की है—यानी ऐसी कि जो अपने सम्बन्ध और आस्थाएँ जल्दी जल्दी नही बदलती। एक ही व्यक्ति उसके खत तब तक लिपिबद्ध करता था जब तक कि मर नही जाता था या बस्ती छोडकर कही चला नही जाता था।

पाँच बरस पहल जब एक बार खत की लिखावट बदली थी तो मुझे धक्का सा लगा था। तब वह अपने खत मास्टरजी से लिखवाया करती थी। मास्टरजी की लिखावट म आनेवाले खतो मे दोहरी खुशी थी। उसम सब कुछ लिखा जा चुकता था, तो बची हुई जगह म माँ की तरफ से ही एक वाक्य और लिखवाया हुआ (या लिखा हुआ) होता था—अम्माजी कह रही है कि अब तुम लौट जाओ। जसे भी हो चले जाओ। इस लाइन की लिखावट फरक होती थी। तब यह वाक्य दोहरा अथ देने लगता था। यह लाइन पुनीता लिखती थी। मास्टरजी की लडकी पुनीता के लिए कोई खास लगाव मेरे मन म उस वक्त नही था जब मैं शहर छोड कर आया था। कोई खास बात थी भी नही। पर धीरे धीरे अम्मा क खतो म एक लाइन लिखत लिखत उसन अजीब सी जगह मरे आसपास बना ली थी। शुरू शुरू म उसका यह लिखना मुझे जरा रोमांटिक लगने लगा था जिसका मेरी सच्चाइया स कोइ मल नही बठता था। अगर मैं यह मान लू कि कोई लडकी मुझे चाहती है तो क्या फरक पडता है? यह 'चाहना' मरी जि दगी म कहाँ फिट बठता है? कहाँ है वह वक्त कि मैं किसी को चाह सकू? दादर या वी० टी० प्लेटफाम की भीड म या बसो म चढते उतरत या पदल दौडत भागते—कहा मैं उस चाह सकूगा? उतरती शाम को क्रास मदान के अँधेरे म उसे घास पर लेकर बठ भी जाऊँ तो ज्यादा स ज्यादा लिपटा लूगा चूम लूगा— पर रात होते उस कहाँ ले जाऊगा? कहा सुलाऊँगा? यह सब दिक्कत की बात है। अपन हालात से ऊपर की स्थिति।

तमाम लाग एक दूसरे को चाहते आत है। वे क्रास मदान के अधेरे म घास

पर, या वीचकैण्डी की चट्टानो की आड म, या महालक्ष्मी के पीछे समुद्र की बौछार म भीगते पत्थरो की गोद म या कमला गार्डेन्स की अँधेरे मे पडी बेंचो पर बैठकर कुछ थोडा बहुत प्यार कर लेते हैं। फिर लडकी अपने घर चली जाती है आदमी अपन घर। पर किसके पास है घर ? किस काम आता है घर ?

मैंन एक दूकान का पता दे रखा था। माँ के खत वही आते थे। हर बार वह मुझे वापस बुलाती थी। उसको यह आदत-सी पड गयी थी

उस राज़ सागर पर धुध छायी हुई थी। मानसून चारो तरफ था। मलाबार पहाडी उस धुध म खो गयी थी। सिफ मेरे चारों ओर पचास-पचास गज़ तक साफ माफ दिखायी दे रहा था। उसके बाद कुछ नही। एक मिनट बाद सागर का भी एक छोटा-सा टुकडा भर रह गया था। बाक़ी अदृश्य हो गया था। एक निहायत छोटी सी धुध की दुनिया म मैं घिर गया था। तब मैं था, धुध थी और सागर क टुकडे पर दो जल पक्षी। सफेद प्रकृति म ज्यादा सफेद पखोवाले। व टीस की तरह चमक रहे थे।

तब मैंन हिसाब लगाया था, यह शहर मुझे और कितने दिनो के लिए पनाह दे सकता है ? तीन दिन पूरे और एक सुबह ! इससे ज्यादा नही।

जब भी ऐसा मौका आता था, मैं दौड भाग शुरू कर देता था। लोगो से मिलता था बडी बडी और छोटी मामूली कम्पनियो के चक्कर काटता था। लाग मुझे काफी आदर से लेते थे। उन्होंन कभी मरा अपमान नही किया। हमेशा मेरी दिक्क़तें और ज़रूरतें बडे ध्यान और सवेदना से सुनी हैं और जवाब म अपनी दिक्क़तें बयान की हैं। एस मे हमेशा उनकी दिक्कतें ज्यादा बडी होती थी और मैं क्षण भर के लिए अवसन्न रह जाता था—लगता था कि उनकी दिक्कतो के सामने मेरा दस दिन फाका कर लेना भी मुनासिब और मामूली है। व बडी बडी बातो को मुलझा रह होते है। तब मैं खुद को बहुत हकीर बात के लिए खडा पाता था। और मन ही मन मुरझा जाता था, और तब अपन म ऊब उबकर पता नही क्या एसा होता था कि मैं उन लोगों के नाम तक भूल जाता था। कभी कभी तो चेहरे भी। शायद मरे असफल होते जाने की एक बडी वजह यह भी थी। बेकार होन के कारण मैं ज्यादातर अच्छे और प्रतिष्ठित व्यक्तियो से ही मिलने की कोशिश म रहता था। जब उनकी दिक्कतें मुझे छोटा और खुदगर्ज़ साबित कर देती थी तो न मालूम उनके चेहरे क्या मेरी याद से उतर जाते थे। फिर कभी व मिलते तो मैं उन्ह पहचानन और याद करन की बेतरह कोशिश करता पर कुछ होता नही था। उनम स कुछ भले लोग मुझे पहचान लेते थे और मुस्कराकर मरा हाल भी पूछ लेते थे। मैं उनसे बातें भी कर लेता था, पर यह याद नही कर पाता था कि वह या व व्यक्ति कौन था या थे।

सही पूछिए तो मेरे पास कुछ यात्रा और एक लुहलुहान जिन्दगी के सिवा और कुछ नही है। माँ है और माँ के अडोसी-पडोसी हैं पुनीता है और वे लोग हैं, जो मा के लिए खत लिख देते हैं। इसके अलावा एक बडी नाकाम, सीमित और बेकार सी जिन्दगी है। या सब चलता है चलता जाता है। पर यह क्यो और किसलिए है, इसका कुछ अदाज़ नही होता।

मैं कहा से शुरू करूँ? या सघष शुरू करूँ? कहा से? जहा बताइए—जाकर काम करने लगूँ। सडक खोदने लगू या अस्पताल म जाकर मरीज़ो की खून सनी पट्टियाँ साफ करने लगू या गोदी पर जाकर गाठें उठाने लगू या लडकिया के लिए आदमी तलाश करके लाने लगू या शराब पहुचाने लगूँ या नरीमन पाइट पर खडे होकर दोनो हाथ आसमान की तरफ उठाकर चीख पड़ू। क्या करूँ?

योगी राव की तरह पानी पर चलकर दिखाने का कोई पाखण्ड रचूँ? या उस जवान साधू की तरह किसी सेठ की बीवी को लेकर भाग जाऊँ या चने खाते हुए इस निरीह से मजदूरनुमा आदमी के तमाचा मार दू?

ज्यादा खुशनसीब हैं वे औरतें जो तन का धन्धा करके कुछ कर लेती हैं। दु ख सुख की अच्छी बुरी जिन्दगी जी लेती हैं। मेरे पास तो वह भी नही है। न दु ख न सुख। सिफ एक ठहराव। कोई काम आठ दस दिन स ज्यादा नही चलता। फिर वही। वही ठहराव। तब आखें सिफ कुछ दूर तक दख पाती है, उसके आगे कुछ देखती ही नही। यह क्यो होता है? दष्टि क्यो बँध जाती है? एक बहुत छोटी सी दूरी तक आख देख पाती है—वह भी साफ साफ नही। सिफ धब्बे धब्ब हात है। धुधली सफेदी या रग के बदरग धब्बे। उनके अलावा और कुछ दृष्टि म समाता ही नहीं। नजर जसे बध जाती है। सब चीजा पर झीना सा परदा पड जाता है। और जब आँखो क साथ यह हाता है तब दिमाग भी थोडा सा कुछ सोचकर ठहर जाता है। फिर चलता ही नही। कान कुछ आवाजें सुनकर वीरान हो जाते है फिर कुछ सुनते ही नहा। तब बडी मुश्किल स मुझे अपन पर काबू पाना पडता है। बेहद कोशिश क बाद समुद्र का विस्तार आँखा को नज़र आता है। दिमाग जागत हाता है। कानो म शार आने लगता है। यही सब रुक रुककर चलता रहता है।

उस दिन दूकान पर गया तो माँ का खत आया हुआ था। उसकी तबीयत कुछ खराब थी और उसने लिखवाया था कि मरन से पहले वह एक बार मुझे देख लना चाहता है। यह कोई बहुत बडी तमन्ना नहा थी और इतनी बेहूदा भी नही कि मुझ हँसी आ जाती। पर उन दिनो मैं उसी चक्कर म उलझा हुआ था। दुस्साहसी मल्लाहा वाले चक्कर म!

रोज़ रोज़ सुनायी पडता था कि करोडा रुपये का सोना और सामान बम्बई के

तटों पर तस्करी से उतरता है। वे लोग अरब सागर से आते हैं। छोटी छोटी, पालदार नावों में। और अँधेरे में आकर तटों पर सामान उतार जाते हैं। कभी बसई की खाडी में कभी मफतलाल पार्क की आलीशान इमारतों के पास पथरीले तट पर। कभी गोदी के पासवाले टापुओं पर। कभी मार्वे तट पर या चौपाटी के नज़दीक। कभी कन्हेरी गुफाओं के पास किले की तलहटी में। कभी घोडबंदर की खाडी में।

मैंने इन करोडपति तस्कर व्यापारियों को नहीं देखा था। अरबों रुपये का माल छोटी छोटी नावों में रोजाना आता था। मैं उन दुस्साहसी अरब मल्लाहों को ख़ासतौर से देखना चाहता था। इसलिए मैं उन दिनों इसी टोह में रहता था कि रात बिरात कहीं किसी तट या खाडी में ये लोग नजर आ जायें। उनसे न भी मिल पाऊँ तो पाल उडाती नावों को ही देख सकूँ। इस योजना के वशीभूत मैं माँ के पास नहीं जा पाया था। फिर जाने लायक पैसा नहीं रह गया। और उसके बाद सत्रह दिनों का काम मिल गया था। एक औरत को शाम छः बजे ग्रांट रोड से बुलावा पहुँचाना होता था और ग्यारह बजे उसे वापस लाना होता था। लौटते वक्त वह बहुत खुश और पियेली होती थी। हलके नशे में।

छः बजे से ग्यारह बजे तक मैं एक तरह से बेकार रहता था। गाडी में होता तो वी० टी० से कल्याण और कल्याण से वी० टी० के कई चक्कर लगाकर सोया जा सकता था। चलती सडकों पर सो सकना मुमकिन नहीं था। कफ परेड की बेंचों पर जगह नहीं मिलती थी। बिना लडकी के उन पर बैठना जुर्म-सा लगता था।

ग्यारह बजे चलकर मैं उस लडकी को क़रीब पौने बारह बजे उसके घर छोड देता था और ग्रांट रोड से गाडी पकडकर सेंट्रल पहुँच जाता था।

सत्रह दिन बाद फिर वही हालत हो गयी और अब यह मुश्किल लग रहा था कि कोई भी कायदे का काम मिल पाएगा। एक दफा गलत काम ले लेने के बाद मैं हमेशा उससे भी ज्यादा गलत काम लेने को मजबूर होता रहा हूँ। मेरी सीढी नीचे चढती थी

आखिर माँ का एक ख़त और आया और मैं हारकर घर चल दिया। रास्ते भर मैं यही सोचता जा रहा था कि अरब सागर में वे दुस्साहसी मल्लाह कैसे करोडों का माल लादकर चले जाते होंगे। अथाह समुद्र में छोटी छोटी नावें लिये। निरंतर खतरे की ओर बढते हुए। फारस की खाडी और लाल समुद्र से बम्बई तक। एक बार अरब धौ का एक मल्लाह पकडा गया था। मैं बडी श्रद्धा लेकर उसे देखने गया था। वह पुलिस की हिरासत में था। छडों वाले दरवाजे के भीतर आराम से बैठा हुआ। उसे देखकर यह विश्वास ही नहीं हुआ कि यह तस्कर

व्यापारी हो सकता है। लगा था इस आदमी को ख्वामख्वाह ही पकड़ लिया गया है। लेकिन समुद्र पर और आदमी कहाँ हैं कि समुद्री पुलिस गलत आदमी को पकड सके।

रास्ते भर अरब धो का वह मल्लाह मेरी चेतना म अटका रहा। फिर उसका ध्यान कुछ ऐसा उतरा कि मैंने उसकी शक्ल बहुत याद करन की कोशिश की वह शक्ल आँखें बन्द करने के बाद भी स्वरूप नही ले सकी। पता नही, यह गड्डमड्ड मेरे साथ ही होता है या किसी और के साथ भी कभी होता है? शक्लें बातें घटनाएँ—दिमाग से उतर जाती है। खर

मैं पाँच साल बाद माँ के पास लौट रहा था। मुझे यह पूरी उम्मीद थी कि उसके साथ कोई दुघटना नही होगी। मुश्किल यही है कि हमारे जस लोगो के साथ कोई दुघटना नही होती। अच्छी न बुरी। हम सागर की निचली सतह की तरह ठहरे हुए बस कापते रहते हैं। लहरो का शोर गति और उनका टूटना बिखरना ऊपर ही होता है।

पाँच सालो म कुछ खास बदलाव की उम्मीद मुझे नही थी। मा भी और कितनी बूढी हो सकती थी? वह तब भी बहुत बूढी थी। उतने बुढापे के बाद और बुढापा क्या हो सकता था? चरम क बाद और क्या हो सकता है?

पर जब मैं पहुँचा तो एक ही बात बडी दुखद थी। माँ सचमुच बीमार थी। उसे लकवा लग चुका था। दायाँ अग सुन हो चुका था। मैंने जब उसकी आँखो म देखा तो उनमे कोई हरकत नही हुई। यह मुझे अजीब लगा। पर तभी थरथराते बायें हाथ स मेरे मुह पर हाथ फेरते हुए वह बोली थी— मैं तुझे देख भी नही सकती।

मा अधी हो गयी थी। पाच साल पहले, जाते वक्त उसने मुझ देखा था। मुझे क्या मालूम था कि यह हो जायगा। अगर इतना पता होता तो तीन या चार महीने पहले लौट आता—जब उसकी आँखो म थोडी-थोडी रोशनी बाकी थी। वह मुझे देख लेती। पता नही उसकी यह इच्छा क्यो थी?

थोडी सी तस्कीन इस बात स जरूर मिली थी कि मैं अगर उन दिनो भी लौट आता, जब मैं इन मल्लाहो को देख सकने के लिए रुका हुआ था तब भी बात कुछ नही बनती। मा ने बताया कि वह डेढ साल पहले ही अधी हो चुकी थी।

उन मल्लाहो को देखने के लिए मैंने अपने मन के फसले के मुताबिक वक्त बिगाडा था। मुझे लगा कि जो वक्त अपने फसले के मातहत गुजारा जाता है वही भारी पड जाता है। सिर्फ वही वक्त पश्चाताप का कारण बन जाता होगा।

माँ की हालत अच्छी नहीं थी। उसका शरीर धीरे धीरे जान छोड रहा था। वाणी बन्द होने से पहले उसने मुझे कुछ जरूरी बातें बतायी थी—कि कुछ रुपया वैद्यजी का देना था कि वह तीस रुपये माहवार के हिसाब से खर्चा नहीं चला पायी थी। माँ को ये तीस रुपये एक दान-खाते से मिलते थे। उसने बताया था कि उम्र के साथ उसकी जरूरतें और भूख घट रही थी, पर पता नहीं बाजार को क्या हो रहा था कि खर्चा बढता जाता था। इस बात को लेकर वह बहुत परेशान और दुखी थी। मैं उसे क्या समझाता? अगर समझाता भी तो क्या होता? उसकी वाणी बन्द हो चुकी थी। वह सहमत न होती तो भी क्या कह सकती थी? मैं उसके दुख को बढाना नहीं चाहता था।

मैंने काफी दौड भाग की। अस्पताल के डाक्टर को लाया। वैद्यजी को लाया। सबने देखा। पर अब कुछ हो नहीं सकता था। जुबान बन्द होने के बाद माँ पत्थर की मूरत सी लगने लगी थी। दाहिने कंधे और आधे मुह तक वह सुन्न पड चुकी थी। अब और कोई चारा भी नहीं था। मुझे सिर्फ उसके पास रहना था और उसका ठंडा पडते जाना देखते रहना था।

दस ग्यारह दिन बाद मैं घबराने लगा। माँ बायें हाथ के पोरों पर धीरे धीरे कुछ गिनती रहती थी। जैसे कुछ हिसाब लगा रही हो। दसवें या ग्यारहवें दिन जब उसके बायें हाथ की अँगुलियाँ भी जकड गयीं तो मैं घबरा गया। अब उसकी देह में सब कुछ जड हो गया था। पर वह जीवित थी। अस्पताल के डाक्टर और मोहल्ले के वैद्यजी ने बडी इंसानियत से सब-कुछ मुझे समझाया। मैंने उनसे आकर देखने के लिए कहा तो उन दोनों ने ही जवाब दिया—अब देखकर क्या करेंगे? तीन चार दिन पहले ही तो देखा था। अब आप इंतजार ही कर सकते हैं।

तब मैं बहुत अकेला पड गया। पर उन दोनों की बात भी सही थी। वे क्या कर सकते थे। माँ को मरता हुआ देखकर मेरे होश उड गये थे। मैं कुछ भी सोच नहीं पा रहा था, किसे बुलाऊँ और किससे क्या कहूँ? मैं बेतरह परेशान हो गया था। जैसे जैसे वह मर रही थी वैसे वैसे मेरे पैर तले की जमीन घसकती जा रही थी। लग रहा था कि अब मैं कटी पतंग की तरह मँडराता रहूँगा। एक शून्य मेरे चारों तरफ भरता जा रहा था। कोई ऐसा नहीं था जिससे मैं बात कर पाता, जो मेरे भयावह शून्य को समझ पाता।

एक क्षण के लिए ऐसे में वही हुआ, जो मेरे साथ होता है। मैं किसी से कुछ बात करना चाहता था। अपनी बर्बादी और अंधे भविष्य की। मैं जानना चाहता था कि अब मेरा क्या होगा? माँ भी शायद यही जानना चाहती थी कि मेरा क्या होगा। इस दोगली अर्थ-व्यवस्था में मैं कब तक भटकता रहूँगा और उन लोगों की दिक्कतें कब खत्म होंगी जिन के सामने मैं खुद को खुदगर्ज लगने लगता था। मैं

किसी से पूछना चाहता था कि उनके पास कब जाऊँ ताकि वे मुझे कुछ बता सकें ऐसे शून्य म जब मुझे कुछ भी नही सूझा और अपने भय से घबराने लगा तो मैंने वित्तमंत्री मोरारजी देसाई को एक खत लिखा कि वे आकर मेरी मा की हालत देख जायें और मुझे कुछ बता जायें। मैं बहुत परेशान हूँ।

खत पाते ही वे फौरन आये। उन्होने मा को देखा और चुपचाप दुखी-से मेरे पास बठ गये। माँ तो कुछ देख ही नही सकती थी। वह सिफ धीरे धीरे मरती जा रही थी। पत्थर होती जा रही थी।

कुछ देर चुप्पी रही। मैं माँ के बारे म उनसे कुछ कहना चाहता था पर लगा कि व्यथ होगा। अब क्या हो सकता है ? वित्तमंत्री कफन की तरह सफद खादी पहने हुए थे। व देवदूत से लग रहे थे। उनके आ जाने से मुझे थोडी राहत मिल गयी थी। पर आशकाएँ और व्यथता और बढ गयी थी।

कुछ क्षणो बाद मैंने बात शुरू की—'आपन उन कम्पनियो की सम्पत्ति की जाँच नही करायी

वे थोडा सा मुस्करा दिये। उनकी मुस्कराहट मुझ बहुत अजीब लगी। माँ के चेहर पर मैं पीडा की लहरें और विकृति देखत देखते यह भूल ही गया था कि चहरे पर उन्मुक्त मुस्कराहट भी कभी आती है। मुझे थोडा सतोष हुआ—मैं फिर धीरे से बोला 'मेरा अब क्या होगा ? उन लोगो की दिक्कतें अगर आप जल्दी खतम कर दें तो शायद मुझ भविष्य के लिए कोई रास्ता मिल जाये

वे कुछ बोले नही, मुस्करात रहे। एक क्षण बाद बात बदलकर बोल, आपने मुझे क्यो बुलाया था ?

मेरी समझ मे कुछ नही आ रहा था। आपकी राय जानना चाहता था कि अब मैं क्या करूँ ? कहाँ जाऊ मैं बहुत मामूली आदमी हूँ और कुछ एसा चाहता हूँ कि कायदे से जी सकू।

'आपके पास सिफ शिकायतें है ! वे कुछ चिढ गये थ।

व भी मुझे गलत समझ गये थ। शिकायत कहाँ थी ? अगर कुछ था तो अँधेरा, नाराजी ठहराव और आशका। मैं उन्ह नही समझ पाया।

कुछ देर बाद वे ऊबकर बोले—"अच्छा अब मैं चलता हूँ।

मैंने कहा—'यह सब मैं अकेले नही उठा पाऊँगा। आप रुक सकें तो बहुत अच्छा हो। मैं बहुत डरा हुआ हूँ।'

वे बोले— मैं माफी चाहता हूँ। मुझे जाना है।'

मैंने उन्हें ज़बरदस्ती रोका। आखिर कुछ देर बाद वे उठकर चले ही गये। वे रुकते भी तो कब तक ? मैं बहुत पछताता रहा। ख्वामखाह उन्ह बुला लिया। कुछ बात भी नही बनी। कोई रास्ता खुलने के आसार भी नजर नहा आये। वे भी बडी दिक्कतों म थे। उन्हें बुलाकर उनका समय बर्बाद करना मुझ पर भारी पडता

रहा। उनके पास मेरे लिए काई आश्वासन नही था। उनके जाने के बाद मुझ याद आया कि माँ को शिकायत थी—बाजार के सबध मे। उसे यह पता नही था कि बाजार को क्या होता जा रहा था कि उसका खर्चा क्यो नही चल पा रहा था। यह बात मैं उनसे नही कर पाया। मैं अपने मसलो से घबराया हुआ था।

उनके जाने के बाद माँ का शरीर और भी पथरा गया। मुझे तो रुकना ही था। मैं कहाँ जा सकता था ? धीरे धीरे कई दिना तक उसका शरीर पथराता रहा। उसके हाठा का जा कोना बजान तितली के पख की तरह सिहरता था वह भी ठडा पड गया। उसकी अधी आखो के किनारो पर सूखी-सूखी बूदो का रस सा निचुड आया था वह भी काई की तरह वही जम गया।

आख के नीचे की एक छोटी-सी मासपेशी कभी-कभी कापती थी वह भी शान्त हो गयी।

करीब चौदह दिनो के बाद माँ का शरीर पूरी तरह पथरा गया। जिसने देखा उसी न तारीफ की—बिलकुल पत्थर की मूरत बन गयी है। कितनी शान्ति है चेहरे पर ! इतनी शान्त मौत कहा मिलती है किसी को !

मुझे यह अच्छा लगा कि लोग माँ को भाग्यवान औरत समझ रहे थे। वह थी भी बहुत सीधी। दुनिया से बतरह जुडी हुई। सबका अच्छा और भला सोचने वाली। अपनी तकलीफा को न समझ पाने वाली एक मामूली औरत।

लोगो ने राय दी कि इतनी अच्छी मूरत बरबाद न की जाये। इसे हम कही लगा दें। मुझे इसम क्या आपत्ति हा सकती थी ? एक चौराहे पर लबा-सा चबूतरा बनाकर माँ को वहा बैठा दिया गया।

तब स मूरत मेरे शहर के चौराह पर लगी हुई है। और मरे अन्दर वक्त-बेवक्त कौंधती है। पत्थर की वह मूरत बिलकुल जीती जागती सी लगती है। न हिलती है, न डुलती है।

बरसा बाद जब कभी मैं शहर लौटता हू और उसके पास क्षण-दो-क्षण के लिए रुकता हूँ तो उसकी आँख के नीच की वह छोटी सी मासपेशी कापती है और लगता है कि मुझे देखन के लिए वह आखें खोलने की कोशिश करती है। पर खोल नही पाती।

रातें

शारदाबाई सुन्दरीबाई और ताराबाई की कहानी तुमने नही सुनी ? तो तुम थे कहाँ ? किस देश म रहे थ ! अगर इन तीनो की कहानी अलग अलग सुनोगे तो शायद किसी अत पर नही पहुँचोगे क्योकि वेश्याएँ वश्याएँ होती हैं। वेश्या बने रहने के अलावा वे कुछ कर भी नही सकती। अगर उन्हें बता दिया जाय कि वे गधवकुल की हैं, तब उनमे एक सहज गव भी आ जाता है।

शारदाबाई उसी तरह मशहूर थी जसे कि कभी मथुरा की वासवदत्ता रही थी। शारदाबाई के रूप और यौवन की कहानियाँ दूर-दूर तक फल रही थी। अखिल भारतीय वेश्या-बाज़ार म यह बात जोर पकडती जा रही थी कि शारदाबाई जसी रूपवती केवल एक ही बाज़ार म अपना सारा वक्त न गुज़ार दे। उसे देश क अन्य बाज़ारो म भी आकर रहना चाहिए ताकि जगह-जगह के बाज़ार जीवित हो उठें। वेश्या बाज़ार के विद्वाना का तो यहाँ तक कहना है कि वेश्याओ का जगह बदल-बदलकर पेशा करने की परिपाटी ही शारदाबाई के साथ शुरू हुई। व अपने उस विद्वान का बडा आदर करते है जिसने यह नयी योजना बनायी कि वेश्याए भी भ्रमण और रमण करें।

इस योजना के साथ वेश्याओ के पेशे म एक क्रातिकारी परिवतन हुआ। बीती हुई औरतें भी कुछ न कुछ कमाने लायक हो गयी। खर यह मसला दूसरा है बात शारदाबाई की हो रही थी।

शारदाबाई जब पद्रह बरस की हुई तो उसके रूप का डका बजने लगा। सगीतचार्यों और नत्याचार्यों म इस बात की होड लग गयी कि शारदाबाई का कौन सगीत सिखाये और कौन नत्य। सभी को विश्वास था कि शारदाबाई कहर ढायेगी और उस्ताद का नाम रोशन करेगी। आखिर शारदाबाई के कुलगुरु की ही जीत हुई क्योकि शारदाबाई की माँ ने अपनी परम्परा का तोडन म रुचि नहीं ली।

आखिर जब शारदाबाई सबगुणा से सम्पन्न हो गयी तब एक दिन उसकी पहली रात की विधिवत घोषणा की गयी। वसंत का दिन चुना गया। पूरे शहर मे यह खबर आनन फानन फैल गयी कि शारदाबाई की पहली रात वसंत की रात होगी। शहर के बाहर भी यह खबर पहुँची और उस रूपांगना की पहली रात के लिए तरह-तरह की अटकलें लगाई जाने लगी। रोज नयी-नयी खबरें उड़ती। कभी कहा जाता कि किसी महाराजा ने उसकी पहली रात खरीद ली है कभी किसी राजकुमार का नाम लिया जाता। खबर तो यहाँ तक फली कि एक महाराजा और उसके कोषाध्यक्ष म झगडा हो गया और कोषाध्यक्ष ने महाराजा को धन देने से इनकार कर दिया क्योंकि वह खुद पहली रात खरीदना चाहता था।

नवाबो राजाओ महाराजाओ राजकुमारो अमीर उमरावो जमीदारो सामतों ताल्लुकेदारो म भीतर ही भीतर यह रस्साकशी चल रही थी कि शारदाबाई को कौन पा ले। एक तरह से यह इज्जत का सवाल बन गया था। जसे जसे वसंत का दिन पास आता जा रहा था अटकलें बढ़ती जा रही थी। बराबर यही चर्चा चलती रहती कि शारदाबाई की माँ ने फलाने राजा या नवाब की बात ठुकरा दी है या फलाने ताल्लुकेदार के आदमियो को घर म ही नही घुसने दिया।

आखिर एक दिन सबकी आँखें फटी रह गयी जब पता चला कि तमाम नवाबो राजाओ वगरह की कोशिशें बेकार चली गयी हैं उनकी जगह अठारह साल के एक सजीले नौजवान ने बाजी मार ली है—उसका नाम है मगनलाल छगनलाल दारूवाला। यह नौजवान अभी अपने करोड़पति पिता के पैसे पर ही ऐश कर रहा था। घराना बहुत ऊँचा था। तरह-तरह के काम दारूवाला के यहाँ होते थे। आसाम और नीलगिरि के चाय बागानो का काफी बडा हिस्सा भी इन्ही के पास था। बगाल के पटसन बाजार पर इस घराने का इजारा था। कपास-बाजार म इस घराने की तूती बोलती थी। अमरीकी शेयर-बाजार भी दारूवाला घराने की खरीद फरोख्त पर निगाह रखता था। कई बको म इनकी हिस्सेदारी थी। सुमात्रा-जावा और उधर अफ्रीका के बाजारों के व्यापार मे इनका पचपन पसे का हिस्सा था।

यह सब बातें भी लोगो को धीरे धीरे तब पता लगी जब एक-एक करके राजा महाराजाओ के नामो से मुकाबला शुरू हुआ था। नही तो किसी को यह पता नही था कि दारूवाला नाम का घराना इतना तेजस्वी और बडा है। खबरें फलते-फलते मगनलाल छगनलाल दारूवाला का नाम गूजने लगा और शारदाबाई के भाग्य को सराहा जाने लगा।

आखिर बसत का दिन आया। सखिया न शारदाबाई का श्रगार किया। मगनलाल छगनलाल दारूवाला की रुचियो का पता करके इत्र और फूलों का चुनाव किया गया। केशविन्यास हुआ और बहुत धूमधाम से शारदाबाई को दार्जिलिंग वाली *कोठी म शाम से पहले पहुँचा दिया गया।*

और शारदाबाई ने अपनी पहली रात गुजार दी।

उस समय शारदाबाई सोलह साल की थी और मगनलाल छगनलाल दारूवाला अठारह के।

यह वही समय था जब जापान ने रूस पर विजय प्राप्त की थी और भारतीय राजनीति म एक बडा मोड आया था। सन् चौदह की कडाके की सर्दी म फ्लण्डर्स और फ्रास के मैदाना म भारतीय फौजें जमन फौजो का मुकाबला कर रही थी। *सुरेन्द्रनाथ बनर्जी और ऐनी बेसेंट राष्ट्रीय क्षितिज पर उभर आये थ।*

इन्ही दिनों गोखले का देहान्त हुआ। तिलक माण्डले जेल से छूटे। लाला लाजपतराय ने अमरीका म देश निकाला भुगता। होम-रूल लीग की स्थापना हुई। लखनऊ का काग्रेस अधिवेशन हुआ। भारतीया ने उत्तरदायी शासन की माँग की। अग्रेजा न पहले विश्वयुद्ध म जमनी का पछाडा। भारत म अग्रजी दमन चक्र तज हुआ। रौलट बिल पेश हुआ। गाधीजी ने सत्याग्रह छेडा। जलियाँवाला हत्याकाण्ड हुआ। असहयोग का जन्म और चम्पारन सत्याग्रह की नीव पडी। गाधीजी का अपेंडिसाइटिस का आपरेशन हुआ। मोतीलाल नेहरू न स्वराज्य *की बात उठाई। साइमन कमीशन का बहिष्कार किया गया। लाहौर काग्रेस म* नेहरू ने नयी आशा का सचार किया। दाडी-यात्रा और नमक-सत्याग्रह हुआ। मोतीलाल नेहरू स्वर्गवासी हुए। बिहार के भयकर भूकम्प म बीस हजार लोग मरे। दस लाख घर नष्ट हुए

गरज यह कि अठारह बरस का समय गुजर गया। इस बीच और भी बहुत कुछ हुआ। शारदाबाई न पहली रात गुजारकर सामान्य तरीके से अपना पेशा शुरू किया। फिर मगनलाल छगनलाल दारूवाला को वक्त भी नही मिला कि वे शारदाबाई की बात दिल म लाते। एक रात थी गुजर गयी। शारदाबाई अपने धधे मे लग गयी। कहा जाता है कि उसने पसा चीरकर रख दिया।

इस दरम्यान मगनलाल दारूवाला ने अपन घर का कारबार सभाला और *कहा जाता है कि उन्होंने भी पसा चीरकर रख दिया। एक कराडपति घरान म* उनकी शादी हुई। पिता का देहात हुआ और वे सारे धन के मालिक हुए।

इन्ही दिनों शारदाबाई की लड़की सुन्दरीबाई की धूम बाज़ार मे शुरू हुई। कहा गया है कि लड़की ने अपनी माँ को भी सुन्दरता मे दस कदम पीछे छोड़ दिया। सुन्दरीबाई की खूबसूरती का मुकाबला शारदाबाई अपनी जवानी म भी नही कर सकती थी। अभी सुन्दरीबाई सत्रह बरस की ही थी, पर उसके लावण्य और सौंदय की चर्चाएँ जगह जगह होने लगी थी। आखिर शारदाबाई ने अपनी लड़की सुन्दरीबाई की पहली रात की घोषणा की।

फिर नवाबो, राजाओ महाराजाओ, जमीदारो, अमीरो सामतो, ताल्लुकेदारो म होड़ शुरू हुई। सुन्दरीबाई की पहली रात खरीदने के लिए फिर वसन्त की रात ही पहली रात तय की गयी।

आखिर वह दिन भी आया कि सबकी आँखें फटी रह गयी, जब पता चला कि तमाम नवाबो राजाओ वगैरह की कोशिशें फिर बेकार चली गयी हैं उनकी जगह पैंतीस साल के एक दौलतमद ने बाज़ी मार ली है। उस दौलतमद का नाम भी लोगो को पता चला—सेठ मगनलाल छगनलाल दारूवाला।

शारदाबाई ने अपनी किस्मत को सराहा। उसने अपनी बच्ची सुन्दरीबाई को सेठ की सब आदतें और नफासतें समझाइ। तरह-तरह की नसीहतें दी और उसके उज्ज्वल भविष्य की कामना की। उसे यह भी बताया कि आदमी की जो आदतें जवानी म पड़ जाती हैं वे बरकरार रहती है। इसलिए सेठ से घबराने या डरने की ज़रूरत नही है। वे बहुत नाजुक मिजाज़, खूबसूरती पसन्द और रसिक आदमी हैं।

पूरी तरह से तयार होकर सुन्दरीबाई ने अपनी माँ शारदाबाई से विदा ली। इस बार 'पहली रात' का इन्तज़ाम मगनलाल दारूवाला के ऊटी वाले बँगले म किया गया।

और सुन्दरीबाई ने ऊटी के बँगले म सेठ मगनलाल दारूवाला के साथ अपनी पहली रात गुजार दी।

उस समय सुन्दरीबाई सत्रह साल की थी और सेठ मगनलाल दारूवाला पतीस के।

यह वही समय था जब क्वेटा म भूकम्प आया था। इटली न एबिसीनिया पर आक्रमण किया और भारत म नागरिक स्वतन्त्रता लगभग समाप्त कर दी गयी थी। जाज पचम की मत्यु हुइ और एडवड आठवें गद्दीनशीन हुए। रूस के क्रेमलिन महल म दो हज़ार चालीस प्रतिनिधि नये विधान पर विचार करन के लिए जमा हुए। फजपुर म काग्रेस अधिवेशन हुआ। जवाहरलाल नेहरू ने खान अब्दुल गफ्फार खा और एम० एन० राय का स्वागत किया और ससारव्यापी युद्ध छिड

जाने की सम्भावना से देश को आगाह किया। चुनाव हुए। पाँच प्रान्तों में काग्रेस ने बहुमत प्राप्त किया। दो करोड़ अस्सी लाख लोगों ने वोट दिये। काग्रेस ने अंतरिम सरकारें बनायी। हरिपुरा काग्रेस के लिए सुभाषचन्द्र बोस नये अध्यक्ष चुने गये। दुनिया पर फासिस्टी युद्ध के बादल मँडराने लगे। दूसरा विश्वयुद्ध छिड़ गया। नागासाकी और हिरोशिमा पर अणुबम गिराये गये। जिन्ना साहब ने पाकिस्तान की माँग की। सन बयालिस की क्रांति हुई। भारत आजाद हुआ। गाधीजी की हत्या हुई। भारत को गणतन्त्र घोषित किया गया। जनता का राज्य शुरू हुआ।

वेश्या बाज़ार में शारदाबाई के घराने का बड़ा नाम हुआ। वहाँ एक ऐसी गणिका थी जिसके वंश में हर बार लड़की ही पैदा होती थी और वह भी अपनी माँ से भी अधिक सुन्दर। इस बीच सेठ मगनलाल दारूवाला ने भी बहुत नाम कमाया। चाय-बागान पटसन बैंकों कपास बाजार और विदेशी व्यापार के अलावा उन्होंने अन्य उद्योगों में हाथ डाला। जहाँ उन्होंने हाथ डाला, वहीं सोना बरसने लगा। सेठ मगनलाल ने कपड़े की मिलें लगायी। चीनी उद्योग में रुपया लगाया विदेशी मदद हासिल करके केमिकल्स के कारखाने लगाये खाद के कारखाने खोले और अपने यश को सात समुन्दर पार तक फैला दिया। अब उनका नाम भी सेठ एम० सी० दारूवाला हो गया। सरकार की उद्योग कमेटियों में उनकी आवाज की कद्र शुरू हुई और वे वर्ष के तीन चौथाई दिन विदेशों में बिताने लगे।

इसी बीच सुन्दरीबाई की लड़की ताराबाई सोलह बरस की हुई और उसके रूप की दास्तानें फैलाने लगी। ताराबाई की जब पहली रात घोषित हुई तो फिर खलबली मची। अब अमीर उमरा राजा नवाब जमींदार ताल्लुकदार राजा महाराजा नहीं रह गये थे इसलिए सब किसी नये रईस की खबर पाने के लिए उतावले थे।

आखिर वह दिन भी आया कि सबकी आँखें फटी रह गयी जब पता चला कि तमाम नये नये हुए रईसों नेताओं उद्योगपतियों शेयर बाज़ार के राजाओं इनकमटैक्स विभाग के नवाबों ठेकेदारों नौकरों मन्त्रियों के सम्बन्धियों वगैरह की कोशिशें बेकार चली गयी हैं उनकी जगह इक्यावन वर्षीय एक करोड़पति ने बाज़ी मार ली है। उस करोड़पति का नाम भी लोगों को पता चला—सेठ एम० सी० दारूवाला।

इस बार शारदाबाई और सुन्दरीबाई ने अपने संचित अनुभवों की हिदायतें अपनी लड़की ताराबाई को दी। और इस बार यह पहली रात बिताने का इंतज़ाम

श्रीनगर की कोठी म किया गया।

और ताराबाई ने श्रीनगर की कोठी म सेठ एम० सी० दारूवाला के साथ अपनी पहली रात गुज़ार दी।

उस समय ताराबाई सोलह साल की थी और सेठ एम० सी० दारूवाला इक्यावन बरस के।

यह वही समय था जब अमरीका और रूस म तनातनी चल रही थी। अणुबमो क परीक्षण हो रहे थे। फ्रास म लघुक्राति हुई। भारत म विकास कायक्रम शुरू हुए। बादुग सम्मेलन हुआ। दुनिया मे तटस्थ राष्ट्रो का उदय हुआ। पचशील की आधारशिला रखी गयी। तिब्बत म तबाही हुई। कश्मीर पर फिर आक्रमण हुआ। वियतनाम म मुक्ति-सघप न नया मोड लिया। चीन ने भारत पर हमला किया। प्रधानमत्री नेहरू की मत्यु हुई। पाकिस्तानी हमला भी हुआ और ताशकद मे लालबहादुर शास्त्री का देहावसान हुआ। इदिरा गाधी प्रधानमत्री हुइ। कई राज्या म विरोधी दलो की सरकारें बनी। बिहार और राजस्थान म अकाल पडे। गुजरात मे बाढ आयी।

और तब तक ताराबाई की लडकी गीताबाई जवान हुई। वह अभी पन्द्रह की ही थी कि उसकी पहली रात घोषित हुई।

और इस बार लोगा न बहुत रुचि नही ली। उन्हें पता था कि क्या होनेवाला है, कि यह रात कहाँ और किसके साथ गुजरने वाली है।

साँप

बरसात के दिन शुरू हो चुके थ, जब मजदूरो की टोली यहाँ आयी थी। ये सब खानाबदोशो की तरह आए थे। इनके हाथो म कुदालें तसले और कक्कड खोद डालने वाले बलचे थे। घुटने से कमर तक कसी हुई धोतियाँ और कमर स गदन तक फतोइयाँ थी। गलो म काल डोरे मनौनी का तावीज और बाँहा म महाबीरजी का जतर। अधिकाश के साथ ऐसा ही था। आते ही इन लोगा ने जमीन की पर्ते उधेड दी उसे खोखला करके मिट्टी के टील बना दिय

यह पी०डब्ल्यू०डी०का गैंग नबर दस था। सडक पर खतरे का झडा फहराने की इन्हें जरूरत नहीं पडी, सडक चलनी ही नही थी और फिर इनका काम सडक की पटरी पर चल रहा था शहर से बहुत दूर। पी० डब्ल्यू० डी० का ट्रक शाम को आता था ओवरसियर साहब आकर काम की प्रगति देख जात थ और जरूरत का सामान छोड जाते थ। ये लाग बडी मस्ती काटते बडी बफिक्री से काम करते। वहीं पेडो के नीचे या खोदी हुई मिट्टी के टीलो पर इनका सहभोजन पकता। एकाध मजदूर अलग भी पकाते थे और सबने अपनी जरूरत के हिसाब स अपना-अपना काम बाँट लिया था। एक मजदूर सूखी लकडियाँ बीनने चला जाता था। बरसात के कारण इधन का बडा कष्ट था।

सुबह से लोग काम शुरू करते और शाम तक पस्त हो जाते। इन बेलदारो का मट बाप की तरह प्यार करता था और कसाई की तरह काम लता था। उसकी लाल पगडी कभी सिर से नहीं उतरती थी। जब वह हसकर कोई बात कहता तो उसका चेहरा बहुत खौफनाक लगता था क्योकि उसकी जबाडी इतनी खुल जाती थी कि जबडा के भीतर दाँत भी दिखायी पडने लगते जिनम तम्बाकू का मोर्चा लगा होता। उसकी नाक म बहुत खुजली होती थी एक तो मूछें बडी होन के कारण और दूसरे नथुनो म साँप की जीभ की तरह सरसराने वाले बालो के कारण। इस लिए वह मुह की मासपेशियाँ चलाकर नाक मरोडा करता था। हसने के बाद लबी

किलकारी छोडना उसकी विशेषता थी। इसीलिए जब वह हँसता तो सब उसके खौफनाक मुह के कारण सन्न रह जाते पर अंतिम सीटी की तरह किलकारी सुनते ही ठठाकर हँस पडते।

इन मज़दूरों के सिपुर्द दो काम थे—मेहनत करना और सरकारी सामान की रखवाली। इनका पडाव फौज की तरह रहता था। रात को उस बिना छत की बस्ती में एक लालटेन टिमटिमाती और जब वे सब थककर चूर हो जाते तो वहीं बाँध की तरह बँधे हुए मिट्टी के टीले या आस-पास के घने पेडों के नीचे अपने अंगोछे बिछाकर सो जाते।

जब खुदाई का काम निबटने लगा तो पुलिया बनाने के लिए पत्थर ईंटें और सीमेण्ट की बोरिया आयी और साथ म चौकीदार आया। सामान पटरी के किनारे पर गिरा दिया गया, सीमेण्ट की बोरिया बूदा बादी से बचाने के लिए इमली के पेड के नीचे रख दी गयी। चौकीदार के आते ही मज़दूर और बेफिक्र हो गये शाम का काम खत्म करके व अपने औज़ार वगैरह उसी के सिरहाने पटक आते और खोदी हुई मिट्टी शरीर म मल मलकर आधी रात तक कबड्डी खलते। उनकी कबड्डी की हुकारें और जीत की किलकारियाँ इस बियाबान म आधी रात गये भूतो की चीखों की तरह लगती। दुबल और कुछ बूढे मज़दूर सात मील दूर डाक-बँगले के बरामदे म लेटने के लिए चले जाते और मुँह-अँधेरे वापस आते।

चौकीदार आया तो चार पाच दिन बाद ही मज़दूरो की उससे खटक गयी। सुमेर बेलदार ने शाम को कबड्डी जमने से पहले कहा—"हमको सब पता है चौकीदार ओवरसीर बाबू का आदमी है सो निस्पक्टर बनता है लाजबान बोलता है। हमारा अफसर मेट है हम इसके आडर म नहीं हैं।

हर बखत चिकिर मिकिर लगाये रहता है साला। बोचन बेलदार बाला—कहता है तलब कटवा देंगे। हम अपनी जगह मौजूद हैं काम किया है, देखत हैं कौन साला तलब कटवायेगा?'

मट के जाते वकूरता है बदमास। अपने लिए राउटी मँगवा रहा है नाम करता है सिलीमण्ट का—बूदा-बाँदी म पथरा हो जायेगा, साहब। कोई पूछे बदमास से—आदमी नही पथराता सिलीमिण्ट की बोरी पथरा जायगी एक बेलचे मे लँगडा कर दें साल को रामबरन न कहा ता सिर खुजलात हुए सिरीचरन न जोड दिया—'सात म साले की छाती पर सिलीमण्ट की बोरी पटक दो वहीं सोता है अजगर की तरह।'

इस सूझ पर सब खिलखिलाकर हँस पडे।

'घरवाली क बगर चन नही पडता, सो सिलीमेण्ट का नाम करके राउटी मँगवा रहा है। ओवरसीर बाबू से दरखास कर रहा था कल। आदमी बनता है

औरत के बगर रहा नही जाता।' जोखन, जो आदमी औरतों के मामले का पंडित समझा जाता था गैंग म सुरती चूसते हुए बोला—'कुत्ते की औलाद है कुत्ते की ।"

'हाँ साला ओवरमीर बाबू के सामने पूछ हिलाता है हमारी गदन काटने के लिए।" सुमेर ने मज़दूर नेता की तरह कहा—"हम खुद भुगत लेंगे किसी से कहन की जरूरत नही है।"

तभी बसी चौकीदार आता दिखायी पडा और सबने पालियाँ बनाकर कबडडी खेलना शुरू कर दिया। वह पास से निकला तो बोचन ने टोका— घरवाली नही आयी चौकीदार ! हम सब भौजी की बाट देख रहे थे !" सुनकर सब ठठाकर हँस पडे। बसी चौकीदार वही घास के मदान की मेंड पर बठ गया। बात उसे लग गयी थी और सुमेर ने आँखो ही आँखो म रामबरन को जो इशारा किया था वह उसने परख लिया था—साला भौजी बनाता है। अकेला पड जाता है नही तो बताता।

बसी वही मेंड पर अकेला बठा रहा घास म। घास का मदान दूर दूर तक फला हुआ था। कमर कमर घास थी—बडी सोधी महक उठ रही थी भीगी घास से चदन और सीरे जैसी या जैसे महुआ लहक उठा हो बरसात के भीगे हुए दिन और घुप्प अँधेरी रातो की खुनकी और पारबती की झाँझो की झनकार। कील हुए सामने के दो दात और ठोढी पर गोदना। उसे यहाँ ले आया तो बदमाश फजीहत कर देंगे। बसी सोच रहा था खुले आसमान तल लाकर भी कहाँ डाल दे जब तक राउटी न मिल जाये। ओवरसियर साहब का दौरा हो तब शायद राउटी आये। पता नही कितने महीने काम चले। बारह पुलियाँ मेंत मेंत तो बन नही जायेंगी—और फिर गाभिन भस की तरह काम करते हैं बेलदार।

मदान की घास हवा से सरसरा रही थी जस पके नाज क खेत बोल रहे हो। इतने महीने का काम और बियाबान म अकेले पडे रहना। टोले म रोज़ लडाई दगा और खाने-पीने की खिट खिट। इन लोगो की इतनी मजाल नही कि पारबती से बोल जायें आसमान म बादल भर आये थे और टिमटिमाती लालटेन की रोशनी म सीमट की बोरियो का चटटा दिखायी द रहा था। जाकर उसने सीमट पर तिरपाल डाला उसी के एक कोने पर अँगोछा लपटकर लट रहा।

बेलदार गयी रात तक हाहा हूहू करत रहे। मेल खत्म होने पर रामबरन को बदमाशी सूझी। सिरीचरन के साथ मिलकर उसन चुपके से चौकीदार बसी की छाती पर सीमेट की एक बोरी सरका दी और मज़ा लन के लिए चुपचाप आकर लट गये —थके हुए मजदूरो की आखो म नीद के साथ साथ इस कारगुज़ारी का कमाल देखने की तमन्ना भी थी। सिरीचरन ने फुसफुसाकर कहा— अभी साल स कबूल करवाऊँगा हमारी जड काटता है ओवरसीर बाबू के सामने।'

उठकर रामवरन और सिरीचरन न सिर से मुरैठा बांधा और बसी चौकीदार के सिरहाने पेड के पीछे दुबक गये।

एकाएक बसी चौकीदार की घिघियाती हुई आवाज सुनायी पडी जसे किसी ने गला दाब लिया हो। सिरीचरन न भूत की आवाज म कहा— हम ठाकुर वाले पीपल के मुरैला मालिक हैं। बोल, क्या कहता है ? '

घिघियाता हुआ बसी बोला— मिन्नी बाँटूगा दया करें महाराज दया करें।

बलदारो को सतायेगा ! तलब कटवायेगा !

नही नही

हलफ से !

सबकी सौंग ध गगा मया की सौगध।

छिमा किया पर सिन्नी बाँटना।

जरूर महाराज !

और बसी चौकीदार की साँसें जब तक ठीक हो तब तक सिरीचरन और रामवरन अपनी-अपनी जगह आकर लेट रहे। छाती से बोरी सरकाकर वह बैठा काँपता रहा उसने देखा दोनो मुरला भूत घास के मदान से ठाकुर वाल पीपल की तरफ चले जा रहे हैं। डरकर वह बलदारा के पास जा बैठा। पर वे सब के सब ससटट साध मजा न रह थे। उसन सिरीचरन को आखें ब द किय हँसत देखा। शक हुआ लेकिन वह करवट वदल गया। रात भर वह वही बठा रहा डर से काँपता और सिहरता ऐसे अकेलेपन म चन्ना की मा बहुत याद आयी थी। और रह रहकर याद आया था अपना घर—चना और दुलारी उसे परेशान करते होंगे।

बादन वज्र की तरह आसमान म घहरा रहे थे उसी दिशा से भीगी हवा आ रही थी घर ता चलनी की तरह चुआ होगा कसे मूना होगा चना की माई ने ? कोना से धार की धार कटती है और टोने मे एसा एक भी आदमी नही जिसन हाथ लगवाया हो। कोई आफत मुसीबत टूट पडी तो ? कीड मकाडा के दिन कही कुछ हो गया तो ? मौसम बेमौसम सरप देवता दशन देते हैं वहाँ आजकल तो बाँबियाँ भर गयी हैं—सोचत ही उसका कलजा धक स रह गया—वह दुलारी और चना को दोनों बगना स चिपकाय सो रही है और एक सरप

घबराकर खडा हो गया। सोय हुए बलदारा के बीच पहुँचकर ऐसे पैर उठाता धरता रहा जैसे गारा सान रहा हो। उसे लग रहा था कि जसे कोई साप अभी उसक परो म लिपट जायगा वह साँप जो इन सब बलदारो को एक एक करके डस चुका है। पर पटकत हुए भी भयभीत निगाहा स उसन आस-पास दखा—सब महानिद्रा म डूब थ जस साप सूघ गया हो। उसका रोआँ रोआँ

भभर आया और वह पैर बन्ल-बदलकर कूदता रहा।

सिरीचरन ने आँखें मुलमुलाकर देखा तो हँसी नही रोक पाया, पर उसका मुह दूसरी ओर था। बमी धम्म से जमीन पर बैठ गया जसे साप ने उसे काट ही लिया हो। लेकिन सुबह सब बलदार जीत-जागते उठ खड़े हुए थे।

बँसी डाक बँगला चला गया। मन मे भय समा गया था। साचता था सीधा घर चला जाये। किसी न्नि सचमुच सरप देवता न पर यह कसे होता ? आखिर राउटी ट्रक म लदवाकर चला आया। चन्ना दुलारी और उनकी माई को यही ले आयेगा। दु ख, भय और मुसीबत मे कोई साथ हो तो उतना नही व्यापता।

शाम को बसी चौकीदार की राउटी तनते ही सिरीचरन ने बेलन्दारो के बीच ऐलान किया— कल रात माले पर ठाकुर के पीपल वाला गुरला भूत सवार था पँर पटक पटक के अरदास कर रहा था रात म। लडके भाग गया उठकर।'

ई साला लाट गवन्नर है। राउटी म रहगा सिलीमेण्ट के साथ। रामबरन ने कहा तो वोचन बोला— सोयें साला राउटी म। देख लेंगे।"

और आधी रात गये सिरीचरन ने न्नो रस्सियाँ काट दी—राउटी भहराकर गिर पडी। बीच वाला लट्ठा बसी के ऐसे नगा कि नकसीर फूट गयी। ओवरसियर साहब को उसने खन से सना अँगोछा दिखाकर शिकायत की—'हम इनको काम की खातिर टोकते हैं साहब इसलिए हम से खार खाये है। इस तरह का सलूक करते हैं '

ओवरसियर बाबू आग बबूला हो गये। कडककर बाले—'सबको निकाल कर नयी भरती कर लूगा। मजदूरो की कमी नही है हम। एक तो काम को बगार की तरह टालत हो ऊपर से यह सब बन्माशिया !

सुमर नेता की तरह आग आया — लकिन साहब कहाँ लन्टें-बठें ? भीगी धरती म न्हे अकड जाती है। हम भी राउटिया मिलनी चाहिए !

'कौन कहता है, लेटो बठा। काम खतम करक अपने-अपने घर जाओ सुबह आकर हाजिरी दा। राजनदारी पर काम करने वालो के लिए राउटियाँ नही मिलनी—हैं भी नही देंगे कहाँ से ?' ओवरसियर बाबू ने अपना हैट लगाते हुए कहा— सरकार काम लेती है उसका भरपूर पसा देती है। बेकार की बकवास नही सुनना चाहता।

सिलीमेण्ट की बोरिया के लिए राउटी सुमेर कह ही रहा था कि ओवरसियर बाबू ने होठ बिदकाते हुए कहा— दस बोरी पानी म पत्थर हो जायेंगी तो कौन भरेगा अपने घर स लाऊगा या तुम लोग तलब कटवाओग ?'

फुमफुसाते हुए सिरीचरन ने कहा— सिलीमेण्ट पथरा हा जाये तो सब कुछ और आदमी पथरा जाये तो कुछ नही। बोरी कौन भरेगा ! और वह बुदबुदाता

रहा—'ओवरसियर बाबू क्या घर से भरेंगे आदमी तो दूसरे के घर से भी भरा जा सकता है। '

ओवरसियर बाबू के मोटर म चढते चढते सुमेर न कहा— सरकार, किसी का घर बीस कोस है किसी का पचीस पेट की खातिर सब पडे हैं यहा आना जाना कसे हो सकता है!"

तो कुछ पिघलते हुए ओवरसियर बाबू न कहा—'डाक-बगले के बरामदे मे जितन लेट पाओ लेट लिया करो, और क्या बताऊँ "और मोटर स्टाट करके चले गये। पर बित्ता भर की डाक-बँगलिया और अँगुर भर का बरामदा, कितने समायेंगे वहा ? पचास आदमियो की टोली। आध चले जायें वहा और आध यहाँ पडे रहें, यह किसी को गवारा न हुआ। बात आयी गयी हो गयी। रात को कबडडी जमने के बाद सब भूल जात।

बसी जाकर पारवती, चना और दुलारी को ले आया था। राउटी म इटें बिछाकर फश बना लिया था उसी पर कथरिया पडी थी जिनम वह अपने दोना बच्चो को पेट तले दबाकर कुतिया की तरह सो जाती। रातें बेहद गीली हो गयी थी और आसपास उगी घास रोज बढ आती थी—दूर तक फले लम्बे घास के मैदान के कारण सन्नाटा और भी भयकर हो जाता था। दूर मैदान क पार हवा खौफनाक सीटिया बजाती हुइ दौडती थी और पेडा पर सोये कौवे आधी रात जागकर बिलबिलाते तो भयकरता चौखती लगती थी। घुग्घू चिचियाते तो घास के मैदान के पार आवाज गूजने लगती। यह दूर की आवाजें बहुत खौफनाक लगती थी। भीगी धरती ऐसी लगती जस हरी कब्र पर किसी ने लिटा दिया हो। पारवती—बेलदारो की खातिर राउटी के बाहर लालटेन लटका दती। बसी चौकीदार और बेलदारों का मनमुटाव तो बरकरार था लेकिन पारवती क कारण कोई झगडा टटा नही हो पाता था। चना कूदता हुआ कबडडी के पाल म आ धमकता ता बसी हटकता नही था—काम अभी जोर शोर से चल रहा था। ओवरसियर बाबू का हुक्म था कि बाढ आने से पहले पुलियाँ बनकर तयार हो जानी चाहिए, नही तो किया धरा सब मिट्टी म मिल जायेगा।

बेलदार वसे ही महनत करते और मस्ती से खेल कूदकर सो जाते—निद्वन्द्व निभय! मिट्टी लपेटे रात को सोते और मिट्टी झाडकर सवेरे उठ पडते। ऐसी अटूट नीद आती कि सबेरे सूरज की किरण ही जगाती

उस दिन भी सूरज की पहली किरण ने सबको जगाया सब मिट्टी झाड झाडकर उठ खडे हुए, पर रामबरन नही उठा। सिरीचरन न पैर पर ठोकर दी, पर वह नहीं हिला। सूरज की तमाम किरणें मिलकर भी उसे नही जगा पायी—हैरत से सुमेर ने उसके मुह पर पडा हुआ अँगोछा हटाया ता सन्न रह गया—सारे

बेलदार झुक पड़े—रामबरन पथराया पड़ा था। उसके होंठ नील थे और नाखूनों पर कालिख मली हुई थी। सरप सूँघ गया!

बसी ने डबडबाई आँखो और कापते हाथ से नस काटकर देखी—खून नही, नील बह रही थी। उस बियाबान बस्ती मे भयानक सन्नाटा छा गया।

घास के मदान मे जसे करोडो नाग सिर उठाये खडे थे। जल्दी से कुदाला और बेलचों के बेंट जोडकर मचिया बनायी गयी और बेलदार उसे उठाकर चार कोस दूर गाँव म भगत के यहाँ ले गये। भगत ने आकर ढाक बजायी कौडियाँ फेंकी पर रामबरन नही सेला। दौडे दौडे अस्पताल गये, पर वह नही जागा। हारकर उसे जमुना मैया के हवाले कर हाथ झाडते हुए सब लौट आये।

जब बसी और सब बेलदार वापस लौट आये तब शाम हो चुकी थी। पारवती अपने दोना बच्चो को घुटनो से चिपकाये लालटेन जलाये राउटी के बाहर अकेली बठी थी। सबके हाड टूटे हुए थे, हडडी हडडी चूर थी। चुपचाप कोइ कही धोक लगाकर बठ गया काई हाफता हुआ घुटनो म सिर टिकाकर बैठ गया वहीं राउटी के आसपास। अधेरे की चादर सरकती आ रही थी गीली धरती ठडी पीतल की तरह लग रही थी और रौंदी हुई घास के सिरे कीकर के काँटो की तरह गड रहे थे। आसमान म बादल भरे हुए थ और हवा सीटिया बजा रही थी।

सुमेर ने धीरे से कहा बसी, बाल-बच्चो को डाक बँगले पहुँचा आओ तुम भी वही सो रहना। और उसने दो-चार आखो स निगाह मिलाकर उन्ह भी बसी के साथ साथ चले जाने का इशारा किया। पर कोई उठा नही। सन्नाटा और भी बोझिल हो गया अँधेरा आसमान से और नीचे उतर आया और हवा अकुलाने लगी। वन पक्षी खामोश थे जोर से पानी ही बरस जाता तो यह मौत का सन्नाटा कुछ तो घुल जाता पर बादल बोझ से और नीचे होते जा रहे थ। सुमेर ने फिर कहा— बसी बच्चो को लेकर चले जाओ हम लोगो की बात और है।'

पर पारबती ने धीरे स सिर हिलाकर इनकार कर दिया। सुमेर ने प्रश्नवाचक दृष्टि से आठ-दस लोगो की ओर देखा तो जसे आँखो ही आखो म जवाब मिल गया—आज चले भी जायें लेकिन फिर ?

और थके माँदे बेलदार वही लेट गये रोज की तरह। कौन किसे छोडकर चला जाय ? और चला भी जाये तो कब तक के लिए ? जाँघें बुरी तरह भर गयी थी सवेरे काम चालू होना है। पारवती अपने चन्ना और दुलारी को लेकर भीतर राउटी म चली गयी। अपने लिए कुप्पी जलाकर उसने लालटेन बसी को दे दी। बसी स लेटा ही नही जा रहा था राउटी म। लालटेन लेकर बाहर चला आया और पेड की धोक लगाकर बठा रहा। भीतर दोना बच्चो का सुलाकर पारबती घुटनो मे सिर दिये उनके सिरहाने बठी था।

अँधेरा बेहद बढ गया था। काले बादल ऐसे लिपट-घुमड रहे थे जैसे कोई दानव उन्हें हाथ से फेंट रहा हो। घास के मदान के पार भयावनी सीटियाँ बज रही थी—और बेलदारो के सिरहाने बैठा बसी चौकीदार ज़रा-सी सरसराहट पर लालटेन उठाकर देखता था थके हुए मज़दूर बेखबर सो रहे थे। बसी की चेतना रह रहकर घास के मदान पर अटक जाती घास नही सरसराती थी, लगता था हज़ारो अदृश्य साप उस घास के मदान म लहराते-सरसराते चले आ रहे हो चौंककर वह लालटेन ऊँची कर लेता। उसका दिल थर्रा उठता पर वे ऐसे मोये पडे थ जैसे साँप सूघ गया हो—निश्चल, निर्द्वन्द और निर्भय।

इतने अच्छे दिन

सचमुच इतने अच्छे दिन तो कभी नही आये थे ।

पास म अगर हड्डी गोदाम न होता, तो बहुत मुश्किल होती । सभी कुछ तो अच्छा था । तीन चार गाँव पास लगे हुए । सबके बीच म सूखे चरागाह । इतने सारे रिश्तदारों के घर । तीन कोस पर बहती नदी । ऊँचे नीचे टीलो वाला बियावान । पास से जाती बस्ती की सडक । खास सडक पर रात मे ट्रकों के रुकने का अड्डा । उस अडडे से मील भर बायें हड्डी गादाम । उससे भी तान मील भीतर रेलगाडी का स्टशन ।

चारो गाँवा म अगर इतने रिश्तेदार ढार डगर और जानवर न होते तो भी काम नही चलता । और बीस मील दूर शहर मे चीनी मिलें न होती तो भी दिक्कत हाती । सडक ऊचे-नीच टीला वाले बियावान से न गुजरती तब भी ठीक नही था ।

घर म छाटी बहन कमली न होती ता कसे काम चलता ! उस बियाबान से टक न गुजरते होते तो भी दिक्कत हाती । और बतासिह ट्रक ड्राइवर अगर रात मे कमली को उठा न ले जाता तो उसकी जि दगी ही बरबाद हो जाती ।

सब कुछ अच्छा ही हुआ था ।

सबसे अच्छी बात तो यह हुई कि इलाके मे लगातार तीसरे साल भी अकाल पड गया । अकाल न पडे तो घर गाँव का आदमी बाहर निकलता ही नही । जिनके अपने खेत है वे तो बाहर हो आते हैं । जिनके खेत नही है उनका तो कही कुछ भी नही है । खेतवालो के खेत पर मजूरी करना और वही गाँव म पडे पड मर जाना । कहा कुछ और होता है !

कमली के लिए तो और भी अच्छा हुआ । वह कब कहाँ निकल पाती ? बाना के लिए तो फिर भी ऐसा है कि एकाध गाँव घूम आये नदी तक हो आये । दर्जा पाच तक पढन चला जाये ।

नदी तक बिना कहे-सुने बाला हो आये तो ठीक था। कह दिया तो मुश्किल होती थी। दादी उसे हटकने लगती थी—नदी पर मत जाया कर। जाय भी तो नहाना कभी मत। दादी बालती थी तो पैर की उंगली म पडे कासे के छल्ले को घुमाती रहती थी। शायद वह उसके गडता था। दादा भी यही बोलता था।

वे दोनो मानते ही नही थे कि वह नदी तक जायेगा और नहायेगा नही। और बाला को नदी म उतरते हमेशा डर लगता था। ऊपर से दादी झूठ बोलती थी—कहा न पानी का रग नही होता!

बाला हमेशा कहता था—दादी मेरी बात सुन। मैं देख के आया हूँ। पानी का रग लाल है—खून की तरह लाल!

दादा ठठाकर हँस पडते थे—कैसी बातें करता है रे पानी का कोई रग नही होता। तू नदी पर मत जाया कर। जाये भी तो नहाना कभी मत।

दादा दादी की ये बातें असल म अब बाला को याद आती है। हसी भी आती है। उनके पास और बातें ही नही थी। अपन के पास तो बहुत कुछ है। बहुत कुछ क्या, सभी कुछ है।

सर्दी साली कुछ ज्यादा ही थी। जिधर से कथरी उठ जाती, उधर से हवा अर्जुन के तीर की तरह लगती। कमली खिलखिला रही थी। उसे लगा—चलो, सब ठीक है। कमली खुद तो नही पीती, पर ड्राइवरों की शीशी मे से दो चार घूट बचा के रख देती है उसके लिए—और क्या चाहिए?

साला क्लीनर ज्यादा ही खुदर बुदर मचाये हुए था। न सोता था, न सोने देता था। बार बार बीडी सुलगाता है। खांसता है। कथरी खीचता है। अबे, इतना जाडा लग रहा है तो मोबी आइल डाल के अलाव जला ले! नीद तोड दी साले ने! कैसी मजे की नीद आती है यहाँ इस सराय म! कमली यहा है तो सब ट्रक वाले बस्तिया पार करते सीधे यही आते है।

ट्रक-सराय के मालिक ने भी पूरा इतजाम कर रखा है। बडा सा हाता घेर कर टको की सराय बना ली है। बाहर भी दस बारह ट्रकों की जगह है। दिन मे खाने की मेजें और बेंचें पड जाती हैं, रात को खटिया। थके मांदे ड्राइवर और क्लीनर दिन म भी आराम कर लते हैं। पूरी रात गुजारने क लिए तो पूरा इतजाम है ही।

हर तरह का खाना। मुर्गा-मुर्गी खाना हो तो सामने दडबे मे से पसद करो। अपने सामने बनवाओ, पकवाओ और खाओ। बीडी सिगरेट की कमी नही। ग्रामोफोन भी बजता ही है।

दाँत खोदते खोदते तसवीरें देखना चाहो तो पचासों लगी हैं। भगवान की तसवीरें अच्छी लगें तो उन्ह देखो। गुरवाणी सुननी हो तो रिकाड सुनो। औरतो की तसवीर देखनी हो तो वे भी लगी हैं। लुगी कच्छा धोना हो तो पटिया बिछा

है टयूबवैल लगा है। सुखाने के लिए तार बँधा है। दिशा मैदान के लिए सूखे खेत पडे हैं।

—अबे, तू क्यो उठ के बठ गया ? सबेरा होने म बहुत देर है। जाडा लगता है ? अपन को बता ! हेऽऽऽ साला बीडी सुलगा के खीचे जा रहा है। बीडी के जलते फूल मे आँखें कसी चमकती हैं कुत्तो की तरह—लखन क्लीनर की।

कुत्ता भी साला बडा भला जानवर है।

अकाल पडा तो भी नहीं भागे। वही गाँव के बियावान म लाशों को चीथते चीथते मर गये। गिद्ध साला बहुत तेज होता है। चार-पाँच कुत्ते न लगें तो एक गिद्ध को लाश पर से हटाना मुश्किल होता है।

—तू यहाँ आया क्स ? लखन ने पूछा।

—तू बीडी पी ल अच्छी तरह खाँस ले। बताता हूँ। बाला बोला था।

—हाँ, बता !

—तो सुन ! तुझे नीद क्या नही आ रही ? अच्छा-अच्छा सुन ! ये कमली मेरी बहन है न एक शाम

— सच्ची ? और लखन कमली की बात पर ही अटक गया।

—अब और क्या ?

—कमली लडकी अच्छी है। समझदार है। ड्राइवर कही और रुक्ता है तो भी उसी की बात करता है। [एक रात ट्रक बिगडा तो पैदल लौटने का हुआ। तब हमी ने ड्राइवर को समझाया—अब दस क्लिोमीटर है। काई उधर जाता ट्रक ल लो, सबेरे लौट आना। मैं तो हूँ। फिर लदे हुए सामान की जिम्मेदारी भी थी। सो वह नही गया।

—अच्छा ! तो सुन—ये साला बोरा बहुत महक रहा है। पहले इसे हटा दें।

—क्या है इसमे ? लखन क्लीनर ने पूछा था।

—है ? साली हड्डियाँ है !

लखन क्लीनर समझा नही। बीडी पीकर खाँसने लगा। सर्दी म उठने की हिम्मत नही पडी तो बोरे से आती बदबू को उसने सह लिया। क्लीनर बीडी पीता है तो बदबू दब जाती है। बीडी फेंक्कर क्लीनर ऊँघने लगा। अपन को क्या जरूरत पडी है किस्सा सुनान की ? सोओ साले !

सुबह उठते ही बबूल की टहनी तोडकर बाला ने दातून की। लखन अब आराम से सो रहा था। उसे जल्दी नही थी। तभी एक ड्राइवर रजाई म भालू की तरह हिला। उसने उठकर तहमद बाधा और दोनो बाँहे छाती से चिपकाये दिशा मदान के लिए चला गया।

लर्रान का ड्राइवर बतासिंह पहले ही उठ गया था। वह मैदान से लौट रहा था। छप्पर म पडी कमली गठरी बनी सो रही थी। उसकी खाट के पाये पर बतासिंह की पगडी अजगर की तरह लिपटी रखी थी।

जल्दी उसे भी थी। उसने बोरा उठाया और सिर पर लादकर हड्डी गोदाम की ओर चल दिया। साला बोरा बहुत महकता है। पर दाम तो अच्छे देता है—कमली भी चार-पाँच रुपय बना लेती है। एक-सवा रुपया बोरे भर हड्डियो का मिल जाता है। छ रुपये रोजाना कौन कमाता है साला!

यह तो अच्छा हुआ कि चीनी मिलें खुल गयी, और यह हड्डी-गोदाम भी! चीनी चमकाने के लिए शोरे की जरूरत पडती है। पता नही, इन सूखी हड्डियो म से शोरा कहाँ स निकलता है? निकलता होगा

गोदाम के तक पर बोरा फँसाकर उसन मोटी-सी गाली देकर चदू को पुकारा तौल कर ये साली सर्दी

चदू कही दिखायी नही पडा। फिर गादाम म भरी टना हड्डिया के बीच से आता वह दिखायी पडा जसे पिंजर उठकर चला आ रहा हो। आते ही उसन खीसें निपोर दी।

—आज सवेरे-सवेरे आ गया बाला?

—शाम देर हो गयी थी।

—कमली ठीक है?

वह उसका मतलब समझ गया। चदू के दिल मे एक फाँस है। नही तो पूछने की क्या जरूरत थी? तक के दूसरे पल्ले पर बाट पटकते हुए चदू न फिर कहा—ये दिन पहल आ जात तो वाह हम तीन से दो रह जात!

चदू का कहना ता ठीक था। पर तब यह सब व्यापार शुरू कहाँ हुआ था? इसीलिए तो उसने समझा दिया था—दख चदू तू कमली की लगन मन से निकाल दे खाने का दा के लिए नही है ता तीन के लिए कहाँ से आयेगा?

अगर य अकाल पहल ही पड गया हाता और हड्डियो का धधा शुरू हो गया होता तो कौन सी दिक्कत थी!

वह यही सब सोच रहा था कि चदू ने तौल करके बोरा नीचे पटक दिया। चदू के मन म बाला के लिए खयाल था। धीरे से बोला—इगरेजी जमाने की एक कबरगाह तीन मील उत्तर म है। कबरो के पत्थर ता सब खोद ले गये हड्डियाँ दबी पडी हैं, उन्ह खोद ला!

—उनम से शोरा निकलेगा? बाला ने पूछा था।

—सब चीज म मिलावट होती है, हड्डियो म भी मिला देंगे! आँख दबाकर चदू ने कहा था।

साला! बाला के मुह से मन ही मन गाली निकली थी। देना चाहे तो एकके

पाँच रुपये भी दे सकता है। वह नही करेगा पर यह सब बताकर अपनापन जता-येगा। पैसे लेकर वह चला आया था।

लेकिन चदू न *कबरगाह की ठीक और सही खबर दी थी। हड्डियाँ ताज़ी तो* नही थी पर जैसे कोयले की खान हाथ आ गयी थी! जहाँ खोदो वही हड्डियाँ निकलती थी! उसे लगा था ऐसी दो चार खानें और हाथ आ जायें तो जिंदगी ही बदल जाये। आदमी अच्छा है चदू!

पर पुरानी हड्डिया से ज्यादा चला नही।

असल म जब तीसरे साल भी अकाल पडा तब बाला को होश आया था। अपन रिश्तेदारा की हड्डियाँ कितनी कीमती हैं! अपन रिश्तेदारा के ढोर-डगरो की हड्डियाँ कितनी कीमती हैं! हड्डियो के लिए तब महाभारत मचा था। लोग पहरा लगान लगे थे—ये हमारे रिश्तेदारो की हड्डियाँ हैं ये उनके ढोर डगरो की हड्डियाँ हैं। इन पर हमारा हक है!

तब बाला ने जमकर लडाई लडी थी। गाँव-गाँव म और आस-पास रहते रिश्तेदारों की हड्डिया के लिए वह लडता था। ढोर डगरो क पिंजरा के लिए उसने लडाई की थी

तभी दादा और दादी मरे थ। आठ दिनों की दूरी पर। और सत्ताइसवें दिन बापू मरा था। अम्मा तो आठ साल पहले ही मर गयी थी। बापू ने बहुत कहा था पर बाला नही माना था कि दादा की लाश को जलाया जाये?

—जलाने से क्या मिलगा? बाला बापू पर चीखा था।

और बापू चीखा था—अरे कमीने! तू हड्डियाँ भी बच खायेगा? ऐसी औलाद स तो निपूता ही मरता!

बापू ने जो कुछ कहा हो पर ये दिन कसे आते अगर बापू की बात मान लेता! खान को क्या था? जीने को क्या था? सब तरफ तो धरती भुनसी पडी थी।

तभी तो उसन तय किया था कि झुलसी-तपती धरती के नीच अगर लाश दबा दी जायेगी तो हड्डियाँ जल्दी साफ हो जायेंगी। गिद्ध और कुत्ते साफ करन म देर लगायेंगे। इधर-उधर खींच के भी ले जायेंगे। पर रात म कोई हड्डियाँ खोद न ले जाये इसी क लिए तो उसन कमली को पहरे पर लगाया था और वही स सडक किनारे से कर्तारसिंह उसे उठा ले गया था।

यह भी अच्छा ही हुआ था। अच्छे दिन आते हैं तो एक साथ आते हैं। जब बाला को पता चला था कि कमली ट्रको की सराय म है तो वह गया था। बापू उस वक्त जिंदा तो था पर इतना जिंदा नहीं कि सराय तक आ पाता। वह भूख से धीरे धीरे मर रहा था। पर फिर भी जान का कोई और रास्ता खोजने क लिए

तयार नही था। असल म यह बहुत भीतरी इलाका था जहाँ तक सरकारी मदद भी नही पहुँच पायी थी। जस खेत मे सरकारी पानी जाता है न, जिस तक पहुँचा पहुँच गया। उसके बाद

होना वही था। बापू को भी मरना था।

पहले दादा मरा, उसके बाद दादी, उसके बाद बापू ! रिश्तदार और उनके ढोर डगर मर ही रह थ।

पर तब तक बापू नही मरा था। शायद उसक मरने से एक दिन पहले की बात है। बाला जानवरो की हड्डियाँ बटोर रहा था। गिद्धा और कुत्ता के बीच। साल घसीट घसीटकर बहुत दूर ल जाते है।

तब कमली उस खोजती आयी थी। वह बाला को गिद्धो और कुत्ता क जमघट के बीच खोज ही नही पायी थी। उनके बीच वह घुटन माडे गिद्ध की तरह ही बैठा था। साफ हो गयी हड्डियो को बीनता हुआ।

जब दादी की लाश तपती जमीन के नीचे दबाने गया था तो कमली ने कहा भी था—दादी के पैर की उँगली म पडा चाँदी का छल्ला निकाल ले !

—चाँदी नही काँसा है ! उसन परखकर जवाब दे दिया था। कमली इतना जानती भी नही थी। काँसा ही होगा।

भला हो चीनो मिलो और करतारसिंह का। ये दोना न होते तो य दिन कस आते ? हडिडया की खदानें वह क्यो खोदता ? कमली ट्रका की सराय म इतने आराम से क्यो रहती ?

वह साला चदू तो पागल है जा अब भी वही कमली की लगन लगाये बठा है। जो कुछ कमली औरो से पाती है वह चदू से तो मिलने से रहा ! होगा वही जो अब होता है पर ऊपर से चदू को खिलाना और पडेगा।

यही सब सोचता साचता वह हडिडयो की खदाना की ओर चला गया था। सात आठ दिन तो इतना काम रहा कि फुरसत ही नही मिली। बोरा भर भरकर पहुचाता रहा। चदू तौलता रहा और कमली की बात करता रहा पर साले ने न तौल म साथ दिया न पस म। है साला कमीना !

हडिडया की खदाना से वह आठ दिन बाद लौटा था। रात को। कमली काम से थी। वह कथरी आडकर लट गया था। सिरहान रखा हडिडया का बोरा बहुत बुरी तरह महक रहा था। कमली कुनबुला रही थो। उसने पास जाकर पूछा था—कौन है ?

—वस्ती का लाला है ! कमली न कहा था।

—इस माल से दम लना ! कहते हुए बाला अपनी खाट पर आ गया था। कुछ ही दर बाद सब कुछ शात हा गया था। यह अच्छा था। वस्ती का लाला जब

भी आता या तो शुरु मे शोर ज्यादा मचाता था पर आधा घटे बाद ही सो जाता था। ड्राइवर तो रात भर हगामा करते थे। कमली भी बुरी तरह थक जाती थी और दूसरे दिन सोती रहती थी।

कमली तो सो गयी पर उस नीद नही आ रही थी। उस बोरे के कारण। मन बहुत उचटा हुआ था। रह रहकर दादी की याद आ रही थी।

आज सर्दी भी बहुत थी और वह गाँव के पास वाले ऊँचे नीचे बियाबान टीले स दादी की हड्डियाँ खोदकर लाया था।

कमली ने तो रात काट ली थी, पर वह अपनी रात नही काट पा रहा था सडक से ट्रक आ-जा रहे थे। कुछेक सराय पर रुक भी रहे थे।

कडकडाती सर्दी और अर्जुन के तीर की तरह चलती हवा। नीम भी बडबडा रहा था। अंधेरा इतना गहरा कि उठने की हिम्मत ही नही पड रही थी। मन तो हुआ कि कमली को जाके जगाये और कहे—कमली! दादी की हड्डियाँ इसी बोरे म हैं। बहुत महक रही हैं। इस महक के कारन सो नही पा रहा हूँ।

पर कमली थककर सोयी थी। बस्ती वाला लाला भी पडा था।

उसने आँखें बद कर सोने की कोशिश की। एक पल के लिए नीद आयी थी कि तभी कोई ड्राइवर चीखा था—अबे ओए, दीना चल।

दीना सोता-ऊँघता जाकर ठडी गद्दी पर अधलेटा हो गया था और वह ट्रक गुर्राकर चालू हुआ था। फिर हाथी की तरह झूमता सडक पर जाकर कोहरे म खो गया था। कथरी ओढकर वह खाट पर बठ गया था और सडक पर भरे कोहरे को देखता रहा था। चारो तरफ सन्नाटा था। मुर्गे तक दरबे म चुप थे। कासनी फूलो की बेल पेट्रोल पम्प की गुमटी के सहारे काँप रही थी। सनसनाती हवा। मुह से निकलती भाप। ठिठुरे हुए पेड। सामने फले मैदान म रोगटो की तरह खडी हुई घास।

बाला ने फिर लेटने की कोशिश की। लेट भी गया पर नीद नही आयी। दादी! नाराज मत होना य दिन तू भी देख लती तो शायद कुछ आराम से मरती। अब कमली भी बच गयी है और अपन भी। ब्यापार भी चल निकला है। यह अकाल न पडता और इतने ढोर डगर, नाते रिश्तेदार न मरते तो अपन का भी वही हाल होता। भला हो हड्डी गोदाम का! चद्दू वही लग गया है। कमली भी समझदार हो गयी है दादी। अपन से उसने बात की थी। कहने लगी—चद्दू से कह दे क्या फायदा? घर बसाऊगी तो लौट के वही गाव के बाहर झोपडी डालनी हागी। कुआँ सूखेगा तो फिर इधर ही भागना पडेगा। तब एक एक लोटे पानी के लिए ब्राह्मन ठाकुर छोड देग क्या? अकाल तो हम लोगो के लिए पडता है बाकी सबके पास तो बरसो के लिए दाना है। पानी है यहाँ कोई यह तो नही पूछता—कौन जात है? अपनी ज़रूरत से लोग आते है कल नही आयेंगे तो इसी

सराय के बतन भांडे मांज धोकर चलता रहेगा। ऐसे दिन बार-बार हाथ नही आते चदू से कह द क्या फायदा ?

कमली बहुत समझदार हो गयी है दादी ! तू सुन रही है न ! अजुन का तीर फिर लगा तो उसने कसकर कथरी लपेटी। पता नही, कब उठके फिर बैठ गया था। कोहरे की गुफा से एक ट्रक निकलकर फिर कोहरे की गुफा म घुस गया। कुछ देर तक आवाज़ बजती रही।

बाला उठा। कमली को जगा ले। पर

तभी उसके लिहाफ मे हलचल और कुनमुनाहट हुई। लाला लिहाफ से निकल सुडसुडाता हुआ खडा हो गया। कमली बोली—लेटा रह, बहुत जाडा है !

लेकिन लाला का तो अंधेरे अँधेरे निकल जाना होता है। रात कही भी निकले पर उसका दिन बस्ती में ही निकलता है। टोपा चढाकर चादर लपेटकर लाला पगडडी पकडकर बस्ती की ओर चला गया।

बाला वसा ही बठा रहा। बोरे की तरफ देखता हुआ। कमली की भरक टूट गयी थी। शायद उसने लिहाफ के भीतर से देखा होगा। वह पास आकर खडी हो गयी थी—अरे बाला ! तू अभी तक जाग रहा है ?

—नीद नही आ रही !

—थाडी सी उधर पडी है अद्धे म। पी ले। भरक मिल जायेगी सा जा सो जा कहते हुए कमली अपनी खाट की तरफ जान लगी थी।

—सुन ! बाला न कहा था।

—बोल !

—दादी सोने नही दे रही है !

—दादी ! कमली ने ताज्जुब से कहा था।

—हाँ उसकी काया इसम बैठी है बोरे म ? बाला न कहा था।

—अरे हट ! कमली ने झिडक दिया था।

—कमली ! वा अच्छा हुआ कि कोई और खोदकर नही ल गया। अपन ही पहुँचे खदान पर पूरा पिंजर निकला !

—एसे कह रहा है जस पहचान लिया हा ! कहते हुए कमली उसी की खाट पर आधी कथरी आढकर बठ गयी।

—दादी के पर की अँगुली म यो काँसे का छल्ला अब भी पडा है बाला ने कहा ता कमली आग नही बोली। बोरे की तरफ देखती रही।

पेट्रोल क दाना पम्प सफेद रजाई ओढे काना म उगली डाले खडे थे। छप्पर के बाँसों म लटके टायर पुतली निकली आख के दायरे की तरह देख रहे थे। सडक किनारे खडे नीम के पेडा की गर्दनें कोहरे की तलवार न काट दी थी। ट्यूबवेल

के ठडे पाइप की बाँह कच्ची गुमटी की कमर म लिपटी हुई थी। और वे दोनो वही खाट पर चुपचाप बठे थे। जाडा बरस रहा था। अब दोनो को नीद नही थी। वक्त का कुछ अदाजा नही था।

घुटना पर बाँह मोडे ठाडी टिकाय कमली बठी थी। पाटी का सहारा लिय बाला अधलेटा था। तभी सामने दूर कोहरे के टुकडो के पीछे काले आकाश म कुछ हलचल मी हुई थी। काले बादल की लोहे की किनारी थोडी-सी चमकी थी जस उसके पीछे आग की भट्टी की एक लहकती लपट उठी हो। पर फिर लोहा ठडा पड गया था। एक पल बाद काले लोहे की कई किनारिया पर लपट के आसार दिखायी दिय थे फिर वे बुझ गये थे। पर भट्टी शायद बराबर धधक रही थी। गढिया लुहारो का कोई पडाव आसमान के पीछे है क्या ? धौंकनी चल रही थी और आग बढ रही थी। धीरे धीरे लोहे की किनारियाँ पीली पड गयी थी जगह जगह बादलो के होठ नीले हो गय थे। कोहरे के चक्त्ते आग न सोख लिये थे। आसमान मे जगह जगह चीरा लग गया था। तब घास के खडे रोगटे सुरमई से सुनहरे हुए थे और गदन कटे पेडो के सिर नजर आने लगे थे।

बाला कसमसाकर सीधा बैठ गया था।

कमली ने पूछा था—ये हडिडया गोदाम ले जायेगा ?

—हाँ! बाला बाला था।

—सुन बाला! इन्हें नदी म सिरा दे!

वाला अचकचाकर रह गया। यही कुछ तो कुछ इसी तरह की बात ता वह भी सोच रहा था पर यह नही सोच पाया था कि दानो की काया को नदी मे सिरा आये।

—ठीक है न! कमली ने कहा—बुरे दिन हाते तो दूसरी बात थी। गोदाम म ही दे आता

—हा! वह बोला—तडके-तडके निकल जाता हूँ नदी दूर है। दिन चढे तक लौट आऊँगा।

और वह बोरा उठाकर सडक पार करके मदान म उतर गया था, उस पग डडी पर जा नदी की आर जाती थी। कमली उसे तब तक देखती रही थी जब तक वह पेडो क झुरमुट के पीछे अलोप नहा हो गया था।

कमली जाकर अपनी रजाई म गठरी बनकर लट गयी थी। आदमी साथ होता है तो टाँगें पसारकर सोने म भी उतनी सर्दी नही लगती। भरक मिलती रहती है। पर नीद बुरी तरह घिर रही थी! लटत ही उसे नीद आ गयी। बहुत गहरी नीद।

यह पता ही नही चला कि दिन पूरी तरह कब निकल आया। शार कब होने

लगा। चारा तरफ जिंदगी अपनी रफ्तार पर आ गयी थी। दरवे मे मुर्गे कुडकुडाने लगे थे। कुत्ते पेटोल पम्प और सडक तक दौड रहे थे। ट्रक सराय की लबी मेजें धुल गयी थी। सब्जियाँ कट रही थी। अँगीठियाँ जल गयी थी। रात को रुके हुए ट्रक वाले चाय पी-पीकर सफर पर निकल गये थे। टयूबवैल धक धक कर रहा था। वल्कनाइजर के छप्पर म मशीन पर रबर का टाँका लगानवाले लडके आ गये थे। सराय के मालिक ने जगुजी का रिकाड लगा दिया था। अगरबत्तिया की महक फली हुई थी।

कमली नींद की मारी थी।

बाला लौटा, तब भी वह सो रही थी। आते ही उसने जगाया। आँखें मलते मलने कमली ने पूछा—सिरा आया ?

—हा ! उसके दाँत अब भी कटकटा रहे थे। अजुन के तीर तो चल ही रहे थे।

—अच्छा हुआ ! कमली बोली।

—तुझे याद है, दादी स अपन ने हमेशा कहा—दादी, मेरी बात सुन ! मैं देख आया हूँ, पानी का रग लाल है। खून की तरह लाल ! दादी मानती नही थी जिद करती थी—पानी का रग नही होता ! सो आज उसकी काया सिराते हुए अपन न उससे कहा—ले दादी ! आज देख ले

कमली ने उसकी तरफ भर-आँख दखा और चूडी सरकाते हुए बाँहो को भरकान लगी। उसके चहरे पर रात का बासापन था। या शायद ठडक की सफेदी। वह अपने गालो का रगडने लगी तो बाला न देखा—उसके बाएँ गाल की साँवली चमडी पर खून की एक सूखी बूद चिपकी हुई थी। वह उस पर उँगली फिरान लगी तो बाला ने पूछा—क्या हुआ ? उस साले लाला ने फिर काटा इतने जोर से ?

—नही। कमली न मामूली तरह स कहा—उसका वो एक दान सोन का है न वही गड जाता है कहते-कहते वह टयूब वल की तरफ मुह धोने के लिए चली गयी।

खण्ड . २

कमलेश्वर और कमलेश्वर
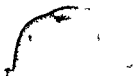
' यह कम्बख्त सारे दिन इस तिकडम या उस तिकडम मे लगा रहता है और यह सब लिख किस समय लेना है ? इसका कमरा क्या है अच्छा खासा वेटिंगरूम है ! कोई-न-कोई बैठा ही रहता है और हाण्डी जैसी ऐश-ट्रे मे चारमीनार झाडते हुए आप उसे प्रवचन पिला रहे होते है। कभी-कभी वेटिंगरूम ऐसी धमशाला भी बन जाता है जहाँ खाना-कपडा से लेकर हजामत का सामान जूता और जेब खच—सभी कुछ बिना आब्लीगेशन मिलता हो। गुसलखाना साफ करनवाला जमादार भी बिना किसी दुविधा-सकोच के सिगरेट या ब्लेड खुद निकाल लेना अपना अधिकार मानता हो ! मैं इन मामला म कुछ फ्यूडन हूँ और ये बातें मेरा मूड खराब कर देती हैं लेकिन खुद तगी और तक्लीफ मे रहकर औरो की सुविधा जुटाने मे कही कमलेश्वर का बडप्पन तप्त होता है और वह धमशाला (अपने कमर) के बीच निहायत इत्मीनान से औधा लटा अपनी बहद सधी खूबसूरत हैंडराईटिंग म किसी कहानी रेडियो या टेलिविज़न स्क्रिप्ट को पहली और अतिम बार लिख रहा होता है उसकी यह शाति और एकाग्रता मुझे जलाकर खाक कर देती है

शाति और एकाग्रता—केवल उस समय जब कलम हाथ म हो, वरना कमलेश्वर से कभी मिल लीजिए वह या ता कही से भागता दौडता चला आ रहा होगा या उसे कही जाना हागा लगता है जसे वह कही फौजा को लडते छोड आया है और जात ही उस उनका चाज सभालना है कोई लडाई है, जिसे जाकर फिर से लडना है

और शायद इस तरह लडते हुए उसे बहुत दिन हो गये हैं। कभी कभी आशंका होने लगती है, कि किसी दिन कमलेश्वर हार तो नहीं जायगा और उसके मोती जैसे अक्षर लहजे का आत्मविश्वास, हाजिर जवाबी और मजाकिया विट, शैली की खूबसूरती और वातावरण को मूड देने की कला—टूटे हुए कवच की तरह दयनीय तो नहीं हो उठेंगे? क्योंकि यह लडाई सीधी और सरल नहीं है यह विचित्र विरोधाभासों की लडाई है और यही क्या कम विरोधाभास है कि कमलेश्वर जिन्दगी के छोटे छोटे 'झूठों' के हथियार से युग के सबसे बडे झूठ के खिलाफ लड रहा है।"

—राजेन्द्र यादव के लेख (कमलेश्वर मेरा हमदम मेरा दोस्त) से

आईने के सामने कमलेश्वर

एक अमीर कहे जाने वाले घर म गरीब की तरह रहना खाना खाकर भी भूखा उठना अकुलाहट भरे दु खो के बीच भी हँस सकना, बच्चा होते हुए भी वयस्कों की तरह निणय ले सकना, यह मेरी आदत नही, मजबूरी थी।

एक दिन बैठक म लगी दो तस्वीरो को दिखाते हुए मेरे बडे भाई सिद्धाथ न कहा था 'यह तस्वीर बाबा की है और यह बाबूजी की है। तुझे कुछ याद है बाबूजी की ?

मैंने चुपचाप सिर हिला दिया था—नही। तब मैं चौथे दर्जे म पढता था सिद्धाथ ने ही बताया था "बाबूजी का हाट फल हो गया था, तब तू बहुत छोटा था बाबा को मैंने भी नही देखा "

घर म बहुत-सी तस्वीरें थी और घर म हर आदमी ऐसा था जिसने किसी एक को देखा था, शेष की तस्वीरें ही देखी थी। जब मैं समझदार हुआ, तो मुझे सिफ वे तस्वीरें ही देखने को मिली जो बैठक की दीवारो पर करीने से लटकी हुई थी। वे तस्वीरें मुझे वश का परिचय देती थी विस्मृतियो म डूबे हुए वश का। हर बारिश म वे तस्वीरें सीलन से धुधली पड जाती थी। मेरे बाबा की तस्वीर बहुत धुधली पडती जा रही थी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की तस्वीर की तरह। तब मुझे भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का पता नही था और मेरे बडे भाई सिद्धाथ ने दीवार से बाबा की तस्वीर उतार कर उसके सहारे उनकी एक नयी तस्वीर बनानी शुरू की थी

सिद्धाथ से मरा जीता-जागता रिश्ता था पर बाबा से एक बहुत ठडा, आदरपूण और दूर का सम्बन्ध। कई दिन तक सिद्धाथ वह तस्वीर बनाते रहे थे, उन्होंने हू-ब-हू वही बना ली थी, और जडवा कर फिर दीवार पर लटका दी थी।

घर—बीते हुए और आग आने वाल के बीच जी रहा था। वतमान इन्ही दो छोरों के सहारे लटका हुआ था। जो बीत गया था वह बहुत गौरवपूण गरिमामय और महान था—जो आनेवाला था वह बहुत अच्छा खुशनुमा और

आरामदेह होगा   क्योकि सिद्धाथ बहुत होनहार थे।

तभी सिद्धार्थ की मृत्यु हो गयी।

और अमीर कहे जाने वाले घर म गरीब की तरह रहना, खाना खाकर भी भूखा उठना अकुलाहट भरे दुखो के बीच हँस सकना बच्चा होते हुए भी वयस्को की तरह निणय ले सकना—मेरी मजबूरी बन गयी थी।

सिद्धाथ की तस्वीर-भर पास रह गयी। भविष्य से हमारा सम्बध टूट गया।

सिद्धाथ स बडे भाई भविष्य की तलाश म पहले ही उस छोटे-से कस्बे से निकल चुके थे और वर्तमान से जूझ रह थे।

वह लडाई का जमाना था। सामती घर बुरी तरह ढह चुका था। नौकर चाकर बिदा हो चुके थे गाय भसे जिदा रह सकें, इसलिए उह गाँव भेज दिया गया था। पर हम जिदा रह सकें—इसका कोई तरीका नजर नही आ रहा था। माँ रात ढाई-तीन बजे उठकर हाथो म कपडा लपेट लपट कर चक्की स आटा पीसती बतन धोती और सुबह होत होते नहा धाकर पुरान जमीदार घराने की मालकिन हो जाती। *गरीब और टूटे हुए मुहल्लेवालो क घावो पर मरहम* लगाती और रात को सूने कमरे म बठ कर चुपचाप रोया करती।

सिद्धाथ के कपडे बक्से म से निकाल निकाल कर देखती और बुरी तरह रोती घर की ऊँचाई और ठोस दीवारें एक भी सिसकी बाहर न जाने देतीं और दोपहर म मा सिद्धाथ के उन्ही कपडो को काट काट कर मेरे नाप का बनाया करती।

भविष्य को जीत कर लाने वाले मृत याद्धा के कपडो की सिलाई मैं खुद बठकर उधडा करता था   ताकि माँ को दिक्कत न हो। होली दीवाली पर माँ अपनी कोई पुरानी सहजकर रखी हुई सिल्क की साडी निकाल लाती—और घटा एक एक कतरन का अदाज लगाती—अगर बाँह छोटी कर दू तो कुरते बन जायेंगे एक तेरा एक मुन्ना का। मुन्नी की फ्राक का घेर भी निकल आयेगा   '

और वतमान स जूझते हुए बडे भाई जब साल भर बाद घर आते थे, तो हम पता चलता था कि बाजारो मे बहुत-बहुत सी चीज बिकती है   कुछ वे हमारे लिए लात थ, जिन्ह कल के लिए बक्सो म रख दिया जाता था। और घर से वापस जाकर वे बडे भाइ अपना दूध और अखबार बद कर दिया करते थे—आखिर खर्चा कहाँ से आयगा?

वे बाजार जिनमे मेरी शौक की चीजें बिकती थी मेरे लिए नही थ। बडे भाई जब अपना पेट काट कर कुछ रुपये बचाते थे तो उन बाजारो की एक निहायत सँकरी खिडकी मेरे लिए खुलती थी   और साल भर के लिए बद हो जाती थी।

मंडिया म बेशुमार अन्न घी, गुड, आलू और कपास थी पर माँ की धोती की खूंट म एक-दो नोट और कुछ सिक्के थे और जब मैं अन्न लेने जाता था, तो दूकानदार बडा तराजू पीछे सरका कर, सबसे छोटे वाले तराजू से मेरे लिए चीजें तौलता था।

दुनिया का यह व्यवहार मुझे अपमानित करता था। मेरी बहुत अच्छी माँ और संघर्षरत भाई को अपमानित करता था। पर वे दोनों दुनियादार थे—मैं नहीं था।

सिद्धार्थ के कपडे पहन-पहन कर मैं भविष्य को जीत लाने के सपने देखा करता था—भविष्य के लिए लडी जाने वाली वह मेरी लडाई तब बहुत छोटी सीमाओं म महदूद थी। माँ के लिए चश्मा, अपने लिए जीन की गेंद और नयी किताबें और भाई के लिए चप्पल—उस बार आये थे तो जूता बहुत घिस गया था।

लेकिन मेरी माँ के वैष्णव संस्कार मुझे विद्रोही होने से रोकते रहे। और यह दबाया हुआ विद्रोह मेरी घोर अप्राकृतिक चेष्टाओं म फूटने लगा। वह एक दुखद दौर था और उसके दौर म सहयोगी थी मेरे सहपाठी।

पढ़ने की ओर से रुचि मेरे उन मास्टर साहब ने हटा दी थी जो मैनपुरी की तम्बाकू खाकर गुस्सा होते थे, तो उनके मुह से फव्वारा-सा छुटता रहता था, और पीटते-पीटते वे लस्त कर देते थे।

मैं हमेशा कमीज के नीचे छोटी कुर्सी की गद्दी बांध कर जाया करता था और काछी मास्टर को मार डालने की साजिशें किया करता था।

कस्बे के स्कूल म बदचलन मौलवी और मुहल्ले के चबूतरों पर बैठे रुग्ण और कुण्ठित पहलवान थे—मोटर-अड्डों पर बदमाश ड्राइवर और क्लीनर थे—और या अँधेरा जो सरेशाम होने लगता था। पूरा कस्बा अँधेरे की चादर म लिपट जाता था और लडाई के जमाने म पढ़ने के लिए भी हम मिट्टी का तेल मयस्सर नहीं होता था। तब हम कुछेक दोस्त शीशियाँ और कीप लेकर रात को म्युनिसपलिटी की लालटेनों से तेल चुराने के लिए निकलते थे।

मुझे आज तक अफसोस है कि मैं अपने पढ़ने के लिए कभी नयी किताबें नहीं खरीद पाया। जब मेरे साथ के लडके अपने पिता या बडे भाई के साथ किताबों की दूकानों पर जाकर कोर्स की नयी-नयी किताबें और कापियाँ खरीदते थे तो मेरी आँखों म आँसू आ जाते थे मेरे साथ कोई नहीं होता था।

चोटें लगती थीं तो मैं दर्द से कराहता और रास्ते मे बैठ-बैठ कर अकेला अस्पताल पहुँचा करता था और मुझे अकेला देखकर वह जालिम कम्पउण्डर बडी बेरहमी से घाव को दवा दिया करता था। मैं दर्द स बिलबिला कर सहारे के

लिए कभी उसकी बाँह पकड़ लेता था, तो वह मेरा हाथ बुरी तरह झटक कर डाँटता था और मैं अपने आँसू दबाये मरहम पट्टी करवा लेता था। वहाँ से निकल कर मैं इमली के पेड़ के नीचे बैठकर रो रो कर अपना दिल हलका कर लिया करता था।

सचमुच, आदमी अकेला हो तो दुनिया बहुत बेरहम हो जाती है।

गर्मी की छुट्टियों के बाद जब स्कूल खुलता था तो वहाँ जाने का कोई उत्साह मन मे नही होता था। पुरानी किताबें वह भी पूरी नही—कापियाँ खरीदने को पैसे नही होते थे इसलिए भाई साहब के आने का इंतजार रहता था कि वे आयेंगे तो सरकारी कागज के दस्त के दस्ते लायेंगे और तब मेरी बेनाप की कापियाँ बनेंगी। माँ अपनी फटी धोतियों की किनारियाँ लपेट लपेट कर रखती रहती थीं और स्कूल खुलते ही मेरे लिए उन किनारियों का नया बस्ता सिल देती थीं।

एक आने की रबर या पटरी के लिए माँ से पैसे माँगते हुए मुझे दहशत होती थी क्योंकि माँ बेबसी में झुंझलाया करती थीं। तीन-तीन दिन मैं भूगोल की कक्षा मे नही जा पाता था क्योंकि बाबूराम जैन की दूकान से दुनिया का नक्शा खरीदने के लिए माँ से कुछ भी कहने की मेरी हिम्मत नही पड़ती थी।

और जब कोई मनचला सहपाठी बताता था कि पिछली दीवाली पर बाबूराम जैन किताबवाला पाँच सौ रुपये जुए मे हार गया, तो मुझे बड़ी राहत मिलती थी।

कस्बे में जो अफसर आते थे वे बड़ी ठसक से रहते थे उनके लड़के गुलदस्ता की तरह सजे हुए दर्जे में आते थे और सरकारी स्कूल के हमारे मास्टर उन्हें हमेशा मानीटर बनाया करते थे। यह तब होता था जब कि मैं अपनी सारी उदासीनता के बावजूद दर्जे में ज्यादातर अव्वल आया करता था। यह स्थितियाँ मुझसे बर्दाश्त नही होती थीं।

रीसिस मे सब लड़के प्याऊ के पास लगे रामभरोसे के खोंचे पर पहुँच जाया करते थे और दबा कर चाट मिठाई खाया करते थे। आलू की सिकती हुई टिकियाँ देखकर मेरा मन बहुत ललचता था, पर मैं प्यासा होते हुए भी उधर रुख नही करता था रीसिस बीतने पर जब टिकियाँ खत्म हो चुकी होती थीं तो मैं पानी पीने जाता था और खोंचे में बची हुई चीजों पर उचटती-सी निगाह डालकर लौट आता था।

स्कूल में मेरे इनाम दूसरों को दे दिये जाते थे और फ़ीस के लिए मुझे बहुत बेइज्जत किया जाता था।

जब तक पिताजी थे, मेरी फीस आधी माफ हो जाती थी। पर उनके चले जाने के बाद फिर कभी मेरी अर्जी मंजूर नही हुई। आखिर मैंने मौलाना से

अव्वल आकर वज़ीफा लेने की ठान ली थी—क्योंकि छमाही मे मैं अव्वल आ जाता था, पर सालाना मे तहसीलदार कोतवाल साहब या इस्पेक्टर का लडका ही अव्वल आया करता था। अव्वल आना मेरे लिए पढाई की दृष्टि से उतने सन्तोष की बात नही थी, जितनी कि आर्थिक विवशता के दृष्टिकोण से थी। आखिर मैं अव्वल आया पर वज़ीफे के रुपयो के लिए सिद्धाथ मुझे मरते मरते तक खत लिखकर पूछत रहे कि मिले या नही—पर उनके मरने तक मुझे मेरा वज़ीफा नही मिल पाया था और जब मिला था तो 'वारफड' मे आधे रुपये काट लिये गये थे।

इन छोटी-छोटी विवशताओ न (जो उस वक्त मेरे छोटे-से अस्तित्व के लिए बहुत बडी थी) मुझे जजर कर दिया था। साइकिल वाले ने मेरी साइकिल छीन ली थी, क्योकि मैं मरम्मत का पसा नही चुका पाया था।

और मरी मा! उन छोटे छोटे किरायेदारा पर बिगडती रहती थी, जो पच्चीस-पच्चीस साल से दो दो तीन-तीन रुपये माहवार पर मकान या दूकानें लिये बठ थे जिन पर दो दो साल का किराया बकाया था और जो कमरतोड गरीबी से हारकर हर बार यही कहा करते थ मालकिन! अब इस उमर मे हम पर रहम करो इसी दरवाज़े से अर्थी उठेगी ।

और वे सब किराएदार ऐसे थे जिनके लडके काम की तलाश म आगरा फिरोज़ाबाद या कानपुर की ओर निकल गये थे जिनका अपने बूढे बापो या विधवा माँओ से कोई सम्बन्ध नही रह गया था।

बरसात आते ही माँ बहुत परेशान रहने लगती थी। पता नही किसके घर की छत बैठ जाय, कौन-सी दीवार भहरा पडे कहने को हमारी जायदाद थी पर जायदाद म एक इट बदलवाने की हिम्मत नही पडती थी। बरसात मे कुछ किरायदार अपन पसा से मकानो की मरम्मत करा लिया करते थे, और तब चार चार महीना तक आमदनी बिलकुल बद हो जाया करती थी। और हमारे जाडा के कपडे हर साल बनते बनते रुक जाया करत थे।

और धीरे धीरे माँ की आखा के आँसू बिलकुल चुक गय थे वह निपट सूनी आखो स सपाट दीवारो और अँधेरे-सूने कमरा का देखती रहती थी और उसे दिल के दौरे पडने लग थे।

फिर भी वह कुछ नही कहती थी। गली मुहल्ले की हर आफत मुसीबत म औरो के साथ खडी होती थी और इलाहाबाद मे रहनेवाले भाई साहब के बच्चो तथा भाभी के लिए धीरे धीर चीजें बना-बना कर रखती रहती थी। जब भाई आते थ तो वह सबके लिए कुछ-न कुछ भेजती थी—'दुल्हन के लिए यह धोती। मुन्नी के लिए फ्राक और यह कुछ कचरी पापड हैं फसल पर अचार डाल लिया

था यहे गद्दा बना दिया है बच्चे के लिए एक पुराना कपडा पडा था ।

भाई का आना मबसे ज्यादा सुख था, और उनका लौटकर जाना सबसे ज्यादा दु ख का क्षण होता था।

मैं बहुत अकेला रह जाता था।

पर माँ थी कि सब-कुछ चुपचाप झेलती जाती थी। कही नामोशी न हो, यह उसे हमेशा खयाल रहता था और वह अपना और मेरा पेट काट काट कर भी किसी भाजे या पोते या नाती के लिए सौगातें देने जाती थी। सक्राति और दूसर धार्मिक पर्वों पर पण्डितजी के लिए भर भर परात अन्न भेजती थी और शादी ब्याहो म अपने पुराने घर की शान के अनुरूप व्यवहार' के जोडे या रुपये भिजवाती थी। सावन म पीहर लौटी हुई मुहल्ले की ब्याहता लडकियो के लिए लम्बे बरामदे म झूला डालती थी और उन्हे अपनी बच्चियो की तरह खिलाती पिलाती और बिदा करती थी।

घर मे मैं एकदम अकेला ही रहता था। कोई मेरी उम्र का नही था। अपने निपट अकेलेपन म मुझे एकाएक अपने से बडी उम्र की लडकी की निकटता मिली, और मैं चौबीसो घटे उसके ध्यान मे डूबा रहने लगा। उसकी कोठी म मिलने जाते हुए मुझे हमशा डर लगता था—खास तौर से इसलिए कि कोठी के पिछवाडे जगली झाडिया थी और सापो के बिल थे। शाम के उतरते अँधेरे म उससे मिलने जाना जान पर खेलने क बराबर था क्योकि मुझे साँपों से बहुत डर लगता था वहाँ जाते हुए मैं हमशा चिडियो की आवाजा पर ध्यान देता था क्योकि चिडियाँ साप की उपस्थिति को पहचानने म बहुत तेज होती हैं और एक साथ शोर मचाती हैं जब-जब चिडियाँ चीखती होती मैं वही नालेवाली पगडडी पर ठिठक जाता और कुछ देर बाद वापस लौट जाता। तीसरे चौथे दिन जब मुलाकात होती और वह लडकी शिकायत करती तो मैं समाज को दोषी ठहराता—यह समाज बहुत जालिम है जो हम मिलने नही देता। तब हमे सिर्फ इतना पता था कि समाज नाम की कोई बेरहम चीज होती है जो प्रेमी प्रेमिकाओ को नही मिलने देती साँप का इसम क्या दखल ?

और दो तीन साल बाद जब मेरी उस प्रेमिका की शादी हुई तो मैं इत्तफाक से इलाहाबाद से मनपुरी पहुच गया था। घर पहुँचते ही माँ ने नाऊ को बुलवा कर मेरे बाल कतरवा कर छोटे करवा दिये थे क्योकि उन्हे लम्बे-लम्बे पट्टो से चिढ थी और उस लडकी के बहुत चाहने पर भी कि मैं शादी से पहले उससे मिल लू—मैं अपने कटे हुए बालो के कारण नही जा पाया था।

ज्यादा पढाने से लडके हाथ से निकल जाते है। यह मेरे सबसे बडे पर सौतेले भाई का नारा था। यद्यपि वे घर से अलग थे, पर घर म फिर भी उनका काफी

रौब दाब था। मुझे दसवें के बाद आगे पढाया जाय, यह उन्हें मंजूर नहीं था।

उन दिनो वे कानपुर छावनी के 'योरोपियन इन्स्टीटयूट' मे मैनेजर थे। वह इन्स्टीटयूट अंग्रेज और अमरीकन सिपाहियो के विलास का अड्डा था। जमाना दूसरे विश्व युद्ध का था।

नशे म धुत्त फौजी जब आपस मे लडते हुए बार के गिलास और बोतलें चलाने लगते थे, तो मेरी रूह फना हो जाती थी और मैं बार काउंटर के नीचे रखी पेटियो के पीछे दुबक जाता था

भीतर डांस हॉल मे आर्केस्ट्रा बजता रहता था। बरामदे म हौजी या रमी चलती। संगीत, नाच, गालियां, चीखो और कराहों से वह पूरी इमारत गूंजती रहती थी लडकियों के साथ वे फौजी जानवरो की तरह पेश आते थे—उन्हें वे अपनी मेजो पर नगा कर लेते थे या मदान म खुद नगे होकर लडकियो का पीछा किया करते थ।

मुझे बारबारा की याद है—वह हिंदुस्तानी ईसाई थी और सबसे खूबसूरत थी। उसे उन फौजियो ने इतना मारा पीटा था कि वह फ्रंट से लौटे हुए क्षत-विक्षत सनिक की तरह लगती थी। एक रात उसकी जाँघ म किसी टामी ने टूटा हुआ गिलास मार दिया था, बहुत खून बहा था पर अगली रात वह बैंडेज करवा के फिर नाचने आयी थी और मैंने उसे इमारत के बाहर मदान म घिरे हुए जन्मा खरगोश की तरह भागते देखा था, तीन टामी उसका पीछा कर रहे थे

रात की स्याह चादर आसमान मे गों गां करते हुए हवाई जहाज छावनी के सतरियो की बूटो की आवाजें मिलिटरी ट्रको और जीपो की जू-जू शराब संगीत और मास के दरिया म गोते लगाते हुए फौजी ! ब्लैक आउट के रिहर्सल और डरावनी आवाजो मे चीखते हुए सायरन !

मुझे लगा था कि यह दुनिया मेरी नही है। हर रास्ते पर 'नो एंट्री' के बोर्ड थे और हर कदम पर कँटीले तारों के घेरे थे।

मैं भाग खडा हुआ था—अपने छोटे से कस्बे की ओर जहा सारे मानसिक अपमान और अपनी हीनता के बावजूद लोगो की आखो म पहचान दिखायी देती थी।

ब्रांच लाइन की रेलगाडी—छोटे-छोटे उदास स्टेशन और बंजर पडे खेत तारो पर बठे हुए नीलकंठ ! सूने प्लेटफार्मों पर गाडी का इंतज़ार करते हुए आवारा कुत्ते और अकेला स्टेशनमास्टर !

मैं घर लौट रहा था ब्रांच लाइन की गाडी कूल्हे हिलाती हुई भाग रही थी। खिडकी से मैं सूने प्लेटफाम को देखता हूँ तो एक डिब्बे के बाहर 'हँसिया हथौड' का लाल झण्डा लगा नजर आता है। प्लेटफाम पर उतर कर मैं उत्सुकता से उस डिब्बे के यात्रियों को देखता हूँ मैं लडने के लिए उस डिब्बे मे घुस जाता

हूँ। मेरे हिन्दू संस्कार उसको बर्दाश्त नहीं कर पाते। भीतर पहुँच कर पता चलता है कि वह 'झण्डा' क्रान्तिकारी समाजवादी पार्टी का है—भगतसिंह और चन्द्रशेखर आज़ाद की पार्टी का!

उस डिब्बे में योगेश चटर्जी और यू० पी० पार्टी के सेक्रेटरी केशव मिश्र सफर कर रहे थे। मैं अनाप शनाप सवाल पूछता हूं उनसे झगड़ता हूँ। पता चलता है कि वे लोग किसी मीटिंग के सिलसिले में मेरे शहर ही जा रहे हैं। योगेश चटर्जी मुझ से मेरे घर का पता लेते हैं—और तीसरे दिन घर पर दस्तक होती है!

मुझे लड़ाई का एक मोर्चा नज़र आता है जिस पर मेरे साथ बहुत से साथी तैनात हैं। और इलाहाबाद आकर मैं क्रान्तिकारी समाजवादी पार्टी का काम करने लगता हूँ। साथ में पढ़ाई जारी है। तमाम किताबें और पर्चे हर रोज़ मिलने हैं जिनमें एक नयी दुनिया की तस्वीर है हिन्दुस्तान का एक नया नक्शा है। हिन्दुस्तान के बाहर विदेशों में चल रही अवाम की लड़ाई की खबरें हैं उन अफ्रीकी और परतन्त्र देशों की खबरें हैं जहाँ जनता अपनी खोई हुई आज़ादी के लिए लड़ रही है।

इलाहाबाद के चौक में घंटाघर के पास है वह पार्टी का दफ्तर—जिस पर वह झण्डा फहरा रहा है। जहाँ दूर दूर जगहों से साइकिलों पर लोग आते हैं और कागज़ों अखबारों के बंडल दाब कर लौट जाते हैं सबकी आँखों में सार्थकता की ज्योति है—दिल में आग है।

किसानों पर गाज़ीपुर में अत्याचार हुआ है! कानपुर के चमड़ा कारखाना से मज़दूरों की छटनी हुई है। चुंगी के सफाईदरोगा ने नौजवान मेहतरानी को बेइज़्ज़त किया है। दिल्ली सरकार ने जनता की इच्छाओं के खिलाफ फरमान जारी किया है। राष्ट्रीय नेता आज सुबह गिरफ्तार कर लिये गये हैं। साउथ अफ्रीका में गोरी सरकार ने गोली चलायी है।

और उसी तेज़ी से प्रस्ताव पास हो रहे हैं—विरोध! विरोध! विरोध! हड़ताल आंदोलन वक्तव्य। पार्टी का वह छोटा सा कमरा पारे की तरह थरथराता रहता था।

'जनक्रान्ति' अखबार निकलता है और उसमें क्रान्तिकारियों की जीवनियाँ लिखना शुरू करता हूं। वहीं पार्टी के दफ्तर में बैठ बैठ कर तमाम किताबें पढ़ता हूं और अपनी असली लड़ाई को पहचानता हूँ। ज़िन्दगी में सब कुछ है सिर्फ पैसे नहीं हैं पर अब पैसों की कमी उतनी नहीं खलती। इस ज़िन्दगी में यह दिक्कतें उठानी ही पड़नी हैं। हम में से किसी के पास पैसा नहीं है कपड़ा नहीं है, जूते नहीं है बिस्तर नहीं है। प्रस्ताव हैं, वक्तव्य हैं आंदोलन हैं इसलिए सब-कुछ है।

तभी आज़ादी मिलती है और शरणार्थियों की ट्रेनें इलाहाबाद पहुँचती हैं। विभाजन का अभिशाप लिये टूटे थके और उजड़े हुए लोग बदहवास आँखों से

चारा ओर देखते हैं पीछे मारे गये घरवालो का बोझ दिल पर है सब-कुछ खोकर भी वे परास्त नही हैं बाहु टूट गयी हैं, पैर कट गये हैं आँखो में देम हुए भयकर रक्तपात की डरावनी परछाइयाँ हैं, पर आदमी है कि अपने से आजिज नही आया है।

मैं दिन रात ट्रका पर रसद और दूसरा सामान लदवा कर गगापार शरणार्थी कम्पो म जाता हू—वहाँ सेना की वही बैरकें हैं, जो कानपुर छावनी में थी पर अब व खाली हैं खस्ता हाल हैं उन्ही मे कम्प खुलते हैं और उजाड, डरावनी वरका म शरणार्थी एक नयी जिन्दगी शुरू करते हैं।

ककरीली जमीन साफ कर करके सब्जियो की क्यारियाँ बना लेत हैं। कोई कोइ जगली फूला का एक पौधा भी रोप लेता है। हर सुबह जब हम स्वयसेवक मेयो हाल मे ट्रका पर सामान लदवा कर चलते हैं तो उन लोगा की शक्लें याद आती है, जा वहाँ वीराने म पडे हमारी राह देख रहे होंगे हमारा ट्रक पहुँचते ही जो आपस म लडने लगत थे पर बाद म हर व्यक्ति का हिस्सा खुद लड झगड कर दिलवाते थे। अपन छूटे हुए घरो और बिछडे हुए जनो की याद करके रो पडते थ

वे मौत का दरिया पार करके आये थे।

और एक दिन सामान बाटने के बाद जब लौटने लगे थ ता एक अधेड औरत हमारे पास आकर खडी हो गयी थी—'भाजा। हम अस्पताल पहुँचा दो बडी मेहरबानी होगी ।

उस औरत का कोई नही था। सब घरवाले मारे गये थे। वह अकेली थी और मौत का दरिया पार करक आयी थी। अस्पताल म दूसरे दिन उसने एक बच्चे को जन्म दिया था।

जन क्रांति' बराबर निकल रहा था। उसमे लिखना कुछ और बढ गया था। आदर्शों के प्रति आस्था और भी बढ गयी थी। साथियो की अडिग आस्था मुझे और पुख्ता करती जा रही थी। पार्टी-दफ्तर म एक दिन मैं अकेला था और हुक्म मिला था कि मैं वहाँ स हटकर न जाऊँ। नेता लाग किसी अहम बातचीत के लिए काग्रेस के नेताआ क पास दिल्ली गये थ।

फिर लौट कर कोई नही आया। पार्टी के जिम्मेदार व्यक्तियो न काग्रेस म शामिल हाना स्वीकार कर लिया था। उनके वक्तव्य अखबारो म आये थे। जिन्होन काग्रेस म शामिल हाना ठीक नही समझा था, वे हताश हाकर अपने पुराने घरों को लौट गये थ।

मैं दफ्तर म बठा लागो के लौटने की प्रतीक्षा करता रहा पर कोई नही

आया। सब दस्तावेज़, सब प्रस्ताव सब वक्तव्य एक दिन म झूठे पड गये। मुर्दा हो गये।

और इतजार करत रहने के बाद जब घबरा कर मैं पार्टी आफिस से उतर कर नीचे सडक पर आया तो दुनिया फिर बदल गयी थी।

इस बार मैं पहले से कही ज्यादा अपमानित और अकेला था। इस बार मेरी आस्था ध्वस्त हुई थी।

एक खूखार दुनिया मुझे भूखे भडिए की तरह घूर रही थी।

उधर कालेज की परीक्षा म झूठा इलज़ाम लगाकर दो साल तक बैठने से रोक दिया गया था। और मैं अपने से हारने लगा था कि तभी किसी ने बहुत अपनेपन से कहा था 'सिरका प्याज़ और रोटी भी मिल जायेंगी तो भी कितने खुश रहेंगे। घबराने की क्या बात है!"

और तब फिर से पढाई शुरू करते हुए मैं साहित्य सम्मेलन इलाहाबाद के पुस्तकालय म पहुँचा था। वहाँ दीवारा पर वसी ही तस्वीरें लगी हुई थी जसी मेरी बठक म लगी थी। और एक क्षण के लिए लगा था कि जसे इतने बरसा के बाद सिद्धार्थ उन्ही तस्वीरा को दिखाते हुए मुझे बता रहे हो 'यह तस्वीर बाबा की है और यह बाबूजी की है जब बाबूजी मरे तब तू बहुत छोटा था बाबा को मैंने भी नहीं देखा ।"

और भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की तस्वीर मुझे बाबा की तस्वीर की तरह ही धुधली दिखायी दी थी और फिर थी प्रेमचद की तस्वीर जब वे मरे तब मैं बहुत छोटा था।

उस दिन मे मेरा वश बदल गया था।

(सन ६४ में लिखित और प्रकाशित सारिका से साभार)

कमलेश्वर दुष्यन्तकुमार की निगाह मे

जिस दिन से कमलेश्वर का वश वदला, लगभग तभी से मैं उसे देख रहा हूँ। और अब तक आपकी मुलाकात इस व्यक्ति से न हुई हो तो अब जरूर मिलिये। आप पायेंगे कि वह बेहद खुशदिल, खुशमिजाज और मिलनमार आदमी है। लतीफो और चुटकुलो की फुलझडियो से वह महफिलें गुलजार रखता है। और बात को मोडकर बात पदा करने म उसका जवाब नही।

आज यह सब है। पर जिस वक्त यूनिवर्सिटी म वह मेरे साथ था बहुत खामोश रहता था। हम दोनों बी० ए० म थे। यद्यपि उसम शुरू स ही साधारण से कही अधिक प्रतिभा सूझ-बूझ एव सुरुचि थी पर मैं केवल सज्जनता के कारण उसकी तरफ आकृष्ट हुआ था। वह बहुत सादा सरल और शान्त था। वह बेहद बेरहम सघर्षों के बीच से गुजर रहा था पर उसके चेहरे पर एक भी शिकन नही होती थी। मुझे भी यह पता था कि उसके पास चार जोडा से ज्यादा कपडे नही हैं पर उसके कपडा पर एक भी धब्बा नही होता था।

वह एक छकडा साइकिल पर यूनिवर्सिटी आया करता था। और तलब लगने पर किसी झाडी के पीछे या एकान्त कोने म छुपकर बीडी सिगरेट पिया करता था। शायद हर महीने उसका नाम फीस जमा न करने वाल 'डिफाल्टर' छात्रा की लिस्ट पर रहा करता था क्योकि जेब-खच नाम की कोई चीज उसके पास न होती थी इसलिए फीस के रुपयों म से कुछ न कुछ वह हमेशा बच कर लता था और वक्त पर उसके पास पूरे पैसे नहीं होते थे।

उन दिनो वह कुछ-कुछ लिखा करता था—खासतौर मे एक डायरी। एक लडकी थी जिसके बारे म वह कभी-कभी बात भी किया करता था। वह लडकी भी उसे चाहती थी। तब उसकी दुनिया बहुत छोटी थी। यूनिवर्सिटी म पढने आता वहाँ स लौटकर वह एक रद्दी किस्म की पत्रिका के कार्यालय म काम करता जहाँ से उसे पचास रुपया महीना मिलता था और शाम को वह अकेला रहना पसन्द करता। उसने अपने को कतई महदूद कर लिया था। रात को घर लौटकर

वह अपने निहायत छोटे-से कमरे म बठकर लिखा करता था।

वह कितनी तरह के काम करता था यह भी पता नही चलता था। उन दिनो भी खुद्दार इतना था कि अपनी बात किसी से नही करता था। मुझे वे दिन याद है जब वह अपने आपम 'सर्वोदयी हो गया था (विनोबा स भी पहले)। साबुन बनाने स लेकर अपनी स्याही तक खुद बनाता था। सकोची वह इतना था कि खाना भी भरपेट नही खा पाता था। उसकी मा न ही मुझे एक बार बताया था— कलाश (यही उसका घर का नाम है) इतना सकोच करता है कि दुबारा रोटी तक नही मागता मुझे जिन्दगी म यह अफसास हमशा रहेगा कि मेरे बेटे ने मुझसे ही कभी रोटी या पसा नही मागा।'

जिस जमान म उसने लिखना शुरू किया था और जिस सघष से वह निकल कर आया था उसने कमलेश्वर को नितान्त अन्तमुखी बना दिया था। उसके उस आदशवादी प्यार ने उसे बाद मे चलकर और भी तोड दिया।

वे दिन भी मुझे याद हैं जब वह पाजामा-कुरता पहन हुए अपनी उसी छकडा साइकिल पर एक शाम मरे पास आया था। उसकी आखो मे धूल उड रही थी और चेहरा एकदम उतरा हुआ था। चाय पीते हुए उसन बहुत धीरे स कहा था अब मैं अकेला रह गया हूँ।' और मुझे मालूम है कि अपने लिखने की अड पर उसन अपनी जिन्दगी की वह चीज खुद खो दी थी जिसे वह उस वक्त सबसे ज्यादा चाहता था। उसका एक ही तक था—"दुष्यन्त जिन्दगी म सब हासिल नही होता। चुनना तो होगा ही कि मैं क्या चाहता हूँ "और उसने अपन लिए साहित्य का रास्ता चुन लिया था।

उसका लडकपन का वह चुनाव जो उस वक्त उसने भावुकता म किया था आज सही साबित हो चुका है। क्योकि उस वक्त मुझे और खासतौर से मार्कण्डेय को यह उम्मीद कतई नही थी कि कमलेश्वर इस जिन्दगी को झेल पायगा। शायद कमलेश्वर न भी महसूस किया हो कि सौजन्य और सादगी के दुशाले ओढकर व्यक्तित्व का आकषण भल ही बढा लिया जाय उसका आतरिक प्रभाव नही बढाया जा सकता। इधर उसकी विशिष्ट प्रतिभा उस वशिष्टय प्राप्त करन के लिए उकसा रही थी। फलत वह गम्भीरतापूवक कहानी लेखन की ओर उन्मुख हुआ जहा उसे आशातीत सफलता प्राप्त हुई। उधर चूकि सामाजिक व्यवहार के स्तर पर पनापन और वाकचातुय व्यक्तित्व को दिलचस्प और अभिव्यक्ति को तेज बनात हैं इसलिए अपनी एकान्तिक गाठा का खोलकर सहज मधा द्वारा उसन उस दिशा म भी रुचि लेनी शुरू की। यह प्रक्रिया आवश्यक भी थी। यदि ऐसा न होता तो कमलश्वर अपनी व्यक्तिवादी गुजलक स बाहर न आ पाता। अपने घेरो को तोडने का काम उसने उस शक्ति से लिया और सामाजिक बौद्धिक और मानसिक रूढिबद्ध घेरा को तोडने का काम वह कहानी स लने लगा।

वे तमाम घटनाएँ जिनमे कमलेश्वर एक निहायत पैन व्यक्ति की तरह नज़र आता है मेरे सामने लौट आयी है ।

इलाहाबाद की गर्मी। कमलेश्वर और मैं तीन मील पैदल चलकर रेडियो स्टशन पहुँचते हैं। काम समाप्त कर सवाल उठता है—अब क्या करें? आराम या तीन मील का पदल मार्च? जेब मे पैसे भी कम हैं तभी डॉ० धर्मवीर भारती रेडियो-स्टेशन स निकलते हैं और अपनी मोटर की तरफ बढते हुए दिखायी दते हैं (उल्लेखनीय है कि उन दिना भारती जी ने जो मोटर खरीदी थी, वह इलाहाबाद के साहित्यकारों क कौतुक मनोरजन यहा तक कि ईर्ष्या का विषय बन गयी थी)। भारती जी शालीनतावश पूछते हैं—'अरे भई, सिविल लाइस चल रहे हो?"

मैं लपककर मोटर तक पहुँच जाता हूँ। कमलेश्वर हाथ जोडकर ठिठक जाता है। भारती जी उसके सकोच को हटाने की कोशिश करत हैं— अरे आओ भी!'

और अतिशय विनम्रता से कमलेश्वर कहता है— वह बात यह है कि मुझे जरा जल्दी पहुँचना है मैं रिक्शे से चलता हूँ आप मोटर स आइय।

एक पूरी किताब कमलेश्वर के ऐसे सस्मरणो पर लिखी जा सकती है मगर उससे भी उसके व्यक्तित्व के साथ याय नही हो सकता। यह तो मात्र प्रासगिक सत्य है कि अपनी विलक्षण मेधा द्वारा उसन अल्पकाल म, इच्छा मात्र से, व्यग्य विनोद की प्रकृति को आत्मसात कर लिया। मूल सत्य यह है कि उसक असल व्यक्तित्व की अन्तर्धारा म न तो व्यग्य है और न हास्य। वह स्वभाव से अत्य त सवेदनशील भावप्रवण और गम्भीर व्यक्ति है। उसका मूलभाव करुणा है—सघन पुजीभूत करुणा—जिसके कारण वह अपने व्यग्य म भी अनुदार नही हो पाता यहा तक कि उसकी फबती से आपको कही ज़रा भी चोट पहुँची तो शायद पहला आदमी वही होगा जा तत्क्षण इस बात का भाप लेगा और अवसर मिलते ही चिमकते हुए आपका हाथ अपने हाथ म लेकर इस कदर प्यार से दबायेगा कि उसकी हथेलिया की ऊष्मा म आप (अगर आप थोडे भी समझदार हैं तो) असल कमलश्वर को खोज निकालन मे भूल नही करेंगे।

मैंन इस असल कमलेश्वर का इसलिए भी और जल्दी खोज लिया कि वह मेरे साथ बहुत रहा है। वसे उसकी कुछ आदतें तो बडी बेहूदी है। उनम से एक आदत के कारण उसक साथ सडक पर चलना मुश्किल हो जाता है—रास्ते म उसे जो भी राहीजी' पीडितजी' व्यथितजी बेकलजी या गुमनामजी मिलेंगे वह सबके लिए एक मिनट दुष्यन्त' कहकर अटक जाता है। इलाहाबाद मे शुरू शुरू म जब वह खुद बहुत प्रसिद्ध नही हुआ था उसके यहा बहुत-से साहित्यकार जमे रहत थ। और यह जानत हुए भी कि साहित्य बोध नुसखे देकर नही बाँटा जा सकता वह

भरसक सबका समाधान करने की कोशिश किया करता था।

कमलेश्वर की जो सबसे बड़ी खूबी है, वह यह कि आप सौ फीसदी यह तय करके जायें कि उनसे लड़कर लौटेंगे पर आप लड़कर नहीं लौट सकते क्योंकि घोर विरोधी को वह अपने व्यक्तित्व की सहजता सौजन्य, बुद्धि और अपनी आँखों के विश्वास से पराजित कर लेता है। वह अहवादी नहीं है कुण्ठित नहीं है, उसमें एक सहज अपनापन है।

इलाहाबाद में वह प्राय रोज़ रात के ग्यारह-बारह बजे तक मेरे तथा अन्य दोस्तों के साथ गप्पें लड़ाया करता था। घर जाकर खाना और डाँट खाया करता था। रात को देर-देर तक लिखा करता था और सुबह फिर उसी ताजगी और उत्साह से दिनचर्या शुरू हो जाती थी। उसी चुस्ती और उल्लास से वह अपनी छकड़ा साइकिल उठाता तीन मील उलटा चलकर मेरे पास आता मेरे अहदीपन पर लानत भेजते हुए खुद चाय बनाता फिर तीन मील यूनिवर्सिटी का सफर तय करता, दोपहर को सेण्ट जाजप्स सेमिनरी में कैथोलिक पादरियों को पढ़ाने जाता शाम को एक खास रास्ते से गुज़रकर अपनी प्रेमिका से मिलता और फिर सिविल लाइन्स में दोस्तों से आ मिलता। इस तरह रोज़ाना बीस-बाइस मील का चक्कर काटकर रात को घर पहुँचता तो उसके दिमाग में केवल दो बातें होतीं—भाई साहब की प्यार भरी डाँट और कहानी का प्लाट।

ये उसके भयंकर संघर्ष के दिन थे। वह अपने छोटे से कसबे मैनपुरी से मानसिक रूप से इतना जुड़ा हुआ था कि इलाहाबाद में रहते हुए भी वह वहाँ की बातें सोचा करता था। हर महीने भागकर मैनपुरी जाया करता था और तीन चार बार प्लाट ले आया करता था। उसी समय उसने मुरदों की दुनिया कहानी लिखी थी। वह कहानी कमलेश्वर ही लिख सकता था क्योंकि वह अपने कथा क्षेत्र में संवेदना और समझदारी के स्तर पर जुड़ा हुआ था। उसके दिल में एक कसक थी—अपने छूटे हुए शहर के बाशिन्दों के लिए। यही वह समय था जब वह वैचारिक द्वन्द्व के बीच घिर गया था। अपने टूटते हुए सामन्ती घर से तो वह निकल आया था पर जीवन में जो आस्थाएँ खण्डित हुई थीं उनकी पुनःस्थापना और ज़िन्दगी से फिर से जुड़ सकने का उसका वह अन्तर्द्वन्द्व मैंने देखा है। मैंने देखा है कि कमलेश्वर ने कभी भी किसी 'डाग्मा' से चालित होकर लिखना स्वीकार नहीं किया है। उसकी हर कहानी उसके जीवनानुभवों में से निकली है। उसने पढ़ पढ़कर उस मनःस्थिति को नहीं झेला है बल्कि उसे स्वयं जिया है।

राजा निरबंसिया कहानी लिखने से पहले भी वह अन्तर्द्वन्द्व से पीड़ित रहा है। उसका छूटा हुआ शहर तब भी लोक-कथाओं के आदर्शों के मातहत जी रहा था पर इलाहाबाद में स्थितियाँ वे नहीं थीं और वह व्यक्ति-व्यक्ति के बदलते

सम्बन्धो को नही समय और इतिहास के बदलते सम्बन्धो को भी देख रहा था। इसीलिए उसकी हर कहानी जीवन के सन्दर्भों से जुडी हुई है। उसकी शायद ही कोई ऐसी कहानी हो जिसके सूत्र जिन्दगी म न हो क्योकि वह बहुत खूबी से अन्तर्विरोधो को पकडता है। उसकी लगभग हर कहानी का एक वास्तविक स्थल है जहाँ से वह उसे उठाता है और अपन कथ्य की कल्पना अपेक्षाओ के साथ अभिव्यक्त कर देता है। मुझे बहुत-सी वे घटनाएँ लोग, स्थितियाँ, विचार, सन्दभ, पात्र आदि याद हैं जिन्होंने उसकी सशक्त कहानियो को जन्म दिया है। कमलेश्वर इस मामल म एक बजारा है क्योंकि वह अनवरत यात्रा पर रहता है। वह लिखन का सरजाम जुटाकर धूपबत्तिया जलाकर, बेले या हरसिंगार के फूल सामने रखकर, चाकलेट कुतर कुतरकर खाते हुए नही लिखता।

इसीलिए राजेन्द्र यादव कहा करता है—'यार इस आदमी म कितना स्टमिना है! दिन भर घूम सकता है, बैल की तरह काम कर सकता है रात भर जागकर दोस्तो के साथ ठहाके लगा सकता है फिर भी चेहरे पर थकान या शिकन नही! जाने किस चक्की का पिसा खाता है!" और कमलेश्वर उसे या अन्य दोस्त-लेखको को सन्त्रस्त करने के लिए कभी-कभी एसे झटके दे भी दिया करता है। मन्नू भण्डारी द्वारा सम्पादित 'नई कहानिया के विशेषाक म उसकी कहानी प्राप्त करन के लिए जब यादव ने उसे बाकायदा घेर ही लिया तो वह कलम लेकर बठ गया और बोला— 'अच्छा, तुम शेव करो मैं कहानी शुरू करता हूँ!" और उसने कहानी शुरू कर दी। राजेन्द्र यादव ने शेव का सामान सामने रखा तो वह बोला— राजेन्द्र देख नायिका दरवाज पर आ गयी!' यादव ने जब तक शेव का पानी गरम किया वह बोला— देख, अब वातावरण डाल रहा हूँ! और उसन वातावरण डाल दिया। यादव ने शेव समाप्त किया तो वह बोला— अब एक स्थिति समाप्त हो गयी!

और जब तक राजेन्द्र यादव न अपनी आदत के मुताबिक चार पाच एतिहासिक पत्र लिखे, नहाया और कपडे पहनकर तैयार हुआ तब तक कमलेश्वर न कहानी पूरी करके यादव को थमा दी। कहानी थी 'जो लिखा नही जाता' और यादव ध्वस्त होकर रह गया। लेकिन यह केवल झटका था और उसके लेखन का यह तरीका बिलकुल नही। वह तो तब लिखता है जब निभत एकान्त हो और उस पर दबाव हो— वचारिक मानसिक या आर्थिक।

इलाहाबाद म एक दोपहर घर लौटत हुए उसन एक नगी जवान औरत को चार आदमियो क बीच घिरे और चिल्लात देखा तो उसकी चेतना एक गहरा नतिक दबाव अनुभव करन लगी। यह दबाव कई वर्षों तक उसकी चेतना पर छाया रहा—तब तक जब तक कि वह एक अश्लील कहानी लिखकर उससे उऋण न हो गया। छोटी से छोटी घटना भी कब और क्या उसकी चेतना पर हावी हो

जायेगी यह कहना मुश्किल है। जब वह एसे दबावो मे होता है तो अनदेखी अन जान दिशाओ की काल्पनिक यात्राएँ करता है। अनुपलब्ध और अप्रस्तुत पीडाओ के बारे म सोचता है और पीडित होता है। उँगलियाँ चटखाता और कसमसाता है और ऊपर स सरल दिखायी देन वाली उस स्थिति को उसकी सारी उलझनो, कुण्ठाओ और तकलीफो स भरकर भोगता और लिखता है। हाँ जब वह उनस मुक्त होता है तो दोस्तो की खाल उधडता है। चुटकुल और लतीफ गढता है। सिगरटें फूँकता है। नयी पुरानी बदमाशिया के बारे म बात करता है। दस्तूरी चिट्ठियाँ लिखता है और घर के काम-काज म दिलचस्पी लता है।

इस तरह एक ओर जहाँ वह अपन समय के उलझावो, विरोधाभासो और यन्त्रणाओ को अपन भीतर उतारकर समझने की कोशिश करता है वही उनसे नि सग होकर उन्ह निरन्तरता म देखने की काशिश भी जारी रखता है। दोनो ही स्थितियो म उसका दृष्टिकाण पराजयवादी नही, आस्थावादी होता है।

प्रगति म परिवतन का बोध निहित है और कमलेश्वर की प्रगति इसी परि वतन की प्रतिक्रिया को समझने का परिणाम है। उसकी कहानियाँ भाषा और मध्य समाज के बदलते हुए भिन्न भिन्न परिवेशो की देन हैं। उसका स्टमिना परिवतन की तज से तज रफ्तार म उसका सहायक होता है इसीलिए कमलश्वर कभी पिछडता नही और न प्रयत्न शिथिल होता है। जब वह मनपुरी जस कसबे स इलाहाबाद म पहुचा तब भी और अब इलाहाबाद जस शहर स दिल्ली-सी महानगरी म आकर बसा तब भी आन और बसन के बीच वह निरन्तर मानसिक रूप से अपने शिथिल परिवेश क प्रति सजग रहता और लेखन की भूमिका बनाता रहता है।

राजा निरबसिया से 'कसबे का आदमी के बाद नीली झील से लेकर 'खोई हुई दिशाए तक उसकी कहानियाँ मध्यवर्गीय जीवन की सादगी से शुरू होकर महानगरी की आधुनिकतम सचेतनाओ और *सश्लिष्टताओ का प्रतिनिधित्व* करती है। और मैं कहना चाहूँगा कि यह कोई साधारण बात नही है कि एक कलाकार अपनी भाव भूमियो पर परिश्रमपूवक तयार की गयी अपनी निर्मितियो को इतनी निममता से तोडकर अलग हो जाये और नय सफल प्रयोग करने लगे। कमलश्वर चाहता तो कसबे की कहानी' की तख्ती लटकाये औरो की तरह एक स्कूल खोले वठे होता। मगर उसन कलाकार का धम अपनाया मठाधीशो का नही। वह निरन्तर प्रयोग करता और अपने को तोडता बदलता और सशाधित *करता आया है।*

उसके लखन की सबसे बडी उपलब्धि जो मैं समझ सका हूँ यह है कि उसका जीवन दशन प्रभावारोपित नही उसके अपन अनुभवो से बने व्यक्तित्व का सहज प्राजेक्शन है। जीवन की भाँति लेखन म भी युग की परस्पर विरोधी स्थितियो म

सामजस्य का एक नया, सही और सम्मानप्रद रास्ता खोजने की चाह उसकी आधार शिला है। इन अँधेरो, उलझावो और यन्त्रणाओ म मनुष्य का वतमान रूप खोजने और पहचानने तथा उसे सही सन्दर्भों मे प्रतिष्ठित कर पाने की तडप ही उसकी थाती है। इससे इतर वह नितान्त अकेला और असहाय है जिसे हर पल अपने ही सस्कारा कला रुचियो और स्वनिर्मित प्रतिमानो से जूझना पडता है।

उसकी असाधारण सफलता का रहस्य है खुद अपने से टक्कर लेने की अशेष सामथ्य और मनोबल। रात भर जी-जान से लडकर वह हर सुबह उठते ही एक नयी लडाई के लिए प्रस्तुत दीखता है।

उसकी यह लडाई दो स्तरों पर है—खुद अपन से और अपन समय की विसगतियो से। इस लडाइ म वह हर हथियार इस्तमाल करता है। इसीलिए उसके व्यक्तित्व के बाहरी रूप म विरोधाभास बहुत प्रबल हैं। भीतरी या उपचेतन की अपेक्षा उसका चेतन कही अधिक क्रूर और दुनियावी है। ऊपरी एक पत के नीचे ही वह सघन इनसान है पर बाहर एक धूत पहरेदार भी बैठा हुआ है लिहाजा उस धूर्त पहरेदार से टकराये बिना उसके इनसान से मुलाकात नही होती। वह धूत पहरेदार आपको व्यग्यो, चुटकियों और चुस्त वाक्यों स छेद डालता है। तेज-से तेज व्यक्ति को निस्तेज कर देता है। मेरी खुशकिस्मती यह है कि मेरी दाना से दोस्ती है। मैं जानता हूँ कि जब वह आदश की ऊँची ऊँची बातें करता है तब हा सकता है कि उसका दिमाग घोर यथाथवादी भूमियो की खोज मे भटक रहा हो। और जब वह हाथ पटक-पटक मुझसे कोई सत्य मनवाने की कोशिश करता है तब हो सकता है कि वह अपने ही मन मे किसी विरोधी सत्य को मान्यता दे रहा हा।

इसी तरह की स्थिति म वह कुछ घोषणाएँ अपनी सद्य लिखी गयी या लिखी जाने वाली कहानियों के सम्बन्ध मे भी करता है चाहे खद उन्ही घोषणाआ पर उस यकीन न हो। कुछ महीने पहले दिल्ली मे उसकी एक कहानी लम्बी चौडी भूमिका के साथ सुनने का अवसर मिला—"प्यारे, वो कहानी बनी है वो कहानी बनी है कि सुनकर पलट हो जाओगे! ' और घोषणाआ के साथ कहानी सुन चुकने पर जब मैंने राय प्रकट की कि यह बहुत मामूली और लचर है वह तत्काल सारी घोषणाएँ भूलकर पास खिसक आया और बोला—' यार, बात तू ठीक कह रहा है। और फिर बच्चा की तरह निश्छलता से कहानी की खामियो को खुद भी गिनाने लगा और खुलकर एक एक प्रतीक और पक्ति पर अपनी आलोचना सुनने और विचार विमश करने लगा।

दरअसल अब से नही, बहुत पहले से उसकी यह आदत रही है कि मन मे चल रहे विचार को पहले ही उद्घोषित कर देता है और तब वह उस विचार के अनुरूप

मिल सकता है किसी सस्ती सी दुकान म चाय पीता हुआ या बडे होटल मे नफासत से खाता हुआ भी मिल सकता है। वह दूसरो के दु ख मे दु खी, उनकी परेशानिया सुलझाता और अपने दु खो म हँसता हुआ भी मिल सकता है। घर पर मिलना चाह तो रात दो बजे के पहल नही मिल सकता। नई कहानियां' के दफ्तर म मिलना चाह ता दिन के तीन बजे के बाद भी नही मिल सकता पर मिल गया तो सच्ची आत्मीयता से मिलेगा। पर खतरा सिफ यह है कि वह आपके भीतर छिपी हास्यप्रद विसगतियो को फौरन ताड लेगा और फिर कभी मिलन पर आपके सामन ही मजा ल लेकर सुनायगा— यार तर उन दोना आशिको (शानी और धनजय वर्मा) ने बहुत बार किया। दानो जब मध्यप्रदेश से आय तो वहा की साहित्यिक स्थितिया से दु खी और चिन्तित थ और वह सुनाता जायेगा—
'तो साहब, वे दानो रात को तीन बजे लेट मुझे नीद आ रही थी पर उसकी चिन्ता बहुत गहरी थी। धनजय बोल— कमलेश्वरजी मध्यप्रदेश म ऐसा क्या किया जाय कि साहित्यिको का स्वास्थ्य कुछ सुधर जाये? उनकी बात का जवाब दे रहा था तो देखा शानी साहब खर्राटे ल रहे ह। जवाब खत्म हुआ तो शानी साहब नीद म ही बर्राये— कमलेश्वर भाइ इधर कहानी म जो अमूतता आ रही है उसके बारे म आपका क्या खयाल है?' और लट लेटे उन्होने चश्मा चढा लिया तो धनजय करवट बदलकर सो गये। शानी की बात का जवाब समाप्त हुआ तो धनजय हडबडाकर जाग— कमलेश्वरजी हिन्दी कहानी की आलोचना।पद्धति मे आमूल चूल परिवतन के सम्बन्ध म आप क्या सोचते है?' और धनजय की बात चलते चलते शानी ने पन्द्रह मिनट की नीद ली। अपना जवाब पाकर धनजय ने उबासी लेकर पलकें मूदी तो शानी साहब फिर उठकर बैठ गय— मध्य प्रदेश मे कहानी की तो साहब यह सिलसिला लगातार चलता रहा और बाद म

और कमलेश्वर यह सब सुनाता जायेगा सुनाता जायगा। अगर आप बुरा मान गय तो वही पहला आदमी होगा जो इसे भाप लेगा और अवसर मिलते ही आपका हाथ हाथ मे लेकर इस प्यार से दबायेगा कि उन हथेलियो की ऊष्मा म आप असल कमलेश्वर को खोज निकालने म भूल नही करेंगे। अगर आपन भूल की तो बदकिस्मती आपकी क्योकि वह सचमुच बहुत खुशदिल खुशमिजाज और सुरुचिपूण व्यक्ति है। जिन्ह यह मौका नही मिलता, वे उसके साहित्य को पढकर भी वही आत्मीयता, गहराई और ईमानदारी महसूस कर सकते है।

(सन १९६४ में लिखित और प्रकाशित सारिका से साभार)

अरविन्द कुमार

अधे काच की दीवार

अँग्रेजी का एक मुहावरा है—गिरजाघर के जितनी पास खुदा से उतनी ही दूर।

सच ! कुछ लोग ऐसे ही होते हैं।

जसे मैं।

कमलेश्वर के और मेरे दफ्तरों के बीच बस अध काँच की दीवार है। हमे एक दूसरे को बुलाना होता है, तो मेज पर से पमाना उठाकर इस दीवार को खट खटा देते हैं। दूसरे को पहले के पास तुरत हाजिर होना लाजमी है।

पर इसके बावजूद हम अब महीनो नही मिलते। नही मिलत गलत है मिल नही पाते सही है कभी कभी मैं मसरूफ, अक्सर कमलेश्वर अब तो खटखटाना भी नही होता।

कुछ महीनों पहले रोज घण्टो मिलते थ। और कही नही तो दोपहरी मे खाने की मेज पर ही। धीरे धीरे मालूम पडा कि कमलेश्वर को दोपहरी म कभी कभी काम से बाहर जाना पडता है, सेंसर के लिए फिल्मे दखने फिर काम बढत गये

धीरे धीरे मालूम पडा कि कमलेश्वर घर से भारी नाश्ता करके आता है दोपहरी म खाना उसे ठीक नही रहता मुझे शक है कि कमलेश्वर को खाना खाने की फुरसत ही नही है। अक्सर खाने के लिए जाते समय मैंने उस उसके दफ्तर म काम करते देखा है या मिलने वालो से घिरे हुए।

चलो मुलाकात का यह मौका भी गया।

वही गिरजाघर और खुदा वाली बात !

सब जानते हैं—मेरा मतलब है कि हम लोगो के जितने भी करीबी हैं—भारती, अधिकारी आनदप्रकाश जन सुरेन्द्र झा कमलेश्वर वगरा सब जानत हैं—कि मैं कमलेश्वर को आदश पुरुष' मानता हूँ जसे भगवान राम को मर्यादा पुरुषोत्तम'

माना जाता है। क्यो मानता हू यह बाद म बताऊँगा। पहले वही गिरजाघर और खुदा वाली बात पर रहता हूँ।

और मैं कि जो तकरीबन बीस साल से कमलेश्वर का नजदीक से जानन का दावा कर सकता हूँ पा रहा हू कि उसके बारे म कुछ खास नही जानता।

वही गिरजाघर और खुदा वाली बात।

पर तसल्ली सिर्फ यही है कि खुदा को जानन का दावा करने वाले खुदा को कितना जानते है!

फिर मैं!

मैं ठहरा कोरा नास्तिक! मैं तो खुदा है यह तक नही जानता।

लेकिन आदर्श पुरुष भगवान नहीं होता। बिलकुल लफ्जी मायना पर जायें तो आदर्श पुरुष वह होता है जिसकी नकल की जानी चाहिए जिसके नक्शे कदम पर चला जाना चाहिए।

कमलेश्वर के चालचलन, तौर तरीको, बरताव व्यवहार मे हर वह बात है जो वर्तमान समाज व्यवस्था म अपने को बचाने के लिए हर बशर के लिए कतई जरूरी है। उसमे ईमानदारी निष्ठा, दोस्तों के प्रति लायल्टी, मेहनत दिमाग सिद्धान्तवादिता—सभी कुछ है। पर इतने स ही आज की दुनिया म काम नही चलता चल सकता है पर पिस जाना पडेगा। कोल्हू का बल बन जाना पडेगा।

अपन को बचाये रखन के लिए लोग अलग-अलग तरीके अख्तियार करते है। कुछ अपन चारो तरफ पत्थर की मजबूत दीवारें खडी कर लेत हैं (और खुद कद हो जाते हैं)। कुछ अपन को पत्थर का सनम बनाकर मदिर म स्थापित कर लेत हैं (और अमर होन की कोशिश म इस तरह खुदकुशी कर लेत हैं)। कुछ की हालत तो बदतर होती है। वे पागल कुत्तों की तरह इस डर से भौंकत रहते हैं कि कही आसमान उन पर टूट न पडे। कुछ अपन चारो तरफ के माहौल स लापर वाह हो जात है। कुछ अपन को व्यवस्था का हिस्सा बना लेत हैं। अगर मौका मिलता है तो इस भरम म जीने की कोशिश भी करते हैं कि व्यवस्था को वही चला रहे हैं।

और भी सकडो तरीके हैं जो बुद्धिजीवी अख्तियार करते हैं आत्म रक्षा के लिए। और उन सब म एक बात कॉमन होती है आदमी अपने को बहुत छोटा डरा हुआ महसूस करता है।

लेकिन कमलेश्वर का अपन को बचाने का जो तरीका है वह मुझे हमशा से ही सबसे जुदा और बढ़िया लगता रहा।

उसने कभी अपने को छोटा नहीं समझा—न किसी से, न पूरी व्यवस्था से। वह डरा नही, कभी औसान नहीं भूला। मुझे उसका रास्ता प्रशसनीय तेजी

(चतुराई) का रास्ता लगता है। "यवस्था का पजा उसकी तरफ बढ़ना है। कमलेश्वर फिसल कर हट जाना है। फिर खिल्ली उडाता हुआ शरारत भरी नजरा से मुस्कराता है। हँसता नही खिल्ली उडाने क लिए वह कभी नही हँसता। जव भी हसता है ता दोस्ता म पूर ज़ोर से, दिल खोलकर दूसरो क आनद म सहभागी बनने के लिए हँसता है।

मुझ कमलेश्वर हिंदुस्तान का खोजा नसरुद्दीन लगता रहा है। जान क्यो खोजा नसरुद्दीन की जो तस्वीर मर दिमाग मे बन गयी है वह कमलेश्वर जसे ठिगने गोल से आदमी की तस्वीर है। खिलखिलाकर हँसने वाला। अपन को सबके बराबर मानने वाला। समाज की रग पहचानने वाला चुटकुले सुनान म माहिर छेपटी उडान म उस्ताद दोस्तो का दास्त उनके लिए कुछ भी कर गुजरने को तयार! उनकी याद मे उनक किस्से चुटकुल सुनात सुनात अपनी आखा का गीला पन चालाकी स छुपा लन वाला दिन म ७२ घटे बना देन व ला हद दरज का मेहनती हर काम का बढ़िया तरीके से करन वाला ।

और वहुत सी बाता के साथ-साथ दिन म सकडो चिटिठयाँ लिखन वाला ।

कितनी चिटठया लिखता है वह!

छाट छोटे नगीना स जड़े सुन्दर अक्षर लिखता रहता है लिखता रहता है ।

कई बार मैंने कहा तुम्ह ता डाकघर के बाहर चिटिठया लिखने वाला होना चाहिए था।

पर एक उसक मन म ही इतन सार लोग वसे है कि वह उनकी चिटिठयाँ भी दिन म ७२ घट काम करके पूरी नही कर सकता।

कुछ लोगो की सिद्धान्तवादिता अडियल हाती है—राजपूती टाइप की आन बान अकडफो वाणी। जिसम नीति की टकटिकस की तरकीब की गुजाइश नही हाती। जसे सूखा काठ टूट जायेगा मुडेगा नही। क्योकि मुडना उसके लिए घृणित 'समझौते' का दूसरा नाम है। कुछ लाग केवल नीति होत हैं। सिद्धान्त इनम रत्ती भर नही होता।

कमलेश्वर का अपना एक जीवन-दशन है। वह बार-बार अपनी जगह बदलता हुआ नजर आ सकता है—उन लोगो को जो उसकी फिसल कर बच निकलने की तरकीब को नही जानते! पर पिछले बीस सालो मे मैंने उसे अपनी उस खास जगह से बदलत नही देखा जो उसने अपन लिए चुन ली है। बार बार कन्नी काट कर वह वही आ जाता है ।

इस कमलेश्वर से मरी पहली मुलाकात सन ५७ ५८ म दिल्ली म तब हुई थी जब मैं सरिता-करेवान पत्रिकाओ म था। झडेवालान म हमारा नया दफ्तर बना था।

कमलेश्वर का नाम बहुत सुना था, उसका लिखा कम पढा था। पढा तो मैंने अब तक भी बहुत कम है कमलेश्वर को (वही गिरजाघर और खुदा), लेकिन कुछ कुछ जाना जरूर है।

तो वह पहली मुलाकात शाम को दफ्तर बन्द होने के वक्त के आस-पास हुई थी और बाद में टहलते-टहलते हम काफी दूर तक चल गये थे। बातें भी काफी हुई। पहली मुलाकातों जैसी—रस्मी और मालूमाती। पर बिलकुल ही रस्मी बातें होतीं तो साथ-साथ पदन निकलने वाली बात क्याकर हुई होती उसमें कहीं एक खुलापन था सादगी थी प्रभाव था संघर्ष के निशान थे जो मुस्कान के पीछे छिपने की कोशिश कर रहे थे। और उस मुस्कान पर भी हावी था आत्म विश्वास! यह विश्वास कि आज भी उसका है कल भी उसका होगा ।

इस मुलाकात के बाद ही मैंने उसका उपन्यास एक सड़क सत्तावन गलियाँ (बदनाम बस्ती) पढा था। दैनिक जीवन की साधारण-सी घटनाओं और आस पास के चिर परिचित पात्रों को लेकर बगैर उन्हें बढाये चढाये बगैर उन्हें नाटकीयता का रंग दिये उस नावल में जीवन के तनाव तकाज़े, ख्वाहिशें फैली पडी थीं। बरबस उनके और अपने बारे में सोचने को मजबूर कर रही थीं ।

पता नहीं पहले कमलेश्वर कहाँ रहता था।

उन्हीं दिनों उसने करौल बाग के नाइवाला में गुरुद्वारा रोड बस स्टैंड के पास ही एक कमरा ले लिया। वह बीमार पत्नी गायत्री। सामने वाले कमरे में आ गये मेरे एक और खास दोस्त नरेश वेदी। वह घर यार लोगों का अड्डा बन ही जाना था।

वह फाकामस्ती अलमस्ती वे इरादे वह हमदर्दी वे दोस्त, वे कहकहे । कमरे में वह चारपाई उस पर बैठकर लटककर उसका वह लिखना बातें करना । अब तक वह घर में फर्श पर ही देसी तरीके से काम करता है वैसी ही बातें करता है ।

'६६ के अन्त में मैं बम्बई आ गया— माधुरी निकालने के लिए ।

हमने कभी एक-दूसरे को चिट्ठी नहीं लिखी। खबरें मिलती रहीं । टेलीविजन में नौकरी फिर छोड़ना । कहते हैं कि उसकी एक कहानी व्यवस्था को पसंद नहीं आयी—जाज पचम की नाक! पर कमलेश्वर को तो पूरी व्यवस्था ही कभी पसंद नहीं आयी । इसने व्यवस्था को सिर्फ मौका दिया है कि वह उसके साथ मिनिमम प्रोग्राम में शामिल हो जाय अगर यह कमलेश्वर को सूट करता हो तो! और वह मिनिमम प्रोग्राम है चूल्हे का, छत का दवा का। इस प्रोग्राम में व्यवस्था का साथ न मिला तो न सही। वह कभी उसका गुलाम नहीं बना। उसने हमेशा व्यवस्था का इस्तेमाल किया है। यह बात व्यवस्था के मुकाबिले उसके गुलामों को बहुत नागवार गुजरती है।

कुछ साल बाद शायद ढाई साल बाद कमलेश्वर भी बम्बई ।

वही कहकहे बम्बई आ गय ।

आते ही उसे स्लिप डिस्क हो गयी। उसकी वजह से वह काठ के बिस्तर पर दद से कराहता रहता। तब भी सहमी हुई आँखों की मुस्कान, होंठों की थिरकन परदे से बाहर आने का मौका तलाशती रहती थी।

कभी-कभी लगता है कि वह कुछ जुनूनी चीज है।

दिल्ली म नयी कहानी थी । कहानी का आन्दोलन नई कहानियाँ' पत्रिका की सपादकी भी थी। मुझे मालूम है कि तंगी के उन दिनों म भी दोस्ताने की खातिर उसने नई कहानियाँ का जिम्मा उठा लिया था, एक शानदार नौकरी नही ली थी जो उसके इंतजार म थी ।

अब बम्बई से समातर कहानी आदोलन ।

मुझे मालूम है कि उसम कमलेश्वर ने क्या जोड़ा है ।

कला सिनेमा आर्ट फिल्म वगैरा वगैरा बातें चल रही थी। हिंदी म फिल्म कारों की एक नयी पौध सामने आ रही थी। हिन्दी म उन फिल्मों के आन्दोलन को मैंने समातर सिनेमा नाम दिया था।

लेकिन—

यह लेकिन बहुत बड़ी है।

लेकिन समातर सिनेमा के पीछे कोई जीवन दर्शन नही था कोई एक नजरिया नही था। अगर कुछ था तो नफसियात के स्तर पर था फार्म के स्तर पर था। बम्बई म बनने वाली नकली बाजारू भाड़ी, रुचिहीन फिल्मों से अलग हटकर जो कोई भी फिल्म बनाये हम उसे समातर सिनेमा के नीचे शुमार कर लेना चाहते थे। नतीजा यह हुआ कि ब्राड बेस बनाने की कोशिश म नीचे से बेस ही गायब हो गयी। ब्राडनेस बेचारी अकेली क्या करती ?

कमलेश्वर को नयी कहानी का तजरबा था। नई कहानी कुछ भी रही हो उसका एक असर यह भी हुआ था कि सन ६० तक पहुँचते-पहुँचते हिन्दी के कई कहानीकार कथ्य को छोड़कर शैली की नवीनता के भुलावे के पीछे दौड़ने म लगे थे और मध्यवर्गीय कुण्ठाओं को सम्पूर्ण समाज का प्रतिबिम्ब समझते थे। मैं समझता हूँ कि नयी कहानी आन्दोलन इसी कारण बिखर रहा था। अगर वह चलता भी तो कमलेश्वर का ज्यादा देर उसम टिके रहना मुमकिन नही था।

कमलेश्वर ने कहानी के क्षेत्र म समातर की सैद्धान्तिक व्याख्या की। उसे आम आदमी की जिन्दगी से जोड़ा कथ्य और शैली से फार्म से नही।

मैं नही कह सकता कि समातर कहानी का आन्दोलन कब तक चलेगा। कोई

आन्दोलन हमेशा तो नही चल सकता। सफलता-असफलता तो इसी पर जाँची जायेगी कि इस आन्दोलन ने कहानियाँ कैसी दी। मैंने पहले ही कहा कि मैंने कमलेश्वर को पढा बहुत कम है। हाँ कुछ लोगों की कहानियां इस बीच पढने को मिलीं। अगर वही समातर कहानी हैं उनके लिखने वाले तो उन्हें समातर कहानी कहते हैं तो बडी जबरदस्त चीज़ है यह समातर कहानी आन्दोलन।

हालांकि यार लोगों ने समातर की परोडी करके 'कमातर आन्दोलन की चर्चा करना शुरू कर दिया है—मजाक मे कमातर कहानी—यानी वह कहानी जिसके और जिन्दगी के बीच कम से कम अन्तर हो। किसी किसी का कहना है कि कमातर' शब्द का पहला हिस्सा कमलेश्वर के नाम से लिया गया है।

मैंने देखा है कि यार लोग कमलेश्वर को नजरअदाज कभी नहीं कर सके। रिसाल, पर्चे मजमून रिव्यू जिधर देखो उधर तारीफ या गाली।

कमलेश्वर पढता है। विजय भाव से मुस्कराता है हँसता नही। खुश होता है। एक तरफ रख देता है।

कुछ लोगो के दिमाग पर जुनून या शैतान नही कमलेश्वर तारी रहता है। मुझे तो लगता है कि उन लोगो के सपने माशूक या मुस्तकबिल के नहीं होते होंगे। वे बचारे सपने देख ही कहाँ पाते होंगे? आख लगते ही कमलश्वर हौवे की तरह उनके सामने आ जाता होगा। रात भर जागकर वे तस्वीर उठाये कमलेश्वर का गिन गिनकर गालियाँ देते रहते होंगे!

कमलश्वर एक नही कई काम एक साथ करता है।

कहानियाँ उपन्यास लिखता है एडीटरी करता है आन्दोलन चलाता है टी० वी० पर कार्यक्रम देता है फिल्म लिखता है।

सब बडी खूबी से करता है।

वाहवाही लूटता है ईर्ष्या कमाता है।

दिन म ७२ घटे इन कामो के लिए कम हैं।

दोस्तो के बीच कहकहे कम ही रहे हैं।

दोस्तों को इसमे शिकायत है।

पर मैं जानता हूँ कि उसका मन होता तो कमलश्वर दोस्तो के लिए वक्त निकाल ही लेता।

उसका मन टूट गया है। कुछ दोस्त कुछ अपने जो उसके बिलकुल अपने थे अब नहीं हैं। हमेशा के लिए चले गये।

जब कभी कमलश्वर हँसता है तो आँख भरने को हो आती है।

उसकी शरारत भरी दास्ताना आँखो म एक काला साया नजर आता है।

वक्त सबको बदलता है।
कमलश्वर वक्त से बडा नही है।

हर तरफ उसका चर्चा है। लोग उस घेरे रहते है।

फिल्मो का मुनाहिबी का माहौल आन्दोलन म कई तरह क पिछलग्गू प्रकाशको द्वारा इश्तहारा म भारी-भरकम लफ्फाजी ।

कई बार करखनदारी जबान म यह सेर कहने का मन होता है

'जमाना तेरे पे फिदा हो रिया है।
फलातुन फनातुन ये क्या हो रिया है!'

मुझे मालूम है कि कमलेश्वर वक्त से बडा नहीं है पर मैं जानता हूँ कमलेश्वर तारीफ से बडा साबित हागा।

•

सारिका का ऑफिस बम्बई

कृश्नचन्दर बैठे थ। बच्चो की पत्रिका पराग के पुरान सम्पादक आनन्दप्रकाश जन उन्ह घेरे हुए थ—कृशन भाई आपने कहानी देने का वादा किया था, अब दे ही दीजिए! प्लीज कल प्रेस म देनी है!

कृशन टालना चाहत थ बोले—यार मैं हिन्दी म लिखता ही नही उर्दू म ही लिखता हू!

जन साहब ने कहा—आप उर्दू मे दे दीजिए मैं ट्रासलेट करवा लूगा!

कृशन न अपन को फमते पाकर निकलना चाहा—बात असल म म यह है जन साहब कि मैं बच्चो के लिए लिखना ही नही मैं ता बडो के लिए लिखता हूँ!

यह सुनकर कमलेश्वर बाले—कृशन भाई आप जो बडो के लिए उर्दू म लिखते ह वही इह दे दीजिए! हिन्दी मे उसका अनुवाद होगा तो बच्चा क काम आ जायेगा!

•

खण्ड ३
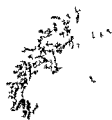
'नयी कहानी मेरे लिए आन्दोलन नहीं नये के लिए निरन्तर प्रयत्नशील और प्रयोगशील रहने की प्रक्रिया है। प्रयोगशील शब्द काफी भ्रामक हो गया है। इस शब्द ने लेखक की जवाबदेही समाप्त करने की कोशिश की है। मेरे लिए प्रयोगशीलता जवाबदेही से निरपेक्ष नहीं है। जो कुछ मैं लिखता हूँ उसके लिए अपने को जवाबदेह भी पाता हूँ।'

—कमलेश्वर की नयी कहानी की भूमिका (१९६६) की शुरू की बात से

ऐसी उलझी हुई स्थिति में जहाँ हम अन्याय के विरुद्ध अन्यायी नहीं हो सकते आम आदमी को बर्बर बना देने की सीमा तक नहीं ले जा सकते उसके भीतर के शुभ और सौन्दर्य को मार नहीं सकते उसकी करुणा को सुखा देने की गलत भूमिका नहीं निभा सकते उसकी संवेदनाओं को अमानवीय नहीं होने दे सकते—यानी उसकी सदियों से अर्जित मनुष्यता की महान सम्पदा को नष्ट नहीं होने दे सकते तो फिर उसके लिए न्याय की प्राप्ति का कौन-सा ज़रिया अख्तियार कर सकते हैं? क्या साहित्य सिर्फ शोषित और पीड़ित की पक्षधरता का झण्डा बुलन्द करके सुविधावादी नकाबपोश ही बना रहेगा? या नकाबपोशों के काम आता रहेगा? अगर आज का साहित्य इस सुविधावाद से निकलना चाहता है और आम आदमी के लिए न्याय के इस विराट संघर्ष में अपनी भूमिका सचमुच निभाना चाहता है तो

उसका काम बहुत जटिल और कठिन हो जाता है क्योंकि साहित्यिक रचनात्मकता की रक्षा करना भी 'मनुष्यता की महान सम्पदा को ही बचाना है और उसे बचाते हुए भी वह मनुष्य के हित मे लडे जा रहे निर्णायक सघर्ष म शामिल हो सके—यही आज के साहित्य की रचनात्मक शर्त है।'

—कमलेश्वर के सम्पादकीय मेरा पन्ना (जुलाई ७५) से

"समय-सापेक्ष मूल्यो को लेकर चलने वाला साहित्य और उन मूल्यो को व्यावहारिकता म फलित करने वाली राजनीति—यही ऐसे माध्यम हो सकते है जो शोषित और दलित मनुष्यता को उसकी मुक्ति का आधार दे सकते है।

—कमलेश्वर के मेरा पन्ना (जून ७५) से

धनंजय वर्मा

पूर्ण होते रहने की प्रक्रिया कमलेश्वर की कहानियाँ

आप कमलेश्वर की कहानियो पर मेरा एक अनौपचारिक पत्र चाहते हैं। अनौपचारिकता है तो कह रहा हूँ कि आपने मेरे लिए थोडा शशोपज पैदा कर दिया है। अभी हाल सारिका' मे मेरी अन्तकथा प्रकाशित हुई है। और अभी ही आप कमलेश्वर की पाँच कहानियो पर मेरे विचार चाहते हैं। मेरे इस पत्र के पीछे लोग क्या कोई मोटिव चस्पाँ नही कर देंगे? खासकर तब, जबकि कमलेश्वर के कुछ लेखो म व्यक्त विचारो से मैं अपनी असहमति का इजहार कर चुका हूँ। अब यदि मैं उनकी कहानियो को पसन्द करता हूँ तो लोग इसका सीधा अर्थ यह नही लगायेंगे क्या कि कमलेश्वर ने मुझे अन्तकथा म शामिल कर पटा लिया? यह मेरी सिर्फ आशका नहीं है। इस तरह की बातें कुछ लोगो ने की हैं और इस सन्दभ मे मुझे दो टूक बात करने दें लिए कृपया क्षमा करें हिन्दी का औसत लेखक, चाहे उसकी डिग्री जो हो और उसने चाहे जितना लिखा हो, अनपढ ही है। वह डिस्पेश्नेट होना तो जानता ही नही। उसे हर ओर मोटिव्ज नजर आते हैं। लोग यह समझना ही नही चाहते कि सम्बन्धो का आधार व्यक्तिगत ही नहीं होता। सहमति और समथन का मतलब न तो सिर्फ दोस्ती है और न असहमति और विरोध का मतलब दुश्मनी। फज कीजिये कल किसी बात (इश्यू) पर मेरा कमलेश्वर से मतभेद हो जाय और मैं उनका उतनी ही शिद्दत से विरोध कर दूँ तो क्या इसका मतलब यह हो जायेगा कि मैं उनका दुश्मन हो गया या कि किसी लाभ के लिए मैंने अपना रुख बदल दिया? और यदि कोई यह समय ही ले तो मैं क्या कर सकता हूँ? सिवाय इसके कि कहूँ— यारब न वो समझे हैं न समझेंगे मेरी बात दे और दिल उनको जो न दे मुझको जुबाँ और!'' कमलेश्वर से मेरा परिचय और सम्बन्ध कहानियो के माध्यम से हुआ। अपने परिचय या सम्बन्ध के कारण मैंने उनकी कहानियाँ पसन्द नही की बल्कि उनसे उभरने वाली मूल्य और दृष्टि के कारण ही लगा कि मैं खुद को जिन मान्यताओ, विश्वासों और

जीवन मूल्यो का पक्षधर पाता हूँ वे उन कहानियो म सक्रिय है, अत मैंने उन्ह पसन्द किया। मुझ पर आप मेरे विश्वासो धारणाओ और दष्टिकोण के कारण आक्षेप कर सकते हैं उन्हे गलत साबित कर सकते हैं मगर मेरी नीयत पर शक करने का आपका कोई अधिकार नही है। और यदि आप यह करते ही है तो फिर मुझे भी पूरी छूट है कि मैं आपकी हीनताग्रन्थि का विश्लेषण कर दूँ। गलत मोटिव्ज तलाश करना कही गलत मानसिकता को भी उजागर करता है। अक्सर अपनी अशक्ति, असामथ्य और उपेक्षा से पीडित होकर लोग हर ओर ऐसे ही मोटिव्ज तलाश किया करते हैं। बहरहाल यह पहला मौका नही है कि मैंने कमलेश्वर की कहानियो को पसन्द किया हो या उनका विश्लेषण कर उनकी मूल मानसिकता को रेखांकित किया हो। इसके पहले भी मैंने उनकी कहानियो मे आने वाली शिफ्ट का निर्देश किया था और उनकी दष्टि एप्रोच और कोण का खुलासा दिया था। यह दूसरी बात है कि तब भी कुछ कल्प चेताऽ साहित्यकारा (?) को उससे लगा था कि मैं तो उनके गुट का ही हूँ। आपसे कह रहा हूँ, शायद आप मेरा भरोसा करेंगे कि मुझे किसी भी गुट से कुछ भी लेना देना नहीं है। न तब न अब। मैं तो अपनी पसन्द की रचनाओ और लेखको की बात करता हूँ। यह फिर दूसरी बात है कि वे लेखक बदकिस्मती से जिन्दा हैं और व्यक्ति ह। गौर कीजिये तो ये कल्प चेताऽ साहित्यकार वे ही हैं जो कुछ खास व्यक्तियो के खासने छीकने तक पर कसीदे लिखते होते हैं। खर। मुझे इस बात की चिन्ता नही है कि मेरे बारे म कितने और कसे प्रवाद फलते हैं मुझे तो उल्टे सन्तोष इस बात का है कि लेखक या रचना की मानसिकता की मेरी पकड गलत साबित नही हुई। यदि मैं पक्षधर ही रहा हू तो ऐसे लेखको और रचनाओं का जिनकी रचनात्मकता को घुन नही लग गया। वह सारे विवाद प्रवाद और गलत प्रचार के बावजूद सक्रिय है और लगातार नये रूपान्तरण ले रही है। मुझे इस सन्तोष का हक तो है ही कि मैं कम स कम उन आलोचको म तो नहीं हू जिन्होन आज इस लेखक का और कल उससे बिलकुल छत्तीस रचनाप्रवत्ति वाले लेखक का पक्ष लिया और रचना को मोड देते देखते हुए ही मुड गय। कुछ इस अन्दाज से कि — हम तो डूबेंगे सनम तुमको भी ले डूबेंगे। आलोचक और आलोचना की साथकता कही इस बात म भी है कि वह जिन रचना-वत्तियो का पक्षधर है, वे कितनी जीवन्त और रचनात्मक हैं। उनका ऐतिहासिक महत्त्व क्या है और समय की आवाज देने की ही नही उसके अतिक्रमण का भी उनम कितनी ताकत है।

माफ करें प्रासंगिक चर्चा जरा लम्बी हो गयी। यदि यह अप्रासंगिक भी लगे तो अनौपचारिकता के मद्देनजर इसे नजर अन्दाज कर दीजिये।

मैंने कमलेश्वर की कहानियो को अपनी हद और बदलती हुई मन स्थिति का

कहानियाँ कहा है। यह बदलना जहाँ निरन्तर विकास का प्रतीक है वहाँ बदलाव एक रूपान्तरण का। और कमलेश्वर की कहानियाँ विकास और रूपान्तरण दोनो को साथ-साथ समेटते चलने की कोशिशें हैं। शुरू से लेकर अब तक उनकी कहानियों का जायजा लिया जाये तो यह बात साफ हो सकती है कि उनका कथ्य और उनकी अभिव्यक्ति कभी यकसाँ नही रही। उनमे लगातार परिवर्तन होता चला है। यह निरन्तर गतिशीलता एक ओर जहाँ लेखक की रचनात्मक जीवन्तता का सबूत है वही आधुनिकता के सतरण की शर्त भी है। अपने नजरिये और अन्दाजेबयाँ — दोनो मे लगातार रद्दोबदल करते रहने से हो सकता है कि, कुछ लोग कहें कि उनसे लेखक का कोई स्थिर व्यक्तित्व नही बन पाता। मगर यदि आप कहानी को अनुभव का रूपान्तरण मानते हैं तो स्थिर व्यक्तित्व की अपनी माग को दरकिनार रखना होगा। फिर सच तो यह है कि व्यक्तित्व की स्थिरता कही उसकी जडता और रूढि भी है। और रचनात्मक विकास का मतलब है कि लेखक की अपनी भी कोई रूढि न बन पाये। वह कोई 'मनरिज्म' अख्तियार न कर ले। फिर व्यक्तित्व भी तो विकासशील होता है—विकास जो जिन्दगी और अनुभव से मॉटीवेटेड' होता है। और कमलेश्वर की कहानियाँ अनुभव के दायरे मे क्रमश आती हुई जिन्दगी से बदलती और विकसित होती रही है। उन्हे पूर्ण होते रहने की प्रक्रिया की कहानिया कहा जाये तो बेजा न होगा। आपको उनके माध्यम से हिन्दुस्तानी समाज की एक विकास यात्रा की रूपरेखा उभरती मिलेगी। थानेदार साहब और गाय की चोरी से 'कस्बे का आदमी' या 'राजा निरबसिया' और एक सडक सत्तावन गलियाँ (उपन्यास) से खोयी हुई दिशाए दिल्ली मे एक मौत और जोखम की यात्रा—गाव से कस्बा और कस्बे से नगर महानगर की यात्रा है। ये गाव कस्बा और नगर महानगर जिन्दगी के लोकेल और पटल ही नही है वे बोध और सस्कार और मानसिकता के प्रतीक भी हैं। यो इन कहानियो को आधुनिकता की यात्रा से भी जोडा जा सकता है। यह यात्रा जितनी ऊपरी है उतनी ही भीतरी भी है यानी जीवन के रहन सहन, तौर तरीको और वातावरण और परिवेश की जितनी है उतनी ही बल्कि उससे ज्यादा ही सस्कारो मानसिकता और वृत्तियो की भी है। इसी से नग लिपटे वे सवाल है जो आम आदमी की जद्दो जहद व्यवस्था और परिवेश के टकराव से पैदा होते हैं और हमारी मूल्य पद्धति और दृष्टि पर असर डालते हैं।

बेहतर हो कि बातो को ठेठ जिन्दगी के सन्दर्भ मे देखा जाय, क्योकि कहानी की अपनी प्रकृति भी यही है। वह हवा मे उडने की बजाय जिन्दगी मे पैठना ज्यादा पसन्द करती है। इससे परवाज मे कोताही आती हो तो आये जिन्दगी की पकड मजबूत होती है। वह अमूर्त अनुभव को मूर्त करना चाहती है इसीलिए उसकी प्रकृति आत्माभिव्यक्ति नही सम्बोधन और कम्युनिकेशन' है। अनुभव

को रूप देने की कोशिश म ही कहानी चरित्रो और पात्रा की रचना करती है और अपने समय के आदमी को उकरती है। इसलिए दखना यह है कि कहानियो म से उभरने वाले आदमी की शक्ल क्या और कसी है, वह कितनी प्रामाणिक और वास्तविक है।

आधुनिकता की प्रक्रिया जिस आप पूण होत चलन की प्रक्रिया भी कह सकते हैं बडी जटिल और संश्लिष्ट है। उसम जितना जुडता है, उतना छूटता भी है। जो छूटता या जुडता है वह कम निर्णायक नही होता इसीलिए यह आधुनिकता की प्रक्रिया जितनी अनिवाय है उतनी ही जानलेवा भी है। हमारे यहाँ आधुनिकता की यह प्रक्रिया पूण नही हा गयी है। हम उसम से गुज़र रह हैं और इस गुज़रने के दौरान हमार भीतरी और बाहरी व्यक्तित्व मे जो जुड और छूट रहा है उसका कुछ जायजा य कहानियाँ दे देती हैं।

आप एक एसे आदमी की कल्पना कीजिय जो गाँव से कस्बे और फिर कस्ब से नगर या महानगर म पहुचता है ता आपका उसके भीतर और बाहर होने वाले विकास और रूपान्तरण का कुछ अवस अपने जहन म उभरता मिलेगा। इस यात्रा मे उसकी मानसिकता बदलनी है रुचियाँ और वस्तियाँ बदलती हैं और साथ ही मूल्य और दृष्टि म भी परिवतन आना है। यह बदलाव ऊपरी स्तर पर नये परिवेश और उसके टकराव से तो होता ही है इस टकराव स कुछ अन्दरूनी समस्याए भी जन्म लेती हैं जो जितनी आजीविका और रोजमर्रा की जिन्दगी की होती हैं उतनी ही अस्तित्व या वजूद की भी। एक नये परिवेश या नगर महानगर की औद्योगीकृत दुनिया म पहुँचकर ये समस्याएँ और भी जटिल हो जाती हैं। इनमे रहते हुए उस आदमी को रह रहकर उस गाव या कस्बे की याद आती है—जहा बिना रिश्तो के रिश्त थ महगी उसकी चाची कहलाती थी पोस्टमन उसका ताऊ हो जाता था या सार गाँव और कस्बे म उसे हर चेहर पर परिचय और आत्मीयता की इबारत मिलती थी—जहाँ लाग एक दूसरे के दुख दद हारी बीमारी के साथी होत थे और शादी याह जश्न जलस मे शरीक। इसस उसके आचरण और व्यवहार ही नही मूल्य और दष्टि भी निर्धारित हात थ। लकिन नय परिवेश म आकर रिश्ते भी रिश्त नही रह जाते, एक औपचारिकता उसकी जगह ले लती है। सार इसानी रिश्ता म एक ठण्डापन आ जाता है। कस्बे का आदमी दिल्ली म एक मौत झेलता है। इसान और हैवान का फर्क नजर नही आना। भटके हुए लोग मीखचा म कद हा जात है या मुर्दों की दुनिया म फालतू आदमी की तरह खोयी हुइ दिशाओ म भटकते हुए दुखो के रास्ते चल जात हैं। फिर कोई नही कुछ नही। यहा तक तो फिर भी गनीमत थी। अब जहाजहद करता हुआ भी उसका मानवीय एहसास मर नही गया था लेकिन बम्बई जसी महानगरी म पहुँचकर ता उसका जसे कोई वजूद हा नही रहा। एक आर ऊपर और ऊपर

उठना हुआ मकान' और दूसरी ओर फुटपाथ की जिन्दगी। यों तो अज्ञेय जी कह चुके हैं कि दुःख का ठेका कोई गरीबों ने ही थोड़े ले रखा है मगर दुःखों और दुःखों में फर्क होता है। यह दूसरी बात है, कि अपनी कार पर निकलते हुए आपको झुगिया के दुःख न दिखें लेकिन प्रिवी पर्स छिनने का भी एक दुःख है और चूल्हे न जलने का भी एक दुःख है। गुजर-बसर न कर पाने का दुःख और अमानवीयकरण की वृहत्तर प्रक्रिया— बदनाम बस्ती और मांस का दरिया। आदमी हर ओर से लुटा हुआ। बदहवास भागता हुआ। व्यवस्था की मार और भीतर-बाहर से रीतता हुआ। सवाला के सलाब और उत्तर की दिशाएँ मौन। आजीविका की यातना और भीतरी टूटन का त्रास। निरथकता का एहसास और चारों ओर फैली विसंगतियाँ। भीड़ में होते हुए भी अकेलेपन से छटपटाता हुआ यह आदमी अपनी सार्थकता की तलाश में कभी व्यवस्था पर गुस्से से थूकता है और कोई भी जोखम उठाने के लिए तैयार है। कभी वह अपना एकान्त ढूढकर अपने खिलाफ होने वाले षडयन्त्रों का पर्दाफाश करता हुआ अपना बयान देता है और एक व्यापक छदम से 'लड़ाई' लड़ रहा है। लेकिन युद्ध है कि खत्म होने पर ही नहीं आता। जितना ही वह इन जटिलताओं और हास्यास्पदताओं से जूझता है उतना ही वह उनमें और और घिरता जाता है। वह समझ ही नहीं पाता कि यह सब क्यों है? क्या है?— नारकीय पूँजीवादी अर्थतन्त्र? राजनीतिक अवसरवादिता? सड़ी हुई समाज-व्यवस्था?— या कुछ और।

यह जो कुछ भी और जैसा कुछ भी हो ट्रेजेडी यही है कि वह अपनी छोड़ी हुई दुनिया को चाहे जितनी याद करे वह लौटकर वहाँ जा नहीं सकता—न एक सड़क सत्तावन गलियों में जहाँ धूल उड़ जाती है न देवा की माँ' की गोद में। आत्मा की आवाज और 'सुबह का सपना' अब सपना ही है और नास्टेल्जिया के बावजूद अब न उसे नीली झील दिख सकती है और न सवन हंसों का वह झुंड जो कभी उसे आबाद किये हुए था। आधुनिकता की प्रक्रिया ही ऐसी है। इसके चक्र को पीछे नहीं मोड़ा जा सकता। जो छूट गया सो छूट गया। लेकिन नया क्या जुड़ा है? कैसा बड़ा है? यही तो सवाल है और कोई भी सवाल शायद अकेला नहीं है।

कमलेश्वर की इधर की कहानियों का 'लोकेल' बम्बई है और यदि 'लोकेल' बदला भी है तो भी कथ्य वही है जो बम्बई की जिन्दगी पर छाया की तरह मँडरा रहा है। आलोचक प्रवर चाहें तो इन्हें मेड इन दिल्ली की तर्ज पर मेड इन बम्बई कह सकते हैं लेकिन इसे झुठलाया नहीं जा सकता कि कमलेश्वर ने अपने बदले हुए सन्दर्भ को तिरस्कृत नहीं किया है। सन्दर्भ का यह बदलाव केवल औपचारिक और ऊपरी बदलाव नहीं है और न केवल यह जगह का परिवर्तन है। इस परिवर्तन को ऐतिहासिक और समय के सन्दर्भ में भी समझा जाना चाहिए। और

इसी सन्दर्भ में आप पायेंगे कि जीवन-दृष्टि के भेद के बावजूद इनकी बुनियादी संवेदनाओं से इन्कार नहीं किया जा सकता। परिवेश की सारी बारीकियों के साथ एक जीते-जागते मध्यवर्गीय आदमी और जीवन-अनुभव को उन्होंने मूर्त करने की कोशिश की है।

बात अधूरी ही रहेगी यदि कहानियों का जिक्र किये बिना बात की जाये। फतवेबाजी आसान है। वह मेरा रास्ता नहीं है। मैं तो ठोस मिसाल देकर बात करने का आदी हूं। इसके चलते आप मुझ पर चाहे जो तोहमत लगाएँ मैं समझता हूँ बात उसी से खुलती है। हवाई बातों और बातों का तिलस्म कौन बड़ी बात है? या मिसाल देना खासे जोखिम का काम हो सकता है लेकिन अब जोखिम से डरना क्या?

तो पहले जोखिम (कहानी जून, ६६) ही लीजिए। यह कहानी किसकी है? आखिर कष्टों में जूझते कहां पनाह पाने की नाकाम कोशिश की! या अस्पष्ट इच्छाओं और शब्दहीन कामनाओं की! या ऐसी स्थिति की जो सिर्फ न कुछ की है न दुख की न सुख की सिर्फ एक ठहराव की! दोगली अव्यवस्था के कसते शिकंजे की! या बेकारी से परेशान उस युवक की जिसके आगे अँधेरा है नाराजी है, ठहराव है और आशंका है।—इन सबकी। सच तो यह है कि आज किसी सार्थक कहानी का आप उसके कथ्य और विषय के आधार पर इस तरह वर्गीकरण नहीं कर सकते। कोई भी कथ्य और विषय अलग-अलग कटा हुआ नहीं है। आज की कोई भी स्थिति अपने-आप में स्वतन्त्र सम्पूर्ण नहीं है। वह केवल अंग या अंश है एक वृहत्तर प्रक्रिया का। कई-कई बारीक रेशों से वह एक गतिनिष्ठ संघर्ष से जुड़ी हुई है। कहानी एक अकुलाहट से शुरू होती है—जहां दूर तक फैला समुद्र अपनी लहरों में अकुलाता है। यह अकुलाता सागर कहानी की पृष्ठभूमि में है जो आदमी की अकुलाहट को जुबान दे रहा है। यह अकुलाहट निरन्तर छने जाने से पैदा हुई है और जो छला गया है वह मामूली आदमी है—और-और आदमियों की तरह—जो सागर की निचली सतह की तरह ठहरे हुए और कांपते होते हैं। जो कुछ होता है, सब—लहरों का शोर गति और उनका टूटना बिखरना ऊपर ही होता है। इस आदमी के सामने सागर पर एक चमकती हुई सड़क शुरू होती थी और अनन्त तक जाती थी लेकिन इस सड़क को यह कभी पकड़ नहीं सका। यानी उसके सपने और आकांक्षाएँ परवान चढ़ें इसके पहले ही उसका स्वप्न भंग हो गया। वह तो शहर की चमकती सड़कों पर बेकार घूमने को मजबूर है। वह किसी भी तरह की राहत चाहता है। चाहता है—दरअसल सुविधा और मानसिक तृप्ति। या शायद यह भी नहीं केवल कुछ ऐसा जिसे सार्थक समझा जा सके। लेकिन जब आखिर कष्टों से ही नजात न मिले तब? लगातार ऊपर उठती इमारतों की रोशनी में वह सोचता है "इनके दुख कहां हैं? और विसंगतियों का पहाड़

तीखा हो जाता है। यह एहसास उसे ऊपर और ऊपर उठती इमारतों के ही अनुपात मे और और छोटा हकीर और हीन बनाने लगता है। वह रोमाण्टिक नही हो सकता क्योकि उसकी सचाइयों से उसका मेल नही।' उसकी इस किस्म की (किसी पुनीतता की) चाहना उसकी जिन्दगी म फिट नही बैठती। फिर बेघर और बेकार कुछ यादो और 'एक लहूलुहान नाकाम और सीमित-सी जिन्दगी म उसे हर और निरर्थकता और विसगति नजर आती है। तस्कर व्यापार से अरबो रुपयो का माल राज़ाना जाता है, लेकिन उसे न तो कही लगकर काम मिलता है न कही पनाह। वह जहा भी जाता है वही या तो दरवाजे बन्द हैं या खुद उनकी दिक्कतो के सीखचे लगे हुए हैं और इन्तजार या आश्वासन का भुनभुना बजाकर उसे भरमाने की लगातार कोशिश हो रही है। वह कुछ भी करने को तयार है लेकिन क्या करे, इसका उसे पता ही नही चल पाता और बदहवास भागता हुआ वह कुछ देर के लिए अपनी पुरानी दुनिया म लौटना चाहता है, लेकिन पुरानी दुनिया भी तो अब बदल गयी है। वहा भी तो जरूरतें और भूख घट रही है, पर पता नही बाजार को क्या हो रहा है कि खर्चा बढता जा रहा है।' वह नही जानता कि वह इस जानलेवा अथतन्त्र मे कब तक भटकता रहेगा कि ऊपरी सतह के लोगो की दिक्कतें कब खत्म होगी और कब उसे कायदे की जिन्दगी जी सकने का अवसर मिल पायेगा।

कहानी यहाँ तक तो सीधी सादी है, लेकिन मा का सन्दभ, घर की ओर लौटना माँ के शरीर का तिल तिल कर पथराना वित्तमन्त्री की उपस्थिति और अन्तत माँ के पथराये शरीर का बुत की तरह शहर के चौराहे पर लगा दिया जाना कहानी को एक फैण्टसी की सी शक्ल देते हैं। लेकिन यह चालू किस्म की फन्टेसी नही है वह रूपक और अन्योक्ति से घुलीमिली है। यथाथ का फलाव अवास्तविकता की सीमा रेखा छूने लगता है लेकिन यह विधान ऐसा है कि वास्तविकता को उसकी पूरी भयावहता और शिद्दत से उभारता है। कहानी का यही मोड उसे व्यापक सन्दर्भो मे उठाता है—पूरे देश के सन्दभ म। अँधेरे नाराजी ठहराव और आशका को अथव्यवस्था से जोड़ने की कोशिश म ही वित्त मत्री का जिक्र आया है। वे कफन की तरह सफेद खादी पहने हुए देवदूत की तरह आते हैं लेकिन उसके लिए उनके पास कोई हल नही है। उनकी खुद की बडी बडी दिक्कतें है। और आज के युवक के पास सिफ शिकायतें ही शिकायतें हैं जबकि देश के हर नेता और मन्त्री के अपने-अपने अहम सवाल हैं। जाने वे कौन-से मसल हैं? और माँ जो अपने बेटे की खुशी म अपनी खुशी देखती है पल पल पथरा रही है। यह मा क्या केवल मा है? क्या वह पूरा देश नही है जो वक्त की मार से निरन्तर पथराता जा रहा है जो अब मा के बुत की तरह न हिलता है न डुलता है या जिसे दुहाई देने के लिए शहर के चौराहों पर बुत की तरह लगा दिया

गया है और नारे बुलन्द किये जा रहे हैं। वित्त मन्त्री का ज़िक्र और अर्थव्यवस्था का सन्दर्भ एक नज़र म आरोपित लग सकता है लेकिन मुझे लगता है कि यही वह नुक्ता है जिस आँखा म उँगली डाल कर दिखाने की कोशिश यह कहानी करती है। यह कोशिश खुद एक जोखिम है जो धीरे धीरे दारुण समझौता पर पहुँचते हुए देश को सम्बोधित है—कि बिना इस व्यवस्था को बदले न राहत मिल सकती है, न पनाह।

इसी व्यवस्था का एक चेहरा वह है जो प्रजातन्त्र और जनसेवा का मुखौटा लगाये सीधे-सीधे राजनीतिक अवसरवादिता का है। लडाई' (साप्ताहिक हिन्दुस्तान १२ मई ६६) की दुनिया यही है। सीमा पर लडाई होती है। आदमी की कीमत वहाँ कुछ गोलिया स अधिक नही है। औसतन तीस हज़ार गोलियाँ। यानि कि वह सिफ आँकडा होकर रह गया है। उसकी मौत स दुनिया समझदार तो खर क्या होगी, वह जरूर छोटा, बेकार और 'कुछ नही होकर रह जाता है। एक भाई तो *लडाई म बदहवास है लेकिन बडा और छोटा जिम्मेदारी ओढ जनता का काम* करन का दम भरते हैं। उनम स बडा तो मन्त्री है निर्माण मन्त्री और इसीलिए छोटा ठेकेदार है। उनकी जिम्मदारी और जनसवा की भगिमा से उसे घबराहट होती है क्योंकि वह 'बीच का आदमी है और उनके भ्रष्टाचार का सारा खमियाजा उसे ही भुगतना पडता है। बीच के इस आदमी को आप मध्यवग का भी समझ सकते हैं। उसने एक लडाई लडी थी लकिन उसके बाद उसने देखा कि सब-कुछ बदल गया है। अब वह जो लडाई लड रहा है वह अघोषित है और कही अपने ही भाइयो से है इसीलिए वह अधिक निर्णायक और जानलेवा है। सरकारी खज़ान को पुख्ता करने की योजना म मन्त्री और ठकेदार (यानी बड और छोटे दोनों भाई) मिलकर षडयन्त्र करते हैं और खज़ाना खाली होता जाता है। लुटेरे पहचाने नही जाते, उन्होने जिम्मेदारी और जनसेवा का मुखौटा जो लगा लिया है और चारों ओर सैंकडों की तादाद म उनसे मिलते जुलते लोग पैदा हो रहे हैं। आप किस पकडेंगे ? किसकी शिनाख्त करेंगे ? कौन कह सकता है कि सरकारी खज़ाना लूटने वाला कौन है ? आप किसे भाई कहेंगे और किसे दुश्मन ?

आप गौर करें तो यह लडाई फिर व्यवस्था स है। उलझन भरी है। इसकी तुलना म युद्ध के मदान का खतरा कही कम है। युद्ध म दुश्मन आमने सामने होता है पर यहाँ तो सब कुछ गडमड और अनिर्णीत है।— कहानी यह भी फेबल और अन्योक्ति की तरह है। चेहरे, चीजें और स्थितियाँ सब पिघलकर अस्पष्ट हो गयी हैं या परदे के पीछे अमूर्त और अनिर्णीत, लेकिन बुनियादी लडाई और उसकी भयावहता और यातना को उजागर करने म यह सफल हुई है। स्थितिया के पूरे सहज बोध म इस समझना आसान होता है।

इस लड़ाई का एक रूप व्यक्ति की सार्थकता से जुड़ा है। एक का आशय सामाजिक है तो दूसरे का निजी। लेकिन ऐसा नहीं कि व्यक्ति की यह निजी दुनिया कोई अलग-थलग और कटी हुई दुनिया है। सामाजिक और बाहरी दुनिया भी उस पर असर डालती है और आज रोना तो यही है कि व्यक्ति का कुछ भी निजी नहीं रह गया है। इतिहास परिस्थिति यातना और मुक्ति का अथ शब्द-कोशों म नहीं व्यक्ति और समाज के सन्दर्भ मे ही खुलता है—जहा निजी और सामाजिक मे कोई द्वन्द्व नहीं होता और यदि रहता है तो वह आदमी के अस्तित्व और वजूद को ही निरथक कर देता है। तब उसे उसके लिए भी जिम्मेदार ठहराया जाता है जिसके लिए वह कतई जिम्मेदार नहीं होता। जब कानून आदमी की जिन्दगी क भीतरी और अपन कानून से अलग उल्टे जा पडता है या उसके दबावों क एहसास और अन्दरूनी मजबूरियों को नजरन्दाज करने लगता है तब वह मानवीय व्यक्तित्व और उसकी समग्रता की उपेक्षा करता है। उसके खिलाफ फसला देता है। यह फसला व्यक्ति के खिलाफ है लेकिन आज का समाज क्या ऐसे ही अकेले व्यक्तियों का समाज नहीं है? बयान (धमयुग २६ जून,६६) निजी और बाहरी दुनिया के ऐसे ही दारुण रिश्ते की कहानी है। देश यहाँ भी है आजादी के बाद का देश, जिसम लहलहाती खेती बाध, बिजलीघर फक्टरियो, मिलों वनमहात्सवो और नयी रलवे लाइनों के उदघाटनो की खालिस तस्वीरें ही तस्वीरें हैं। शायद यही आजादी का सुख है! लेकिन सचाई का कहीं भान नहीं। वह केवल नारों और विज्ञापनों की वस्तु होकर रह गयी है। आज भी यदि कोई उसम निष्ठा रखता है तो फिर उसका जीना मुहाल हो जाता है। आदमी को उसकी जिन्दगी की सचाई स काट देने का क्या हश्र हो सकता है? यही कि या तो वह आत्महत्या कर ले या फिर खुद को नकारता हुआ खुद से कटकर जिये। अपने प्रति ईमानदार आदमी की नियति शायद यही है कि आँखों से खून की धार रिसने लगे और जब तक जिन्दा रहे तब तक लगातार खून टपकता रहे। इस मायने म बयान एक तस्वीर है एक आईना है ऐसे ईमानदार आदमी के निजत्व और उसके अस्तित्व की सार्थकता की मौत का।

सवाल आदमी के वजूद का है निजत्व की तलाश अपने अस्तित्व की सार्थकता की खोज और खुद होकर जीने की मामूली-सी कामना जहा जीने की शर्तें न हों सिर्फ जीना हो। या कुछ और (धमयुग २० अक्टूबर ६८) इसी कामना और खोज की कहानी है। जहा सब कुछ हो—परिवार पत्नी बच्चे जिन्दा रहने का सारा सरंजाम लेकिन जीवन न हो वहाँ एक निचाट सूनापन होता है सूनापन या भीतरी खालीपन एक निरथकता का एहसास! तब आदमी कुछ चाहता है। यह चाह अमूर्त और अरूप तो होती ही है शब्दहीन भी होती है। यों कि कई बार वह सब मिल जाता है जो वह चाहता है लेकिन उस तरह नहीं

जिस तरह वह चाहता है' याने पूर्णकाम होने का एहसास नही हो पाता। जाहिर है कि आदमी की जिन्दगी का भराव सिफ एक ओर से नही होता। जीवन की सायकता और पूणता गलत या सही अच्छे या बुरे की परिभाषा म नही बँधती, वह सिफ होने' और उसके सारे' से जुडती है। रामनाथ एक रुके हुए शहर मे ठहरी और थिर जिन्दगी बिता रहा है। उसकी जिन्दगी के आसमान म रोशनी नही। जब आसमान सुरमई से काला होता है और जब उसम न चिडियो का शोर हाता है और न कोई दूसरी हलचल तब धूरी शाम के वक्त अँधेरे के भरने के साथ रामनाथ कुछ एसा चाहता है जो बिना किसी मतलब या मसरफ का हो जा बवजह बजरूरत और बेशत हो। शायद यही उसकी आन्तरिक सायकता और होने के एहसास को भरता है। एक मामूली सा मोह (जिसम न कोई तमन्ना है न सपना न हक है न दिखावा, न तिरस्कार है न मान इच्छा, कामना डर या घबराहट कुछ नही और यही) उसे पूणता का एहसास देता है। सिफ होना और उसका सार। निर्विकल्प और निष्काम होना। ऊपर ऊपर से कहानी उसकी जिद या शकुन्तला के प्रति उसके मोह की कहानी लगती है और शायद (जसा कि मेरे एक यार न कहा) रामनाथ किसी हद तक स्वार्थी भी लग सकता है लेकिन जहाँ जीना और जीते चले जाना हो दूसरो की शर्तों पर वहाँ देखना होगा कि स्व का अथ क्या है? इस स्व के दायरे मे क्या और कसा समाया है? उसकी प्रकृति क्या है? और दूसरा की शत पर जीने की बेबसी को तोडने की कोशिश यदि जिद ही है तो वह क्या बेजा है?—रामनाथ को एक व्यापक खालीपन के बावजूद अपनी जिन्दगी म एक बार पूणता का एहसास होता एक आतरिक पूणता जिसे जाना शायद उतना नही जा सकता मगर जिसका सिफ एहसास होता है नामहीन और अरूप। जहाँ एग्जिस्टेन्स' और एसेंस दोनो साथ-साथ होते हैं।

निजत्व की सायकता की खोज म आज के आदमी की भटकन की ऐसी ही एक कहानी अपना एकान्त' (नई कहानियाँ नवम्बर ७०) है जिसम अपने भीतर ही भीतर पूण होते रहन की प्रक्रिया म निरन्तर अकेले हाते आदमी की यातना गुजती है। लोकेल इसका बम्बई है—जहाँ सागर जितना फला और चौपाटी की शाम जितनी सुहागन है आम आदमी की जिन्दगी म उतना ही सकाच, अँधेरा और दुर्भाग्य है। कहानी खास रूमानी ढग से शुरू होती है। सोम और हसा के मधुर उत्तजनारहित पर उत्तप्त सम्बन्धो से। कुछ-कुछ परिकथाओ के रहस्यमय वातावरण की गध लिये। लेकिन यह रूमान और माधुय ज्यादा देर तक टिक नहीं पाता क्योकि जिन्दगी इतनी गैररूमानी और ठोस है कि उससे इनका तालमेल नही बठता यहाँ बिलकुल अपना हो पाने की हर कोशिश कही बेकार जाती है।

चीजों का चीजों की तरह लेने का या उनके 'अपन पूरे वजूद' का हम एहसास ही नही हो पाता। यों कि भावना और संवेदना की मौत हो गयी हो। इस मौन के लिए कौन जिम्मेदार है? क्या कही ऊपरी सतह की भागमभाग और रोज़मर्रा की जद्दोजहद न हमार भीतरी मानवीय एहसास का गला नही घोट दिया है? सोम क्यो अपरिचित की तरह जीना चाहता है? एक औसत आदमी की तरह सीधी और मामूली ज़िन्दगी मे राहत पाना चाहता है? क्यो जी लेना' उसके लिए सबसे बडा काम लगता है? हसा से उसके सम्बन्धो म कुछ भी ता घटित नही होता न यादों के लिए कोइ कसकते टुकडे, न ज़िन्दगी के काई वायदे,' फिर भी वह उसका एकान्त क्या है? फिर एक छाटे-से हादसे से सब कुछ खत्म हो जाता है। यहा तक यह कहानी भी खासी मामूली लगती है लेकिन फिर अन्तिम मोड म सोम की लाश की शिनाख्त म भटकता कहानी का मैं', जिन जिन स्थितियो से गुज़रता है वे फिर एक भयावह फन्टेसी की तरह लगती हैं—शव का उठकर चलना, उसका श्मशान के दफ्तर में आना अपना नाम बताना सारी खानापूरी करना और अपने आग्रह करना—यह सब फन्टेसी नही ता और क्या है? उन सारी स्थितियों म साम की खोज एक आदमी की खोज लगती है जो उस शहर मे खो गया लगता है, लेकिन वह आदमी कहाँ है? वहाँ उस आदमी और व्यक्ति को कोई नही पहचानता, उसका नाम चाहे सोम हो या कुछ और। वह सबके लिए लावारिस लाश की मानिन्द है। शव है। उस मैं का हर चलता हुआ आदमी शव लगता है। सोम की तरह अकेला। और अपने भीतर ही भीतर पूण होते रहने की प्रक्रिया अधूरी रह जाती है। कहानी म बाहरी और भीतरी सामाजिक और वयक्तिक दुनिया म खासा अन्तर्विराध है और वह बाहर से भीतर की ओर एक तेज़ और तल्ख मोड लेती है और आदमी के बुनियादी वजूद के सवाल को उभारती लगती है।

य कहानियाँ बाहर से घबराकर भीतर की ओर और भीतर से कतराकर बाहर की आर लौटने की कहानियाँ है। इनका स्वर भी यथाथ का कुछ उपहास करता हुआ सा है लेकिन उसका तिरस्कार करता हुआ नही। क्रूर वास्तविकताओ पर वह *व्यग्य करता हुआ भी है* और इस उपहास और व्यग्य के माध्यम से उसकी विद्रूपताओं को उजागर करता हुआ भी। फन्टेसी और फेबल या अन्योक्तिनुमा विधान उन्हें व्यापक सन्दर्भो म उठाने और यथाथ क अधिक तीखे बाध क कम्यूनिकेशन की कोशिश भी है। इसके पहल तक कमलेश्वर की कहानियों म *आधुनिक व्यक्ति की निजी और व्यक्तिगत* दुनिया के साक्षात्कारों की कमी खटकती थी। उनकी कहानियो म सामाजिकता के बाहरीपन की शिकायत भी कुछ लोगो न की थी। इधर उनकी कहानियो म वे निजी समस्याएँ सकट और अन्तर्विरोध उभर हैं जिनका सामना आधुनिक व्यक्ति कर रहा है। इसका मतलब

यह नही है कि उनकी इधर की कहानिया म बुनियाली सामाजिकता खोयी है या सामाजिक सत्यो का साक्षात्कार कम हो गया है उन्ह अधिक निजी सन्दभ मिले है। उनम एक स तुलन आया है।

ऐसा नही कि कमलेश्वर ने इस बीच सभी कहानियाँ उम्दा ही लिखी है। लेखक जब अपनी ही लीक स हटता है तो नयी दिशाओ म जाने के लिए वह कुछ प्रयाग करता है, (हालाँकि कमलेश्वर न तो प्रयोगवादी अथ म प्रयोगधर्मी है और न राजेंद्र यादव की तरह वहाँ विशिष्टता के आग्रह म चौंकाने की वसी भगिमाएँ हैं मगर) नय मोड लेती रचनात्मकता म कुछ अपवाद आ जाना स्वाभाविक है। धमयुग (१६ अगस्त ७०) की कहानी उस रात वह मुझे ब्रीच कण्डी पर मिली थी' और ताज्जुब की बात कि दूसरी सुबह सूरज पश्चिम म निकला था' एक प्रयोग के रूप मे तो शायद उल्लखनीय हो लेकिन किसी नयी दिशा की उपलब्धि और सूचना उससे नही मिलती।

आपने पसद की कहानियो पर अपने विचार लिखने के लिए कहा था अत मैंने उन्ही का जिक्र किया जो मुझे एक या दूसरे कारण स अच्छी लगी। इसीलिए अधिकतर मैंन अपन इम्प्रेशस ही बयान किये हैं और कोशिश की है कि कहानियो स रपोर (rapport) बनाने का एक जमीन दी जा सके। आशा है, आप मरी बातों को उनकी सही राशनी और भगिमा मे लेंगे ।

(मच से साभार)

श्याम गोविन्द

कमलेश्वर की कहानियाँ

> सड़क पर खड़ा एक एक व्यक्ति जब तक अपने भविष्य और वर्तमान के प्रति आश्वस्त नहीं होता, साहित्यिक धरातल पर हमारी लड़ाई तब तक समाप्त नहीं होती। महज़ व्यवस्था के ढाँचे को बदलने तक हमारी बात सीमित नहीं है। व्यवस्था के बदलने के साथ साथ हम साधारण आदमी के लिए सांस्कृतिक आर्थिक एवं सामाजिक न्याय की बात भी करते हैं जिसके पक्षधर हम हर उस व्यवस्था में होंगे जो जन के हितों के विरुद्ध होती है सर्वहारा के विरुद्ध होती है। यदि यह परिवर्तन शान्तिपूर्ण ढंग से होना है तो भी हम उसके साथ हैं।'
>
> —कमलेश्वर

• •

किसी भी रचनाकार की सामर्थ्य और रचनात्मकता का आकलन उसकी श्रेष्ठ कृतियों को आधार मानकर ही किया जा सकता है। इसमें शक नहीं कि कमलेश्वर की कहानियों को समझना अपने समय परिवेश और अनुभव एवं उसके अर्थ को पहचानना है। अनुभव, विसंगतियों और मानवीय संवेदना की ह्रासमूलकता की पहचान। कहानी अगर प्रामाणिक हो तो अनुभव सम्पदा कैसे बनती है इसकी समझ उनकी कहानियों से पैदा होती है। अपने समकालीनों में वे सबसे ज्यादा ताज़ादम कहानीकार हैं ताज़ादम और सिद्धहस्त उनकी कहानियाँ कला और यथार्थ दोनों की कसौटियों पर खरी उतरती हैं। वे परिवेश को जीवन्त प्रस्तुत करती हैं, और आदमी को राहत देती प्रतीत होती हैं। उन्हें पढ़कर यह साफ़ तौर पर महसूस हो सकता है कि *लोकरंजन ही दरअसल अब मनोरंजन कहलाने का अधिकारी है।*

कमलेश्वर मामूली आदमी की स्थिति और संवेदना को उसकी चारित्रिक

गहनता, अनुभूति क्षमता और सहजज्ञान को सफल ढग से पाठकों के समक्ष रखने म सक्षम हैं। कस्बे का आदमी' से लेकर इतने अच्छे दिन' तक की उनकी कथा-यात्रा म यह चीज स्पष्ट है। यह एक दिलचस्प तथ्य है कि वे अब यथाथ से अति यथाथ की ओर उन्मुख हो रहे हैं कि ऐतिहासिकता और समयगत सच्चाइया के सदभ मे यह एक निराली सी बात है। उनका रचना शली उनके युग की परिचायक है—कल्पना के भ्रम वे शुरू से ही तोडते नजर आते हैं। यथाथ को वे मँजे हुए स्तर पर रोमाटिकता और तक के सामजस्य के स्तर पर प्रस्तुत करने म कामयाब हुए हैं।

साथकता कहाँ है ? सघष मे या बच कर निकल जाने म ? दूसरों से लडने का तो कोई मतलब है ही नही। लेकिन अपने-आप से भी लडना कब तक ? लेकिन क्या यह भीतर की लडाई टल सकती है ? क्या जीवित बने रहना सम्भव है ? कमलेश्वर की कहानियो म कही तो आदमी के उदास और निरीह चित्र हैं, तो कही वह सवाल पर सवाल करता चला जाता है और कही वह अपनी वाग्मिता और करुणा से एक प्रकाश-पुज के रूप म उभरा है। वह कही भी दुरूह अथवा विपण्ण नहीं है। आर्थिक सघष म भी वह भावना को सर्वोपरि मानता है। एक साधारण आदमी का जीवन ही इतना विषाक्तमय साथ ही पवित्र हो सकता है। उनकी कहानियो मे कही खलनायक अथवा दुष्ट आत्मामूलक पात्र नही है इस तरह आदमी के धय और सतोष की परिचायक वे कहानियाँ बनती हैं।

'राजा निरबसिया म यह चीज़ खूब अच्छी तरह अकित है। जीवन मे कविता क्यों नही है यह घर एक पागलखाना बनकर क्यो रह गया है सब लोग इस कदर आहत क्यो अनुभव कर रहे हैं कि वे जोकर बनकर रह गये हैं हँसी क्यो नही आती, कुछ इस तरह क सवाल यह कहानी उठाती है। एक सूक्ष्मता इस कहानी म है शिल्प के स्तर पर वह एकदम स्पष्ट है लेकिन आदमी को इस सूक्ष्मता का एहसास नही है। एहसास की इस कमी के कारण त्रासदी का जन्म हुआ। यथाथ के इतने निकट रहते हुए भी वह यथाथ से कितनी दूर थी ! शायद यही घात उसके साथ हुई जिसकी परिणति उसकी आत्महत्या म हुई। यह कहानी कटु नग्न यथाथ को समथ अभिव्यक्ति देती है। यह यथाथ शब्द के मायनो पर एक नया सवाल लगाती है। जो कटु है नग्न है, क्या वही यथाथ है ! समन्वय का यथाथ मे कोई स्थान नही है ? शायद विभीषिका और विषाद को यथाथ का नाम नही दिया जा सकता। उन्हे अ यथाथ कहना ही अधिक समीचीन होगा। यह कहानी, इसी अ-यथाथ की कहानी है। वह किसी पुराण चर्चित राजा अथवा हमारे समकालीन किसी मुहर्रिर की ही कहानी नही है वह उस नरेटर की भी कहानी है जो इस किस्से को सुना रहा है। गरीबी न उस आदमी को किस हद तक तोड दिया कि उसने अपनी बीवी बच दी। घर की बहू-बेटियों की यह

इज्जत ! अपना दुश्मन वह आप ही बन बैठा। गरीबी आदमी को किस कदर पुंसत्वविहीन बना देती है ! नरेटर किस्सा सुना रहा है, अर्थात वह रहा है कि वह नही टूटेगा आर्थिक कशमकश कितनी ही गहन हो अकेलापन चाहे जिस हद तक सर्वग्रासी हो, पराजय का एहसास तक उसे नही होगा व्यर्थताबोध और ऊल जलूल से वह अपना कोई सम्बन्ध नही रखेगा। जीवन के साथ एक सहज समांतरता इस कहानी मे ध्यान देने योग्य है। गरीब आदमी के लिए अतीत का अर्थ बदल गया है। एक युग की विषमता दूसरे युग की विषमता से एकदम भिन्न है। निर्णायक नियति किसकी है ? अतीत के राजा की या आधुनिक युग के निम्न वर्गीय साधारण आदमी की ? यह कहानी कमलेश्वर के अतियथार्थवादी रुझान का शुरू से ही परिचय देती है। इसके दो कथानक कथ्य के दो भाग हैं— एक किस्सा दूसरे पर व्यंग्य है—उन्हें महज शिल्प समझ लेना उचित नही होगा।

इसे पढकर एक धक्का-सा लगा। मानवीय चरित्र का एक बेहद निरीह पहलू बडी बेबाकी के साथ यह कहानी उठाती है कि जो कुछ हुआ, वह क्यो हुआ ! बचनसिंह इतना बडा आर्थिक अपराधी कैसे बन सका ! कि आर्थिकता और नैतिकता मे किस तरह का सम्बन्ध है और नैतिक मूल्यवत्ता का किसी आदमी की जिन्दगी मे क्या दखल है ? पराजय की कहानी सुनाने का मतलब है विजयीभाव। एक सीमा के बाद अपमान-बोध आत्मभिमान म बदल जाता है— कि हम इतना ही और इस हद तक सह सकते हैं—नैरेटर सारी स्थिति समझता है। वह तुम्हारी कहानी तुम्हें ही सुना रहा है ! कितना तरसता है जगपति और किस परिवेश मे, महज जिन्दा रहने के लिए ! कितना चाहता है वह अपनी बीवी को और आश्चय कि वह कितनी सुन्दर है—चन्दा का वणन सचमुच चन्दा के ही उपयुक्त है—लेकिन कितना गन्दा ड्रामा जुडा है उसकी जिन्दगी के साथ-- 'गरीब की जोरू' होने का। परीक्षा-काल मे वह पैसे से हार गयी उसने अपने को तब तक बचा कर रखा, जब तक वह यह न जान गयी कि उसे बेच दिया गया है। प्रकृति इस कहानी म भाषा के रूप म इस्तमाल होने के लिए खुशी से तयार हो गयी लगती है। परिवेश को मानो एक चेतावनी मिल गयी है।

यथाथ का इस तरह अयथाथ हो उठना—इसका क्या मतलब है ? आदमी को पता ही नही चलता कि उसके बारे म क्या निणय ले लिये गये हैं। आदमी कितना भोला है, और यह व्यवस्था कितनी गहिन और कमीनी ! खोयी हुई दिशाएँ' कहानी को इस दृष्टि से पढा जा सकता है। नायिका कितने सहजभाव से एक से प्रेम और दूसरे से पारिवारिक रिश्तो का निर्वाह कर रही है। वह कितना थका हुआ है ! यहाँ कितना परायापन है ! यहाँ सब अपना है अपन देश का है लकिन कुछ भी अपना नहीं है अपने देश का नहीं है। उसकी सवेदना तक पराई है, अनुभव का अथ वह कल्पनात्मकता लगाता है निश्चित है कि वह झुँझला जाता है

बात बात पर बिदक जाता है। उसे किसी के बारे म कुछ मालूम नही पडता। वह निपट अकेला है। इस अकेलेपन के कारण वह एक मानसिक रक भर होकर रह गया है तभी तो वह खद से मिलना है जसी बेकार बातें सोचता है। वह दोस्तो से कतराता है क्योकि दोस्त जि दगी म गहरे उतरने लगत हैं और वह एक बनावटी जिन्दगी जी रहा है वह नही चाहती कि कोई यह बात जान। उसे लगता है कि वह अपना समय व्यथ ही बरबाद करता रहा है। जिन्दगी से कतराने का यह नतीजा तो निकलेगा ही। शहरों म कितना बेकार घूमता है आदमी! वह टी-हाउस के बाथरूम मे जाता है तो वहाँ लग आईन मे अपना मुह देखकर रह जाता है। चेतना क छितरे छोर और स्मृतियो का एक आदमी पर सम्यक प्रभाव बडी सीधी सरल भाषा म इस कहानी म कह दिया गया है। चन्दर तुम क्या नही कर सकते। यह कसी आवाज है जो उसके भीतर टकराती है? यह कहते वक्त इन्द्रा की आखो मे विश्वास की कैसी अदम्यता छलक उठती थी लेकिन काश वह विश्वास चन्दर के लिए होता! वह तो स्वय इन्द्रा की अस्मिता थी जो आँखो म चमकती थी लेकिन वह इस चीज को बहुत देर से समझा। इन्द्रा भूल गयी कि वह कितने चम्मच चीनी लेता था। क्या सच ही भूल गयी या यह भी उसकी एक अदा है? वह कितनी ज्यादा आर्थिक तकलीफ म है! इन्द्रा भी शायद यह जानती है इसके अलावा वह सुव्यवस्थित गहस्थिन इस कामधामविहीन लडके म अब क्यों रुचि ले? जिन्दगी सपने का नही सपनो के टूटने का नाम है शायद! उसे लगता है उसे कोई नही जानना। उसकी अपनी पत्नी भी नही। त्रासदी को एक पारिवारिक सदभ मे बडी कुशलता से चित्रित किया गया है। त्रासदी और चरित्र का कितना गहरा और अन्यान्याश्रित सम्बन्ध है। साथ ही, हमारे समय म त्रासदी कितनी सहज घटित जिन्दगी हो गयी है—सामान्य रोजमर्रा का एक अनुभव! कहा अरस्तू की त्रासदी की धारणा और कहाँ बीसवी शताब्दी के उतरार्द्ध म आम हिन्दुस्तानी आदमी की यह जिन्दगी! कमलेश्वर की कहानियाँ गरीब आदमी की बाबत विचार करने वाली कहानियाँ हैं। इधर की रचना पीढी पर उनका प्रभाव नकारने योग्य नही है। वे यथाथ और व्यग्य का साधिकार उपयोग करते है।

यह सही है कि उनकी सभी कहानियाँ कथ्य और वचारिकता के लिहाज से समान स्तर की नही है लेकिन अपनी उन सामान्य कहानिया म भी व एक तरह की सोद्देश्यकता की रक्षा बराबर करत प्रतीत होत हैं। जस 'एक अश्लील कहानी'—यह एक सामान्य रचना है लेकिन इसमे अन्तभूत सादृश्यता अपनी जगह है इस कहानी म एक लाचार रखल जसी लडकी है जो अकेलेपन म अपने शरीर म अनुरक्त हो जाती है। उसके लिए अपन शरीर के अलावा जसे कुछ बचा ही नही

है नायक उसे देखता रहता है लेकिन वह आदर्शवादी है और स्त्री के अग-प्रदर्शन (अगप्रदर्शन के लिए अगप्रदर्शन) में रस लेते हुए भी अत म उसकी व्यथता को स्वीकारता है। वह चाहता है कि स्त्री व्यवसाय मे नौकरी म आर्थिक दृष्टि से पुरुष की सहगामिनी बने, सामतवादी जीवन दृष्टि अब एकदम जजर हो चुकी है। नतीजा यह होता है कि वह औरत एक दिन नगी करके घर से निकाल दी जाती है और हमारे नायक के लिए वही कचन शरीर, जिसकी वह कामना करता था एक बडे सामाजिक सदभ म बेहूदा और बेमानी हो उठता है। इस सम्पूण कथ्य को बेहद सपाट ढग से रख दिया है कमलेश्वर ने जिससे उसके कहानीपन को आघात पहुँचता है जैसा कि प्रतीक-बोझिल और बिम्बो की भरमार से पीडित उनकी एक और कहानी 'वह मुझे बीच कंडी पर मिली थी' म जटिलता के सदभ म हुआ है। हद की सपाट बयानी और हद की जटिलता, दोनों से ही कहानी को नुकसान पहुँचता है। सपाटबयानी बेहद सावधानी से इस्तमाल करने की चीज है क्योंकि कालजयी रचनाएँ भी इस सपाटबयानी में ही निर्मित होती है। उनम शैली की सरलता और सपाटबयानी का अन्तर खत्म हो जाता है।

कमलेश्वर ने इस सपाटबयानी का बढ़िया उपयोग न किया हो ऐसा नही है। देवा की मां' 'सांप' लाश फसला, आधी दुनिया बयान' इत्यादि कहानियाँ अगर एक हद तक सफल हैं, तो इसका कारण यही है कि उनमें शलीगत सरलता का भरपूर उपयोग किया गया है। भावुकता का कमलेश्वर अच्छा इस्ते-माल करते हैं लेकिन जहाँ इस पर सयम नही रहता वहाँ कहानी बिगड जाती है जसे 'नीली झील' और 'मास का दरिया' कहानियो म हुआ है। इस स्पष्ट आलोचना के बाद भी यह स्वीकार करना आवश्यक हो जाता है कि बावजूद इन सारी बातो के उनकी कहानिया बेहद पठनीय हैं और वे पाठक को आकर्षित ही नहीं करती, उसे प्रभावित भी करती है। वे पाठक को सजग बनाती हैं जो जनेन्द्रकुमार अथवा निर्मल वर्मा की कहानियाँ हरगिज नही करता। उनकी सवेदना भिन्न है।

इस लिहाज से कमलेश्वर की 'इतने अच्छे दिन' कहानी द्रष्टव्य है। है इसम भी सपाटबयानी। लेकिन यहाँ वह न केवल कथ्य और कहानीपन की रक्षा करती है बल्कि इस कहानी को इस तरह नही तो और किस तरह कहा जा सकता है? इस तथ्य को भी पाठक के सामने ला खडा करती है। अनियथार्थ में फटैसी और कहानी एक हो जाती है। अभिधा और व्यग्यबोध गडमड होने लगते हैं समयबोध समाप्त होने लगता है और बेबस आदमी भी हँसने लगता है। वह एकदम नगेपन पर उतर आता है। जिन्दगी तब हास्य नही, करुण लगने लगती है। वीभत्स साधारण हो जाता है और आत्मकेन्द्रित होकर जीना ही एकमात्र विकल्प आदमी

के सामने रह जाता है कहनेवाले चाहे कुछ भी कहते रहे इस कहानी म लेखक ने निम्नवर्गीय जीवन के रेशे रेशे म अन्तर्निहित व्यग्य को बखूबी पकडा है। जो जि दगी अकाल का स्वागत करे वह जिन्दगी कसी होगी ! यह कल्पना करना कठिन नहीं है। हड्डियो, और हडिडयो के बीच रहते लाग ! लोग कितनी देर से चेतते है ! उसका पिता मर गया तो उसे भी उसे जलाना गवारा न हुआ उसकी हडिडयां जो बचनी थी ! उसकी बहन को अगर वह ट्रक-ड्राइवर न ले जाता तो उसे कहाँ स खिलाता वह ? चीनी मित्र था ता हडिडयो का भी रोजगार चल निकला। नही तो क्या करता वह ? उसकी नतिकता दूसरी है। पसो की ऐवज उसकी बहन सहज ही लाला और लाला जसो को अपन बिस्तर मे सुलाती है। और दादी को देखो, मर गयी लेकिन महक सबसे ज्यादा उसकी हडिडया से आती है उस ! क्या वह अपन पुरखा की इन हडिडयो को नदी म नही सिरा सकता !

अनुभूति को अनुभव की बेहद सही भाषा दी है कमलेश्वर ने इस कहानी मे। कहना न होगा कि यह उनकी एक उत्कृष्ट कहानी है। निस्सदेह उनके कथाकार मे अपार शक्ति है। अपनी अच्छी कहानिया मे कमलेश्वर अपनी ही सीमाओ को लाँघ जाते हैं और उत्कृष्टता के एक-से एक बढ़कर नये आयाम प्रस्तुत करते हैं। उनमे भावुकता का चित्रण वे प्रामाणिकता के सदभ म करते हैं। यह कहानी इस चीज को साबित करती है। परिवेश और आदमी के सम्बन्धा को यह कहानी नये सिरे से कायम करती है, तकलीफ का नय मायने देती है। रुद्ध गीत की क्रुद्ध तान को जगाती है।

डॉ० रामदरश मिश्र

कमलेश्वर की कुछ कहानिया

हिन्दी की नयी कहानी के कृतिकारो मे कमलेश्वर अपनी विशिष्ट पहचान बनाने मे समर्थ हुए है और उनका वैशिष्ट्य सामान्य जिन्दगी से जुडे रहने की प्रवृत्ति म है। कमलेश्वर ने अपने लेखन के प्रारम्भ से ही सामान्य मनुष्य के दुख दद को उसकी आकाक्षाओं को उसके अभाव और सघष को, उसकी मजबूरी और आदमियत को पकडने का प्रयत्न किया है और अपने इस प्रयत्न म वे सपाट नहीं होते क्याकि वे परिस्थितिया का ब्यौरा नही पेश करते बल्कि बाहर भीतर की परिस्थितियों और मन स्थितियों के गहरे तनाव पर नजर रखते हैं। व न तो बाहरी परिवेश का तथ्यातथ्य अकन करते हैं और न ही परिवेश निरपक्ष मान सिकता की पर्ते उघडकर गहराई का छल पैदा करते हैं। दोनो का द्वद्वात्मक साहचय बनाये रखते हैं। इसीलिए एक ओर वे अपनी सामाजिक समस्याओं वाली कहानियो म भी व्यक्ति की इयत्ता की उपेक्षा नही करते और दूसरी ओर मूलत यौन सम्बन्धो वाली कहानियों म यौन चेतना को परिवेश के सदर्भों से जोडकर स्थापित करत हैं। आम जिन्दगी से जुडी होने के नाते कमलेश्वर की कहानियों म वविध्य है इसीलिए उनकी हर नयी कहानी पढ़ने की इच्छा होती है। निमल वर्मा जसे कई कहानीकारो की कहानियो क समान कमलेश्वर की कहानियो मे एकरसता और मानोटनी नही है। लेखक का यह सामाजिक सपक्ति उसे निरन्तर विकसित करती गयी है और नये-नये जीवन-परिवेशों की सचाइयों, नये नये चेतना आयामो को उदघाटित करने के लिए प्रेरित करती रही है। इसलिए कमलेश्वर और इन जसे कुछ अन्य समाजोन्मुखी कहानीकारो की कहानिया का सामने रखकर उन लोगो को जवाब दिया जा सकता है जो यह आक्षेप लगाते हैं कि नयी कहानी आत्मकेन्द्रित कहानी है।

कमलश्वर का पहला कहानी सग्रह है राजा निरबसिया (१६५७)। इस सग्रह का राजा निरबसिया' कमलश्वर की शक्ति का इजहार करती हुई आई

थी। वास्तव म इसी कहानी स इन्ह पहले पहल ख्याति मिली। कमलश्वर की यह पहली श्रेष्ठ कहानी थी और आज भी श्रेष्ठ बनी हुई है। यह कहानी कमलेश्वर के कहानीकार की अपनी शख्सीयत का पूरा सकेत दे देती है। इसमे मध्य वग के सामा य आदमी की आर्थिक और दाम्पत्य सम्ब ध मूलक तकलीफो का गहरा तनाव न्मित हाता है। नर नारी के यौन-सम्ब धा या प्रेम सम्ब धा पर आर्थिकता का कितना गहरा दबाव है इसका एहसास यह कहानी कराती है। मध्यवर्गीय रुचि-अरुचि स्वतन्त्र नही है, आर्थिक विषमता उसे विकृत करती रहती है मारती रहती है और धीरे धीरे रुचि ही नही, आदमी भी मर जाता है या रीत जाता है। महाजनी सभ्यता का यह अभिशाप व्यक्ति का सामाजिक यश भी छीन लेता है। समाज के लोग अभिशप्त व्यक्ति का सहानुभूति देन क स्थान पर कलकित करते है उस धिक्कारत हैं। राजा निरबसिया म जगपति और चदा पति पत्नी हैं। इनम बडा प्यार है कि तु यह प्यार का सम्ब ध प्रभावित होता है कम्पाउडर बचनसिंह के पसे से। पति पत्नी का अभावग्रस्त होना, पति का बीमार पडना बचनसिंह द्वारा सहायता का दिया जाना बचनसिंह के पसे से जगपति का लकडी की दूकान खोलना फिर बचनसिंह से निरबसिया चदा का गभवती होना आदि घटना शृ खलाएँ है जिनके आपसी सघष और सयोजन से कहानी की चतना जागती चलती है। अ त म चदा भाग जाती है और जगपति आत्महत्या कर लेता है और इनके कलक की कथा समाज म रेंगती रहती है। यह कहानी कमलश्वर के एक नये शिल्प प्रयाग की आर भी सकेत करती है। राजा निरबसिया मे आज की जि दगी की कहानी के समानातर एक पुरानी कहानी भी—एक राजा के जीवन का कहानी चलती रहती है। यह राजा की कहानी प्रस्तुत कहानी के भीतर उफनती तकलीफ और विषमता का अपना अनुकूल प्रतिकूल आघाता से सघन करती चलती है। अनुकूलता यह है कि राजा और जगपति दोनो ही निरबसिया हैं और बाद म दानो की ही पत्नियाँ दूसर से गभवती होती हैं अर्थात राजा और जगपति दोना ही (उनकी पत्नियाँ नही) सन्तान उत्पन्न करन म अक्षम हैं। कि तु प्रतिकूलता यह है कि एक राजा है और दूसरा है एक आम आदमी। एक की पत्नी के पर-पुरुष प्रसग के पीछ आर्थिक अभाव की भयावहता नही है एक सयोग मात्र है दूसर की पत्नी क पर-पुरुष प्रसग क पीछे आर्थिकता का भयानक दबाव है। एक राजा है इसलिए वह सामाजिक कलक और धिक्कार की सीमा म ऊपर है दूसरा आम आदमी है इसलिए वह इस कलक और धिक्कार की लपट म आ जाता है। रानी के कलक को मिटाने क लिए कुल-देवता हैं यानी एक आध्यात्मिक या धार्मिक आधार है कि तु चदा के कलक का मिटान क लिए एसी कोई शक्ति नहीं थी। उसी रात जगपति अपना सारा कारबार त्याग अफीम और तेल पीकर मर गया। क्योंकि चदा के पास कोई दवी शक्ति नहीं थी और जगपति राजा

नही वचनसिंह कम्पाउडर का कर्जदार था ।

इस संग्रह की अन्य सशक्त कहानिया है—'देवा की माँ' सुबह का सपना' मुरदा की दुनिया', पानी की तस्वीर । दवा की माँ मा की पीडा और द्वन्द्व का अकन है किन्तु यह पीडा और द्वन्द्व पूरे पारिवारिक परिवेश के तनाव से पदा होता है। दवा की मा पति से परित्यक्ता है। पति ने दूसरी शादी कर ली है और पुत्र दवा बकार है जो अपनी बेकारी और अनियमितताओ से माँ को परेशान करता है। पति और पुत्र के विषम सम्बन्धो के बीच देवा की मा अपनी अभाव ग्रस्त जिन्दगी खीचती है और बाप के बीच भी पति के प्रति एक कोमल भाव रखती है। देवा राजनीतिक हलचल मे जल चला जाता है। वह पति को सदेश भिजवाती है कि देवा की जमानत हो जाय पति इनकार करता है। किन्तु जब दवा जेल से छूटकर आता है तो उसका पिता बीमार पड जाता है और अस्पताल म होता है। देवा मा से अनुरोध करता है— चल मा पिताजी को देख आयें।' माँ अपनी सारी पीडा दबाकर क्रोध स कहती है— नही वहा नही जाना है। इस प्रकार यह कहानी एक पारिवारिक वातावरण क बीच दवा की मा को प्रस्तुत कर भारतीय पत्नी की तकलीफ और द्वन्द्व को उदघाटित करती है।

सुबह का सपना अपने प्रभाव म एक विराट मानवीय फलक पर फल जाने वाली कहानी है। कहानी म दो छोटे छोटे चित्र हैं और उन चित्रो के माध्यम से ही लेखक ने युद्ध की क्रूरता और उससे टकराती शांति की कोशिश को बिम्बित किया है। कथा प्रवक्ता प्रदशनी म एक कलेंडर देखता है जिसम दो स्वस्थ बच्चे कबूतर पकडे हुए हैं। चित्र के इस स्वप्न को साकार करते हैं प्रवक्ता के दो पडोसी बच्चे। दो बच्चियाँ मल रही हैं और ऊपर एक कबूतर बठा है। जैकब उसे मारने वाला होता है कि लडकियाँ उसे उडा दती हैं और खिलखिला कर हँसती हैं। उनकी मासूम खिलखिलाहट जस बडे बडे सयानो द्वारा लादे गय युद्ध की विभीषिका क बीच बहती हुई चली जाती है।

पानी की तस्वीर' म प्रेम के द्वन्द्व क बीच एक आदश की ओर सकेत है। 'मुरदा की दुनिया एक नय माहौल म आदमी की करुणा और घृणा को रूपायित करने वाली एक सशक्त कहानी है। कमलेश्वर की कहानियों की बात करते हुए मैं माहौल, परिवेश या वातावरण की बात बहुत सचेत भाव स कर रहा हूँ। माहौल या परिवेश से कमलेश्वर जुडे हुए हैं। वे एक ओर तो व्यक्ति की सवेदना को परिवेश म मूर्त करते हैं दूसरी ओर परिवेश की सवेदना को व्यक्ति म केंद्रित करते हैं। मुरदो की दुनिया म एक नया माहौल है—अर्थात एक सडक है जहाँ पर शोर शराबा करती हुई प्राइवेट बसें चलती थी उस पर अब मौन भाव से चलती हुई सरकारी बसें आ गयी हैं। इसलिए प्राइवेट बस क ड्राइवर निसार की रोजी खत्म हो जाती है और वह अपना मोटा ताजा बकरा ठकेदार की विधवा

लडकी साबित्तरी (जिसे निसार पाना चाहता है) के यहाँ रखकर कोई नौकरी खोजने चला जाता है। वह सात दिन बाद लौटता है तो पाता है कि साबित्तरी उसके बकरे को बेचकर गोरख के साथ भाग गयी और बकरे को कसाई ने काट दिया है। उसे लगता है कि यह दुनिया आदमियो की नहीं मुरदो की है। चुपचाप चलने वाली बसो की दुनिया भी मुरदा की है और क्रूरता पाल चुपचाप जीने वाले जीवित लोगो की दुनिया भी मुरदो की है। वह ताजिया बनायेगा क्योंकि ताजियो की दुनिया म एक जोश खरोश है लोग छातिया पीटते जोश खरोश से जुलूस म निकलते हैं। लेखक ने ताजिया को यानी मुरदा की दुनिया को जीवित दुनिया और जीवित लोगो की दुनिया को मुरदा की दुनिया बताकर पराडाक्सिकल ढग से आदमी के दद और आक्रोश को व्यक्त किया है।

कस्बे का आदमी की कहानियाँ भी राजा निरबसिया क ही काल की कहानियाँ हैं, इसलिए ये कहानियाँ अपने चरित्र म अलग नहीं हैं ये भी परिवेश और जीवन के विविध आयामो को उद्घाटित करने म प्रयत्नशील लक्षित होती हैं। तीन दिन पहले की रात' म अच्छी नौकरी द्वारा जीवन को सुरक्षित रखन और व्यक्तित्व को बनाये रखन का द्वन्द्व चित्रित है। मीना के जीवन म बारी बारी से तीन प्रेमी आते हैं—दिवाकर (आदशवादी युवक) जितेन (एक माध्यम कोटि की नौकरी वाला युवक) और अमर(एक अच्छी नौकरी वाला युवक)। मीना का अमर से विवाह होता है कि तु जब वह देखती है कि वह बहुत ही खुशामदी और व्यक्तित्वहीन आदमी है तो पहली ही रात को उसे उससे बदबू आन लगती है और दिवाकर याद आने लगता है। वतमान जीवन की यह एक बहुत बडी समस्या है। इसान और हैवान' म पुलिस की नीचता और एक बेकार युवक की यातना और इसानियत का चित्र है। कस्बे का आदमी' कस्बे के एक आदमी के छोटे मोटे अन्तर्विरोधों के साथ उसकी सहृदयता और सस्कार को अकित करने वाली कहानी है। तोते के प्रति अटूट प्यार और अपनी असहायता मे उसके प्रति पीडा बोध को लेकर जीने वाले छोटे महाराज को लेखक ने एक जाने-पहचाने परिवेश म व्याप्त कर दिया है।

खोयी हुई दिशाएँ' से कमलेश्वर की एक नयी यात्रा शुरू होती है। वे कस्बे से शहर की ओर आ जाते है। राजा निरबसिया और कस्बे का आदमी' की कहानियो म सामाजिक विसगतियो विद्रूपताओ और क्रूरताओ के बावजूद एक तरलता है जीवन की सहनीयता का एक भाव है जीवन की सहजता और मूल्यवत्ता की खोज की तडप है। राजा निरबसिया म जगपति अपनी पत्नी के आचरण को अनतिक मानकर आत्महत्या कर लेता है। एक प्रकार से वह जीवन म अनतिकता का विरोध ही करता है चाहे वह कितनी ही विवशता से क्यों न सहा

हुआ हो। देवा की माँ, पानी की तस्वीर, 'सुबह का सपना', मुरदों की दुनिया' 'तीन दिन पहले की रात', कस्बे का आदमी आदि सारी कहानियों मे एक मूल्य है एक आदर्श की व्यजना है और यह स्थिति सन् ६० के आसपास तक 'नयी कहानी' और 'नयी कविता' की अधिकाश कृतियो म देखी जा सकती है।

'खोयी हुई दिशाएँ' की कहानियो म महानगरो के परिवेश की क्रूर स्वार्थी अजनबीपन से भरी महानगरीय चेतना की अभिव्यक्ति है। 'खोयी हुई दिशाए' कहानी महानगरीय अजनबीपन पर लिखी गयी कहानी है। कस्बे से आया हुआ चन्दर महानगर मे आकर अपने को निपट अकेला और अजनबी अनुभव करता है। वह कस्बे का सामाजिक परिचय वाला सस्कार लेकर महानगर म भटकता है, लोगो से निश्छल सम्बन्धो की अपेक्षा करता है किन्तु यहा अजनबीपन निरतर डसता रहता है। हा, यहाँ पहचान के बिना भी एक व्यावसायिक पहचान व्याप्त है। पडोसी अजनबी है समाज अजनबी है शासन अजनबी है किन्तु विडबना यह है कि चन्दर के अकेलेपन म सभी अपने-अपने ढग से दखल देते हैं। घर पहुँचकर पत्नी से एकान्त सुख पाना चाहेगा किन्तु पडोसिन मिसेज गुप्ता वहाँ जमी हुई गपशप कर रही होगी, और पुलिस का आदमी इधर से उधर घूमता हुआ सबकी तनहाई म दखल देता रहता है। आदमी अपनी शख्सियत से कटकर भी तनहा हो गया है यानी उसका असली रूप भी उसके साथ नही रहा। इस तनहाई को रूपायित करता हुआ कहानीकार कहता है—

> कनाटप्लेस मे खुले हुए लान है। तनहा पेड है और उन दूर-दूर खडे तनहा पेडो के नीचे नगर निगम की बेंचें हैं जिन पर थके हुए लोग बैठे हैं और लान म एकाध बच्चे दौड रहे हैं। बच्चो की शक्लें और शरारतें तो बहुत पहचानी सी लगती हैं पर गाल गप्पे खाती हुइ उनकी मम्मी अजनबी लगती हैं क्योकि उनकी आँखो मे मासूमियत और गरिमा से भरा प्यार नही है। उनके शरीर म मातृत्व का सौन्दय और दप भी नहीं है, उसम सिफ एक खुमार है और एक बहुत बेमानी और पिटी हुई ललकार है जिसे न तो नकारा जा सकता है और न स्वीकार किया जा सकता है—वह ललकार सब कानों म गूजती है और सब बहरो की तरह गुजर जाते हैं।

मातृत्व के व्यक्तित्व स अजनबी बनी माताएँ उनकी आरोपित खुमार की ललकार और इस ललकार से लोगो की निस्सगता का चित्र महानगर का चित्र है। चन्दर की बेकारी इस अजनबीपन की भयावहता को और भी तल्खी से उभारती है। इस बेकारी और अजनबीपन की ऊब म वह अपने कस्बे की सामाजिक पहचान को याद करता है और सबसे मधुर पहचान याद आती है इन्द्रा की—उसकी प्रेयसी की। किन्तु कितनी बडी विडबना है कि इस महानगर म आकर इन्द्रा की भी

चन्दर के प्रति गाढ़ी मधुर पहचान खो गयी है। वह भी यान्त्रिक हो गयी है और इन्द्रा का यह आघात चन्दर के अजनबीपन के बोध को और भी सघन बना देता है और उसे भ्रम होता है कि कहीं उसकी पत्नी निमला भी तो उसे नहीं भूल गयी और रात में वह पत्नी को जगाकर घबड़ाकर पूछता है— मुझे पहचानती हो ? मुझे पहचानती हो, निमला ?

महानगर में व्याप्त अजनबीपन को महानगर का निवासी कम अनुभव करता है नया नया गाँव या कस्बे से आने वाला आदमी अधिक। चन्दर कस्बे से आया हुआ है किन्तु उसे आये हुए तीन वर्ष हो गये हैं। प्रश्न होता है कि जो अनुभव उसे पहले वर्ष होना चाहिए था वह तीन साल बाद क्यों हो रहा है ? तीन वर्ष में तो उसका अजनबीपन कुछ कम हो जाना चाहिए था। मुझे लगता है कि खोयी हुई दिशाएँ एक महत्त्वपूर्ण कहानी होने पर भी बहुत जोड़-तोड़ की कहानी है महानगर की यान्त्रिक जिन्दगी को रूपायित करने के लिए यह कहानी खुद भी यान्त्रिक हो गयी है। लगता है कि संवेदना के स्थान पर अवधारणा प्रमुख हो गयी है। जैसे लेखक ने सोच लिया हो कि महानगर की यान्त्रिकता और अजनबीपन पर कहानी लिखनी है फिर उसने उसके फारमूले तैयार किये हों, उसके अलग अलग पाट से सोचे हों फिर उन्हें चन्दर के माध्यम से जोड़ दिया हो। यह कहानी पूरा एक पीस नहीं मालूम पड़ती। और कहानी अपने अन्त में अत्यन्त नाटकीय हो उठती है जो कहानी की विश्वसनीयता और सहजता को आहत करती है। इसलिए कहा जा सकता है कि इस संग्रह के साथ कमलेश्वर की महानगरीय जीवन पर आधारित नयी कथा-यात्रा प्रारम्भ होती है जिसमें बौद्धिकता और चिन्तन की शक्ति का उभार तो होता है किन्तु वे अपनी पिछली कहानियों की सघन संवेदनशीलता और सहजता खोते जाते हैं। दिल्ली में एक मौत कहानी भी महानगरीय अमानवीयता की कहानी है। सेठ जी की शव यात्रा में लोग सज धजकर और व्यावसायिक कार्यों की सजगता के साथ शामिल होते हैं मानो यह भी एक जलूस हो। पराया शहर एक महत्त्वपूर्ण कहानी है। कस्बे के आदमी के लिए शहर पराया शहर मालूम होता है और वह बार-बार अपने कस्बे को याद करता है जहाँ उसके पिता एक आत्मीय वातावरण में रहते हैं किन्तु कुछ दिनों बाद उसके पिता कहते हैं कि बेटे अब तो अपना शहर भी पराया होता जा रहा है। यह कहानी कस्बे या छोटे शहरों में टूटते हुए आत्मीय सम्बन्धों की ओर संकेत करती है। एक रुकी हुई जिन्दगी सामाजिक सन्दर्भों में प्रेम-कहानी है। एक थी विमला सॉप पीना गुलाब सामान्य प्रेम-कहानियाँ हैं जो वास्तव में कहानी बनायी गयी हैं।

जिन्दा मुर्दे (१९६६) तक आते-आते लगता है कमलेश्वर लड़खड़ा गये हैं। यह सच है कि आज पचम की नाव' 'स्मारक', अपने देश के लोग', मरे पूरे अधूरे

'जिन्दा मुर्दे' जसी कहानियाँ अपना एक स्तर रखती है और ये किसी-न किसी रूप म समकालीन सामाजिक विसगतियो का पर्दा फाश करती हैं और यह एहसास दिलाती हैं कि कमलेश्वर अपन परिवेश के प्रति निरन्तर सचेत हैं किन्तु कुल मिलाकर इन कहानियो म सवेदनात्मक गहराई का अभाव और सोच विचार की प्रमुखता लक्षित होती है। इन कहानियो म शिल्प के नये-नये प्रयोग कथ्य को एक चिन्तनात्मक प्रक्रिया से चिन्तनात्मक परिणति तक ले जाते है। 'ब्राचलाइन का सफर' तो अति सामान्य कहानी है और 'नया किसान' तथा 'नाच भी सामान्यता से ऊपर नही उठनी।

'मास का दरिया म लेखक फिर सामाजिक सम्बन्धो की टकराहट से उत्पन्न सवेदनात्मक गहराई और नयी समझ के समन्वयात्मक सौन्दर्य की आर मुडता है। तलाश' म यौन बुभुक्षा वाली विधवा जवान मा और जवान वटी के सवदनात्मक सम्बन्धा का वडा मार्मिक आकलन हुआ है। यह एक अछूती सवेदना थी जिसे लेखक ने पकडा है। ऊपर उठता हुआ मकान म प्रौढ दम्पति के पारस्परिक कलह और प्रेम का चित्रण है। इसके लिए समुचित परिवेश की कल्पना की गयी है। 'नीली झील अपेक्षाकृत एक शिथिल फले हुए परिवेश मे छब्बीस वर्षीय महेसा और चालीस-वर्षीय विधवा ब्राह्मणी पावती के प्रम सम्बन्धो का अकन है। यह प्रेम व्यापक मानवीय करुणा और मूल्य से सहज भाव से स्पदित हो उठा है। पावती की इच्छा की पूर्ति के लिए मन्दिर निर्माण के लिए एकत्र रुपये स महेसा दलन्ली नीली झील खरीद लता है ताकि वहाँ कोई चिडियो को न मार सके। बदनाम बस्ती अँग्रेजी राज्य के विकास के समानान्तर एक सुखी गाँव के उजडन की कहानी है। वहाँ सुरक्षा के नाम पर पुलिस आ जाती है और वह गाव के सम्बन्धा मूल्यो और सहज सवेदनो को नष्ट भ्रष्ट करके रख देती है। 'मास का दरिया' एक बहुत प्रख्यात कहानी है किन्तु अन्य कहानियों की तुलना मे वह सामान्य ही लगी।

और अपन नवीनतम कहानी-सग्रह बयान' (१९७२) म कमलेश्वर समकालीन समस्याओ, नवीन मानसिकताओ नयी चिन्तनाओ नवीन सक्रान्त सम्बन्धा को लेकर कुछ बहुत अच्छी कहानियाँ दे सके हैं। बयान' एक बहुत सशक्त कहानी है जो न्यायतन्त्र के खोखलेपन का उदघाटित करती है। व्यक्ति की मौत का कारण है क्रूर व्यवस्था और न्यायतन्त्र क्रूर व्यवस्था पर प्रहार करने के स्थान पर उस व्यक्ति की मौत का कारण खोजता है उस मतक व्यक्ति के पारिवारिक सम्बन्धो के बीच। पत्नी को कोर्ट के कटघरे म खडा किया गया है और न्यायाधीश और वकीलों के बेहूदे प्रश्नो का उत्तर देती हुई-सी वह पति की यातनापूण जिन्दगी और

उस पर क्रूर सरकारी दबाव की कहानी कहती है और इसी यातना तथा दबाव को पति की मौत का कारण बताती है। शिल्प म भी यह कहानी अलग सी है। अय पात्रा को सामन न लाकर उनकी कल्पना कर ली गयी है और एकमात्र (पत्नी) सबक प्रश्ना का उत्तर दती हुई समस्या क विविध आयामा को खोलती चलती है। 'नागमणि' म आजाद भारत म एक हिन्दी-सेवक की दुखात परिणति दिखायी गया है। जोखिम' म महानगर म बेकार बटा गरीब माँ के पास लौटता है। इसम माँ बेटे दोनो के दो परिवशा की यातनामयी जिन्दगी और उनके रागात्मक सम्बन्धा का अथ से तनाव की कथा है। फटसी के रूप म मुरारजी देसाई भी लाय गय है। बस बीच बीच म फटेसी ला दना कमलेश्वर का स्वभाव है किन्तु फटसी क स्वभाव वाली कहानियो म फैटसी खपती है। कमलेश्वर की कहानियाँ ठोस यथाथ क धरातल पर घटित होती चलती हैं और एकाएक कोई फटेसी आ जाती है। इसस लगता है कि जस कोई दवी चमत्कार हो गया हो और कहानी मजाक-सी लगन लगती है। 'अपना एकान्त म भी इसी फटसी की मुद्रा म साम के मुर्गे को हरकतें करत हुआ दिखाया गया है। बस कुल मिलाकर अपना एकान्त कहानी प्रभाव शाली कहानी है जो यह उद्घाटित करती है कि महानगरा म व्यक्ति अकेला है किन्तु अकेला होकर भी वह एकान्त और व्यक्तित्व नही पा पाता जिस पाना चाहता है। रातें कहानी ऊपर ऊपर से एक सामाय कहानी है किन्तु वह अपनी सामा यता के भीतर एक गहरी वास्तविकता छिपाय है। देश विदश म अनेक राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय घटनाए घटती है किन्तु उनक समानान्तर पसे और सत्ता वाला की विलास कथा चलती है और सारी साम ती शक्ति को पराभूत कर महाजनी आर्थिक शक्ति भोग विलास की सुन्दरतम वस्तु (वेश्या) का लगातार अपन पजे म कस हुए है। 'भूख और नग लोग म एक कलाकार की कलागत मानवीय सवदना और व्यक्तिगत अमानवीय क्रूरता का साहचर्य दिखाया गया है। दूसरी ओर भूख-नग लोगा की आर्थिक विवशता के बीच जीती हुई मानवता का उजागर किया गया है। भूख और नगे कश्मीरी मजदूर कमाला और सिपाही ही नही है चित्रकर्त्री महिला भी है— सक्स की भूखी और नगी। इसम ज्ञाता एक फालतू चरित्र है केन्द्रीय सम्वदना स उसका क्या रिश्ता है? कमलश्वर की कहानियाँ परिवेश का जीवन्त चित्र अकित तो करती हैं किन्तु कभी भी चौपाली गप्प की सीमा को छती हुई कुछ अनावश्यक प्रसगों और पात्रों की अवतारणा भी कर दती हैं। और यही कमजोरी बढ कर कभी-कभी पूरी कहानी की सष्टि करती हुई दिखायी देती है। 'अकाल कहानी इसी प्रकार की एक सामाय कहानी है। फन्दे पाल की नाव भी एक सामाय कहानी है। इसकी सवेदना समकालीन नहीं है और उस असमकालीन सवेदना को परिवेश म फसा दिया गया है। 'आसक्ति कहानी एक बकार भाई और नौकरी करती वहन के रागात्मक सम्बन्धो और अथ के कारण उनम आते

हुए तनावों की कथा कहने वाली एक अच्छी कहानी है। व्यक्तित्व की खोज दोनो करते हैं और इसी क्रम मे टकराते हैं। यह टकराहट उनमे आपस म तो है ही समाज से भी है। समाज इनके भाई बहन के रिश्ते पर सन्देह करता है। लेकिन लेखक ने स्वय जासूसी मुद्रा अपना कर आरम्भ म इनके सम्बन्धो को रहस्य-मय बनाया है। सुजाता (बहन) और विनोद (भाई) म एक जगह जो बातचीत होती है वह प्रेमी प्रेमिका की बातचीत का रस पदा करती है। हम फिल्म के हीरो हीरोइन लग रह हैं' मुझे प्यार करो न', हट गदे' आदि वाक्य क्या लाय गये हैं ? ये पात्र एक हल्की फुल्की नाटकीयता ही पदा करत हैं।

इस प्रकार परिवेश के बीच जीती हुई शक्ति और सीमाएँ झेलती हुई, सहजता और कुछ असहजता के द्वन्द्व से गुजरती हुई सवेदना की केन्द्रीयता म शिल्प की सहज और कभी-कभी बनावटी नवीनता धारण करती हुई मनुष्य के गहरे द्वन्द्व म धँसती और कभी कभी सपाट प्रसगों म पसर जाती हुई कमलेश्वर की कहानियाँ अधिक वैविध्यपूण, पठनीय और विशिष्ट हैं।

विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक'

भीड, कोलाहल और ढेर के बीच एक अकेला लेखक कमलेश्वर

रात के सूने सन्नाटे म मैं अपने बन्द कमरे म एकाकी बिस्तर पर पडा हुआ हूँ। अपने एकान्त को भोगने की व्यथ कोशिश कर रहा हू। चाहता हूँ मस्तिष्क और हृदय एकदम शून्य हो जायें। नही हो पाते। भीड, कोलाहल शोर—चारो ओर स उमड आते है और मैं उन म घिर जाता हूँ। नरेश सुरेश दिनेश कमला बिमला सरला—न जाने कितने युवको और अनगिन युवतियो की भीड। उनके प्रेमालाप, आलिंगन चुम्बन हँसी मजाक सिसकियाँ रुदन उखाड पछाड रति सुख सिस्कारो का कोलाहल। ढेर के-ढेर—स्तन नितब, नग्न वक्षस्थल, खुले गोरे भुजमूल पलकें, बरौनियाँ आँखें नासिका की झुकी नोक, तडपती हुई जघाएँ फिसलते हुए हाथ। मेरा बिस्तर, मेरा कमरा मेरा दिल मेरा दिमाग इन सबसे भर जाता है। भीड मेरे एकान्त से बलात्कार करती है। कोलाहल मेरे शून्य को आत्महत्या के लिए विवश करता है। मैं कभी ढेरो के नीचे दब जाता हू कभी ढेर पर चढ जाता हूँ और कभी उनके बीच खो जाता हू। ढेर की एक-एक चीज पर हाथ फेर कर भी खेलता हूँ। हाथ फेर कर देखता हू तो एक गिलगिया स्पश जुगुप्सा जगा देता है। दिल और दिमाग घृणा से भर उठते हैं। बुद्धि सारी सुखानुभूति स झगडा करने लगती है। भीड, कोलाहल और ढेर ने मुझे हत-बुद्धि कर दिया था। अब बुद्धि मुझे आहत कर रही है। मैं मर्माहत हो बुडबुडाने लगता हूँ।

इन कहानियो की भी एक कहानी है। सब कहानियो के बीच एक ही कहानी है। इन कहानियो की भीड इनका कोलाहल इनमे अकित ढेर!!! इनका कही अन्त नही। कई बरस स मैं, मेरा पाठक यही सब देखता, सुनता पढता आया है। कहानी-लेखक का यह सब लिखने म, यह सब अकित करने म ऐसा सब-कुछ

जुटाने मे सुविधा है। कोई पत्रिका यह सब छापने से इन्कार नही करती, कोई कानून इनका विरोध नही करता, न तो पुलिस वाला पकडता है न मजिस्ट्रेट जेल भेजता है, ऐसा लिखने वाले को समाज से बहिष्कृत भी नही किया जाता उसका हुक्का-पानी बन्द नही किया जाता। कामुकता, वासना का खुला जय जयकार। विलास वासना के राज मार्ग पर बेरोक टोक सैर चालू है। अपने बन्द कमरे मे, रात के एकान्त मे, अपने बिस्तर पर इस राज मार्ग पर सैर करते मैं थक जाता हूँ। ऊब जाता हूँ। भीड कोलाहल और ढेर भाँय भाँय करते हैं। नीद नही आती है। बत्ती जला लेता हूँ। प्रकाश हो जाता है। अँधेरे म बढ रही भीड, कोलाहल और ढेर पर्दे की तस्वीरो की तरह पुछ जाते हैं। मैं सोचने लगता हूँ यह सब क्या था? मेरे मन का विद्रोही या कुछ और?, मैं एक 'लडाई मे अटक जाता हूँ। बडी सजीव जोखिम है। मैं क्या बयान करूँ? मेरे सामने 'लाश' पडी है। अपना एकान्त है। और फिर मैं देखता हूँ— उस रात वह मुझे बीच कडी पर मिली थी और ताज्जब की बात कि दूसरी सुबह सूरज पश्चिम म निकला था।' हा सूरज सचमुच पश्चिम मे ही निकला था। वह परम्परा से हट कर जा लिख रहा है। कमलश्वर की कहानी-कला का सूरज पश्चिम से ही निकल रहा है। उसने दिशा बदल दी है। भीड, कोलाहल और ढर से हट कर मैंने उसकी कहानियाँ पढी हैं—पढ डाली हैं।

एक ही सास मे मैं कमलेश्वर की सात कहानियाँ पढ जाता हूँ। सात ही क्यो? दो चार या छ मे इन्द्रधनुषी रगो का अभिनय जो एक साथ नहीं निखरता। कमलेश्वर की सभी कहानियाँ कथ्य और शिल्प की दृष्टि से सदा अलग-अलग हैं। इस अलहदगी मे ही उसकी कहानी-कला का इन्द्रधनुष तनता है। हिन्दी मे कहानी की विधा अन्य सब विधाओ से कही अधिक समृद्ध है। मैं इसे कहानी का वर्षा-काल कहूँ तो? देखता हू—सभी कहानीकार परम्परानुभूति में समानता से टर्राते हैं। एक स्वर शुरू करता है बहुत से उसी का अनुसरण करने लगते हैं। पर कमलेश्वर का स्वर सबसे अलग है, और हर बार अपने स्वर स भी अलग है।

मैंने कहानी पढी है— या कुछ और?' हाँ, यह कहानी नहीं है कुछ और ही है। कहानी म कथा का आवरण होता है, यहाँ बात का आवरण है। लेखक मन की बात, रामनाथ के मन की बात कहना चाहता है। बात के आवरण होते है बात के भी होते हैं। बात के आवरण मन म होते हैं बात के बाहर हमारे आस पास। मन का आवरण जब वातावरण पर छा जाता है तो घर म रुकना मुमकिन नही होता। घर अथात् भीतर। भीतर जो कुछ है जो घुमडता है वह बाहर आ जाना चाहता है। लेखनी मन के आवरण को बाहर के आवरण म बिखेर देनी है—रामनाथ अनुभव करता है—मैं भी ऐसा ही अनुभव करता

हूँ—कमलेश्वर ने कभी ऐसा ही लगता देखा है—जब मन का आवरण वातावरण पर बोझिल पडता था तो—'अँधेरा बहुत धीरे धीरे उतरता था   इतने धीरे धीरे कि आँखो म भरने लगता था   कोने, अतरो और अलगनी पर टँगे कपडा की सलवटो मे समाने लगता था। चारों तरफ गँदला गँदला पानी सा भर जाता था   तब घर म रुकना मुमकिन नही होता था। बिस्तर पर पडे पडे मैं भी रामनाथ के साथ घर पर नही रुका। मन का आवरण मुझे भी चैन नही लेने देता है। रामनाथ है। मैं हूँ। और 'अब मन मे कुछ ऐसा समा गया है जिसे चाहो तो डर कह ला या डर से अलग एक उदासी भी नही   बुझी-बुझी सी काई चीज।' मैं सोच रहा हूँ, साच क्या रहा हूँ, दढ निश्चय कर रहा हूँ कि यह सब जो इस कहानी मे कहा गया है, वह क्या है ? मन का वातावरण ही तो है। मन के वाता वरण का ऐसा अकन और कहाँ देखा है मैंने ? मेरे मन की क्या हालत बन गयी है ? जो रामनाथ की हालत है, वही मेरी भी है। एकदम विवश—'जसे नदी पर वश नही है वैसे ही किसी और पर भी नहो है। सोचता रह जाता हूँ यह मन की भाँय भाँय है या कुछ और है ? मैं अपने-आप को महसूस कर रहा हूँ। निज का भोग रहा हूँ। भोग क्या रहा हूँ, अपने-आप से लड रहा हूँ। अब 'लडाई' शुरू होती है। यह भ्रष्टाचार की, भ्रष्ट आचरण की लडाई है। यह किसने शुरू की है ? इसके लिए कौन जिम्मेदार है ? जिम्मेदार सभी हैं, पर कोई भी स्वय को जिम्मेदार मानने के लिए तैयार नही है। यह अच्छा ही है। 'पता नही क्यो जब कोई व्यक्ति अपने को जिम्मेदार मानने लगता है तब मुझे घबराहट होती है।' जिम्मेदारी से बचकर मैं घबराहट से बच रहा हू। बच कहाँ रहा हू ? मैंने ही तो इस लडाई का सूत्रपात किया है। मैं ही अपराधी हूँ। मैं ही अपराधी का मार रहा हूँ। मैंने अनेक रूप इधर उधर छोड दिये हैं ताकि मुझे कोई पहचान न सके। अपराधियों की एक बडी सेना मैंने खडी कर दी है। एक जसी शक्ल-सूरत के लोगा को देख रहा हूँ। तबीयत बहुत घबरा रही है। बडी अडचन होती है कि किसे भाई कहूँ किसे न कहूँ। लडाई की वजह से मैं बहुत उलझन म पड गया हूँ।' यह लडाई हम सब लड रहे हैं, लडी जाती देख रहे हैं। यह लडाई एक प्रतीकात्मक बोध कथा है। मेरे सामने जातक कथाएँ अकित होने लगती हैं। ईसप रूमी और खलील जिब्रान की आकृतियाँ उभरने लगती हैं। वे आकृतियाँ कह रही हैं—इस 'लडाई' की जिम्मेदारी से तुम अपने को बचा सको—यह एक 'जाखिम है। जोखिम भी एक प्रतीक है। अब मैं आप से क्या कहूँ ? मैं हू और मेरी माँ है। नही मैं अपनी निजी कहानी नहीं कहूगा। चलिए व्यष्टि को समष्टि मे घोल देता हूँ। भारतवासी है और भारत माता है। दोनो की स्थिति मेरे जसी ही है—'अब न मैं माँ से दुख कहता हूँ न माँ मुझे अपने दुख बताती है। हम दोनो एक-दूसरे के दुख-यातनाओं से कतराते हैं। वह अपने शहर म सबको यही

बताती है कि मैं बडे आराम से हूँ और मुझे अगर बतान की जरूरत पड ही गयी, तो कहता हूँ—मा है वह बडे आराम से गुजर कर लेती है। धीरे धीरे हम इस दारुण समझौते पर पहुँच गय ह।' हमार घर की देश विदेश नीति की विवशता का आप नहीं जान पायेंगे। मैं देख रहा हूँ कि आप मुह बाये देख रहे हैं। वह लीजिए वित्तमन्त्री (भूतपूव अर्थात पूव मन्त्री थे, अब उनका भूत मात्र है।) मोरारजी देसाइ आ गय हैं। 'उनके' आ जाने से मुझे थाडी राहत मिल गयी थी। पर आशकाएँ और व्यग्रता और बढ गयी थी। बताइये मैं क्या कर सकता हूँ? कमलेश्वर भी क्या कर सकता है? सच्चाई यही है कि प्रत्येक नेता के पद भार सम्भालने पर थाडी राहत का आभास हम होना है किन्तु आशकाएँ और व्यग्रताएँ दूनी बढ जाती है। नेताआ के पास हमारी समस्याओं का काई समाधान नहीं। हमारी उलझनो का वे शिकायत समझते है। प्रत्येक नेता सही बात को गलत समझता है। शिकायतें कहाँ हैं? अगर कुछ है तो अधेरा नाराजी, ठहराव और आशका। इन वाना का हटाना एक बडी 'जाखिम है। यह जोखिम कौन ले? जाखिम कोई लेगा नही और मा का दहात होना जायेगा। मरी हुई माँ चौराहे पर खडी रहेगी। यह एक कठोर सत्य है। मैं इस कठोर सत्य को नगा होते हुए देख रहा हूँ। आप भी दख रह हैं। नगापन देखन के हम अभ्यस्त जो हो गये हैं। नगापन दूर करने की जाखिम कौन उठाये?

एक जोखिम स बच नही पाया हूँ कि दूसरी तयार है। सामने लाश' पडी है। राकेश वत्स न लिखा था कि कमलश्वर की लाश अभी तक नही मिल पायी है। अरे भाई कमलश्वर की ही क्यो मरी अपनी इनकी उनकी सबकी लाश की बात कहिए। लाश ता मिल गयी। पर उसे पहचानता कौन है? सभी तो उसे देखकर भाग रहे हैं। सभी उसे अपनी बताने स कतरा रहे हैं। कातिनाल कहता है कि यह उसकी लाश नही है। मुख्यमन्त्री कहता है कि उसकी भी नहीं है। फिर आप कमनेश्वर की कस कह रहे हैं? भाई यह तो हमारी राजनीति की लाश है। हम ही इसे लाश बना रह हैं और हम ही पहचान नही पा रहे। जब पहचान ही खो गयी ता क्या बचा? व्यग्य तनिक कुछ साफ और तीखा हो गया। कहानी फिसल गयी है चाट कर चली है। चाट के कथन का प्रकार यदि कहानी कहला सके ता लाश भी उठ सकेगी, अन्यथा लाश तो लाश ही है। हाँ प्रकरण और प्रकार की मौलिकता मैं मान रहा हूँ। कहानी क क्षेत्र म यह एक हादसा' है। इस हादस' का मैं क्या बयान करू? मैं तो उस लडकी का बयान पढ रहा हूँ जो एक लडके की हत्या के लिए जिम्मदार ठहराई जा रही है। आप पूछेंगे लडका और लडकी म क्या सम्बन्ध थ? लडकी क स्वर म मैं निणय दूगा—एक आदमी औरत के बीच म जा कुछ हाना है वह हाता है। उसके सम्बन्धो की बुनियाद सिफ उन्हीं म नही हानी। क्या कहा? आपका मरे निणय पर आपत्ति है। शब्द निणय और

निणय की प्रक्रिया दोना पर। पर शब्दो से आप सत्य तक नही पहुँचेंगे। सत्य हमेशा कई तरह की बातो पर निभर करता है। आदमी के इतिहास, परिस्थितियो माहौल किसी खास घटना क्षण के यथाय और सबस ज्यादा उसकी अपनी आन्तरिक यातनाओं की टीस पर पति क दुख या उसके सुखो का कारण सिफ पत्नी नही होती। यह धारणा बिलकुल गलत है दोना एक दूसरे का बेतरह चाहते हुए भी एक-दूसरे से मुक्त भी होते हैं जुडे हुए भा अलग होत है। पानी की लहरो की तरह। तो आप सहमत हो गय जान पडते हैं इस निर्णय स। निणय ता कानून करता है। और कानून के बारे म आप प्रश्न कर रह ह— क्या कानून का काय सिफ सबूत इकट्ठ करके किसी का जलील कर देना है? जलील करन की इसम क्या बात है? जलील कौन नही है? प्रश्न जलील होने का नही जलालत सिद्ध करन का है। अब आप उस लडकी का बयान ही लीजिए— उन्ही दिना एक घटना हो गयी थी। थार के रेगिस्तान को रोकन के सम्बन्ध म किसी मन्त्री जी न कोई बयान दिया था। मैं अनुभव करता हूँ कि मैं गलती कर रहा हू। सारी घटना को उद्धत नही करूँगा। आप अपन आप ही पढ लीजिए। इसम पढन की भी क्या बात है? रोज ही तो ऐसी घटनाएँ घट रही है। गलती मन्त्री जी करते हैं मारा जाता है कोई गरीब कमचारी। यह जलालत नहो ता और क्या है? इसी पर से परदा हटते देख रहा हूँ मैं— बयान म। कहानी ता कानून पर से भी परदा हटा रही है। निणय देने वाल शब्दो के अथ ही नही समझत और फसला सुना देते हैं। सारा फसला भ्रम पर आधारित होता है। कमलेश्वर एक प्रश्न पूछना है। नही नही वह लडकी पूछ रही है— जिंदगी और मौत का निपटारा इन मामूली कारणो स कीजिएगा?' वास्तव म 'नतीजा और उनके कारणो तक पहुँचने का यही सबसे आसान तरीका हो सकता है' कि सारी जिम्मेदारी कुछ चीजा पर थोप दी जाये। अस्तु बयान म जा भी नतीजे निकाले गये है या जिन कि ही भी सच्चाईयों की ओर सकेत किया गया है उन्ह कौन झुठलायेगा? मेरे सामन प्रश्न कथ्य के झुटलान या सचलान का नहा है। मैं तो यह सोच रहा हूँ कि कमलश्वर बयान को मोनोलाग से किस तरह अलग मानगा? कहानी की अपेक्षा यह एक अच्छा मानोलाग मरे हाथ लगा। कहानी सुनकर रडियो का श्रोता विरसता अनुभव कर सकता है ऊब सकना है किन्तु मोनोलाग (शायद बयान का अँग्रेजी म मोनोलाग ही कहते हो) को ध्यान स सुनता चलेगा। यह एक अच्छी विधा है। कहानी भी इसमे कही जा सकती है। कमलेश्वर भिन्न भिन्न विधाओ म कहानी कहेगा। रडियो पर तो कविता विच कहानी भी सुनी जाती है। मैं साच रहा हूँ, अब कमलश्वर 'कविता विच-कहानी कहगा। बात कहने के लिए उसम जो साहस है, विधा का अपनान का भी वही साहस उसम है। और कहानियो म मैं व्यथ लफ्फाजी या वातावरण का छोड गया हू पर बयान ता मैंन आदि से अन्त तक,

एक-एक शब्द पढा है। एक भी शब्द व्यथ नही। सम्पादन इसका नही हो सकता। यही इसकी श्रेष्ठता है। पूणता है।

जो कुछ इस कहानी म बयान किया गया है और जिस तरह बयान किया गया है, उसे पढकर मैं स्तब्ध रह गया हूँ। लाश', लडाई और 'जोखिम मे लेखक जितना अनावश्यक रूप से स्पष्ट मुखर और आक्रामक था वह 'बयान देते समय नही रहा। उसकी पकड यहा ढीली नहीं है। बयान मे सच्चाई के सौदय का जो निखार होना चाहिए वह बयान म है।

मैं चौक कर देखता हू अब वक्त कुछ और गुजर गया था। खिडकियो की चौकोर रोशनी चौकोर रोशनी फिर अँधेरा अँधेरा, अँधेरा फिर एक चौकोर रोशनी, बीचो-बीच आसमान म सनसनाती हवा और सुरो की तरह आरोह अवरोह सी थिरकती वारिश!' मेरा चश्मा गिर पडता है। मैं अनुभव करता हूँ कि मैं इस चश्मे से यह कहानी नही पढ पाऊँगा। देखते देखते ही यह चश्मा बहुत पुराना पड गया है। मैं कई बार कहानी के शीषक को पढता हूँ। यह शीषक है या शीर्षासन! सिर नीचे और पर ऊपर। पटठ न शीषक मे ही पूरी कहानी भर दी। नही! यह शीषक नही हो सकता, यह तो सम्पादकीय टिप्पणी है। पर टिप्पणी तो अलग अगले पष्ठ पर है। मैं उसे भी पढता हूँ—'अपन से पूव की कथा-परम्पराओ को तोडन के साथ साथ अपनी कहानियो द्वारा बनायी जमीन का भी निरन्तर तोडते और अस्वीकृत करते चलना कमलेश्वर की सबसे बडी विशेषता रही है। प्रस्तुत कहानी इस बात को बडी शिद्दत से महसूस कराती है और यह भी कि यहाँ से फिर उनका कथा-लखन एक मोड ले रहा है। ऐसा मोड, जहाँ कहानी अपनी सीमाए लाँघकर नय आयामो की खोज म सलग्न दिखायी दती है। टिप्पणी को पढकर मैं बहुत घबरा जाता हूँ। आयाम' शब्द ने मुझे बहुत आतकित किया। व्यायाम, प्राणायाम आदि से मैं यू ही घबराता हूँ। मैं नही समझता कि कहानी की अपनी कोई सीमाएँ हैं जिन्ह लाँघने का व्यायाम वह करेगी और द्रविड प्राणायाम के आयामों को खोजगी। जो कहानीकार कहानी की कुछ सीमाएँ मानकर चलते हैं वे कुछ नहीं लिख पात और उन्हें कोई नही पढता। उनकी चर्चा भी नहीं होती। सच्ची कहानी वही है जो किसी सीमा म नही बँधती और न ही किसी सीमा को लाँघने का दावा करती है। टिप्पणी म कमलेश्वर की सबसे बडी विशेषता भी बडी शिद्दत से महसूस की गयी है कि वह अपनी कहानियो द्वारा बनायी जमीन को भी निरन्तर तोडता और अस्वीकृत करता चलता है। मैं शकित हो उठा हूँ कि यदि यही हाल रहा तो कमलेश्वर एक दिन यह भी घोषणा कर देगा कि उसके नाम से जो कहानियाँ छपी हैं वे उसकी नही हैं। बहरहाल, ऐसी बादी, मुलम्मसाजी बैसाखियो के सहारे कोई भी लेखक खडा नही हो सकता, आगे बढने की तो बात ही अलग है। टिप्पणी की टीप-टाप से अलग हटकर मैं कहानी को पढ़ जाता हूँ।

मैं शली अपनाने म एक कमी रहती है अपनी वात के इर्द गिर्द घूमना होता है दूसरा पिछड़ जाता है। अन्य की बात कही नही जाती। इस कहानी म मैं' की वात नही है। अन्य की है। 'मैं ने समझदारी बरती है। मैं' और दूर चला आया ताकि वे अकेला महसूस कर सके। पर वे वसे ही बैठे रह। खूब भीगते हुए एक दूसरे के पास पास और अलग अलग। स्त्री पुरुष के सम्बन्धो को लखक ने पुन उठाया है नय ही ढग से। सम्बन्धो के बीच दुखो की स्थिति क्या है? इस निराले प्रश्न का उत्तर भी निराले ढग से ही दिया गया है—

आखिर मैंने उनके पास जाकर पूछा—सुनो तुम्हारे दुख कहाँ हैं?

क्यो? हमारे पास है!' औरत बोली थी।

और जब हम अपने दुखो को अपने पास ही रखते हैं तो बच पर बठे जोडे की तरह वर्षा म आनन्द स भीगते रहते हैं। अपने व्यक्तित्व का इतना सशक्त और मूर्तिमान आरोपण या प्रतिष्ठापन करते हैं कि एक असपक्त व्यक्ति भी सपक्त हो उठे। हम एक स्थिति म दिखायी दें हम अनक स्थितियो म दिखायी दें। लौटते हुए मैंने फिर उधर देखा—*वह जा रही थी। वह आदमी भी सत्य था। वे बच पर* भी बठे थ। पटरी पर भी वे जा रह थे। मोड पर भी व नजर आ रहे थ। रुके और जाते हुए। जाते और रुके हुए कि व हैं और जा रह हैं।' व्यक्तित्वो की ऐसी अनुगूज से भक्ति स मेरा पाठक अभिभूत हो उठता है। भाषा म शब्दो की पुनरावत्ति उस अनुगूज को और भी उभारती है। छोटे से पटल पर एक विराट चित्र। निकट से दूर तक नीच स ऊपर तक दष्टि दौड जाती है। मैं अपने बन्द कमरे म विस्तर पर ही समुद्र की लहरो म भन उठता हू बारिश म नहा लता हूँ। मैं कहानी पढ जाता हू। मैं अनुभव करता हू— उस वक्त आधी रात थी। मलाबार हिल के पश्चिमी मकान अरबसागर म जहाज की तरह खडे थ। लगर डाले हुए निश्चित। छोटे ऊँच और ऊचे जहाज! उनस छनकर आती हुई रोशनी की सुनहरी दूधिया धूल। खिडकियाँ खिडकियाँ खिडकिया। रोशनी के चौकोर टुकडे चौकोर टुकडे। सुनहरी दूधिया धूल *सुनहरी दूधिया धूल दूधिया धूल। तेज हवा म ऊपर* उडती हुई बारिश। इमारतो की ऊपरी मजिलो से झीने भीगे दुपट्टे की तरह लिपटती उतरती हुई। और उस भीगे दुपटटे से रत कणो सी झरती हुई फुहार। नीचे सिफ हवा का वेग। जस बगल कभी कभी सीन मे उठत है, पर वे गरम होते है जो कहीं चन नही लन देत।' मैं खुद अपने आपको बेचन महसूस कर उठता हूँ। जो किसी और की स्थिति है मैं उसे अपनी स्थिति मानकर भोगू उसम भीगू यही कहानीकार की बडी सफलता है।

जब मैं इन सब कहानियो को उठाकर एक तरफ रख देता हू और अपना एकात भोगने की चेष्टा करता हूँ। मेरे एकात को भग करती है--हसा उसका पति और हसा का मित्र साम। कई प्रश्न उभरते है—पति पत्नी क सम्बन्ध क्या

है ? क्या उनके बीच तीसरे व्यक्ति की स्थिति उपस्थिति वाछनीय है ? क्या पत्नी मित्र से प्रेम करते हुए भी पति के प्रति वफादार रह सकती है ? पत्नी की वेणी और मंगल-सूत्र का क्या महत्त्व है ? वे मित्र की सम्पत्ति है या पति की ? किसे समर्पित करके उनकी पवित्रता है ? इन प्रश्नो के बीच साम की लाश चलती-फिरती इलाज कराती बात करती बयान लिखाती अपने फूल आप बहाती दिखाई देती है। मैं इतना गहरे उतर जाता हूँ कि मैं स्वय अपनी लाश को टटोलने लगता हूँ। मैं भी तो एक प्रेमी हूँ एक पति हूँ। मेरी लाश उठकर भाग जाती है। मैं उसका परिणाम जानने के लिए भटकने लगता हूँ। अब मैं आप से क्या कहूँ ? 'उस रात मैं बडी देर तक भटकता रहा। कही जी नही लग रहा था। यह भी नही मालूम कि किन किन रास्तो से गुजरा। मुझे होश तब आया, जब शव दाह घर के फाटक पर मैंने अपने को खडा पाया। अब मैं अपने आपको टटोल कर देखता हूँ। मैं मैं नही हूँ। कमलेश्वर की कहानियो का पात्र हूँ। मैं एक हूँ। मैं अनेक हूँ। मेरे अनेक चेहरे हैं मेरी अनेक शक्ल-सूरतें है अनेक स्थितिया-परिस्थितिया हैं। इन सबसे अलग हटकर देखता हू तो कमलेश्वर की भाषा अपनी ओर आकर्पित करती है। बिम्बो और प्रतीको का आयोजन करके भी वह दुरुह नही है। कई शलियां अपनाकर भी वह अकहानी नही कहानी लिख रहा है। उसकी कहानियो में स्त्री-पुरुष के सम्बन्धो की चर्चा है पर नग्नता विलास वासना उत्तजना कही नही है। उत्ताप है। खडित राजनीति के बीच निखरता, अकुलाता मुर्दा बनता जा रहा देश उसके सामने है लेकिन उपदेश, व्याख्यान उद्देश्य की बद्धता कही नही। वह कहानी कहता नही लिखता है। वह लक्ष्य बनाकर नही चलता, किन्तु उसका चलना लक्ष्यहीन नही है। भीड, कोलाहल और ढेर के बीच मैं उसे अकेला देख रहा हूँ। एक दम अलग।

(मच से साभार)

राजनारायण

एक पैदाइशी किस्सागो का सहज बयान

कमलेश्वर एक पैदाइशी किस्सागो हैं—एक 'सही कलाकार'। वे नयी कहानी में एक प्रमुख हस्ताक्षर ही नहीं आज की कहानी के एक प्रमुख प्रवक्ता तथा शिल्पी भी हैं। एक सच्चे शिल्पी की तरह निरंतर प्रयोग करना उसे तोड़ना बदलना या संशोधित करना और अपने लेखन के बासी पड़े अंश को छाँटना नकारना उनके कथाकार को भला लगता है और शायद इसीलिए वे आज भी अपने समकालीनों में नये हैं—एकदम ताजा! 'राजा निरबंसिया' से 'कस्बे का आदमी' 'नीली झील' से 'खोयी हुई दिशाएँ' और 'मांस का दरिया' से 'बयान' तक की उनकी कहानियाँ निरंतर नयी जमीन को तोड़ती हैं जीवन के विविध आयामों का स्पर्श करती हैं तथा आधुनिकतम सचेतनता का प्रतिनिधित्व करती हुई हर स्थिति में तात्कालिकता से जुड़ी हुई हैं। इसीलिए यह आकस्मिक नहीं है कि पिछले दो दशक में अनेक वाले प्रतिवादी नारो-वक्तव्यों के बावजूद कमलेश्वर की ही सर्वाधिक कहानियाँ हैं जिन्हें कहानी विधा की उपलब्धि के रूप में स्वीकारा जा सकता है या रेखांकित किया जा सकता है।

वस्तुत कमलेश्वर के लिए कहानी लिखना उन्हीं के शब्दों में 'व्यवसाय नहीं—विश्वास है यातना नहीं है यातनापूर्ण है के कारण जो उन्हें (मुझे) कहानी लिखने के लिए मजबूर करते हैं।' इसीलिए कमलेश्वर की कहानियाँ सप्रयास रची गयी कहानियाँ नहीं हैं बल्कि बकौल दुष्यंत कुमार 'उसकी हर कहानी उसके जीवनानुभवों में से निकली है उसने पढ़-पढ़कर सन्त्रास को नहीं झेला है बल्कि स्वयं जिया है। (सारिका दिसंबर ६४) इसीलिए 'राजा निरबंसिया' से लेकर 'मानसरोवर के हंस' तक की उनकी कथा-यात्रा लेखन में उनकी रचनात्मक सक्रियता का सबूत तो है ही जीवन के यथार्थ-बोध का जो दर्द या यातना के रूप में उनकी हर साँस में रचा-बसा है उजागर करने के लिए भी प्रतिबद्ध है।

'बयान' में कथाकार कमलेश्वर अपनी कहानियो के बारे म मितभाषी हैं। उनका कहना है कि अपनी कहानिया के बार म मुझे कुछ नही कहना है, सिवा इसके कि यही मेरा बयान है।' सवाल है—ऐसा क्या? एक लबे अर्से तक कमलेश्वर कहानी विधा को दिशा दृष्टि देते आये हैं और नयी कहानी की भूमिका' लिखकर एक तरह से उन्होंने हिन्दी साहित्येतिहास म कहानी विधा को सजीदगी से जोडने का प्रयास किया है तथा कहानी की धुध को साफ करने की कोशिश भी की है। गोष्ठियो-सभाओ तथा बैठको मे भी तर्ज-तल्ख बहस मुबाहसा के बीच उन्होंने अपने अनेक बयान देकर कहानिया की विशेषताओ उपलब्धिया को तो रेखांकित किया ही है कहानी की भावी रूपरेखा या दिशा-दृष्टि को भी स्पष्ट किया है। लेकिन 'बयान' का मौन दो ही अर्थों म हो सकता है—या तो लेखक यह मानता है कि कृतियाँ स्वय बोलती हैं और उसकी ओर से रचनाकार का बोलना रचना की खाट है या उसकी परवी के सिवा कुछ नही है या फिर लेखक म अब वह साहसहीनता आ गयी है जिसकी ओर मुक्तिबोध ने इशारा किया है—'इस साहसहीनता का मूल कारण वह चरित्रहीनता है जिसे हम अवसरवाद कहते हैं। यह अवसरवाद अत्यत सूक्ष्म और तीव्र रूप धारण कर अत करण म पदा हुआ है। वो हम सच और साफ नही कहने देता। इस साहसहीनता की बात पर आलोचक सजीदगी से तब और अधिक सोच सकता है जब वह देखता है कि अपने वक्तव्या म चिरतन काम की दुहाई देने वाला तथा सामान्य जन का आज की कहानी मे ईमानदारी से रेखाकित रूपायित करने के लिए अपने सहयात्री लेखको' से बार-बार आग्रह करने वाला कहानीकार अपनी कहानिया म वह तेवर नही अपना पाता जो विद्रोह के लिए एक अनिवार्य शर्त है। अपनी एक कहानी म तो वह 'जूडे से गिरे केतकी के फूल (नगे और भूखे लोग) को देखता भर रह जाता है और फिर आसक्ति और लहर लौट गयी मे उसी बासी प्रेम-परिवेश या रुमान का जायका लेता नजर आता है। लेकिन इन कहानिया के माध्यम से कमलेश्वर के 'बयान' को देखना कमलेश्वर के प्रति अन्याय होगा। वस्तुत 'बयान' की कहानिया के सदर्भ में पहली सभावना ही ज्यादा प्रबल है।

निश्चय ही बयान' की लाश' जोखिम, बयान 'लडाई रातें ऐसी सशक्त कहानियाँ हैं जो बडी बरहमी से इस व्यवस्था के राजनीतिक-आर्थिक प्रपच और भ्रष्टता का बेनकाब करती हैं और आम आदमी की मजबूरी घुटन, यातना और टूटन को उजागर करती हैं। प्रतीका के माध्यम से कही गयी बात म भी वह तपिश है जो इस पूजीवाद की पोल या व्यवस्था के ढोंग को साफ कर देने म समर्थ है। यह अलग बात है कि सांकेतिकता की भाषा या टोन' ही इन कहानिया मे है। सच तो यह है कि 'बयान म एक व्यक्ति की मजबूरी इस 'भ्रष्टतत्र मे इससे अधिक और हो भी क्या सकती है? आदमी जहाँ सच बोलने की सजा पाने

को विवश है या कि झूठ बोलकर ही अपना अस्तित्व कायम रख सकता है वहाँ यदि उसकी आँखों स लहू का कतरा गिरने लगता है या वह अपनी पत्नी की अध नगी तस्वीर अपने हाथो खीचकर बाज़ार म बेचन का मजबूर है या अत म आत्म हत्या कर लता है ता यही आज के शानदार प्रजातत्र (भ्रष्टतत्र) म एक मध्य वर्गीय ~यक्ति की नियति है।

वस्तुत बयान कमलेश्वर की ऐसी कहानी है जो अपन शिल्प कथ्य सवेदना और परिवेश की जागरूकता क कारण वर्षों तक याद रखने योग्य है। कहानी में फोटोग्राफर के व्यक्तित्व तथा यातना या आत्महत्या के माध्यम से जहाँ स्वतत्र भारत के शानदार चित्र (जो बिलकुल झूठे और गलत थे) और एक आम व्यक्ति *की यातनामय हार या टूटन को स्पष्टत उजागर किया गया है वहा कथा नायिका* क बयान की माफत इस व्यवस्था म जी रह व्यक्ति की निपट अकेला' पड जान की स्थिति को बिलकुल साफ कर दिया गया है। कहानी का अतिम वाक्य किसी भी पाठक को सहसा सन्नाट म छोड देता है और इस यवस्था मे जी रहे लागा की नियति पर बार बार सोचने को मजबूर भी कर देता है।

इसी तरह लाश' अपनी साकेतिकता के बावजूद इस देश क तमाम राज नीतिक प्रपच को बनकाब कर देने म समथ है। सत्ता प्रतिष्ठाना म जीने वाले मत्रियो नेताआ तथा प्रचड विरोध का तेवर अपनाकर शानदार जुलूसो का आयो जन कर व्यवस्था के विरुद्ध धुआधार चीखनेवाल विरोधी नेताआ म क्या आज कोई प्रत्यक्ष मौलिक अतर रह गया है ? प्रचड विद्राह का तवर भी आज सत्ता म आते या स्थापित होते ही मद शीतल पड जाता है, इस अब कौन नही जानता ? जनता छोटे बडे सभी नताओ के द्वारा इस्तमाल हो रही है इस आज सही लेखक जानता है और स्वय जनना भी जानने लगी है। आज सही लेखक क लिए राज नीतिक मार्चा का प्रपच अपनी समस्त बेहयाई के साथ उजागर हा गया है और वह उसकी लाश' को भी पहचान गया है। इस लाश को चाहे जिस रूप म नकारा जाय लेकिन लाश लाश है और वह किसकी है यह भी अब छिपा नही है। लाश म पुलिस का कहना है कि लाश विराधी पक्ष के नता मोर्चा के सचालक कातिलाल की है, कातिलाल अपने को सही साबित मानकर मुख्यमत्री की लाश बताते हैं मुख्यमत्री मुसकरात हुए इसे अस्वीकार करते है— यह मरी नही है। ता फिर लाश किसकी है ? यह लाश आज के भ्रष्टतत्र म लडी जाने वाली उस झूठी लडाई की है जिसम विरोधी या सत्ताधारियो म अब कोई अतर नही रह गया है।

इसी तरह रातें शीपक कहानी म उस पूजीवाद की नगी तस्वीर पेश की गयी है जो अथ या पूजी के बल पर तीन तीन पीढिया का सौंदय खरीदकर भोगने म समथ है। समस्त देश तथा विश्व म शताधिक महत्त्वपूण घटनाए घटती हैं— स्वतत्रता की लडाइ स लेकर बिहार के भूकप या जलियाँवाला हत्याकाड स लेकर

आज़ादी तक या अणुबम परीक्षण, द्वितीय विश्वयुद्ध वाडुंग सम्मेलन, पचशील, चीनी आक्रमण वियतनाम की लडाई तथा गुजरात की बाढ तक ! —लेकिन मगनलाल छगनलाल दारूवाला लगातार शारदाबाई, सुदरीबाई ताराबाई (माँ, बेटी तथा पोती) के साथ सुहागरात मनाने या उनकी 'रातें' खरीद लेने की स्थिति में है। जाहिर है कि अनेक क्रांतियों, महत्त्वपूर्ण घटनाओं, निर्णयों के बावजूद पूँजीवाद वैसे ही आज भी विश्व तथा देश में यथावत है उसकी सुविधा या सबलता में कोई परिवर्तन नहीं आया है।

कमलेश्वर की लडाई शीर्षक कहानी देश की उस चारित्रिक भ्रष्टता को उजागर करती है जहाँ एक भाई सीमांत पर देश की रक्षा के नाम पर शहीद हो जाने को मजबूर है, वहाँ दूसरा सरकारी खज़ाने के चोर दरवाज़े से रुपया चुराने के लिए हथकंडे तैयार करता है। जाल में फँसकर भी वह अपना चेहरा सबके चेहरे पर मुकम्मिल कर देता है और सही पहचान' गुम हो जाती है। वस्तुत आज जैसे हवा के बगैर साँस लेना कठिन है वैसे ही भ्रष्टाचार हमारे खून में रच बस गया है। सवाल है, इस भ्रष्टता की जड कहाँ है ? इस भ्रष्टता की जड वही पूँजीवादी-ठेकेदारी व्यवस्था है जो इस व्यवस्था का अभिन्न अंग है और जो आज के नेतत्व की देन है। कमलेश्वर इन कहानियों के माध्यम से निःसदिग्ध रूप से देश की भ्रष्टता को उचित तरीके से उजागर करने में समर्थ हैं।

बयान की जोखिम शीर्षक कहानी तो सीधे इस व्यवस्था पर प्रहार करती है। कफन की तरह सफेद खादी पहने देवदूत की तरह वित्तमंत्री मोरारजी देसाई का कहानी में माँ की मातमपुर्सी के लिए आना और 'सच से कतराना व्यवस्था पोषकों के वर्ग चरित्र को उदघाटित करता है। सागर-तट पर नित्य लाखों का माल उतार कर तस्करी करनेवाली पालदार नावों की टोह में रहने वाला नायक इस व्यवस्था में औरत की दलाली या कुछ भी (कोई चाकरी) करने को तैयार है लेकिन उसे इस व्यवस्था ने इतना निकम्मा बना दिया है कि वह चाहकर भी कुछ नहीं कर पाता। दरअसल इस व्यवस्था में जीनेवाले आदमी का यही हश्र भी है।

इस तरह कमलेश्वर बिना कहे ही अपनी कहानियों के माध्यम से वह बयान दे डालते हैं जो आज का सही लेखक दे सकता है। वास्तव में, कमलेश्वर प्रेमचंद की तरह एक पैदाइशी किस्सागो हैं और उन्होंने सदैव अपनी कहानियों के द्वारा सामान्य जन को सही अभिव्यक्ति दी है तथा उसे यथार्थ बोध तथा तात्कालिकता से जोड़ा है।

डा० चन्द्रशेखर कर्ण

कमलेश्वर सामाजिक आस्थाओं का कथाकार

हिन्दी कहानी की नयी जमीन तोडने वालो की जो कतार बनेगी उसकी पहली कतार म निस्सन्देह आरम्भिक स्थान कमलेश्वर का होगा। कमलेश्वर हिन्दी कहानी के सर्वाधिक गतिशील कथाकार हैं जिनकी कहानियाँ परिवेश और समय की आकाक्षाओ क साथ बदलती रही हैं। उनकी कहानियो म हिन्दी कहानी की बदलती स्वरा की प्रतीति तो है ही उसकी अस्मिता भी है। अपने समकालीन कहानीकारों मे कमलेश्वर एक ही नाम है जिसकी कहानियो म भारतीय मानसिकता की सही तलाश हो सकती है। कमलेश्वर की कहानियों का समझदार पाठक मरी इस बात से कभी चौंकेगा नही कि वे प्रेमचन्द परम्परा की विकसित उपलब्धि हैं। यह इस मायने म कि उनका रचना-ससार हमारा परिचित तो है ही हम उससे अपने का जुडा भी पाते हैं। उनकी कहानिया का आत्मीय परिवेश पाठकों को अन्त तक बांधता है। अपनी कहानियो के माध्यम से कमलेश्वर ने सौन्दयशास्त्रीयता का निषध करने के साथ व्यापक और गहन सामाजिक परिवेश स उसे जोडने का साथक प्रयास किया है। कमलश्वर कहानी को व्यवसाय नही विश्वास की अभिव्यक्ति मानते हैं। इस विश्वास या आस्था की आवश्यकता उन्हे इसलिए पडी कि वे समाज म जुड हैं। अस्तित्व का सकट जो एक सामूहिक सकट है लखक की हैसियत से वे भी झेलत हैं लेकिन अपने म उसे ठेलने की ऊर्जा भी पाते हैं। उन्होन अपने सकट को दूसरे के सकट से तादात्म्य कर लखन को सम्भव बनाया है। उन्ही सकट या यातनापूण स्थितियो से उनकी कहानी प्रसवित होती है।

कमलेश्वर के विचार समय की समग्रता के साथ विकसित होते रहे हैं। वे कलाओ क विकास का आधार सामाजिक—सार्वजनिक अस्तित्व को मानते रहे हैं क्योंकि यही मानवीय मूल्या का सरक्षण होता है तथा सामाजिक नवनिर्माण सम्भव होता है। उन्होने एक स्थान पर यह स्वीकारा है कि आज की कहानी

दुनिया व व्यावहारिक और वास्तविक जीवन से जुडी है। फलस्वरूप आज का कहानीकार कुछ कहने के लिए अपने भीतर एक उबाल महसूस करता है। आज की सक्रांति ने हमारी सवेद्य शक्तियों पर दबाव डाला है और चेतना को जागृत किया है। इससे आज की कहानी कल्पना के पखो पर उडने की बजाय धरती से जुडी है, धरती की हर मरोड उसमे बिम्बित हुई है। कभी कमलेश्वर कहानी को सामान्य की समर्थक और विशिष्ट की पोषक मानते रहे हैं। किन्तु आज उनके विचारो मे विकास हुआ है और वे कहानी को विशिष्ट का पोषक तो नहीं ही मानते किसी देश की संस्कृति का पैमाना भी व यह मानते हैं कि न्याय के लिए संघर्षरत आदमी के प्रति उसका रवैया क्या है। व अत्याचार पीडित या शोषित व्यक्ति या समुदाय या देश की जनता के प्रति उसके रुख को महत्त्वपूर्ण मानते है। और यही उनकी कहानियों की दिशा-दृष्टि तजवीज करती है।

कमलेश्वर की कथा यात्रा मे पडी पग रेखाओ को जिसने भी सूक्ष्मता और ईमानदारी से देखने की जहमत उठायी है वे यह जानते हैं कि उनने वैचारिक और रचनात्मक दोनो ही स्तर पर सदा अपने को परिवेश और सामान्य जन से सार्थक ढग से जोडे रखा है। वे साहित्य की प्रक्रिया ही यह स्वीकार करते हैं कि सामान्य जन से प्राप्त अनुभवो का संवेदनात्मक अर्थ तलाशकर उन अर्थों मे निहित विचारो की ऊर्जा को सक्रिय करके सामान्य जन के हित मे लगाया जाय। यह तभी सम्भव है जब लेखक अपनी सही और सार्थक भूमिका को पहचानकर सामान्य जन का पक्षधर और उनके हितो का पहरुआ हो। और, सामान्य जन की पहचान असामान्य नहीं होकर उस आदमी की पहचान है जो किसी भी क्षेत्र का विधायक नहीं होकर भी हर क्षेत्र की बुनियाद मे है। वह एक ऐसा त्रस्त और शोषित आदमी है जो आदमी और आदमी के बीच विकसित होने वाले सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक अधिकारो के असतुलन का सताप सहता है। उसकी नियति किसी और की डोर से बँधी होती है। इस सन्दर्भ मे यह महत्त्वपूर्ण है कि आज की रचनाशीलता आदमी की अपेक्षाओ की चौतरफा लडाइयो से सम्बद्ध है।

सामान्य जन के संघर्ष मे कितने ही भितरघात हैं। और, इन भितरघातो को बिना समझे या अनदेखा कर किसी गन्तव्य पर नहीं पहुचा जा सकता। समाज मे कितनी ही मूर्त-अमूर्त ताकतें कार्य कर रही होती हैं जो आम आदमी के संघर्ष को कुण्ठित करती हैं। हमारे समाज का आर्थिक सामाजिक सांस्कृतिक ढाँचा कुछ इस प्रकार का है जो मूर्त शक्तियो से अधिक घातक है। इनसे तभी निजात पाया जा सकता है, जबकि मूर्त प्रतिरोधी ताकतो का रू ब रू हुआ जाये और अमूर्त ताकतो का वैज्ञानिक विश्लेषण कर उनकी गलत मस्कारिकता से मुक्त होने की पेशकश करें।

आज का यथार्थ आम आदमी के विरुद्ध है। व्यवस्था का हर संस्थान आदमी के खिलाफ षडयन्त्रशील है। 'यह इसी देश में हो सकता है कि शाम को कानून पास हो तो सारा अनाज गायब हो जाये और दूसरे दिन जब कानून तोड़ लिया जाये तो मनमाने दामों पर बिक्री के लिए वही अनाज फिर निकल आये। यह इसी देश में मुमकिन है कि आदमी को नंगा कर देने के लिए कपड़ा मिलें कपड़ा बनायें, दवाओं की फैक्टरियाँ लगातार बढ़ती चली जायें और आदमी दवाइयाँ खरीदने लायक न रह जाये' (कमलेश्वर मेरा पन्ना)। और यह पूरा देश अब एक भयंकर दलदल बन चुका है और इसे दलदल बनाने वाले लोग प्राचीरो परकोटों पर जाकर बैठ गये हैं और दलदल में धँसते दम तोड़ते आम आदमी के मरण का उत्सव मना रहे हैं' (वही)। और यह कितना सच है कि 'पूरे देश में बाजार जादूगर हो गये है। और इसी जादूगर व्यवस्था ने देश के आम आदमी का जीना मुहाल कर दिया है। सफेद अर्थ व्यवस्था के समानान्तर एक काली अर्थ व्यवस्था के गुंजलक में आम आदमी का गला कसता जा रहा है।

यह विशेष रूप से गौर करने काबिल है कि आज इस घुटन या शोषण के विरुद्ध आसमान का रंग बदलने लगा है। यह किसी बड़े तूफान का पूर्व संकेत बदलाव की पीठिका है। आज आदमी किसी भी प्रतिरोधी ताकत से टकराने को आमादा है। इसके चेहरे पर कुछ भी कर गुजरने की संकल्प रेखाएँ हैं। इन्हीं संकल्प रेखाओं को शब्द देने के दायित्व को आज का लेखन झेल रहा है। आदमी की पराजयहीनता में उसका अकम्प विश्वास है। स्वभावतः आज की कहानी में आम आदमी की समस्याएँ और उनसे जूझते आदमी का विश्वास है क्योंकि यह लड़ाई आर्थिक शोषण और सांस्कृतिक विषमताओं की सरहद पर निर्णायक रूप में लड़ी जा रही है। इस सन्दर्भ में कमलेश्वर का कहानियों के बारे में यह विचार कि 'ये मुजस्सिम आदमी की बदलती हुई धारणाओं, उसके प्रश्नों और चिन्ताओं, की लिखित तहरीर ही नहीं बल्कि समय में लिये गये उसके फैसलों की यथार्थ प्रतिलिपियाँ भी हैं' (मेरा पन्ना) अर्थपूर्ण है। आज का लेखन तटस्थ और निरपेक्ष नहीं, बल्कि प्रतिबद्ध और सम्बद्ध लेखन है जो मूल्यों की स्थापना में विश्वास रखता है।

आज का आदमी सामाजिक और आर्थिक शोषण की हिंसा सह भोग रहा है। शोषक वर्ग की हिंसा के कितने ही व्यक्त अव्यक्त तरीके हैं जिन्हें परम्परागत कानूनी मान्यता प्राप्त हैं और वे कटघरे में नहीं होते, हिंसक होने के बावजूद। आज की विषम सामाजिक आर्थिक व्यवस्था ने सारा सौन्दर्य छीन लिया है। ऐसे में आज के लेखन में सौन्दर्यशास्त्रीय शब्दावली या तो अपना अर्थ खो चुकी है या उसके अर्थ बदल गये हैं। इन बदले अर्थों को अस्वीकार किये जाने पर सम्पूर्ण शब्दावली को बदलना आज की लेखन की अनिवार्य शर्त होगी अन्यथा आम

आदमी की नियति के बदलने के संघर्ष को गलत अर्थ संदर्भों से जुड़ जाने की आशका रहेगी। आज की कहानी को पुराने सौंदर्यशास्त्रीय निकष पर परखना विवेकहीनता होगी और उससे निष्कर्षों को ही प्राप्त किया जा सकता है जो अपने प्रति तो कम, कहानी के प्रति ज्यादती होगी।

इन्ही सदर्भों म कमलेश्वर की कहानियो के मूल स्वर की खोज की जा सकती है। यदि कोई आलोचक कमलेश्वर की नयी कहानी काल की कहानियो को 'भाषायी प्रयोग तथा मूलत रोमांटिक परिवेश की कहानियाँ' कहता है तो इसम बहुत सत्य नहीं है। कमलेश्वर की इस काल की कहानियो म 'रूमानी रुझान' है किन्तु उसमें न तो गलदश्रु भावुकता है और न किसी प्रकार का असयम। वे नवीन बोध से सम्वलित आदर्शों की प्रवचना से हीन और साफ कहानियाँ हैं। कमलेश्वर को 'छद्म सामाजिक रूमानी बोध' का कहानीकार कहना भी उतना ही अनर्गल है जितना रूमानी मानना। उनकी 'राजा निरबसिया' सग्रह की कहानियो म हो यह स्वीकृत हो चुका है कि सजग सामाजिक चेतना, प्रगतिशीलता एव सोद्देश्यता उन कहानियो की निजता है। उन कहानियो म सामाजिक यथार्थ का प्रभावी उद्घाटन और सामाजिक स्थिति का यथार्थ चित्रण खुलासा ढग से हुआ है। उन्होने अपनी कहानियो मे यथार्थ को विषय वस्तु के रूप म ढाला है। उन कहानियो म सामाजिक विरूपताओ का अस्वीकार ही नहीं उनके प्रति गहरा आक्रोश भी है। कमलेश्वर ने अपने अन्य समकालीन कहानीकारो से अलग ऊब कुण्ठा घुटन, पलायनवादी प्रवत्ति अनास्था टूटन, विघटन वितृष्णा का निषेध किया है। उनकी कहानियो म ऐतिहासिक विश्लेषण के तहत सामाजिक सन्दर्भों को ग्रहण किया गया है। उनकी कहानियो म नय मूल्यो के प्रति आग्रह नये सृजन की अकुलाहट और परिवतन की सम्भावना का सकेत है। कमलेश्वर की कहानियाँ साफ स्वस्थ दृष्टि और सम्भावनापूर्ण भविष्य की पारदर्शी कहानियाँ है। उनम प्रवचना धर्मी आदर्श जटिल लक्ष्य तथा दिशाओ का घुमाव नही है। इस दृष्टि से कही 'भटके हुए लोग, धूल उड जाती है, तीन दिन पहले की रात', मुर्दों की दुनिया, कस्बे का आदमी चाय घर राजा निरबसिया', 'सीखचे' महत्त्वपूर्ण कहानियाँ हैं। इन कहानियो को सोद्देश्यता की पष्ठभूमि मे ही समझा जा सकता है क्योकि इनम सामाजिक समस्याओ के सदर्भ म आत्मग्रथियो का चित्रण विश्लेषण हुआ है। कमलेश्वर की कहानियो म विचार और भावना का सही सतुलन है। इसे वे कहानी की अनिवार्यता मानते रहे है। कमलेश्वर सहजता के कहानीकार हैं। उनकी कहानियो का समाज छदम नही वास्तविक है। उदाहरण के रूप म सीखचे कहानी को लिया जा सकता है। सीखचे प्रतीक है। नन्दलाल बनिये की तीसरी पत्नी होने पर भी वह कमजोर लकडी म फँसी छडो को अलग नही पाती उससे अपने को मुक्त नही कर पाती। परम्परा की सडी

लकडी म फँसी पत्नी किस कदर कैद होती है यह कहानी इस बोध का सम्प्रेषित करती है। कमलेश्वर ऐसी ही स्थितियो के माध्यम से विचारो को सम्प्रेषित करते है जिससे कहानी अधिक साथक हो जाती है। यही उन्ह अपन अन्य सम कालीन कहानीकारो स अलगाती है। तक कमलेश्वर की सचेतना की शक्ति रहा है जो उन्हे यथाथ की गहराइयो म उतरने म सहायक होता है। यथाथ को वहन करना और निरन्तर बदलते परिवेश का कहानियो म उतारना कमलश्वर की निजता है। युद्ध माम का दरिया' 'उपर उठता हुआ मकान' 'फालतू आदमी एव बदनाम बस्ती' ऐसी ही कहानिया है।

कमलेश्वर की प्रारम्भिक कहानिया म कस्बाई जीवन अपने सम्पूण सत्य और शक्ति के साथ व्यजित हुआ है। एसी कहानिया अधिक व्यापक और समद्ध है। जिस कस्ब की य कहानियाँ हैं वहा क हर रग जिन्दगी के हर पहलू को कहानी कार ने आत्मीयता से देखा पहचाना है। कस्बे का कहानिया होने से ही इनकी व्यापकता म कोइ बाधा नही आती बल्कि य अधिक प्रामाणिक और सवेद नात्मक हो जाती हैं। कस्ब का हर आदमी कहानीकार का परिचित है अपना। परिणामस्वरूप कस्ब की कहानिया विशिष्ट पात्रो की कहानिया है—जगपति, महेसा विश्वनाथ, देवा की मा वद्य जी की। कस्बाई बाध की कहानिया मे कमलेश्वर की सलग्नता गहरी है उसकी हर सवेदना से वे सम्पक्त है। इससे उनकी कहानियो को तीसरा आयाम मिला है। कमलेश्वर की कहानिया का पष्ठ भूमि सकुचित नही, व्यापक है। उन्हान सामाजिक पष्टभूमि म टकरात सामाजिक मूल्यो को अपनी कहानी म मूत किया है। उनकी दष्टि मानवीयता की पक्षधर है। आर्थिक दबाव मानवीय मूल्यो का गला घोट रहा है इसकी स्पष्ट झलक कमलेश्वर की कहानियो म दृष्टिगत है। राजा निरबसिया कहानी इसकी साक्षी है। इस कहानी की चन्दा कम्पाउण्डर बचनसिंह के हाथो से अपन को तब तक बचाय रखती है जबतक जगपति अस्पताल म है। किन्तु उस समय वह अपने को बचा नही पाती जब जगपति बचनसिंह से टाल के लिए रुपय लेता है। चन्दा के ये शब्द— तब तक की बात झूठ है सिसकियों के बीच चन्दा का स्वर फूटा लकिन जब तुमन हम बेच दिया , सब कुछ कह देते हैं। कमलश्वर की नौकरीपेशा और कस्बे का आदमी म भी मानवीय मूल्यो का गला घाटता आर्थिक दबाव है।

कमलेश्वर के अनुभव-बोध म बाद म स्पष्ट परिवतन लक्षित होता है। यह परिवतन उनक इलाहाबाद म दिल्ली आन क बाद हाता है। खोयी हुई दिशाए की भूमिका म उन्हाने स्वीकार भी किया है कि दिल्ली आने के समय इलाहाबाद छोडने म उन्ह तकलीफ हुई। दिल्ली म सब कुछ बदला-बदला लगा एक अजीब सा परायापन और बेगानापन। इस परिवर्तित बाध को कहानियाँ हैं—'खोयी

हुई दिशाएँ 'दिल्ली म एक मौत,' 'दिल्ली म एक और मौत' 'पीला गुलाब,' साँप' आदि। ये कहानियाँ शहरी जीवन की मजबूरियों की कहानियाँ हैं जिनमे चुभन है। इनमे जीवन की ऐसी पहचान है जो मम को छूती है। 'खोयी हुई दिशाएँ' कहानी म शहरी जीवन का तनाव और व्यथता बोध है। शहरी आदमी उस भीड म अपने को उखड़ा हुआ पाता ह। कहानी के नायक चन्दर को लगता है कि इस भरी दुनिया म रपता रपता वह अपनी अस्मिता खोता जा रहा है। उसे कोई पहचान नही पा रहा ह पत्नी प्रेमिका कोई भी नही। अपनी पत्नी से सम्भोग करत समय उसे भ्रम होता ह कि वह उसे पहचान रही ह पर उन उत्कट क्षणो की समाप्ति पर वह फिर अपने आपको नितान्त अकेला महसूस करता है। उसे लगता है कि हर आदमी अपनी पहचान तलाश रहा है। एक यान्त्रिकता सबको निगल गयी है। एसी कहानियो म कमलेश्वर के बदले बाध का निदशन है।

यह कहने म थोडी भी हिचक नही होनी चाहिए कि कमलेश्वर की कहानियाँ आलोचकों के लिए बराबर चुनौती उछालती रही हैं। उनकी कहानियो का तेवर समय की गतिशीलता क साथ बदलता रहा है। जीवन को उन्होने सदा उन्मुक्त भाव मे ग्रहण किया है। परिणामस्वरूप शिल्प और विषय दोनो म जीवन अपने पूरे वविध्य म विम्बित हुआ है। मध्य वग और निम्न मध्म वग के जीवन का हर रग—चटख और गदुमी—इनकी कहानिया म चित्रित है। कमलश्वर ने लिखा भी है—'नयी कहानी आग्रहा की कहानी नही है प्रवत्तियो की हो सकती है। और उसका मूल स्रोत है—जीवन का यथाथ बोध। और इस यथाथ बोध को लकर चलने वाला वह विराट मध्य वग और निम्न मध्य वग है जो अपनी जीवनी शक्ति से आज के दुर्दांत सकट को जाने अजजाने झेल रहा है" (मास का दरिया आत्म-कथ्य पृ० ७)। कमलेश्वर की कहानिया आर्थिक-सामाजिक और राजनीतिक विश्लेपण के बिना ग्रहण नही की जा सकता। मामाजिक सत्यो से एकमेक होने के साथ ही इन कहानियो की शब्दावली या यू कहें शब्द 'सत्य म भी उल्लखनीय बदलाव होता रहा है।

कमलेश्वर की बाद की कहानियों का सदभ बदल जाता है। वह आम आदमी के साथ तेज़ी से जुडने लगता है। आम आदमी आज मौत से भी बदतर जिन्दगी जीने को बाध्य है। आज की सारी उत्पादन-व्यवस्था और उसका असमान वितरण सत्ता सरकार छद्म राजनीति और पूजीवादी आर्थिक-व्यवस्था के झूठे आश्वासनो के बीच आज का आदमी रपता रपता मौत के करीब हो रहा है। घिनौना वतमान और अन्ध भविष्य की लडाई मे उसका अभिमन्यु-अस्तित्व घिर गया है। जाखिम कहानी क प्रधान पात्र के पास 'कुछ यादो और एक लहू-लूहान जिन्दगी क सिवा और कुछ भी नही है।' वह अपने अन्धे भविष्य को

लेकर परेशान है और जानना चाहता है कि 'अब—मेरा क्या होगा ? और इस दोगली अर्थ-व्यवस्था में मैं कब तक भटकता रहूँगा और उन लोगों की दिक्कतें कब खत्म होंगी जिनके सामने मैं खुद को खुदगर्ज लगने लगता था ?' उसका सारा अस्तित्व प्रश्नों के ताबूत में जैसे बन्द हो गया है। वह सोचता है, मैं कहाँ जाऊँ मैं बहुत मामूली आदमी हूँ और कुछ ऐसा चाहता हूँ कि कायदे से जी सकूँ। यह कितनी भोली आकांक्षा है किन्तु दुस्साध्य ! उसके लिए तो है सिर्फ अँधेरा नाराजी, ठहराव और आशंका। जोखिम कहानी में आदमी एक भयानक स्थिति से गुजरता है जिसमें पारिवारिक सामाजिक और राजनीतिक जीवन के बदलते चेहरे अपने डरावने रूप धारण कर सामने आते हैं। माँ बेटे के रहते दानखाते से सहायता पाने को अभिशप्त है। माँ धीरे धीरे पथराती जाती है और बेटा देखता रह जाता है। प्रेम उसके लिए 'क्राइम' है और राजनीति व्यक्ति को कोई आश्वासन देने में असमर्थ है। सारे सम्बन्ध ठण्डेपन के शिकार हुए हैं सम्बन्धों की पहचान खो गयी है। 'जोखिम' के उस पात्र की जिन्दगी छीजती जा रही है—छोटी-छोटी नौकरियों (?) में तस्करों की पालदार नावों का देख पाने के लिए कई रातें समुद्र के किनारे गुजारने में लोकल गाड़ियों में जुगाड़ बठाने में। आम आदमी कितने ही जोखिम झेल रहा है लेकिन कितने कम के लिए !

कमलेश्वर एक सतर्क कहानीकार हैं। अपने आसपास फैली दुनिया को खुली नजर से सही और साफ देखने की कोशिश इनके लेखन को महत्त्वपूर्ण बनाती है। राजनीतिक हिपोक्रैसी' को इनका लेखन नंगा करता है। आज का यथार्थ क्षय ग्रस्त हो गया है। इस क्षयग्रस्त यथार्थ पर वे अपनी कहानियों के द्वारा गहरा नश्तर लगाते हैं। 'लाश', 'लड़ाई 'बयान', जार्ज पंचम की नाक' इस खेवे की पावनय कहानियाँ हैं। इनके अतिरिक्त स्मारक', 'ब्राचलाइन का सफर' अपने देश के लोग' में भी फैंटेसी के माध्यम से ग्रस्त यथार्थ को व्यंग्य का निशाना बनाया गया है। इन कहानियों के माध्यम से हमारा राष्ट्रीय चरित्र अपनी सम्पूर्णता में उभर कर आता है। आज का राजनीतिक परिदृश्य इस कदर गलाजत से भर गया है कि अच्छे बुरे की पहचान ही खो गयी है। प्रजातन्त्र का हर मंच गलत बोलने लगा है। शब्द फरेब का फन्दा है। शब्द सही और अर्थ भरमाने वाला। ये मंच गलत लोगों से भर गये हैं तथा सारे चेहरे एक-से है। लाश' कहानी में लाश किसकी है नेता की या प्रजातान्त्रिक मूल्यों की या जन क्रांति की या जन की ? यह सवाल बड़े बेधक रूप में हमसे टकराता है तथा हमसे इसका सही उत्तर ही नहीं तलाशता उस व्यवस्था के विरुद्ध तैयार होने की चुनौती भी भेजता है जो आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक न्याय के नाम पर हमें क्षण क्षण तोड़ रहा है। यदि ऐसा नहीं होता तो लड़ाई कहानी का

एक भाई मन्त्री और दूसरा ठेकेदार बनकर सत्ता और अर्थ पर अपनी मजबूत पकड, देश की कीमत पर, आम आदमी के विरुद्ध नही करता और पूरी की पूरी जमात चोरों की जमात मे तब्दील नही हो जाती। सही है—'तब कौन किसे पहचानेगा?' आज का नेता (मन्त्री) प्रजातन्त्र की सबसे विषाक्त फसल है, जिसे देश को काटनी पड रही है। सामाजिक सतुलन और प्रतिस्पर्धा ने आम आदमी का तल्ख अनुभवों से गुजरने को बाध्य किया है। विकास योजनाओं के नाम पर रगीन धुएँ का पहाड तैयार किया गया है। हाईब्रीड अर्थ-व्यवस्था परोक्षत पूजीवादी अर्थ-व्यवस्था का पर्याय थी, जिसकी स्वाभाविक परिणति आम आदमी के विरुद्ध हानी थी। यदि एसा नही होता तो किसी पत्नी की जिन्दगी मटमैली रोशनी स भर नही जाती तथा उसके फोटोग्राफर पति के सरकारी पत्रों के लिए उतारे गय झूठ' (फोटो) अपना सारा सत्य नहीं खो जाते ('बयान')। रेगिस्तान को लहलहाते जगल के रूप म अपन लेंस' म उतारने के छद्म से इन्कार के कारण केवल उसके जीवन को ही रेगिस्तान म नही बदल दिया जाता। बाध्य होकर उसे अपनी पत्नी की नगी तस्वीर उतारनी पडनी है जिस कोई पति नहीं चाहता, और पत्नी की नौकरी इस बिना पर चली जाती है कि उसकी अध-नगी तस्वीरें एक पत्रिका म छपी हैं। फिर बरोजगार पति के लिए जीने को क्या रह जाता है? इस तरह बयान' आज के सघपरत आदमी के जीवन का तल्ख दस्तावेज बन जाता है। अकाल कहानी के रघुनन्दन लाल की आँखों म अकाल की जो लाचारी और असहायता है वह इसी व्यवस्था की दन है। इसी तरह दुनिया बहुत बडी है कहानी की अन्नपूर्णा की दुनिया कितनी छोटी है, भूगाल की दुनिया भले कितनी बडी हो। जिस अन्नपूर्णा ने समाज से विद्रोह कर अन्तर्जातीय विवाह किया, वह विद्रोह समाज द्वारा बेमानी करार दिया जाता है और वह अपने पति के मरने के बाद तीस बरसा तक उसके घर म कैद-सी हो जाती है। इसके बाद भी वह घर उसके लिए बेगाना और अपरिचित रहता है। मायके से तो विद्रोह करके ही आयी थी वहाँ के लोगा का अपरिचय तो स्वाभाविक है। अन्नपूर्णा तीस वर्षों की कन्न स निकल कर भागती है मगर लौटने को अभिशप्त है—जहाज के पछी की तरह। इस कहानी म हमारे सामाजिक जीवन का यथाथ कितनी ही परतो म अभिव्यजित है।

समाज नारी के प्रति सदा क्रूर और आक्रामक रहा है। उसे बराबर जिस की तरह इस्तेमाल किया गया है। कमलेश्वर न बडी बेबाकी स समाज के उस सत्य को नगा किया, जिसका समाज अभ्यस्त हो गया है या जिसे देखकर भी वह देखना नही चाहता। वह 'मायापिया' का शिकार है। उसकी सवेदना पथरा गयी है, ठण्डी हा गयी है। मास का दरिया' और रातें' कहानियाँ इसकी सबूत हैं। मास का दरिया की जुगनू की चीख सारे वदिक वाक्या को झुठला कर रख

ैनी है जो उनके मम्मान मे कह गये हैं। मास का दरिया ही नही बहता उसके एक एक कतरे का मोल होता है जो हमारे सास्कृतिक ढपोरशखी व्यवस्था के परखचे उडा देता है। और शारदाबाई सुदरी बाई तारावाई गीता बाई की पहली 'रातें' जो किसी भी कुमारी की कितनी साधा की रात होती है एक नव धन कुबेर के हाथों नीलाम होती रही, पीढी-दर-पीढी। एक धनकुबेर अपन पसो के बल पर चार चार पीढियो को अपने बिस्तर पर नगा करता रहता है। राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इतिहास बदलत रहत हैं लेकिन नही बदलती है तो शारदा बाई, ताराबाई गीताबाई और कितनी ही बाइयो की नियति। यह सब होता रहा। सामाजिक आर्थिक विषम व्यवस्था के कारण जिसम कितनी ही जुगनूएँ 'मास का दरिया' मे डूब जाती हैं और नारियो को गधव कन्याएँ बनाकर उनकी नूर रातो मे अँधेरा भर दिया जाता है। ऐसी कहानिया म कमलेश्वर के कहानी कार की तटस्थता और साहस सराहनीय है। ये उनकी सामाजिक आस्था को रोशन करती हैं और रोशनी देती है।

आज की जिन्दगी छद्म से भरी है। आम आदमी जो छल छद्म से दूर हैं प्रतिदिन छले जा रहे है। विडम्बना तो यह है कि छलने वाला ही सत्ता प्रतिष्ठान की बडी हिस्सेदारी मे है या फिर सत्ता स अलग होकर सिद्धान्तो का झण्डा-बरदार बन गया है। कमलेश्वर की मानसरोवर के हस कहानी इसी सामाजिक-राजनीतिक विसगति और छल की कहानी है। चारो तरफ सीलन की तरह नीवो म समाया हुआ यह छल काली आँधी की तरह घर घर म घुस गया है यह अँधेरा ! —मानसरोवर के हसो को एक अनिश्चय दिशाहारापन सौंपते हैं। सेनापति चाचा आज भी है—देश समाज मे सिर्फ वेश बदल गया है छल वही है। कभी मानसरोवर के हस छले जा रहे थे आज समाज (मानसरोवर) के सामान्य जन (हस) छले ठगे जा रहे हैं। मासूम विश्वास हर बार बेरहमी से तोडा जा रहा है। इस कहानी म प्रतीको का प्रचुर प्रयोग हुआ है किन्तु ये आयातित नकली प्रतीक नहीं हमारे परिवेश स पैदा है। यह कमलेश्वर की कहानियो के निजी वशिष्ट्य म है।

अर्थ रिश्तो का निर्धारित करता है। जीवन की कठोर सच्चाइया परम्परित रिश्ता म नया अर्थ पैदा करती हैं। समाज के सामाजिक आर्थिक स्वरूप के बदलने के साथ रिश्ते भी नया रूप ग्रहण करते हैं। सामाजिक आर्थिक बदलाव सस्कार मे रासायनिक परिवर्तन कर देता है। उत्पादन के स्रोत तथा साधनो के साथ जो रिश्ता आदमी का होता है उसी के तहत आदमी और आदमी का रिश्ता निर्धारित होता है। वसे उत्पादन के साधनो की तरह सस्कार म इतना तीव्र रूपान्तर नहीं होता लेकिन उसकी दिशा निर्धारित हो जाती है। इस सदर्भ म कमलेश्वर की इतने अच्छे दिन कहानी उल्लेखनीय है। जीवन के प्रति मोह और जिजीविषा

बाला और कमली को एक नया जीवन सौंपते हैं। भाई खुश है कि बहन को एक ट्रक ड्राइवर उठा ले गया। उसका यह सोचना —'घर मे छोटी बहन कमली न होती तो कैसे काम चलता। या और बतासिंह ट्रक ड्राइवर अगर उस रात कमली का उठा न ले जाता तो उसकी जिन्दगी ही बरबाद हो जाती।'—नय मामाजिक यथाथ को जन्म देना है। बहन बस्ती के लाला के पास सोयी है और भाई का यह कहना— इस माले से दस लेना। पुराने रिश्तो के सारे रख रखाव को ध्वस्त कर देता है। बाला अपने जीने के लिए अपने पुरखो तक की हड्डियाँ उखाड उखाड कर बच देता है। वह अपन बाप को दाग की लाश इसलिए नही जलाने देता कि वह उसकी हड्डियाँ बेचेगा। यह सास्कृतिक परम्पराओ और सस्कारों का सस्कार कर दता है। यह कहानी कितने ही अनुभव क्षणा से गुजरने को बाध्य करती है। सस्कार एकबारगी मर नही जाता कुण्ठित हो जाता है जो फिर मौका पाकर पनपना है। जिस बाला ने अपने पुरखा की हड्डियाँ बेच दी दाग की भी, क्योंकि वे बुर दिन थे लेकिन जब दादी की हड्डियाँ बेचने का समय आता है तो कमली के कहने पर उन्हे नदी म सिरा देने की सोचने पर बाध्य होता है। कमली क य शब्द—ठीक है न! कमली ने कहा—बुर दिन होत तो दूसरी बात थी। गोदाम म ही दे आता 'यह बोध देता है कि मौत से नजात पान के बाद आदमी सस्कारो से जुड जाता है। इतने अच्छ दिन' स्थिति का व्यग्य है जा आदमी की गैरत पर सोन का दात बनकर गड जाता है और इससे खून रिसता रहता है।

कमलश्वर की कहानियो का अपना रचना ससार है जिसमे उसका समय रेखाकित है। उसमे समय की समस्त सच्चाइयाँ अपने ऐतिहासिक सत्यो के साथ सम्प्रषित हाती हैं। ये कहानियाँ सामाजिक विसगतियो आर्थिक विषमताओ तथा टूटते, हारते और सघष करते इन्सान का सही दस्तावेज है।

सुभाष पन्त

कमलेश्वर तीन कथा-दशकों के बीच एक वैचारिक यात्रा

कमलेश्वर पिछले तीन कथा दशको मे एक सृजनशील रचनाकार की हैसियत से ही नही बल्कि इस दरमियान आन वाले नयी कहानी और समातर कहानी' जसे आन्दोलना के नियामक और सचालक भी रहे हैं। 'नयी कहानी' जिसका आरम्भ सन ५० के आस पास माना जा सकता है और जिसके पीछे कमलेश्वर राजेन्द्र यादव व मोहन राकेश थ नय भाव बोध की कहानी थी। इसम एक ओर यशपाल की दृष्टि सम्पन्न पर फार्मूलाबद्ध प्रगतिशील कहानियां थी—जिनके पात्र अपने अधिकाश म विचारात्मक इकाइयाँ मात्र थे और दूसरी ओर अज्ञेय जनेन्द्र की परम्परा थी जो जन मानस से कटकर व्यक्ति के आन्तरिक मनोविज्ञान के साथ गोट फिट करने के चक्कर मे पदच्युत हो गयी थी को एक साथ नकार कर कहानी को एक नयी दृष्टि दी। नयी कहानी का यह सघष दो स्तरो पर एक साथ गतिशील था। पहले स्तर पर यह सघष गलत परम्परा की कहानी के नकार का था और दूसरे स्तर पर यह सघष खुद कहानी के अपने भीतर फाम चरित्र प्लाट और क्लाइमेक्स जसी अवधारणाओ को तोडने का सघष था। यशपाल की वचारिक विरासत का कमलेश्वर स्वीकारते है पर जैनेन्द्र और अज्ञेय की कहानी कला का विवेचन करते हुए कमलेश्वर लिखते हैं— इनके पात्र लेखक की मान सिकता का शिकार है व्यक्ति की क्रूरता के नीचे सच दबा हुआ है। अज्ञेय के पात्र उपजीवी ह इनकी जडें नही है। इसलिए इनकी अधिकाश कहानिया झूठी हैं इसके विपरीत नयी कहानी म तलाश पात्रा की नहा यथाथ की है पात्रा के माध्यम स यथाथ की अभिव्यक्ति की। पहल कहानी— कला मूल्या को लेकर लिखी जाती थी अब जीवन मूल्या को लेकर पहले कहाना झूठी थी अब सच्ची!

इस तरह कथ्य के स्तर पर कहानी जिन्दगी क अधिक निकट आयी और साथ ही आन्तरिक सघष की जाच से कहानी का फाम टूटा। कहानी ने मुक्ति की सास ली। शिल्प के स्तर पर नये से नये प्रयोग हुए। इस दौर की कहानिया म शिल्प के

सबसे सशक्त प्रयोग का उदाहरण कमलेश्वर की 'राजा निरबसिया' है, जिसमे एक लोक-कथा की पृष्ठभूमि मे एक समकालीन निम्नवर्गीय परिवार की कहानी नितान्त अनूठे ढग से कही गयी है। लोक कथा का उपयोग इस कहानी मे महज शिल्पगत चमत्कार उत्पन्न करने के लिए नही किया गया है वरन यह लोक-कथा मुख्य कथा को और मार्मिकता प्रदान करती है। शिल्प के स्तर पर यह एकदम ताजा और नया प्रयोग है, पर शिल्प इस कहानी मे कही भी न कथ्य पर हावी होता है और न रचना प्रक्रिया मे दरार उत्पन्न करता है बल्कि वह कथ्य को नये आयाम और सवेदना के अतिरिक्त बिन्दु देता है।

नयी कहानी का धरातल प्रामाणिक अनुभूति और यथार्थ की जीवनगत सच्चाई था। उसने आदमी को उसके परिवेश मे देखने की समझ दी थी। उसका स्वर आशावादी था। यह वह दौर था जब देश ने अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त की थी। जनता को राजनीति के स्तर पर एक नयी जीवन-दृष्टि मिली थी। लोग नये भविष्य के प्रति आशावान थे। भारत के नव निर्माण का भार जनता के कधो पर था। पुरानी मान्यताएँ परम्पराए और रूढियाँ टूट रही थी और नये जीवन मूल्य सिरजे जा रहे थे। नयी कहानी की विचार भूमि पुराने के टूटन और नये के निर्माण की थी। अधिकतर कहानियो का कथ्य परिवार के टूटने के इद गिर्द चक्कर लगा रहा था। यू ये कहानियाँ एक खास किस्म की प्रगतिशीलता लिये हुए थी, उसमे तत्कालिक बुराइयो के खिलाफ ठण्डा आक्रोश और एक हद तक विरोध था पर यह सामाजिक सामूहिक न होकर वैयक्तिक धरातल पर अधिक था। शायद यही कारण था कि शिल्प के स्तर पर जो कहानियाँ काफी चुस्त दुरुस्त और तरोताजा थी कथ्य के स्तर पर वे डगमगा रही थी। उनकी दृष्टि मानवीय सम्बन्धो पर केन्द्रित थी। नारी को उन्होने अधिक व्यावहारिक व 'रेशनल' दृष्टि से देखा था, और अधिकतर कहानियाँ नारी पुरुष के स्वातत्र्य की कहानियाँ थी यानी आदमी उनमे अपनी समग्रता से चित्रित नही हो रहा था। नयी कहानी के दौर से गुजरने पर एक बात बहुत स्पष्ट रूप से उभर कर आती है वह यह है कि वैचारिक धरातल पर एक होने पर भी सवेदना के धरातल पर उस समय के कहानीकार स्पष्टत दो रेखाओ मे विभाजित हो गये थे। लेखको का एक वर्ग वह था जो वैयक्तिक विरोध को अधिकाधिक सामाजिकता मे ढालने की कोशिश कर रहा था। इनकी दृष्टि अधिक जागरूक समाजोन्मुखी थी और ये सही प्रगतिशील विचारधारा को विकसित कर रहे थे। यानी ये वो लोग थे जो समयगत सघर्षो को व्यक्ति के स्तर पर नही सामाजिकता के सदर्भो मे देख रहे थे और अपनी रचनाओ के माध्यम से अभिव्यक्त कर रहे थे। दूसरा वर्ग वह था जो सामाजिकता से तटस्थ होकर कहानी और काव्यात्मक धुधलको मे भटक गया था। पहली धारा के सर्वाधिक सशक्त कहानीकार कमलेश्वर हैं। 'कस्बे का आदमी' की भूमिका मे कमलेश्वर

लिखते हैं 'आज की कहानी का रूप बहुत बदल गया है अब वह एक बात ही नही कहती जीवन के एक खण्ड को समग्रता म प्रस्तुत करने की चेष्टा करती है। वह सामान्य की समथक है और साथ ही विशिष्ट की पोषक सामान्य को विशिष्ट बना देन का गुण मुख्यत शली शिल्प के अधीन है और विशिष्टता को सामान्य म परिणित करने का कौशल लखक की चेतना का सामाजिक धम। कमलेश्वर अपनी कहानियो म प्रारम्भ से ही सामाजिकता क प्रति जागरूक रह हैं और जब-जब साहित्य को कलावादी नजरिये से देखने का प्रयास किया गया है या व्यक्ति की कुत्सित मनोवत्ति और कुण्ठाओ की अभिव्यक्ति का माध्यम समझा गया है तब तब कमलेश्वर न विद्रोह का झडा उठाया है। कमलेश्वर की दष्टि शुरू स ही साफ पैनी और ईमानदार रही है। खुद कमलेश्वर 'राजा निरबसिया' की भूमिका म स्वीकार करत हैं केवल सोद्देश्यता की पृष्ठभूमि म ही आज क लेखक की कहानियो का अध्ययन किया जा सकता है ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार वह स्वय आत्मग्रथियो का चित्रण या विश्लेषण सामाजिक समस्याओ के सदभ म करता है।'

राजा निरबसिया ने जहाँ एक ओर शिल्प के स्तर पर नया कीर्तिमान स्थापित किया है वही कथ्य के स्तर पर भी यह एक शाश्वत रचना है। इसे मात्र पारिवारिक टूटन की कहानी मानकर इसका मूल्याकन सम्भव नही है। राजा निरबसिया के जगपति की टूटन के पीछे व्यवस्था जन्य सास्कृतिक और आर्थिक कारण मौजूद हैं। दरअसल यह कहानी 'अपनी सीमा और सभावना मे एक जनवादी कृति है जिसम आर्थिक स्तर पर टूटते आदमी की सच्ची तस्वीर है न कि दाम्पत्य के बिखराव की एकागी और निजी कहानी। करीब के खेत की मेड पर बठकर जगपति की यह सोच— चदा ने कहा था—लकिन जब तुमने मुझे बच दिया क्या वह ठीक कहती थी? क्या बचनसिंह ने टाल के लिए जो रुपये दिये थे उनका ब्याज इधर चुकता हुआ? क्या सिफ वे ही रुपय आग बन गये जिसकी आच म उसकी सहनशीलता विश्वास और आदश मोम से पिघल गये। मुशीजी से उसका कहना— हर तरफ तो कज से दबा हू तन से मन से पसे से इज्जत स किसके बल पर दुनिया सजोन की कोशिश करूँ। और अन्त म कानून को उसका लिखा जाना किसी ने मुझको मारा नहीं है किसी आदमी ने नही। मैं जानता हूँ कि मेरे जहर की पहचान करने के लिए मेरा सीना चीरा जायेगा। उसम जहर है। मैंने अफीम नही रुपये खाये है उन रुपयो मे कज का जहर था उसाने मुझे मारा है—आर्थिक शोषण के आतक को पूरी तरह उजागर करती है। इस कहानी ने अपन समय पाठको को झिझोड कर रख दिया। नामवरसिंह न उस समय इसम विराट के दशन किये थ बाद मे वे इस विराट के दशन रोमाटिक भाव बोध की निर्मल वर्मा की कहानी 'परिन्दे' म करने लग तो सामाजिकता के व्यापक सवालों

से नकार की कहानी है। यानी नामवरसिंह का कहानी की तकलीफ ने कभी तकलीफ नही दी उनकी तकलीफ कुछ दूसरी ही है।

कमलेश्वर ने अपनी कहानिया के कथ्य अपने आसपास के परिवेश से उठाये हैं। उनकी कहानियो को मोटे तौर पर दो हिस्सा म बाँटा जा सकता है—कस्बे की कहानियाँ और महानगरीय कहानियाँ। इनका बचपन कस्बे की गोद म बीता है, और इसी कारण इनकी प्रारम्भिक कहानिया कस्बे की कहानियाँ हैं। कस्बे की मानसिकता सक्रमणकालिक मानसिकता होती है। गाँव से उसके पाँव कट चुके होते हैं और शहर उसे अपने म समेटता नही है। कस्बे के आदमी म जहाँ एक ओर शहर की चालाकी होती है वही कही गँवई गाँव की मासूमियत भी। कस्बे की समस्याएँ भी कितनी भिन्न होती हैं, जीवन-यापन के साधन उनके पास अल्प और सीमित होते है और चारित्रिक दृष्टि से वे फटास्टिक होते है। कमलेश्वर की प्रारम्भिक कहानिया इन्ही फटास्टिक चरित्रो उनकी मानसिकता और सघर्षों की तथा समय की धुरी पर घूमती सामान्य सच्चाइया के प्रति और पक्ष म लिये नये निर्णयो की कहानिया हैं। चरित्रो से अधिक कमलेश्वर की पारखी दृष्टि चरित्रो की परिस्थितिया पर रही है। चरित्रो की परिस्थितियाँ समय के अक्ष पर घूमती वहत्तर सच्चाइया होती हैं। यही कारण है कि इनकी कहानियो का कैनवास व्यापक है। कमलेश्वर खुद स्वीकार करते हैं मुझे पात्रा ने कभी कहानिया नही दी है। मुझे हमेशा उनकी स्थितियो ने कहानियाँ दी हैं। यदि कोई कहानी पात्र केन्द्रित हो गयी है तो वह मेरे लेखन की कमजोरी है। पर जान बूझ कर पात्रो को विरूप कर देने की कोशिश भी मैंने नही की है। क्योकि सच्चाइयाँ इतनी इकहरी नही होती कि उन्ह भारी हाथ से उठाया जा सके।" इस दौर की कमलेश्वर की प्रमुख कहानिया *राजा निरबसिया* *देवा की मा', मुर्दों की दुनिया, कस्बे का आदमी*, आत्मा की आवाज गर्मियो के दिन' तीन दिन पहले की रात, गाय की चोरी' भटके हुए लोग आदि है और अन्तिम कहानी नीली झील है। यह दौर कमलेश्वर का अपने कथा स्रोतो की पहचान और अपने परिवेश म जीने का दौर था। इस दौर की कहानियो म कस्बा अपनी समग्रता और प्रामाणिकता के साथ अभिव्यक्त हुआ है उतनी ही प्रामाणिकता के साथ जितनी प्रामाणिकता के साथ प्रेमचन्द की कहानिया म तात्कालिक गाँव, हाँ, भाषा शिल्प और दृष्टि के परिप्रेक्ष्य में ये कहानिया प्रेमचन्द की कहानियो से आगे की कहानिया हैं। गर्मियों के दिन का आरम्भ कस्बे की सक्रमण की मानसिकता से शुरू होता है। चुगी दफ्तर खूब रगा पुता है। उसके फाटक पर इन्द्रधनुषी आकार के बोड लग हुए है। सैयद अली पेंटर ने बडे सधे हाथ से उस बोड का बनाया है। देखते देखते शहर म बहुत सी ऐसी दुकानें हो गयी हैं जिन पर साइनबोर्ड लटक गया है। साइनबोड लगाना यानी औकात बढाना। बहुत दिनो पहले जब दीनानाथ हलवाई की दुकान पर

पहला साइनबोर्ड लगा था तो वहाँ दूध पीने वालों की संख्या दिन व दिन बढ गयी थी। वैद्य जी भी इस आधुनिकता की धारा म बह जाने को आकुल हैं। वे चन्दर से (जो पेंटर नहीं है पर जिसकी लिखाई अच्छी है और वैद्य जी ने उसे दबा रखा है) अपने औषधालय का बोर्ड लिखवा रहे हैं। रंग की बोतलें और वार्निश उन्हें उनका बिजली कम्पनी का मरीज दे गया है। चन्दर उनकी हिदायत के अनुसार बोर होते हुए बोर्ड लिख रहा है और वे खाली रजिस्टरों पर खसरा-खतौनियों से नकल करने लगे हैं यह उनकी आय का अतिरिक्त स्रोत है। तभी कोसमा टेशन का खलासी उनके पास डाक्टरी सर्टिफिकेट लेने आता है। वे उसे मूड लेना चाहते हैं और सर्टिफिकेट की कीमत चार रुपये बताते हैं। खलासी गरीब है निराश होकर चला जाता है। पर वैद्य जी को विश्वास है कि वह फिर आयगा। धीरे धीरे आसपास के सभी दुकानदार दिन का भोजन करने चले जाते हैं। गर्मी जान ले रही है। पर वैद्य जी भूखे बैठे हैं गर्मी झेल रहे हैं उन्हें प्रतीक्षा है—खलासी लौट कर फिर उन्हीं के पास डाक्टरी सर्टिफिकेट लेने आयेगा। यह कहानी ही नहीं बल्कि कस्बे के चरित्र का एक जीवंत टुकड़ा है। इसी तरह मुर्दों की दुनिया' 'कस्बे का आदमी' गाय की चोरी और 'भटके हुए लोग' आदि कहानियाँ हैं जो अलग-अलग सन्दर्भों म कस्बे क अलग-अलग टुकड़े हैं और कुल मिलाकर कस्बे का परिदृश्य रूपायित करते हैं। आत्मा की आवाज और तीन दिन पहले की रात नारी मन की सूक्ष्म पकड़ की कहानियाँ हैं। तीन दिन पहले की रात म एक सम्पन्न घराने की लड़की की तीन भिन्न चरित्रों के सामीप्य से उत्पन्न प्रभाव के मन स्थिति की कहानी है। उसकी बदलती हुई मानसिकता म घर के वातावरण का दबाव और प्रभाव है। अन्त म वह पुलिस अधिकारी अमर से शादी कर लेती है और शादी की प्रथम रात्रि म ही उससे घृणा करने लगती है। और एक क्षण बाद जब उसकी बाहें मेरे चारों ओर लिपट गयीं और उसकी साँसों की महक पहली बार मुझ तक आयी मैं अकुला उठी। मैं जैसे किसी मुर्दे की ठंडी बाँहों म घिर गयी थी मेरे मन ने सहम कर पूछा था क्या मैंने इसी अमर को प्यार किया था ?' कहानी की नायिका आदिम भावुकता म है और अपने प्रणय क प्रारम्भिक स्रोत को काट फेंकने म सफल नहीं हो पाती।

नीली झील इस दौर की अंतिम कहानी है। इन्द्रनाथ मदान लिखते हैं 'नीली झील महेसा म की एक चाह है। अनाम सी है जो मेम की नीली आँखों और झील के नीले पानी म झलकती है। महेसा का नाचना झील की ओर से सूने सूने स्वरों का आना नीली साड़ी वाली के कहने पर सलानियों का सामान उठाने के लिए तैयार हो जाना पैसे पाकर उसका मन भारी होना पारबती को मेम बनाने की कोशिश नीली झील से उसका लगाव, पारबती के चेहरे पर नीली लकीरों का जाल बिछ जाना, उसके हाथ से सोनापतारी के अण्डे का गिर कर

टूट जाना, इसके असुगन का अहसास और पारबती के पेट म सन्तान का मरे जाना, पारबती का चल बसना और अन्त म नीली झील का मालिक महेस पाण्डे—कविता के तान-पेटे म कविता के धागे को बुना गया है। कविता की उदास छाया कहानी पर मँडराती है। पारबती के चल बसने के बाद कहानी अपने पावो पर चलने के बजाय लेखक के सहारे लँगडाने लगती है। इसलिए इसम न तो अनुभूति की प्रामाणिकता है और न चरित्रो की प्रामाणिकता'' डाक्टर मदान की यह दलील अजीब सी है—पहली बात तो यह है कि बिना अनुभूति की प्रामाणिकता के इतनी सशक्त रचना का जन्म ही नही हो सकता। मेरा ख्याल है कि इस कहानी के जन्म के पीछे अनुभूति की प्रामाणिकता ही पहली चीज है और महेश पाण्डे का चरित्र लेखक का पूरी तरह जीया हुआ चरित्र है वरना कहानी दोनो स्तरो पर इतनी गम्भीरता और करुणा से आगे न बढती। खुद मदान यह स्वीकार करते हैं कि कविता की उदास छाया कहानी पर मँडराती है। मदान का दूसरा दर्द है कि कविता कहानी पर हावी है यही इस रचना का सबसे महान पक्ष है कि यह कहानी और कविता की कृत्रिम दीवारो को तोडती हुई अनुभूति की प्रामाणिकता को निरूपित करती है। खुद मदान विरोधी बात करते हैं—एक ओर वे अनुभूति की प्रामाणिकता पर शका जाहिर करते हैं दूसरी ओर इस पर कविता की उदास छाया मँडराती मानते है जबकि माना यह जाता है कि कविता अनुभूति और कहानी अपनी भगिमा म ही जीवित रहती है। तब अधिक आश्चय होता है जब एक समीक्षक इस बात से कहानी को कमजोर मानता है कि उस पर कविता हावी है वही कोई और समीक्षक निर्मल की कहानियो का इसलिए महत्ता देता है *क्योंकि उनम प्याना का उदास सगीत ध्वनित होता है।* दरअसल 'नीली झील' कई स्तरो पर प्रतीक है। पहले स्तर पर कस्बे के आदमी की मासूमियत का प्रतीक जिसकी वह हर कुर्बानी के साथ रक्षा करना चाहता है। दूसरे स्तर पर नीली झील कस्बे का प्रतीक है जिससे सम्बन्ध टूट जाने का वह पीडा के स्तर पर अभिव्यक्त करना चाहता है। तीसरे स्तर पर नीली झील केवल नीली झील है जिससे वह सवेदना के स्तर पर जुडा है। चौथे स्तर पर नीली झील उन मानवीय सघर्षों का प्रतीक है जिसे लेखक धर्म की रूढियो का ताडते हुए जीवित रखना चाहता है भले ही उसे इस आस्था के लिए कही रामैंटिक बोध या यथार्थो मुखी आदर्शवादिता का सहारा लेना पडा हो।

इसके बाद कमलेश्वर की कहानियो का दूसरा दौर शुरू होता है। 'नीली झील' की पीडा के बाद कस्बे का आदमी महानगर पहुँचता है। सघर्ष नये सिरे से शुरू होते हैं जो अतत रचना को नयी दिशा देते है और लेखन को नयी जमीन मिलती है। कमलेश्वर की *कथायात्रा कभी तालाब के ठहरे पानी की तरह रुकी नही*

रहती है बल्कि वह नदी के जल की तरह नये क्षितिजो के अन्वेषण म दौडती रही है। कमलेश्वर खुद स्वीकार करते हैं—"मेरे लिए कहानी निरन्तर परिवर्तित हाते रहने वाली एक निणय केन्द्रित प्रक्रिया है।" इन्द्रनाथ मदान भी कहते हैं कमलेश्वर न पहले नयी कहानी को स्थापित करन की कोशिश की और बाद म इस व्यापक और निरन्तर विकासशील बनाने की।' इस दौर की कहानियाँ व्यक्ति के दारुण और विगलत सन्दर्भों को समय के परिप्रेक्ष्य म समझने की कहानियाँ है। यह दौर ५६ ६० के आस-पास शुरू होता है जब कमलेश्वर दिल्ली आये। इस दौर की शुरूआत जाज पचम की नाक और 'दिल्ली म एक मौत' स हाती है और अत मास का दरिया और युद्ध कहानियो से। कुछ मुख्य कहानियाँ हैं खायी हुई दिशाए पराया शहर 'एक रुकी हुई जिन्दगी' तलाश, दुख भरी दुनिया जा लिखा नही जाता', 'एक थी विमला, अपन देश के लोग आदि। 'जा लिखा नही जाता' कहानी के लिए कमलश्वर लिखत हैं स्पदित जीवन-खण्ड के रूप म जो आज भी धडक रही है' यह कहानी मानव नियति का कठोर सकेत देती है। पति पत्नी के बीच एक तीसरे आदमी का आगमन किस तरह दरार का बायस बनता है। यही तीसरा व्यक्ति दाम्पत्य जीवन की धुरी पर किस तरह हावी हो सकता है इसे कई कोणा म उदभासित किया गया है। कहानी का अत लिफाफे के भीतर एक अनलिखा कागज है जो उस पत्र का नमूना है जो लिखा नही जाता इसम न केवल कसक और टीस है बल्कि सूनापन और अकेलापन भी है टूटना और बिखरना भी है इन सबकी स्वीकृति है।

मास का दरिया का स्वर नितान्त भिन्न स्वर है। यह वेश्या के जीवन का एक जलता हुआ दस्तावेज है जिसम उसके शोषण और सघष का ईमानदारी से सम्प्रेषित किया गया है।

> 'बहुत बार उसने कराह दबाई और कँवरजीत को रोका। आँखा के सामने अँधेरा छा छा जाता था और जोर पडते ही जाँघ फटने लगती थी। कँवरजीत तीन चार बार रुका फिर जसे उस पर शतान सवार हो गया था
>
> —अरे रुक तो वह चीखा था और जुगनू की टाँगे दबाकर हावी हो गया था।
>
> —अरी अम्मा रे मार डाला वह पूरी आवाज मे चीखी थी, जसे किसी ने कत्ल कर दिया हो और वह छटपटा कर बेहोश सी हो गयी थी।

यह एक चित्र है मास का दरिया का, जिसम कँवरजीत होटलवाला जो फाडा पकी जाँघ वाली वेश्या जुगनू से अपना कज वसूल करता है। यह वह चित्र है जो अनायास पाठक की चेतना पर हावी हो जाता है लाख चाहने पर भी भुलाया

नही जाता और रह रह कर उसका पीछा करता है।

इस दौर की सबसे सशक्त कथा रचना 'खाई हुई दिशाएँ' है। यह ऐसी कहानी है जो सीमित सामाजिकता को बहुत्तर सामाजिकता से जोडती है। चदर का दद काई मानवीय दद न होकर व्यवस्था जन्य परिस्थितियों से उत्प न आर्थिक और सास्कृतिक दबाव की यातना है। और यह केवल चदर का दद नही है, बल्कि उन हजारो लाखो व्यक्तियो का दद है जिनकी दिशाएँ खो चुकी हैं। यह पहली कहानी है, जिसम बदलाव की दिशाए साफ दृष्टिगत हाने लगती थी। यह कहानी उस समय लिखी गयी थी जिस समय अन्य लखकों द्वारा कथ्य की नवीनता के नाम पर विकृत सेक्स की कहानिया लिखी जा रही थी, या पश्चिमी दाशनिक विचारो से प्रभावित होकर नितात वयक्तिक क्षणवादी कहानियाँ लिखी जा रही थी। रूपवादी लखको की एक पूरी जमात ही बन गयी थी। यह सब उस वक्त हो रहा था जब देश की और जनता की हालत बुरी तरह बिगड चुकी थी ये पलायनवादी लेखक अपने दायित्व का निर्वाह नही कर पाये और खुद सेक्स की विकृत गलियो म भटक गये। दरअसल ये सब लेखक पूजीवादी—शुद्ध साहित्यवादी व्यवस्था के षडयत्र के शिकार हो गये थे जो कभी साहित्य का आम आदमी का ओजार नहीं बनने दती और उनका पूरा जोर ही इस बात पर रहता है कि आम आदमी की सघर्षो मुखी चतना साहित्य के उन्मादी नशे म भटक जाये। यह षडयन्त्र पूरी तरह से सफल नही हो पाया। कमलेश्वर न इनके खिलाफ चार किश्तो म लम्ब लेख लिख—'एय्याश प्रेतो का विद्रोह' जिसमे उन्होने जन जीवन स कटे रूमानी और रूपवादी लखन का जबदस्त विरोध किया। हालांकि यह लखमाला बहुत विवादस्पद थी, पर यह ऐतिहासिक महत्व रखती है क्योंकि इसने गलत साहित्य का विरोध करते हुए नये पुरान लेखको को सोचने और लिखने के लिए नयी जमीन दी और ऐसे लेखन की शुरूआत की थी जो स्थितियो से कतरा जाने की कायल नही बल्कि उनकी सही वज्ञानिक जाँच मे रत है और उन मूल कारणो पर तेजी से प्रहार करता है जिनके कारण आम आदमी शोषण का जरिया बनता है। इसे ही आग चलकर समातर कहानी का नाम मिला।

सन '६६ के अतिम महीने म कमलेश्वर बबई आए। यही इनकी कहानियो का तीसरा दौर शुरू होता है जिस कमलेश्वर स्वीकार करते हैं कि यह दौर उनके कथा लेखन का यातनाओ के जगल स गुजरते मनुष्य के साथ और समातर चलने का दौर है। यहाँ आकर कमलश्वर की दृष्टि और अधिक विस्तत हो जाती है और जो कहानियाँ कल तक मनुष्य का उसके परिवेश मे देखन के लिए कायरत थी, अब सामाजिक बदलाव की माँग करने लगता हैं। ये वे कहानियाँ हैं जो इस सकटकाल म आदमी की आत्मा म धसे हुए नतिकता के व्यक्ति केद्रित प्रश्नो को

बदल कर समयगत न्याय की धारणा के संदर्भ में उठाती हैं और संस्थागत-व्यवस्थागत नैतिकता व सामाजिक संबंध को सामने लाती हैं और इनका लेखक क्रांतिकारी शक्तियों की समांतर सहधर्मिता का सहयात्री है। यह लेखक समयगत प्रश्नों को रोमांटिक नजरिये से नहीं देखता वरन यथार्थ के निष्कर्ष पर उन्हें कसकर देखता है समय से जुड़ी चेतना को सर्वाधिक महत्व देता है और साहित्य को मात्र अमूर्त आंतरिक अनुभूति देने वाली कलात्मक अभिव्यक्ति मानने से साफ इंकार करता है। इनकी संलग्नता आम आदमी के साथ है क्योंकि खुद लेखक भी इन्हीं आम आदमियों के बीच का आम आदमी है। गलत व्यवस्था का विरोध इस लेखक की अनिवार्यता की पहली शर्त है। यह लेखन अर्थ में न तो परम्परावादी है न रूढ़िवादी है और न फार्मूलाबद्ध क्रांति का हामी। वह आधुनिकता को केवल रहन सहन की प्रणाली के अर्थ में नहीं वरन क्रियाशीलता और चिंतन के वैज्ञानिक सामाजिक आधार के रूप में ग्रहण करता है। जीवन इसके लिए एक लड़ाई है और लेखन इन सभी मोर्चों पर आम आदमी को उस लड़ाई में शामिल करने का रचनात्मक सांस्कृतिक माध्यम।

इस दौर की कमलेश्वर की मुख्य कहानियाँ 'जोखिम', 'बयान' 'मानसरोवर के हंस' 'या कुछ और', 'नागमणि', 'सांप', 'लड़ाई', 'रातें' 'लाश', 'मैं', 'अपना एकांत' 'इतने अच्छे दिन', 'हवा है, हवा की आवाज नहीं है' आदि हैं। 'नागमणि' एक ऐसे आदर्श और कर्तव्यनिष्ठ हिंदी प्रचारक मास्टर की कहानी है जो अपनी जद्दोजहद में अंततः पूरी तरह टूट जाता है यह कहानी उस अकेले आदर्शवादी की नहीं बल्कि हजारों लाखों आदर्शवादी युवकों की नियति है। यह कहानी एक साथ बहुत से सवालों को उठाती है अंतत जिनका हल हम ही खोजना है ताकि नागमणि की स्थितियाँ बरकरार न रहें, क्योंकि स्थितियों से कतराकर निकल जाना कल के लेखकों का अभीष्ट हो सकता था आज के लेखकों का नहीं। आज के समांतर लेखक का दायित्व इन सवालों को *झेलना और इनके परिवर्तन की* दिशा निर्धारण करना है। 'बयान' कहानी भी गलत व्यवस्था के हाथों षडयंत्र के शिकार एक आदमी (एक के माध्यम से अनेकों) की मार्मिक कहानी है जो झिंझोड़ती ही नहीं बुरी तरह त्रस्त करती है और पाठक को सोचने के लिए विवश कर देती है।

> उन्होंने मुझे ब्रेसरी उतारने को कहा था। मैं थोड़ा सकुचाई थी। दिन का वक्त था। वे कैमरा लिये बैठे थे। फिर उन्होंने मुझे वायल की झीनी साड़ी पहनने को कहा था। मुझे तरह तरह से बैठाया और लिटाया था और तस्वीरें ली थीं। उस वक्त उनकी एक आँख पहले की तरह काँप रही थी। मैं समझ गयी थी—वे सिर्फ मुझे देख रहे थे।

उस वक्त जब वे समन्य थे जी, यानी अपने म डूबे हुए थे, तब भी
आठ-दस वार उनकी आँखों से खून के कतरे टपके थ ।'

यह आज के लेखन का सबसे बडा दायित्व है कि वह इस कहानी की तरह उन लोगो के सघर्षों को वाणी द जिनकी आँखा स आँसू नही खून के कतरे टपक रह हैं। अब वह समय भी आ गया है जब हम कहानी के मापदड बदलने हागे, उन्हें कलावादी कसौटियों पर नही सामाजिकता के प्रसग मे समर्पित करना होगा।

इस दौर की सशक्ततम रचनाआ म एक और कहानी रातें हैं जिसम लेखक न सामन्तवाद किस तरह पूजीवाद मे तबदील और स्थान्तरित हुआ है पर कहानी के माध्यम से विशद प्रकाश डाला है। यह कहानी पूजीवाद की कमजोरियों का ही रखाकित नहा करती वरन फासिस्ट ताकतो की मशा और मसूबो से भी आगाह करता है। कहानी बहुत सीध-साध ढग से शुरू होती है। वेश्या की बटी की पहली रात की बोली लगती है और एक पूंजीवादी उसे खरीद लता है। फिर सोलह सत्रह साल बाद उस वश्या की बटी की पहली रात की बोली लगती है वही पूजी पति फिर उसकी रात भी खरीद लेता है। इस तरह बेटी और उसकी बेटी की रातें बिकता हैं और हर बार वही पूजीपति एक के बाद एक बटियो की रात खरीदता चलता है और दूसरी ओर इस पूजीपति का विकराल मुह सब चीजो को अपने म समेटता चलता है। यू यह कहानी प्रतीकात्मक नही है पर यदि वेश्या और उसकी बटी को जनता का प्रतीक मान लिया जाये तो अनायास इनको अर्थ खुलन लगने है। जोखिम का अकेला आदमी महानगरीय तनावा का झेलता है। इस पीडा और घुटन के बीच उसके आस्थावादी सस्कार बराबर उसे टूटने से बचात हैं। माँ सस्कार की धुरी है। इसलिए महानगर मे रहन हुए उसकी याद बार बार आती है और तब तक वह हर तरह के जोखिम झेलने के लिए साहस बटोर पाता है। इस कहानी म कमलेश्वर ने गहरे व्यग्य के जरिये समसामयिक स्थितियो का प्रभावात्मक निरूपण किया है। कथानायक उन लाखा महानगरीय बेरोजगार युवको का प्रतिनिधित्व करता है जो किसी आशा के तहत कई-कई रात समुद्र के किनारे गुजार देता है और लोकल गाडिया के सफर मे सोने का आसरा ढूढता है। अपने अधे भविष्य और माँ (जो उसकी आस्था का प्रतीक है) की बीमारी से घबराकर राजनेता को बुला लाता है लेकिन इस दोगली अर्थव्यवस्था मे उसकी परेशानियाँ घटती नही, बढती ही हैं। मारारजी कफन की तरह सफद खादी पहने हुए थे। उनके आ जान से मुझे थोडी राहत मिल गयी थी। पर आशकाएँ और व्यग्रता और बढ गयी थी' (स्मरण रहे कि उस काल म मोरारजी देसाई भारत के फाइनेंस मिनिस्टर थे)। कहानी अत म फैंटेसी म तबदील होती है और कहानी की सवेदना को शाश्वत आयाम देती है। इतने अच्छे दिन मे कमलेश्वर ने गहरे

व्यग्य का सहारा लिया है। यह एक सशक्त रचना है। आदमी को इस हद तक पूजीवादी व्यवस्था ने ग़रीब कर दिया है कि आदमी अपने दादा और बाप के मरने की बाट जोह रहा है कि कब वे मरें और उनकी हड्डियां बेचकर अपना दोजख भरा जाय। यह कहानी आतक की इतनी सच्ची तस्वीर पेश करती है कि रोगटे खडे हो जाते है। यानी आदमी 'अकाल जस अच्छे दिनो' की प्रतीक्षा कर रहा है—

> सबसे अच्छी बात तो यह हुई है कि इलाके म लगातार तीसरी बार भी अकाल पड गया। क्योंकि अकाल म हड्डियाँ बचकर दो जून खाना तो मुहय्या हो जाता है (वरना खुशहाली के दिनो म तो सारा गल्ला इजारेदार के गोदामो म जमा होता जाता है)। असल म जब तीसरे साल भी अकाल पडा तब बाला को होश आया था, अपने रिश्तदारो की हड्डियाँ कितनी कीमती हैं। अपन रिश्नेदारो के ढोर डगोरो की हड्डियाँ कितनी कीमती है!'

दोगल अथतत्र मे आदमी की क्या नियति है और किस हद तक वह पतन की खाई म गिर चुका है और अस्तित्व का सकट किस तरह आदमी के सिर पर तलवार की तरह झूल रहा है, यही इस कहानी का कथ्य है। अकाल की इस मँडराती छाया म भी पूजीपति वग के दलालो का शोषण जारी है—

> 'कमली के बाय गाल की चमडी पर खून की एक सूखा बूद चिपकी हुई थी। वह उस पर उगली फिरान लगी तो बाला ने पूछा—क्या हुआ? उस साले लाला ने काटा इतन ज़ोर से?
>
> —नही कमली न मामूली तौर से कहा—उसका वो एक दाँत सोने का है न, वही गड जाता है ।

यह सोन का वह दाँत है जो कमली के ही गाल पर नही, हर कही गडा हुआ है।

'हवा है हवा की आवाज़ नही' विदेश के परिवेश म कही गयी ऐसी कहानी है जहाँ ग़लत व्यवस्था म आदमी अपनी इयत्ता पूरी तरह खो चुका है या तो वह ग़लत व्यवस्था का अग बनने को मजबूर है या फरार होन को बाध्य है।

इस लेख म तीन कथा दशको के बीच कमलेश्वर की कहानियो का जायज़ा लिया गया है और उनकी कथायात्रा को सक्षेप म स्पष्ट किया गया है। अभी इनकी कहानियों के बारे म अधिकाधिक रूप से कुछ कहना न्यायसगत नहीं होगा, क्योंकि इनकी कथायात्रा अभी सतत गतिमान है वह नये-नय उपमा को छू और आत्मसात कर रही है।

डा० देवेश ठाकुर

कमलेश्वर की कहानियों मे सामाजिक चेतना

सामाजिक चेतना स सम्पन्न होने का आशय ह अपन चारो ओर फैले हुए जीवन क यथाथ से परिचित होना उस आत्मसात् करना और उमसे सवेदना के स्तर पर सम्बद्ध होना। इस यथाथ क अन्तगत जीवन के सभी सदम समाहित हो जाते हैं। कालदर्शी सवेदनशील लखक अपनी रचनाओ म किसी भी प्रकार से अपने समय की परिस्थितियों, समस्याओ दु ख सुखों और बदलत हुए माना तथा मन स्थितियो से उदासीन और तटस्थ नही रह सकता। अपन लखन की सायकता क लिए उसका जीवन के यथाथ स जुडना और अपन समाज के परिवतनो से विज्ञ होना तथा सायक और उपयोगी परिवतन के लिए स्वय भी नयी जमीन खोजना आवश्यक हा नही अनिवाय भी होता है। क्योंकि इसी से उसकी रचना अथवान सम्पृक्त और महत्त्वपूण बनती है। और इससे उसम जहा तक एक आर समाज के सस्कार का बल आता ह वही दूसरी आर वह अगली पीढी के लिए समद्ध परम्परा बनन का काय भी सम्पन्न करता है। इस महत्त्व की प्राप्ति के लिए लेखक का साहित्यकार बनने की साधना करनी पडती है और साहित्यकार बनन के लिए केवल लिखना ही आवश्यक नहीं होता, स्वस्थ और प्रतिबद्ध दष्टि से सम्पृक्त होना आवश्यक होता ह। कहना नही होगा कि माट तौर पर प्रेमचन्द और यशपाल के पश्चात् कमलश्वर म यह दृष्टि अपक्षाकृत अधिक सम्भावनाओ के साथ उभर आयी ह। इतना ही नहीं, बल्कि उसका प्रेरणा से नयी पीढी के अनेक प्रतिभा सम्पन्न और चतना से प्रतिबद्ध कहानीकारो की एक बडी जमात भी तयार हो रही है, हा चुकी ह।

इस सामाजिक चेतना के सन्दभ म कमलेश्वर की कहानिया पर विचार करने स पूव हम कमलश्वर क समय की परिस्थितियों और लखन तथा इस सब पर स्वयं कमलश्वर की प्रतिक्रिया और उनकी स्थापनाओ का अवलोकन कर लें।

आज़ादी के बाद देश म औद्योगीकरण के विकास ने जिन नयी परिस्थितियो को जन्म दिया उनसे सामन्ती प्रवत्ति ब्राह्मण दष्टि और रूढ नतिक मान्यताओं के उन्मूलन के अवसर विकसित हुए। दूसरी आर, स्वतन्त्रता के वातावरण म लेखकीय अन्दाज़ मे भी परिवतन हुआ। राष्ट्रीय स्वाधीनता की लडाई की समाप्ति के उपरान्त लेखक का ध्यान अब व्यापक सामाजिक सदर्भों को अभिव्यक्ति देने की दिशा मे प्रशस्त होने लगा। मानसिक विकास के अवसर वढने से बौद्धिकता और वस्तुपरकता का विचार भी विकसित हुआ। परिणामस्वरूप जीवन सम्बन्धी प्राचीन आदश लडखडाने लगे। दूसरी ओर, समय के गुजरने के साथ साथ आज़ादी के ८ १० वर्षों के भीतर ही भारतीय नवयुवक का वह मोह भग होने लगा जो उसने आज़ादी से पहले के वर्षों मे, आज़ादी मिलने के बाद के सदभ म पाल रखा था। चितना के क्षेत्र म यह एक बडी घटना थी। इससे युवा मानस का आघात लगा, जो बहुत स्वाभाविक था। फलस्वरूप उसम तीव्र प्रतिक्रिया न जन्म लिया। यह प्रतिक्रिया साहित्य मे गद्य लेखन और विशेष रूप स कहानी के माध्यम से अत्यन्त प्रखरता क साथ व्यक्त हुई। राजेन्द्र यादव के अनुसार आज के लेखक का यह प्रमुख स्वर अपन समय के यथाथ उसक स्वरूप उसक स्तरों को पहचान लन मे, राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय पीठिका म देख लने मे ही नहीं लेखकीय मानस पर उसकी प्रतिक्रिया म भी है, उसकी प्रकृति को अपने अपने ढग स समझने म भी है उसे कहानी की विधा म अभिव्यक्त करने म भी है और यह महसूस करन म भी है कि उन के कथ्य की व्यजना के लिए कहानी ही उपयुक्ततम समथ और प्रभावशाली विधा है।' (एक दुनिया समानान्तर पृष्ठ ४२)

और हम देखते हैं कि सन ५५ ६५ के बीच नयी पीढी के कहानीकारो ने अपन स पहली पीढी के प्रगतिशील लेखको की भाति जीवन के मश्लिष्ट परिवेश का तो अभिव्यक्ति दी ही साथ ही व्यक्ति का भी रेखाकित किया उसके सुख दुख, हप विषाद समस्याएँ कुठाएँ पराजय—सभी कुछ कहानी के विषय बने। इससे एक ओर कुछ अस्वस्थ परिणाम भी सम्मुख आये। व्यक्तिवादी प्रवृत्ति का विकास हुआ और उसके अतिचारो कुठाओ स कल्पित सवमीय कहानियो म जीवन म रचनात्मक दष्टि को विकसित और प्रतिष्ठित करने का मूल मुद्दा ही धुधलाने लगा। लकिन दूसरी ओर स्पष्ट दृष्टि से सम्पन्न कहानीकारो न सामाजिक परिवेश के बीच व्यक्ति का अहमियत देकर उसे जीवन के खुल सघप के बीच खडा कर दिया और उसके माध्यम से समाज म व्याप्त विभिन्न असगतियो को अभिव्यक्ति देने की दिशा प्रशस्त की। अमृतराय मार्कण्डेय भीष्म साहनी शलेश मटियानी, शेखर जोशी, राजेन्द्र यादव मोहन राकेश और कमलेश्वर आदि अनेक कहानीकार

अपनी सृजनात्मक ऊर्जस्विता लेकर आये और उन्होंने कहानी को व्यक्ति से—सामान्यत सामान्य और मध्यवर्गीय व्यक्ति से—सम्पृक्त कर कहानी की परिपाटी को नयी कहानी के रूप म एक मोड दे दिया। यह ठीक है कि इस मोड देने के प्रयास मे नयी कहानी के पुरोधाओं—मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव और कमलेश्वर—ने अपने वक्तव्यों में अपने से पुरानी पीढ़ी के कहानीकारों को अनेक अवसरों पर उपेक्षित ही नहीं किया, बल्कि तिरस्कृत भी किया। लेकिन ऐसा करना अपने-आप को प्रतिष्ठित करने से अधिक शायद समय की माँग भी था। साथ ही यह भी कि पुरानी पीढ़ी को पूर्णत नकारा ही गया हो, ऐसी बात भी नहीं थी। इन्होंने एक प्रकार से प्रेमचन्द यशपाल और अमृतलाल नागर की परम्परा से अपने को जोड़े रखा और यह प्रस्थापित करने की कोशिश की कि इन्हीं लेखकों की जीवन दृष्टि को अपने माहौल के बीच विकसित करने के लिए वे सकल्पित हैं। इसी जीवन-दृष्टि की सैद्धान्तिक व्याख्या करने और रचनात्मक स्तर पर उसे अपने लेखन के माध्यम से प्रतिष्ठित करने का प्रयास इन लेखकों ने सामूहिक रूप से किया। हाँ समग्रत कमलेश्वर का प्रदेय इस सदर्भ में विशेष वन पडा है। इसका कारण यह भी हो सकता है कि कमलेश्वर को अपनी बात कहने और कहलवाने की अधिक सुविधा रही हो। वसे भी सामान्यत कमलेश्वर पर आन्दोलनबाजी का आरोप लगाकर उनके कृतित्व का कम करके आँकने की कोशिश बराबर होती रही है। आन्दोलनबाजी का यह आरोप चाहे जितना भी सही हो लेकिन विरोधियों का यह उपक्रम इसलिए सफल नहीं हो पाता कि कमलेश्वर का कृतित्व अत्यधिक प्राणवान् है और जीवन के वैषम्य को, उसके झूठ और खोखलेपन को प्रस्तुत करने म उनकी लेखनी सजग और सहज है। उनके द्वारा कहीं भी चमत्कारी घटनाओं के प्रदर्शन, कृत्रिम कथ्य अथवा चौंकाने वाले शिल्प की बैसाखियों का सहारा नहीं लिया गया है। सूक्ष्म सांकेतिकता कमलेश्वर म है अवश्य लेकिन यह उनकी कहानियों का प्राण है जो उनम कलात्मकता की प्रतिष्ठा कर एक प्रकार से प्रेमचन्द के कथ्य को अधिक प्रभावान बना देती है। यह सांकेतिकता कथ्य की आत्मा म इतने सहज रूप म पैठी मिलती है कि प्रबुद्ध पाठक द्वारा बार बार पढ़ने पर भी उसम कहीं आरोपण का भाव नहीं मिलता। चाहे वह 'मानसरोवर के हस हों या दिल्ली म एक मौत' या खोई हुई दिशाएँ' या जाज पचम की नाक' या कोई अन्य कहानी जिसम कमलेश्वर ने सामाजिक चेतना को उकेरने का प्रयास किया हो।

सामाजिक चेतना का अहसास और उसकी अभिव्यक्ति सामाजिक वैषम्य के बीच ही जन्म लेता है। कमलेश्वर ने इस वैषम्य को व्यक्तिगत स्तर पर भोगा है और इसीलिए जीवन के अपने अनुशीलन म कहानियों के रूप मे उनके द्वारा जो

यथार्थ व्यक्त हुआ है वह सब तरह से सहज और स्वाभाविक है। आज़ादी के बाद आम आदमी की जो फजीहत हुई है वह किसी से छिपी नहीं है। लेकिन वास्तविकता यह है कि इस आज़ादी के लिए अथवा अपनी मुक्ति के लिए सामान्य आदमी ने भी अपनी तरह से अपनी सीमाओं के भीतर यह लड़ाई लड़ी है और उसका त्याग देश के लिए किये गये किसी भी त्याग से कम श्रेयस्कर नहीं है। 'देवा की माँ' के देवा को मैं इसी रूप में देखता रहा हूँ और वर्षों से यह कहानी मेरे मन प्राणों में कहीं गहरे में बैठी हुई है। यह कहानी केवल पुरुष द्वारा नारी को छले जाने की अथवा नारी की दयनीयता और साथ ही उसके आत्म सम्मान की प्रतिष्ठा की ही कहानी नहीं है बल्कि उन युवाओं की सक्रियता और बलिदान की भी कहानी है जो अपनी सम्पूर्ण हताशा और पराजय की स्थिति में भी कुछ कर गुज़रने के लिए आकुल है और जो यह भली भाँति जानते हैं कि उनके त्याग से उनका कुछ बन पा सकेगा यह निश्चित नहीं है। यह देवा आज़ादी से पहले का नवयुवक हो सकता है और आज़ादी के बाद का भी ; क्योंकि इस देश में सामान्य वर्ग के लिए दोनों स्थितियाँ समान रूप से तकलीफ दे रही हैं। कथ्य के विस्तार की यह सम्भावना कमलेश्वर के कथाकार को एक व्यापक परिवेश में देखने की प्रेरणा देती है। एक बात और है। कमलेश्वर में कहीं जटिलता नहीं है। 'राजा निरबंसिया' में यदि शिल्प की एक विशिष्ट स्थिति है तो उसमें कथ्य की प्रामाणिकता भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। और कथ्य की यह प्रामाणिकता ही लेखक को प्रादेशिक सीमाओं और वर्गीय संस्कारों से बाहर निकालकर उसे पूरे समाज और परिवेश का प्रतिनिधि रचनाकार बना देती है। कथ्य के विभिन्न धरातलों की खोज भी लेखक की व्यापक दृष्टि को रूपायित करती है। कमलेश्वर का 'कस्बे का आदमी' जहाँ आज के सामाजिक यथार्थ की संवेदना के स्तर पर प्रस्तुति है वहाँ 'खोई हुई दिशाएँ' महानगरीय जीवन के अकेलेपन, खोखलेपन, परायेपन और ऊब से भरे हुए विवश जीवन का अत्यन्त मार्मिक अंकन है। इसमें महानगर की यान्त्रिकता और उसमें पिसता हुआ व्यक्ति भी व्यक्त हुआ है और प्रेम करने की विवशता भी रेखांकित हुई है। यह अकेली कृति हमारी शिक्षा पद्धति पर भी व्यंग्य करती है और व्यक्ति के परायेपन और निरर्थकता का अहसास कराने में भी इसका महत्त्व कम नहीं है। दूसरी ओर 'युद्ध' जैसी कहानियाँ हैं जो अपने कसाव और सांकेतिकता में अत्यन्त मर्मस्पर्शी बन गयी हैं। एक युद्ध है जो देश की सीमाओं पर लड़ा जा रहा है लेकिन इस युद्ध से उस बेकार नवयुवक का युद्ध (संघर्ष) कम महत्त्व नहीं रखता जो वह अपनी ही धरती पर अपने पैर जमाने के लिए निरंतर महानगरों के रास्तों को नापते हुए लड़ रहा है। 'युद्ध' के दौरान के परिवेश को उभार कर उसमें इतनी सांकेतिकता भर देना एक व्यापक दृष्टि से सम्पन्न कलाकार की अपेक्षा रखता है। और कहना न होगा कि कमलेश्वर में यह दृष्टि निश्चित रूप से विद्यमान है।

सामाजिक यथाथ का कही गहरे स्पर्श करती हुई एक और कहानी है— 'दूसरे'। 'दूसरे' म सुनीता के माध्यम स निम्न मध्यवर्गीय परिवार की विवशता ही व्यक्त हुई है आर्थिक विवशता के कारण सम्पूण परिवार के बचारे बन जाने की स्थिति का मार्मिक चित्रण भी हुआ है। उस सामाजिक व्यवस्था का क्या कहा जाय जहाँ एक डिग्रीधारी सुशिक्षित नारी का दो सवा दो सौ रुपये की पक्की नौकरी पाने का सपना भी पूरा नही हो पाता और इसीलिए अपनी जिंदगी का फैसला करने का अधिकार भी उसके पास नही रह जाता। आर्थिक विपन्नता के कारण किस प्रकार अदृश्य रूप से परिवार म दूसरे लोग घुस आते हैं और उसके सारे फैसले अपने हाथ म ले लेते हैं। आर्थिक अनिश्चितता की स्थिति म किस प्रकार घर और बेचारा होता जाता है किस प्रकार उस पर दबाव बढते जाते हैं और किस प्रकार ये दबाव परिवार के सदस्यों को सन्त्रस्त करते हैं—इस सबका मार्मिक चित्रण सामाजिक चेतना के स्तर पर 'दूसरे' म अपनी सम्पूण प्रभावशालिता और सहजता के साथ सम्पन्न हुआ है इससे इन्कार नही किया जा सकता। यह कहानी 'वस्तु' को लेकर तो पाठक को झकझोरती ही है शिल्प के स्तर पर भी अत्यन्त आकर्षक बन पडी है—इससे इसका वैशिष्ट्य और बढ गया है।

यह नही कि कमलेश्वर की कहानियो म यह मार्मिकता और विशिष्टता यो ही आकस्मिक रूप स आ गयी है। यदि हम कमलेश्वर की कहानियो का रचनाक्रम के अनुसार अनुशीलन करें तो हम उनम एक निश्चित विकास क्रम और साथ ही एक आकार लेती हुई दृष्टि परिलक्षित करते है। 'थानेदार मोहन' और 'गाय की चोरी' आदि प्रारम्भिक कहानियो की तुलना म 'मानसरोवर के हस' और 'खोई हुई दिशाए' पाठक को एक सुखद आघात दे जाती हैं। और इस सबके पीछे निरतर परिवेश सम्बन्धी अपनी समझ को बढाना और यथाथ को अपनी वस्तुपरक दृष्टि स देखने का अभ्यास और साधना तो है ही, व्यवस्था के षडय त्रो को उनके गहरे म जाकर जानने की एक निरतर गहरी बनी रहने वाली ललक भी है जो एक बिन्दु पर सतुष्ट होकर, बिना विश्राम किये हुए दूसरे बिन्दु की ओर बढ जाती है। कमलेश्वर का यथाथ बोध और सोच उनके कहानीकार की दिशा निश्चित करने म सहायक रहा है। दूसरे शब्दो म कमलेश्वर का चितक और रचयिता इन दोनो म परस्पर सहयोग और समन्वय की स्थिति बनी रही है। इसीलिए ये रचनाएँ नितान्त वैयक्तिक मन स्थिति की अभिव्यक्ति न बन कर सम्पूण सामाजिक चेतना को ध्वनित करने की सामर्थ्य से आपूण दिखलाया पडती है जिनमे सामाजिक यथाथ तो है ही सामाजिक सस्कार का भी सकल्प है और एक वृत को छोडकर निरतर अपनी सीमाओ को व्यापक बनाने का उपक्रम है। यह उपक्रम कमलेश्वर के व्यक्ति और कथाकार दोनो म स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

जैसा कि मैंने कई बार दोहराया है कि लेखन की सार्थकता के लिए उसका लक्ष्य केंद्रित होना आवश्यक शर्त है स्वस्थ सप्रेषणशील और रचनात्मक दृष्टि से ऊर्जस्वित लेखन ही साहित्य की कोटि म आ सकता है। इसी प्रकार के लेखन से भ्रष्ट कुत्सित कुठित और बीमार वातावरण के मध्य परिवर्तन के लिए एक विशिष्ट प्रकार की मकल्पित मानसिकता तैयार हो सकती है। इससे परिवर्तन की प्रेरणा ही नही मिलती बल्कि परिवर्तन की पृष्ठभूमि भी तैयार होती है। और परिवर्तन की पृष्ठभूमि तैयार होना परिवर्तन होने से कम महत्त्वपूर्ण नही है। लक्ष्य-केंद्रित लेखन का महत्त्व इस बात म भी है कि उससे अपने समय की विकृतियो से सघर्ष करने की प्रेरणा मिलती है। यदि किसी लेखन से अपने समय म व्याप्त विकृतियों को समझने और उनस सघर्ष करन की प्रेरणा नही मिलती और यदि उसका लक्ष्य *पाठक के मन म एक धुधलका उत्पन्न करना अथवा सस्ता मनोरजन प्रदान करना* हो जाता है तो यह मान लना चाहिए कि ऐसा लेखक या तो भ्रष्ट व्यवस्था से जुडा हुआ है या अपने तथा अपने परिवार के लिए कुछ भौतिक सुविधाओ का जुटाने के निमित्त पूरी पीढी के साथ गद्दारी कर रहा है। ऐसी स्थिति म यह बहुत आवश्यक हो जाता है कि पाठक इस षडयन्त्र से सचेत रहे। यह अत्यन्त उत्साहवर्धक तथ्य है कि १६६५ ७० के आसपास से हिन्दी कहानी की लक्ष्य-केंद्रिकता सही अर्थों मे और सही भूमिका पर निश्चित हुई है। इसकी भूमिका के निर्माण मे जिन प्रतिभाओ का योग और श्रम लगा है उनम अमृतराय धर्मेन्द्र गुप्त मार्कण्डेय भीष्म साहनी ज्ञानरजन राजेन्द्र यादव मोहन राकेश आदि के साथ साथ कमलेश्वर का योग भी विशिष्ट है। नयी कहानियाँ के सम्पादकीय लेखो मे रचनाधर्मिता के इसी केन्द्रीय बिन्दु को अनेक कोणों से स्पष्ट करने का प्रयास कमलेश्वर न किया है। नयी कहानी के प्रवक्ता के रूप म कमलेश्वर ने प्रस्थापित करना चाहा है कि नयी कहानी जीवन की समस्त विसगतियो और दबावो को महसूस करती है। *नयी कहानी जीवनानुभव पहले है और कहानी बाद म*—ऐसा कह कर कमलेश्वर ने कहानी को उस पारम्परिक धारा से काट देने का प्रयास किया है जिसम रूमानियत, कल्पनाशीलता आदर्शवाद तथा उपदेशात्मकता के साथ साथ नैतिकता और ब्राह्मणवाद का प्राधान्य था। अब इस आशय की अभिव्यक्ति दी गयी कि नयी कहानी द्वारा जीवन से साहित्य की दिशा म जाने का पथ प्रशस्त होता है। इसम अनुभूति की प्रामाणिकता को रचना प्रक्रिया का मूल अश माना गया। कमलेश्वर के अनुसार पुराने कहानीकारो का रास्ता 'साहित्य से जीवन की ओर' *का था क्योंकि वे आदमी के सामने खडी भयावह परिस्थितियो का देखना हेय* समझते थे। वे अपने शीशमहलो म बद थे और निरतर बदलती परिस्थितियो के प्रति उदासीन। कमलेश्वर न कहानी को मात्र जीवन-खण्डो अथवा घनीभूत क्षणो

का मम्प्रेषण न मान कर उसम निहित अर्थों और मूल्यों की कहानी माना है। ये मूल्य अनक स्तरों पर घटित होते हैं और अपने परिवेश से उद्भूत प्रामाणिक अनुभव की गम्भीर सवेदनात्मक प्रतीति कराते हैं। परिवेश से उद्भूत प्रामाणिक अनुभव की प्रतीति के लिए कहानीकार का परिवेश से जुडना अर्थात् सामाजिक हलचलो से सम्पृक्त होना आवश्यक है। शीशमहल म रह कर सामाजिक चेतना का जायज़ा नहीं लिया जा सकता। कमलेश्वर न आज की कहानी म अनेक स्तरों पर घटित होने वाले मूल्यों की बात कह कर कहानीकार की सामाजिक जागरूकता को विशेष महत्त्व दिया है। इसी सदर्भ म कमलेश्वर ने शाश्वत मूल्यों की बात भी उठायी है। उन्होंने रूढ़ियों को शाश्वत मूल्य' मानने वाले पुराने ब्राह्मणवादी कहानीकारों की मान्यताओं को खंडित किया है और साथ ही नयी कहानी को उस अस्वस्थ, आग्रहमूलक परम्परा से काट कर अपने परिवेश म साँस लेते जीवन जीते आदमियों की कहानी के रूप म प्रस्तुत किया है। कमलेश्वर न यह भी स्थापित किया है कि नयी कहानी म आम आदमी के साथ-साथ कहानीकार के आत्म-सघर्ष को भी अभिव्यक्ति मिली है। उसकी कहानी इसीलिए सामाजिक चेतना स आपूर्ण है कि वह (कहानीकार) स्वय सश्लिष्ट जीवन की सवेदना से जुड़ा हुआ है।

पुराने खेवे के अनेक कहानीकारो के व्यक्तित्व खण्डन के बाद भी कमलेश्वर प्रेमचन्द, यशपाल और अमृतलाल नागर आदि की कृतियों को नयी कहानी की विकास प्रक्रिया म आवश्यक प्रेरणा के रूप म ग्रहण करते हैं। इस प्रकार नये होने पर भी परम्परा का अशेष निषेध कमलेश्वर म नहीं है। साहित्य को वे एक नया और स्वस्थ सस्कार देने वाला मानते हैं। वे मानते हैं कि साहित्य से उदात्त सामाजिक मूल्य स्थिर होते हैं वृत्तियों का परिष्कार होता है सौन्दर्य बोध उदार बनता है और मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा द्वारा दायित्व भावना को अभिव्यक्ति मिलती है—और यही हमें उद्बुद्ध ऐतिहासिक परम्परा से जोडता है। यह काय वही साहित्य सम्पन्न कर सकता है जिसकी अपनी जड़ें गहरी समाजिकता म बैठी हुई हो। इस प्रकार सामाजिक प्रयोजनशीलता की प्रतिष्ठा साहित्य का विशिष्ट उद्देश्य हो जाता है। यह प्रयोजनशीलता तभी सार्थक हो सकती है जब साहित्य मानवकेन्द्रित हो और उसम आम आदमी के दु ख-सुखों से जुड़ने का अर्थात् उनसे प्रतिबद्ध होने का भाव निहित हो। कमलेश्वर की कहानियो मे इसी आम आदमी का—सम्प्रदाय, धर्म और वर्ग स मुक्त आदमी को—अभिव्यक्ति मिली है। कमलेश्वर ने इस आदमी को सद्धान्तिक भूमिका पर परिभाषित किया है। उनके अनुसार यह आदमी न जन सशयवाद का शिकार है न बौद्ध दु खवाद का न हिन्दू भाग्यवाद का। वह चाहे तो अतिशय अकिंचन और अतिसाधारण हो, चाहे नितान्त भौतिक आवश्यकताओ का मारा हुआ, पर है वह आम आदमी। अपने

सर्वत्र व्याप्त है। इस छल ने हमेशा कमज़ोर सीधे ईमानदार, असहाय और दयनीय व्यक्ति का ही शोषण किया है।

सामाजिक बदलाव के साथ साथ व्यक्ति के परस्पर सम्बन्धो म भी बदलाव की स्थिति उत्पन्न हुई है। कमलेश्वर की कतिपय कहानियो म सम्बन्धो के बदलन और टूटन का यह कथा भी बडी मार्मिकता के साथ कही गया है। वैसे सम्बन्धो के बदलाव की दृष्टि से हिन्दी म अत्यन्त मार्मिक कहानियाँ लिखी गयी हैं। उषा प्रियम्वदा की 'वापसी' तथा ज़िंदगी और गुलाब के फूल' मनोहरश्याम जोशी की एक दुलभ व्यक्तित्व' भीष्म साहनी की चीफ की दावत, शानी की गँदले जल का रिश्ता', माकण्डेय की 'गुलरा के बाबा, राजेन्द्र यादव की बिरादरी बाहर तथा मन्नू भण्डारी की अकेली इस सन्दभ म अत्यन्त प्रसिद्ध रचनाएँ ह जो आज के जीवन म रिश्ता की पहचान का धुधलान का स्वर व्यक्त करती ह। इस दिशा म कमलेश्वर की 'किसके लिए' तथा 'दुनिया बहुत बडी है उल्लेखनीय कृतियाँ ह। इन रचनाओ म कही भी फशन-परस्ती या आग्रह का अवकाश नही है। इन सबके कथ्य सामान्य मध्यवर्गीय जीवन के यथाथ बोध स समन्वित हैं और इन सबम व्यक्ति के सत्रास को अनेक कोणा से निखलाने का प्रयास हुआ है। समाज म व्याप्त अराजकता का स्थिति को कमलेश्वर के कहानीकार न खूब पहचाना है और उसको उसी यथार्थपरकता और सलग्नता क साथ अभिव्यक्त भी किया है। बस यह नही कि कमलेश्वर की रचनाओ म छायावादी शब्दावली और छुअन का नितान्त बहिष्कार है। स्त्री-पुरुष सम्बन्धो की अपनी कतिपय रचनाओं (जसे नीली झील, राजा निरबसिया और साप आदि) म हम भाषा की रूमानियत और सनसनाहट परिलक्षित करत है। लकिन ये कहानियाँ कमलेश्वर का केन्द्रीय कथ्य नही है जसे उत्तमी की मा अथवा फूलो का कुरता यशपाल की केन्द्रीय कहानिया नही कही जा सकती। कमलेश्वर का मूल स्वर समस्त दबावो के बीच जी रहे आम आदमी का अभिव्यक्त करता है। इसी आम आदमी की प्रस्तुति और इसकी मुक्ति क लिए सामाजिक चतना को व्यापक सीमाओ तक व्याप्त कर देने का प्रयत्न कमलेश्वर के कहानीकार का वशिष्ट्य है और इसी सन्दभ मे उनकी कहानिया का आकलन किया जाना चाहिए। नयी कविता के प्रवचनकार लघु मानव की प्रतिष्ठा क प्रयत्न म स्वय लघु होकर रह गये लेकिन आम आदमी की प्रतिष्ठा म नयी कहानी और कमलेश्वर को अप्रतिम सफलता मिली है। इसका एकमात्र कारण यह है कि अपन इस प्रयास म उन्होंने व्यापक सामाजिक दृष्टि को कही भी स्खलित नही होन दिया है और अपन लखक को 'सश्लिष्ट जीवन की सवेदना के साथ सदव जोड कर रखा है।

सुधा अरोड़ा

समातर रचनादृष्टि और कमलेश्वर की कुछ कहानियाँ

कमलेश्वर के कथाकार के बारे मे अक्सर यह कहा गया है कि उनम अपने आपको तोडकर दुबारा बनाने की अदभुत क्षमता है। इस उक्ति की प्रशसात्मकता चाहे जितनी प्रामाणिक हो, इसका विश्लेषण हम किसी दोषमुक्त निष्कर्ष तक नही ले जाता।

क्या कोई भी समयसगत कथाकार अपने-आपको तोडकर पुन क-ख ग स एक नयी शुरुआत कर सकता है? और सचमुच वह ऐसा करता है तो क्या उसका पहले का लिखा हुआ सब कुछ समय की कसौटी पर गलत और झूठा नही हो जाता? दूसरा प्रश्न यह भी उठाया जा सकता है कि अगर रचनाकार की सगत रहने की शक्ति मात्र उसके अपने रचनात्मक तेवर को झटका देने तक ही सीमित है तो कथाकार और सक्स के मच पर अपने जिस्म को आश्चयजनक ढग से तोडन, मरोडन और विकृत करने वाले 'इडिया रबर मैन' म फक ही क्या रह जाता है?

अगर 'कथाकार' शब्द क अतगत उन रूपवादी लेखको को शामिल न किया जाये जो शिल्प को एक माध्यम की तरह इस्तेमाल करते हैं और कथ्य को एक जायका बदलने वाल व्यजन की तरह तो निश्चय ही यह कहा जा सकता है कि कहानी अपने समय का एक जरूरी दस्तावेज प्रस्तुत करती है और इसम आने वाल परिवतनो की जाँच-परख भी परिवतनशील समय-सत्य के सदभ म ही की जानी चाहिए।

कमलेश्वर की कहानियो पर बातचीत करते समय इस शत को सामने रखना और भी जरूरी हो जाता है क्योंकि वह बदलते हुए कथा-परिदश्य म लगातार एक चर्चित और प्रशसित कहानीकार रह हैं। नयी कहानी स लेकर समातर कहानी तक के कमलश्वर का विकास एक सवेदनशील और 'पोलिटिकल' लेखक का अनिवाय और समयसगत विकास है। इस विकास म उनकी अपने-आपको 'नकारने' या 'तोडन' की फ़ैशनेबल प्रक्रिया नही रही, वल्कि समय के अनुरूप

अपनी अभिव्यक्ति को 'ढालने' की उनकी एक सहज और जरूरी कोशिश रही है। निसदेह कमलेश्वर की बहुत-सी कहानियाँ शिल्प और प्रयोजन प्रवणता के सुदर उदाहरण प्रस्तुत करती हैं, परतु उन कहानियो की भी सफलता या सप्रेषणीयता का प्रमुख कारण उनका शिल्प न होकर उनका गहन कथ्य है जो परिवेशतप्त सच्चाइया की अभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त शब्द म ढाला गया है। ऐसे म यह जरूरी लगता है कि कमलेश्वर की ताजा कहानियों का मूल्याकन उनकी तात्का लिक प्रायोगिकता के प्रशसात्मक जुमला से हटकर एक कथाकार की समय सापेक्ष रचना शक्ति और उसके विकास की अनिवार्यता के सदभ म किया जाय।

समातर कहानी की वैचारिकता, एक नारा उछालन वाले जुलूस की भीड-छाप और सनसनीखेज अभिव्यक्ति न होकर अनुभव सत्य द्वारा चालित रचनात्मक चिंतनक्रिया है। सहज शब्दा मे कहा जाय ता यह अपने परिवेश की आवाजो को स्वर और दिशा देने का दाहरा दायित्व निभाती है। अनुभव और यथाथ द्वारा प्रेरित ये स्वर नयी कहानी के समय भी मौजूद थे परतु तब वे स्वर पाठक को सिफ अपने समय की झलक देकर रह गये थे समयगत अनुभव का अथ' उनम कही अभिव्यक्त नही हुआ था। नयी कहानी को ऐसा भी होता है कि ' की तटस्थ और अप्रतिबद्ध स्थिति से बहुत आगे निकलकर अब समातर कहानी एसा इसलिए होता है क्योंकि ' कहने की साहसिकता निभा रही है। यह फक एक बदली हुई मानसिकता का फक है, इसम अपने से पीछे के कथ्य को नकारन का भाव नही है। यह फर्क कमलेश्वर की खोयी हुई दिशाएँ और जोखिम के बीच का फक है। य दोनों कहानियाँ क्रमश एक दौर की समाप्ति और दूसरे का उदघोष करने वाली महत्त्वपूण रचनाएँ हैं जिनके माध्यम से नयी कहानी स समातर कहानी के बीच के ट्राजिशन को पूरी तरह समझा जा सकता है। बल्कि अगर यह कहा जाये कि खोयी हुई दिशाएँ म समातर कहानी के सकेत मिलत दिखायी देते हैं तो बहुत गलत नही होगा। खोयी हुई दिशाएँ का चदर हम महानगरीय परिवेश मे दिग्भ्रमित सी हालत म खडा मिलता है अपनी जिंदगी के सही नुक्ते तलाशता हुआ। अपने यथाथ और यथाथ-जन्य अनुभव के अर्थों तक पहुँचने की एक बतरतीब सी कोशिश इस कहानी म उभरी है। चदर की विक्षिप्त जिंदगी के बिलकुल अनुरूप। 'जोखिम' मे इस बतरतीब जिंदगी की यतणा के पीछे छिप कारण हम एक बिंदु पर आकर जुडते हुए दिखायी देते हैं। और लखक इम कहानी म तकरीबन चदर जसे ही भटक हुए नायक को एक अनोखी विश्लेषण-क्षमता देता हुआ चलता है। यह विश्लषण-क्षमता चदर ने नयी कहानी के दौर म हासिल नही की थी।

जाखिम' म नायक सोचता है

'तब ये इमारतें सहसा और ऊपर उठ जाती हैं। आसमान म बने

घरों की रोशनी मुझे त्रस्त करती है। उनकी झिलमिलाती दूधिया रोशनी रेशमी तन छोटे छोटे पत्थरों पर बहते झरने के पानी की तरह गूजती मदमस्त खिलखिलाहट बेपरवाही का आलम और उनके चेहरों की निश्चिंतता मुझे कचोटती है। इनके दुःख कहाँ हैं ?'

'मुश्किल यही है कि हमारे जैसे लोगों के साथ कोई दुघटना नहीं होती। अच्छी न बुरी। हम सागर की निचली सतह की तरह ठहरे हुए बस काँपते रहते हैं। लहरों का शोर गति और उनका टूटना बिखरना ऊपर ही होता है।

'मुझे लगा कि जो वक्त अपने फैसले के मातहत गुजारा जाता है वही भारी पड़ जाता है। सिर्फ वही वक्त पश्चाताप का कारण बन जाता है '

मैं जानता था कि अब मेरा क्या होगा ? इस दोगली अर्थ व्यवस्था में मैं कब तक भटकता रहूँगा और उन लोगों की दिक्कतें कब खत्म होंगी, जिनके सामने मैं खुद को बुनगज लगने लगता था।

खोयी हुई दिशाएँ में कमलेश्वर ने अपने परिवेश से संतप्त नायक की *विच्छिन्न मनःस्थिति को प्रस्तुत किया था। एक भीड़ भरे माहौल में आदमी के* डूबते चले जाने की प्रक्रिया उसकी भयावह दिशाहीनता और व्यक्तित्वहीन होते चले जाने की स्थिति इस कहानी में उभारी गयी थी। परन्तु खोयी हुई दिशाएं का चंदर जोखिम के नायक के मुकाबले अधिक प्रबुद्ध होते हुए भी एक निश्चित दिशा में सवाल पूछता हुआ दिखायी नहीं देता। दरअसल खोयी हुई दिशाएं उस मोहभंग की स्थिति की अंतिम परिणति की कहानी है जिसके बारे में नयी कहानी के दौर के बाद काफी लिखा गया है। मोहजाल को तोड़कर भारतीय मानस सातवें दशक के मध्य में अपेक्षाहीनता की जिस चरम स्थिति तक पहुँचा था शायद उसका एक चित्र कहानी 'नागमणि' में है। (हिन्दी का प्रचारक जब अन्ततः विक्षिप्त होकर मात्र अंग्रेजी बोलने लगता है) लेकिन जोखिम इस अपेक्षाहीनता से आगे की रचना है। 'जोखिम' का नायक व्यापक भारतीय फलक पर सताए हुए साधनहीन जन का प्रतीक बनकर हमारे सामने आता है। यह नायक बार-बार अपनी और माँ की चिंताजनक हालत को लेकर सवाल पूछता है उन सवालों को अपने निष्कर्षों की कसौटी पर परखने की कोशिश भी करता है। एक दूसरे के हितों के विपरीत काम करने वाले दो वर्ग समाज में एक साथ समानता में पनप नहीं सकते यह वह जानता है, और पूरी अर्थव्यवस्था के आगे प्रश्नचिह्न लगाता दिखायी देता है। यह समय जन्य समझ जहाँ एक तरफ उसे तमाम तकलीफों को बड़ी सहजता से झेलने की शक्ति देती है वहीं दूसरी ओर इस पक्षपातपूर्ण आर्थिक स्थिति के भयावह परिणामों की ओर भी इंगित करती है। कहानी के अंत में प्रतीकात्मकता

के माध्यम से लेखक न यथार्थ को एनलाज किया ह। 'एनलाजमट' का यह प्रयोग कमलश्वर 'जाज पचम की नाव' मे भी प्रभावशाली ढग से कर चुके थे। परन्तु 'जाखिम म यथार्थ और प्रतीकात्मकता का समन्वय जहा नायक और 'मा' की तकलीफ का एक नयी अथवत्ता देता ह वही दुख' को ग्लोरिफाई करने की साजिश का पर्दाफाश भी करता है। निस्सदेह अनुभव के सारे व्यापक अर्थ यहा उदघाटित होने हैं और यह कहानी खोयी हुई दिशाएँ की इकहरी 'धुआँ धुआं' सी अनुभूति के मुकाबल एक नश्तर की धार की तरह समूचे परिवेश को एक झटके के साथ दो टुकडे करके पाठक के सामने रख देती है।

कमलेश्वर की 'जोखिम' और इसके साथ ही कहानी क माध्यम से अपने समय स सीधी टक्कर लेने वाल दूसरे तमाम कहानीकारो की रचनाआ ने सातवें दशक क अत तक समकालीन हिन्दी कहानी के परिदृश्य को किस तरह बदला है और प्रभावित किया, यह शायद आज से कुछ वर्ष बाद अधिक सही ढग से बताया जा सकेगा पर निश्चय ही जोखिम समातर कहानी के उद्भव के समय की ही नहीं, स्वातत्र्योत्तर हिन्दी कहानी के विकास की एक महत्त्वपूर्ण कडी कही जा सकती है।

खोयी हुई दिशाएँ और जोखिम के बीच कमलेश्वर ने जो कहानियाँ लिखी उनम अपन परिवेश से 'इटरक्शन' और उसे पहचानने की कोशिश की स्थितिया हम अधिक दिखायी देती हैं। इनम 'या कुछ और ' नागमणि' और बयान प्रमुख हैं। ये तीनो ही समातर कथाकार कमलेश्वर की प्रतिनिधि रचनाएँ हैं जिन पर कुछ विस्तार से बात करना आवश्यक है।

'या कुछ और ' लेखन-काल ही नही शिल्प और कथा-सयोजना की दृष्टि से भी खोयी हुई दिशाए और 'जोखिम' के बीच की कहानी ह। जोखिम की मी मूड सरचना इस कहानी म कहीं-कहीं ह खोयी हुई दिशाएँ की अनिश्चय भरी छटपटाहट भी है, परन्तु कुल मिलाकर इसका वक्तव्य इन दानो कहानिया से काफी भिन्न ह। रामनाथ की जिंदगी का अभाव शाम के धूसर अँधेरे की तरह अस्पष्ट ह और शकुतला के साथ उसने जो आत्मीय रिश्ता बनाया है, उसकी पृष्ठ भूमि म भी किसी निश्चित अपेक्षा की शिनाख्त न कर पान का ही भाव ह। परन्तु रामनाथ के अतस की छटपटाहट जहा एक आर सीमाआ मे जकडे जिन्दगी के ठहराव के खिलाफ ह वही लेखक अपने इस खामोश पात्र के जरिये जीवन-परम्परा के स्थापित मगर न्यय मूल्या पर प्रहार भी करता हैं। कुछ इसी तरह का स्पष्ट वक्तव्य बहुत पहल कमलश्वर ने अपनी कहानी देवा की माँ म भी दिया था। रामनाथ का शादी क मौके पर शकुतला को अपन पारिवारिक घेरे म शामिल कर पाना शायद कुछ भी तय नही करता, पर फिर भी रामनाथ के लिए वह किसी गहरी आन्तरिक उपलब्धि का कारण बन जाता हैं। इस प्रतीकात्मक विजय क

माध्यम से लेखक समसामयिक आदमी की भावात्मक ज़िंदगी के पक्ष म एक बहुत खामोश मगर सुस्पष्ट वक्तव्य दे जाता है।

'नागमणि' अधिक बड़े कैनवस की कहानी है जिसका कथ्य दो अलग अलग समातर धाराओ मे चलता ह। प्रचारक विश्वनाथ हिन्दी के प्रसार के लिए अपनी ज़िंदगी के सारे अवसरो को खो देते हैं अपनी आँखा म एक बहुत उजला सा आदश सजोए, जिसकी भयावह न्यथता अतत उन्हे सामान्य बोलचाल के लिए भी अँग्रेज़ी का प्रयोग करने पर मजबूर कर देती है। एक अधिक व्यापक स्तर पर यह कहानी राष्ट्रीय मूल्यों के क्रमबद्ध ह्रास की ट्रजडी' को भी व्यक्त करती है। इस ट्रेजेडी के पीछे बहुत से सश्लिष्ट कारण है जो आदमी को सीमित दायरे और क्षेत्रा म बाँट कर जीना सिखाते हैं। कहानी के नायक विश्वनाथ की व्यक्तिगत क्षति को लेखक ने विश्वनाथ और उनकी भाभी के बीच टेन म गुज़री रात के माध्यम से बहुत मार्मिक ढग से उभारा है। विश्वनाथ उन खूबसूरत तसवीरो को पीछे छोड़कर अपने अधिक महत्त्वपूण आदश की तलाश म आग निकल जाते हैं। परतु यहाँ भी उन्हे भटकाव और विक्षिप्ति ही हासिल होती है क्योंकि हर रास्ता घूम फिर कर सकुचित चिता की उन्ही परिचित घुटनभरी गलियो की ओर मुड़ता दिखायी देता है।

'बयान' भी स्वतन्त्र देश म स्वतन्त्रता से ज़िंदा रहने की इच्छा रखन वाले एक सही व्यक्ति पर चारो तरफ से पड़ने वाले भ्रष्ट सामाजिक दबावो की कहानी है। इस कहानी की स्त्री का बयान सिफ एक व्यक्तिगत दुघटना का अतरग चित्र ही नही उस समूचे भ्रष्ट पूजीवादी सामाजिक-आर्थिक ढाचे का कच्चा चिठ्ठा है जिसके अतगत एक सर्जक अपनी कला और अपनी गैरत को बाज़ार म बेचे बगर ज़िंदा नही रह सकता। बयान' की स्त्री का वक्तव्य उस लम्बे चौड़े तत्र की साज़िश के खिलाफ उभरने वाला बालद स्वर है जिसके अतगत हर फैसला व्यक्ति के खिलाफ ही हो सकता है और जहाँ आदमी की पहचान सिफ बाज़ार म अपने आपको खपा सकने की अमानवीय व्यापार-पटुता पर निभर करती है। कमलेश्वर ने इस कहानी मे सहज और सपाट शली के माध्यम से समाज द्वारा कलाकार की योजनाबद्ध हत्या (अदालत के शब्दो मे आत्महत्या) का दहला देने वाला वणन प्रस्तुत किया है। यह वणन एक व्यक्ति की ट्रजेडी का बयान भी हो सकता है और व्यापक सामाजिक स्तर पर उस 'टूटन' का दस्तावेज़ भी जो स्वातन्त्र्योत्तर सामान्य जन के जीवन की खास पहचान बनती चली गयी था।

'या कुछ और , नागमणि और बयान —इन तीना कहानिया पर एक साथ दृष्टिपात करन पर हम समकालीन परिवेश और उस परिवेश म घुटनपूण ज़िन्दगी जीने पर मजबूर होते हुए सामान्य भारतीय जन की एक बहद तसवीर खुलती हुई दिखायी दती है। कमलेश्वर की इन कहानिया क पात्र विभिन्न सामा

जिक और आर्थिक दबावो तल जि दा हैं, परन्तु स्वभावत वे समझौता परस्त नही हैं। इन कहानियो के पात्रों के माध्यम से कमलेश्वर ने बहुत नियोजित ढग से सामान्यजन की उस अद्भुत सघर्षशक्ति का रेखाकन किया है जो सारे बाहरी दबावो के बावजूद परिवर्तन की रचनात्मक भूमिका तयार कर रही है। आदमी की जिन्दगी जा सकने की इस शक्ति का एक अन्य उदाहरण है कहानी—उस रात वह मुझे ब्रीच कैंडी पर मिली थी।' यह कहानी मूलत अनुभूतियो और आवेगो की रचना है जिसम लेखक समुद्र-तट पर सिर पटकती लहरो मूसलाधार बारिश और बारिश म कही दूर नाव से उतरती लाश, और उसके इस तरफ एक बेंच पर सारे दुखो के बावजूद अन्तरगता के पवित्र क्षण बाँटते एक जोडे के माध्यम से आदमी की आश्चर्यजनक और जरूरी जिजीविषा की तह तक पहुँचता है। निश्चय ही 'उस रात वह मुझे ब्रच कडी पर मिली थी' कमलेश्वर की एक अत्यन्त आशावान रचना है जिसे सम्भवत इसके शीर्षक के कारण कुछ लोगो ने सिर्फ प्रयोग की सज्ञा देने की कोशिश की है।

राजनीतिक सन्दर्भों की कहानियाँ कमलेश्वर ने नयी कहानी के दौर मे भी लिखी थी जिनम शायद जाज पचम की नाक' को सबसे ऊपर रखा जा सकता है। अद्भुत व्यग्यात्मकता का परिचय दन वाली इस कहानी के बाद इधर की समातर कहानियों म कमलेश्वर की दो अन्य राजनीतिक रचनाएँ—लाश और 'रातें विशेष उल्लेखनीय हैं। इन दोनो ही कहानियो म लेखक ने सत्ता, लालफ़ीताशाही, प्रभुताशाली वग धर्मिता और सामाजिक प्रास्टिट्यूशन को निशाना बनाया है। कमलेश्वर के राजनीतिक व्यग्य का पूरा निखार हम 'मानसरोवर के हस' मे दखने को मिलता है, जहाँ लखक ने अपनी अद्भुत भाषा शली के जरिये साम्राज्यवादी सत्ता व उन दलालो की साजिश की ओर सकेत किया है जो हर युग म आततायी ताक़तो के साथ वेश बदलकर सघर्षशील आदमी को छलत और गुमराह करत हैं। इस कहानी म कमलेश्वर की व्यग्यात्मकता मात्र राजनीतिक न होकर उस पूरे परिवेश को समेटती है जिसके अतगत साम्राज्यवादी और फासिस्ट ताक़तो का हाथ बँटाने के लिए सेनापति विश्वासघात करत हैं धम और आध्यात्म को एक हथियार की तरह इस्तेमाल किया जाता है और साहित्य सौन्दयवाद और समाज निरपेक्षता की दुहाई देकर सघर्ष की सही जमीन से दूर भाग जाता है। परन्तु इसके साथ ही लेखक इस कहानी म बहुत दृढ़ता के साथ यह भी व्यक्त करता है कि इन स्थितियों को पैदा करने वाला को इतिहास और इतिहास को बनाने वाला सामान्य जन कभी माफ़ नही करता, उनके सारे पश्चाताप के बावजूद।

'इसके बाद सेनापति चाचा वही से ग़ायब हो गय थे और तिब्बत म जाकर बौद्ध हो गये थे। और तीस साल बाद अनागरिक होकर लौटे थे। वह मेरे चाचा भी थे यह पश्चाताप के मारे हुए

भी थे पश्चात्ताप की पवित्रता का लबादा ओढे हुए। पर इससे क्या होता है अ ना ? यह तो बिलकुल दूसरी कहानी है जो तथाकथित मानववादी सौदर्यवादी कहानीकार कभी तुम्हें सुनायेगा। वह न मेर वश की है और न मेरे समय की ।"

निस्सदेह राजा निरबसिया से लेकर मानसरोवर के हस' और 'इतने अच्छे दिन तक के कथाकार कमलेश्वर का रचनात्मक विकास अपने समय और अपने लोगों से अन्तरगता से जुडे हुए लेखक का गौरवशाली विकास है। समयगत सत्य और समातर रचना ²ष्टि के उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करने वाली य कहानियां न सिफ कमलेश्वर का अपने युग के अग्रणी कथाकार के रूप मे स्थापित करती हैं बल्कि आज के सामा य जन की समूची तकलीफ को सम्यक स्वर भी देती हैं।
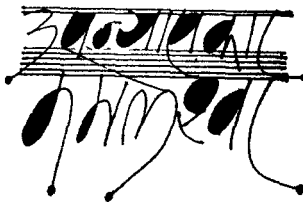
कमलश्वर

प्रेमचद ने शुरू शुरू मे ही कहा—'हमारे पथ मे अहवाद अथवा अपने व्यक्तिगत दष्टिकोण को प्रधानता देना वह वस्तु है, जो हम जडता, पतन और लापरवाही की ओर ले जाती है और ऐसी कला हमारे लिए न व्यक्ति रूप मे उपयोगी है और न समुदाय रूप म। (साहित्य) अब व्यक्ति को समाज से अलग नही देखता किंतु उसे समाज के एक अग रूप मे देखता है।"

•

स्वातत्र्योत्तर काल के कथाकारो म कमलेश्वर एक प्रमुख नाम है जीवन की असगतियो के बीच ताल मेल बठाने की जद्दोजहद करने वाले कमलेश्वर की कथाकृतियों म मध्यवग का यथाथ स्पष्ट रूप से उभरा है। सच तो यह है कि कमलेश्वर अपनी कथाओ म युग-सत्य को उद्घाटित करने म अत्यन्त सफल रहे हैं। उनके लघु उपन्यासों मे बडी सूक्ष्मता और साकेतिकता के साथ नये सामाजिक यथाथ को निरूपित किया गया है। यही नही स्वातत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य को विकास और नयी दिशा देने म उनका महत्त्वपूण योग है। युग और समाज को एक सम्पूण परिवेश म प्रकट करने की लेखकीय उत्कण्ठा के परिणामस्वरूप लिखे गये उनके उपन्यासों म लघु किंतु पूण चित्रफलक प्रस्तुत किया गया है। युग-बोध और युग-सत्य को कमलेश्वर ने सदैव प्राथमिकता दी है। कमलेश्वर सदव अपने युग की किसी समस्या को सामने रहते हैं। उनके सभी लघु उपन्यासों और कहानियों म उनका

यह चितन प्रमुख रहता है। किंतु उनका चितन दार्शनिकता के बोझ से बोझिल नही होता जसा जनेन्द्र के कई उपन्यासो मे पाया जाता है—कमलेश्वर का चितन एक ऐसे बुद्धिजीवी का चिन्तन है जो जन साधारण के लिए है।'

डॉ० घनश्याम मधुप (शोधग्रंथ हिन्दी लघु उपन्यास से)

डा० धीरेन्द्र सक्सेना

कमलेश्वर की औपन्यासिक यात्रा

एक व्यक्ति और साहित्यकार दोनों रूपों में आज कमलेश्वर सफलता की उस चोटी तक पहुँच चुके हैं, जिसके कारण ईर्ष्या होना स्वाभाविक है। पर यही इर्ष्या अब कुछ लेखकों और मित्रों के मन में द्वेष की आग भड़काने लगी है और वे कमलेश्वर का नाम आते ही इस प्रकार भड़क उठते हैं कि आठ सिकोड़कर कहते हैं-- कमलेश्वर अब कोई गंभीर लेखक नहीं रह गया है। बम्बई जाकर वह एक सामान्य स्तर का संपादक और चालू फिल्म लेखक ही बन पाया। विश्वास न हो तो उनके उपन्यासों 'काली आँधी' और आगामी अतीत' को पढ़कर देख लो—दोनों बम्बइया फिल्मों के लिए लिखे उपन्यास हैं और उन पर गुलजार ने फिल्म भी बनाया है।'

सुनकर मुझे याद आने लगते हैं कमलेश्वर के शब्द जो उन्होंने 'आगामी अतीत' के प्राक्कथन में लिखे हैं—' आज के साहित्यिक माहौल में सही तत्व तक पहुँचने वाले और रचना की गहरी खोजबीन करने वालों को पक्षधर कहकर लांछित करने की रस्म निभायी जा रही है। हो सकता है कमलेश्वर पर मेरा यह लेख पढ़ने के बाद कुछ हीन भावना से ग्रसित लेखक समीक्षक या पाठक मुझ पर भी 'पक्षधरता' का आरोप लगायें पर सबसे पहले मैं उनसे ही पूछना चाहूँगा कि क्या किसी लेखक के उपन्यास यदि फिल्मों के लिए स्वीकार कर लिये जाते हैं, तो वह घटिया लेखक बन जाता है? प्रेमचंद, शरतचंद्र, रवीन्द्रनाथ ठाकुर और अनेक विदेशी लेखकों की साहित्यिक कृतियों पर भी सफल एवं लोकप्रिय फिल्में बनी हैं, उन्हें हम किस श्रेणी में रखेंगे? स्वयं कमलेश्वर की कुछ पुरानी कृतियों यथा 'बदनाम गली', 'डाक बंगला' और 'तलाश' पर भी फिल्में बनी हैं, तो क्या वे सारी कृतियाँ भी फिल्मीकरण के बाद (या कारण) घटिया घोषित की जा सकती हैं?

ऊपर की प्रस्तावना या थोड़ी अप्रासंगिक लग सकती है पर वास्तव में यह

प्रसग से बहुत अलग नही ह । कारण कमलेश्वर ने इधर समातर कथा साहित्य और आम आदमी की पक्षधरता के लिए अपना जो समर्थन दिया है उसकी वजह स भी कई पुराने लेखक और समीक्षक उनके विरुद्ध हो गय हैं । वो सोचत हैं कि कमलेश्वर तो नये से नया के नेता बन गये और वे जहाँ के-तहाँ जड हो गये । मैं एसे लोगो से यही निवेदन कर सकता हूँ कि बधु ! मात्र दोषारोपण से कुछ नहीं होने का । आप अगर वास्तव म कमलेश्वर को चुनौती देना चाहते है तो कृपया केंचुली से बाहर निकलिये । उतना सघष करके दिखाइये कि आप लोगो क लिए अनुकरणीय बन सकें उतने मानवीय भी बनिये कि लोग आपक सामने अपने को नि सकोच खोल सक साथ ही उतना सशक्त और विविधापूर्ण कृतित्व भी सामने लाइये कि लोग आपके लेखन के प्रति आश्वस्त होकर अपनापन महसूस करने लगें ।

प्रस्तावना लम्बी होती जा रही है, अत मैं इस बात को यही छोडता हू । एक व्यक्ति और रचनाकार के रूप म कमलेश्वर वास्तव म क्या है और क्या नही है इसका काफी कुछ अदाजा मधुकरसिंह द्वारा सपादित इस पुस्तक को पूरा पढकर लगाया जा सकेगा । दोहराव से बचने के लिए मैं आग इस लेख मे केवल उनके उप यासो की चर्चा करूगा और उनके आधार पर कमलेश्वर की उप यासकार क रूप म जो छवि बनती है उस पर विचार करूगा ।

कमलेश्वर के अब तक कुल सात उपन्यास प्रकाशित हुए हैं जिनकी सूची इस प्रकार है (१) एक सडक सत्तावन गलियाँ (बदनाम गली) (२) डाक बगला, (३) तीसरा आदमी (४) समुद्र मे खोया हुआ आदमी (५) लौटे हुए मुसाफिर, (६) काली आधी और (७) आगामी अतीत । उल्लेखनीय है उक्त सात म से चार उपन्यास पुस्तकाकार छपने से पहले पत्रिकाओ म भी छप थ (एक सडक सत्तावन गलियाँ — हस म, 'समुद्र म खोया हुआ आदमी और काली आँधी'— 'साप्ताहिक हिंदुस्तान म तथा 'आगामी अतीत — धमयुग म) और चार उपन्यास ऐसे है, जिन पर फिल्म बन चुकी है (बदनाम बस्ती , 'डाक बगला', आधी' और मौसम जो क्रमश एक सडक सत्तावन गलियाँ' डाक बगला , 'काली आँधी और आगामी अतीत उपन्यासो पर आधारित है) ।

ऊपर की सूची म पहला उपन्यास एक सडक सत्तावन गलियाँ है जो बाद म प्रकाशक की भूल के कारण बदनाम गली' शीर्षक स भी प्रकाशित हुआ था । यो उपन्यासकार के रूप म यह कमलेश्वर का प्रथम प्रयास है पर उनका यह प्रथम प्रयास ही इतना सफल है कि कमलेश्वर को उपन्यासकार क रूप म भी सुप्रतिष्ठित कर देता है ।

और, आज भी यह उप यास इतना ताज़ा लगता है कि लगता ही नही वर्षों पहले लिखा गया था । इस उपन्यास की सबस बडी विशेषता यह है कि आकार

प्रकार में लघु होने के बावजूद विस्तार में यह काफी 'बड़ा' है और गहराई इसकी इतनी ज्यादा है कि उसकी थाह पाना मुश्किल है। इसकी दूसरी विशेषता यह है कि इसमें पात्रों की संख्या अधिक है और उन सभी पात्रों के बारे में कुछ-न-कुछ प्रामाणिक जानकारी दी गयी है, फिर भी पढ़ते समय ऐसा नहीं लगता कि हम पात्रों में उलझन जा रहे हैं और मुख्य कहानी से दूर हट रहे हैं। लेखक द्वारा सब कुछ इतने संतुलित ढंग से कहा और पेश किया गया है कि उसकी प्रतिभा पर आश्चर्य होता है और पाठक चमत्कृत होकर रह जाता है। 'गागर में सागर भरने का जो मुहावरा है, वह मैं यह तो नहीं कहता कि इस उपन्यास को पढ़कर ही बना, पर इतना अवश्य कहना चाहूँगा कि यह मुहावरा इस उपन्यास पर बिलकुल फिट बैठता है।

छोटे शहर या कस्बे की बिलकुल नजदीक से देखी जिन्दगी, वहाँ के लोगों के दुःख-दर्द, आशाएँ, निराशाएँ और हताशाएँ क्या नहीं हैं इस छोटे से उपन्यास में? जितने लोग, उतनी ही तरह की जिन्दगियाँ हैं उनकी, फिर भी उनमें कोई ऐसी एकसूत्रता है जो उन्हें आपस में जोड़े रखती है। सरनामसिंह और रंगीले, शिवराज और बाजामास्टर, बसरी और कमला प्रायः सभी इस सूत्र से बँधे हुए हैं क्योंकि ये सब-के-सब किसी-न-किसी रूप में उस वर्ग के सदस्य हैं जो सताया जाता रहा है और प्रायः गुमराह भी किया जाता है।

छोटे शहर की स्थितियाँ और परिस्थितियाँ बड़े शहरों से किस प्रकार भिन्न हैं, यह एक सड़क सत्तावन गलियाँ का रचनाकार बखूबी जानता है और इसीलिए वह एक स्थान पर अपने नायक सरनामसिंह से कहलाता है—'यहाँ सब जीने के लिए मर रहे हैं। मालिक और मजदूर, वकील और मुहर्रिर, दुकानदार और नौकर—सभी एक नाव में हैं और उस नाव के चारों ओर एक तरह का तूफान उमड़ रहा है।' आगे वह अपनी बात का स्पष्ट करते हुए कहता है— 'इस धर्म मंडलियों से लड़िये डाक्टर साहब, जो यहाँ के मजदूरों को सोचने समझने का मौका नहीं देतीं, उन आढ़तों और पार्टियों से लड़िये जो मजदूर के पसीने की कमाई चाट जाते हैं। ऊँची जाति के लोगों से लड़िये जो आदमी नहीं बनने देते। मंडीवालों से लड़िये जो मुनाफे के लिए बरसात में गल्ले को गोदामों में बन्द करके बाहर भेजने के लिए रोक रखते हैं। जिला बोर्ड, चुंगी के अफसरों से लड़िये जो बदमाशी करते हैं।'

विचारों के साथ-साथ तरह-तरह के कोमल और कठोर भावों को भी इस उपन्यास में पर्याप्त कुशलता के साथ अभिव्यक्त किया गया है। आदमी में जितनी भी तरह की अच्छाइयाँ और बुराइयाँ हो सकती हैं, उसके भीतर के घृणा और प्रेम, हिंसा और अहिंसा आदि के भावों को जिस तीव्रता के साथ इस उपन्यास में अभिव्यक्ति मिली है, वह दूसरे हिन्दी उपन्यासों में प्रायः कम ही हुई है। इधर के

लिखे कुछ उपन्यासों जैसे 'मुरदाघर' (जगदम्बाप्रसाद दीक्षित) और 'सफेद मेमने' (मणि मधुकर) में अवश्य दलित और शोषित वर्ग की अच्छाइयों-बुराइयों को पर्याप्त सहजता से अभिव्यक्ति मिली है पर उन उपन्यासों की एक सीमा यह है कि वे अपने वर्ग की विवशताओं को ही रेखांकित कर पाये हैं, सहज रूप में उनके संघर्षों को मुखरित नहीं कर सके हैं।

भाषा की दृष्टि से भी 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' एक समर्थ एवं प्रथम कोटि का उपन्यास है। वस्तुतः यह इसकी भाषा-सामर्थ्य ही है कि उसमें स्थितियों का एक पूरा चित्र सा हमारे सामने उपस्थित हो जाता है और हम सब कुछ आँखों के सामने घटित होता महसूस करने लगते हैं। उदाहरण के रूप में उपन्यास के पहले पृष्ठ का यह अंश लिया जा सकता है— "नदियाँ लहरों उठती हैं पर आदमी का आना जाना नहीं रुकता। नदियों में कड़ाह पड़ जाते हैं और इन छोटी छोटी बस्तियों के दिलेर लोग उन कड़ाहों में बैठकर बड़ी बड़ी भँवरें, हाथी डुबाऊ गहराइयाँ और चौड़े पाट पार कर जाते हैं। जानवरों तक को लँघा ले जाते हैं।" और शायद यह अतिशयोक्ति न होगी यदि मैं कहूँ कि प्रथम पृष्ठ की भाँति ही कोई भी दूसरा पृष्ठ ऐसा नहीं है जहाँ 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' की भाषा इतनी ही जानदार, गतिशील, चित्रोपम और यथार्थमयी न हो। नरेशन के साथ-साथ इस उपन्यास के सम्वादों में भी भाषा की इसी व्यंजना को देखा जा सकता है जिसका एक उदाहरण नीचे प्रस्तुत है—

> 'तुम कह देना मैंने बुलाया है। नाच-गाने में जी लगाने का दोष तो तुम्हारे सिंहजी का है। कौन सा ऐसा करम है जो बाकी बचा है उनसे। किसी दिन दंडा पकड़ा गया तो जेल में सड़ेंगे।
>
> तुम्हारी तो हर बात निराली होती है हर दोष सरनामसिंह के सर। जो कुछ दुनिया में बुरा होता है सब उसी की करनी है।'
>
> शिवराज का और किसने बिगाड़ा है? उसके घर वालों से जुदा कर दिया आश्रम से भगा लाया और उसे महरा बना के।'
>
> तुमको इससे क्या? वह करता है तो कर।'
>
> पर एक की जिन्दगी बिगाड़ दे? कैसा प्यारा लड़का है पर धकेल दिया उसे भी कीचड़ में। अभी क्या है डाकू बनाकर दम लेगा।'

और 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' के इस विवेचन को ध्यान में रखकर जब मैं *कमलेश्वर के दूसरे उपन्यास 'डाक बंगला' पर दृष्टिपात करता हूँ तो मुझे उसमें* भी भाषा का प्रवाह नजर आता है पर वहाँ यह प्रवाह शायद उतना सहज न रह कर कुछ कृत्रिम हो गया है। यों हो सकता है यह कृत्रिमता इस कारण आ गया हो क्योंकि 'डाक बंगला' की कहानी भी कोई बहुत सहज और यथार्थ कहानी नहीं

है। एक स्त्री है इरा, जिसके माध्यम से डाक बगले के प्रतीक को स्थापित करने का प्रयास किया है लेखक न और इस प्रतीक योजना का पूरी तरह निभाने मे तनिक भी कृत्रिमता न आती, ऐसा शायद सम्भव नही था।

साथ ही मुझे लगता है कि कमलेश्वर न यह उपन्यास एक अजीब-सी रूमानियत के वशीभूत हाकर लिखा है, फलस्वरूप इरा जैसी नारी का जीवन-सघर्ष अपन पूर प्रभाव के साथ सामन नहीं आ पाता और हम इस उपन्यास के कुछेक अच्छे विवरणो चित्रणो और काव्यात्मक या सूत्रात्मक वाक्यो म उलझकर रह जाते हैं। यह भी हो सकता है कि कमलेश्वर ने यह उपन्यास एक दूसर प्रकार की भाषा शैली म अपन-आपको आजमाने के लिए लिखा हो और बाद म उन्हे स्वय ही लगा हो कि व इस भाषा शैली के लिए नही बने हैं। प्रमाण क रूप म मैं कहूँगा कि 'डाक बगला' के बाद कमलेश्वर न अपना कोई भी उपन्यास इस प्रकार की किताबी और रूमानी भाषा म नहीं लिखा जा हो सकता है कुछ लोगो को अच्छी लगती हो, पर स्वय मुझे यथार्थवादी उपन्यास के अनुकूल नहीं लगती। उदाहरणार्थ कितन अपन और साथ हो कितन बगान होते है डाक बगल। मुसाफिर आते है और चले जाते है जस वाक्यो स स्थिति की विषमता का आभास नही पाता बल्कि एक प्रकार की रूमानियत भरी बेबसी ही दिखायी पडती है।

लकिन इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि डाक बगला एक असफल उपन्यास है और कमलश्वर की औपन्यासिक यात्रा म डाक बगले क पडाव का कोई महत्त्व नही है। मरे अपने मत म अभिव्यक्ति क स्तर पर अवश्य यह उतनी सफल कृति नहा है जितनी कि एक सडक सत्तावन गलियाँ पर जहा तक अनुभूतियो का प्रश्न है विशेषकर नारी जीवन की त्रासद और कष्टदायक अनुभूतियो का डाक बगला अपन-आप म एक उपलब्धि है क्योकि इसम एक असाधारण नारी इरा के माध्यम स एक साधारण नारी की नियति और उसके आभ्यान्तरिक एव बाह्य सघर्ष का स्थापित किया जा सका है। उपन्यास के अनेक स्थल एस ह जहा जीवन की अनुभूतियाँ बोलती है और पाठक रुककर सोचने का विवश हो जाता है। उदाहरणार्थ यह अंश प्रस्तुत है—

> मन कहा और अटका रहता है और फ़र्ज क मातहत एक अच्छा-खासी जिन्दगी जी जा सकती है। सौ म पचहत्तर औरतें एसी ही जिन्दगी जीन की आदी हा चुकी है। अगर उनका मन कहीं और नहीं है ता वहाँ भी नहीं है जहा वे है। उनका मन मर चुका है ।

अपने अस्तित्व को बनाये रखने और जीवन-यापन की खातिर एक पढी लिखी नारी इरा तक का किन किन रास्तो पर चलना पडा कितनो की अकशायिनी बनना पडा—यह भी डाक बगला उपन्यास का पढकर जाना जा सकता है। और यहीं फिर मुझे लगता है कि यदि कमलश्वर न यह उपन्यास अपनी सुपरिचित

यथार्थवादी शैली में लिखा होता तो यह ज्यादा प्रभावशाली बन सकता था। कारण इस उपन्यास में स्थान-स्थान पर जहाँ भी मुझे रोमानियत से मुक्त यथार्थ की झलक मिली है वहाँ-वहाँ यह बेहद प्रभावी कहा जा सकता है। उदाहरणार्थ निम्न वाक्य देखे जा सकते हैं जिनमें जीवन का क्रूर यथार्थ व्यंजित है—'पहाड़ी रास्तों पर चलते चलते गन्दी दुकान की चाय भी पीनी पड़ती है,' या 'निश्छल प्यार कर सकने की स्थिति मरी नहीं थी। डाक्टर का पत्र का सहारा था और सच पूछो तो मुझे भी वह सहारा उस वक्त छोटा नहीं लगा था।' या फिर 'स्मार्ट बनने का मतलब होता है कि अपने को दूसरों की नजरों में चुभाना। और अपने शरीर और रूप के सहारे बजारू चीजों को बचाना।' और मुझे प्रसन्नता है कि डाक्टर बसना की जिन कमियों या कमजोरियों का जिक्र मैंने ऊपर किया उनसे कमलेश्वर का अगला उपन्यास 'तीसरा आदमी' पूरी तरह मुक्त है। यह 'तीसरा आदमी' नाम का उपन्यास बिलकुल सीधी-सादी अत्यन्त सहज शैली में लिखा हुआ उपन्यास है जिसमें सिवाय उसके अंतिम अंश के बीच में कहीं भी नहीं लगता कि लेखक ने किसी *बनावट या बुनावट का सहारा लिया है। पुनः इस उपन्यास की दूसरी बड़ी विशे*षता यह है कि पति पत्नी के बीच किसी तीसरे आदमी के आने की प्रचलित कहानी को लेखक ने एक ऐसा सामाजिक और आर्थिक आयाम प्रदान किया है जिससे यह कहानी मात्र कहानी नहीं रह जाती बल्कि मध्यवर्गीय दाम्पत्य की ऊँच नीच का एक प्रामाणिक दस्तावेज बन जाती है। यहाँ मैं यह भी बता दूँ कि कुछ दिनों पहले तक मैंने 'तीसरा आदमी' एक बार भी नहीं पढ़ा था पर मेरे लखनऊ मित्र श्री प्रभाकर द्विवेदी और कमलेश्वर के उपन्यासों पर एम० लिट० के लिए लघु शोध प्रबंध लिखने वाले युवा कवि और लेखक श्री कृष्ण कुरडिया मुझसे इसकी इतनी प्रशंसा कर चुके थे कि मैंने यह उन्हीं से माँगकर पढ़ डाला। पढ़ने के बाद मैं निःसंकोच भाव से यह कह सकता हूँ कि वह मुझे एक सफल उपन्यास प्रतीत हुआ और काफी अंशों में पसंद भी आया। बस तकनीक के आधार पर मुझे एक कमी यह अवश्य लगी कि वह गठन की दृष्टि से एक लम्बी कहानी के अधिक निकट है लघु उपन्यास के कम। और दूसरी कमी मुझे वह महसूस हुई जिसका जिक्र मैं ऊपर कर चुका हूँ अर्थात् उपन्यास के अंत में सुमत की आत्महत्या मुझे जबरदस्ती गढ़ी हुई और बनावटी लगती है। इस अंत को पढ़ने से ऐसा लगता है कि लेखक इस प्रकार का अंत उपन्यास शुरू करने से पहले ही तय कर चुका था और वह उससे आगे जाने का साहस नहीं जुटा पाया।

यों मध्यवर्गीय परिवारों के संस्कारों कुंठाओं आर्थिक असमर्थताओं का बड़ा ही स्वाभाविक और सशक्त चित्रण कमलेश्वर के इस उपन्यास 'तीसरा आदमी' में उपलब्ध है। और कहीं कहीं तो यह चित्रण इतना सजीव है कि लेखक की हम केवल प्रशंसा ही कर सकते हैं। एक उदाहरण यहाँ काफी होगा

'मीली हुइ दीवारें सडे अनाज की तरह महकता हुआ विस्तर कोने से आती हुई राशन की गध मत कपडों की भभक और उनम से फूटती हुई चित्रा क बालो म पडे तेल और बँधी हुई वेणी की बू उसका तन पसीनने लगता और उस मिली-जुली गध के ज्वार म हम डूब जात उसका पसीजता शरीर मेरी बाहो म घुलता होता पसीने का एक भभका आता हमारी दीवार से लगा टूटा टूटा पाइप खर खराता और ऊपर की मजिल से बहायी हुई जूठन का लोदा भद् से नाला म गिरता और मूली या खरबजा के बीच की महक का झोका आता गली म कोई जोर से बात करता तो हम सहम जाते, जैसे हमे इस हालत पर टोक रहा हो। दरवाजे के पास आती और दूर जाती क़दमो की आहट हमे सद कर जाती फिर जसे बदन जलने लगता और मैं चित्रा के होठो पर होंठ रख देता हल्का सा प्याज महकता और उसी म वेणी के फूलो की गध समा जाती। दोनों छातियों के बीच सूखे हुए पसीने और सुबह लगाये हुए पाउडर की चिकनाहट का एहसास होता उसका रोम रोम भभर आता जांघो से ऊपर और जांघो पर जैसे कोमल काट उभर आते और फिर सब महकें घुलमिलकर जिन्दगी की एक अजीब-सी महक म समा जातीं। चारों ओर जसे सितारे फूटने लगते शरीर चटखने लगते। सासें गुथ जाती और हाथो से पके हुए चावल की गध फूटने लगती। शरीर उस गध म नहा जाता और हम पसीने से लथपथ अपने बन्धनों को ढीला करने लगते। कमरे म गर्मी और बढ जाती।'

पूरे उपन्यास म इस प्रकार के अनेक विवरण वणन चित्रण और सवाद भरे पडे हैं, जो बरबस ध्यान अकर्षित करते हैं और लेखक की प्रतिभा के प्रति आश्वस्त करते हैं। यहाँ एक और बात मैं कहना चाहूँगा कि इस उपन्यास को प्रथम पुरुष मैं की शली म लिखा गया है जिसकी कुछ अपनी सीमाएँ होती हैं पर वही सीमाए इस उपन्यास को एक प्रकार की विशिष्टता प्रदान करती हैं। इसका कारण यह है कि प्रथम पुरुष 'मैं' जब अपनी और अपनी पत्नी की ऐसी कहानी कहता है जिसम बीच म एक तीसरा आदमी है तो उस तीसरे आदमी और पत्नी के अतरग प्रसगो का खुला वणन मैं अपने माध्यम से नही कर पाता, केवल सकेतो म या जो कुछ वह देख पाता है उसके आधार पर अपनी बात कहता है। इस विशेष स्थिति के कारण 'मैं' के मन का सदेह और आतरिक द्वद्व, उसके भीतर के घृणा और द्वपक भाव बडे ही तीखे और कविसिंग रूप म उभरकर पाठक के सामने आते हैं तथा पूरा उपन्यास अत्यन्त विश्वसनीय एव यथार्थ शली का उपन्यास बन जाता है। इसके विपरीत प्रथम पुरुष के माध्यम से लिखा होने के

बावजूद 'डाक बगला' उतना विश्वसनीय नही बन पाता क्योकि 'डाक बगला' म मैं यानी तिलक अपनी कहानी नही सुनाता बरन इरा की कहानी सुनता है। इसम पाठक को कही-कही यह लगता है कि इरा अपन ढग स ही अपनी कहानी सुना रही है और उसम अपन आपको जस्टीफाइ करन की कोशिश भी शामिल हो सकती है।

और 'तीसरा आदमी' के बाद कमलेश्वर न जो उपन्यास लिखा है वह और भी ज्यादा सशक्त सार्थक और महत्त्वपूर्ण उपन्यास है। मेरा मतलब 'समुद्र म खोया हुआ आदमी' स है जो पहली बार 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' क एक अक मे प्रकाशित होते ही चर्चित हो गया था। यह उपन्यास अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनो ही स्तरा पर इतना सहज और स्वाभाविक अविति वाला उपन्यास है कि वह हर उस परिवार की कहानी बन जाता है जो महानगर म टूटने बिखरन को विवश है क्योकि उसका आर्थिक स्रोत सूख चुका है। 'तीसरा आदमी' से आग बढ कर 'समुद्र म खोया हुआ आदमी' म मध्यमवर्गीय सस्कारो जडताओ और कुण्ठाओ पर जो चोटें की गयी है उनका फलक कही अधिक व्यापक और विस्तृत है। साथ ही यह लखक की सफलता ही मानी जायगा कि व्यापक फलक के बावजूद उन चोटो की तीव्रता कम नही है बल्कि प्रभाव की दृष्टि से वे 'तीसरा आदमी' की तुलना म ज्यादा असरदार ही हैं।

'समुद्र म खोया हुआ आदमी' म जीवन-सघर्ष का चित्रण भी बेहतर ढग से और बडे पैमाने पर हुआ है, *क्योकि इसम परिवार का प्रत्येक सदस्य अपने-अपने* ढग से सघर्ष मे जुट जाता है तथा जिन्दगी के अभावो से लडता हुआ उसे किसी प्रकार थोडे अशो मे ही सही बेहतर बनाकर जीन की कोशिशें करता है। 'एक सडक सत्तावन गलियाँ' की तरह ही यह कमलेश्वर का दूसरा बेहद सार्थक और सशक्त उपन्यास है जिसम उनकी दृष्टि और रचनात्मकता दोना ही इस प्रकार एक-दूसरे म घुल मिल गयी हैं कि एक महान लघु उपन्यास की सृष्टि हो सकी है। महान शब्द का प्रयोग मैं यहा जानबूझकर ही कर रहा हू क्योकि स्वतत्रता के बाद लिखे दूसरे लेखको के लघु उपन्यासो म भी मुझ कोई ऐसा उपन्यास दिखायी नहीं देता जिसम किसी परिवार या उसके सदस्यो के आतरिक एव बाह्य सघर्ष को पर्याप्त विस्तार और गहराइ से चित्रित किया जा सका हो और जो इतना प्रभावी भी हो जितना कि 'समुद्र म खोया हुआ आदमी'।

'समुद्र म खोया हुआ आदमी' की एक और बडी विशेषता यह है कि यथार्थवादी शैली म लिखा होन के बावजूद यह एक अच्छा प्रतीकात्मक उपन्यास भी है *और इसम प्रतीकात्मकता का निर्वाह इतन सहज रूप म हुआ है कि कही भी* अटपटा नही लगता। 'डाक बगला' की भाँति प्रतीको के सफल निर्वाह के लिए न तो लखक को इसम रूमानी भाषा का सहारा लेना पडा और न ही व्यग्य की जोड ताड का—बल्कि जो कुछ भी उसन लिखा है वह मुख्य कथा को स्पष्ट करन के

लिए ही लिखा है। उसमे प्रतीक भी कथा के अग बनकर ही आये हैं वे ऊपर से थोपे हुए नहीं हैं। उदाहरण के लिए समुद्र का यह प्रतीक दृष्टव्य है जो ससार की भीड म श्यामलाल की स्थिति का व्यजित करता है—

> सडका पर एक के बाद एक लहरें आती चली जा रही ह—आदमियो की लहरें—और व इस जन समुद्र म डूबत जा रह हे। छटपटाकर इधर उधर हाथ-पैर मार रह ह पर काई महारा नही मिलता। कोई किनारा दूर तक नजर नहा आता।

अन्त मे श्यामलाल की पत्नी रम्मी को भी लगभग इसी प्रकार की परिस्थिति का सामना करना पडता है और उसकी स्थिति भी समुद्र म खोये हुए आदमी' जैसी हो जाती है—

> रम्मी फटी फटी आखा से परछत्ती की ओर ताकती रही। मुन्नी सो गयी थी—फिर उमन समुद्र दखा—हहराता हुआ समुद्र जिसका कोई ओर छोर नही था। जिसम खाये हुए आदमी के बारे म कोई नही बता सकता था। और उसी समुद्र म वह डूबती चली गयी—चारो तरफ पानी था—उसके कानो म आखो म पेट म खारा पानी भर गया था और सास ऊबन लगी थी। ऊबती सास से एकदम आँख खुली ता चारो तरफ अँधेरा था। चारा तरफ समुद्र की मनहूस खामोशी छाई हुइ थी।

यथाथवादी शैली म भी कोई बात कलात्मक ढग से कैसे कही जा सकती है इसकी कला कमलेश्वर को आती है, नतीजा यह है कि 'एक सडक सत्तावन गलियाँ और 'तीसरा आदमी' की भाँति 'समुद्र म खोया हुआ आदमी' मे भी ऐसे अनक स्थल दख जा सकते है जहाँ थाडे से वाक्या म जटिल स्थिति को अत्यन्त प्रभावी ढग से व्यक्त किया जा सका है। एक उदाहरण यहा पर्याप्त होगा—

> 'जिसक साथ काइ लडका जुड जाता है वह कितना वदल जाती है। उसके नाक नक्श उभरने लगते है—वदन म हल्कापन और लोच आ जाती है। वात मे सलीका और मिठास भर जाती है। तारा उससे कितनी अलग होती जा रही थी। घर की माडिया के नीचे की हर चीज बदलती जा रही थी। और बाहर जाकर काम करन स नाखूना और होंठा पर लाली आ गयी थी। वालो म हल्की लहर पडन लगी थी। ब्लाउज कुछ और छोटे हा गये थे। एड़िया पर चमक आ गयी थी और बाँहा के रोएँ ज्यादा मुलायम हो गये थे। आँखा म फला हुआ आकाश भर गया था। होठा का कटाव और साफ हा गया था।

कमलेश्वर की भाषा की सामथ्य और लगभग इसी प्रकार की कलात्मक एव

यथार्थ अभिव्यक्ति का उनके एक दूसरे उपन्यास 'लौटे हुए मुसाफिर' में स्थान स्थान पर देखा जा सकता है। उदाहरणार्थ नीचे एक अंश दिया जा रहा है जो भारत विभाजन की परिस्थिति और मन स्थिति से सम्बन्धित है—

> विभाजन हुआ तो पंजाब में खून की नदियाँ बहीं—बंगाल में मार काट हुई। सूबे के बड़े शहरों में कत्ल हुए और बस्तियाँ जलाकर राख कर डाली गयी।
>
> 'पर इस शहर में एक बूँद खून नहीं गिरा। किसी मुहल्ले पर धावा नहीं हुआ। किसी ने किसी को नहीं मारा। किसी ने किसी को गाली तक नहीं दी। मस्जिदों में लड़ाई की तैयारियाँ नहीं हुई। मन्दिरों में ईंट-पत्थर इकट्ठे नहीं हुए, जो बदमाश रोज पिटते थे, उन्हें भी किसी ने नहीं पीटा।
>
> लेकिन भीतर ही भीतर एक भूचाल आया हुआ था—जिससे बस्ती की चूलें हिल रही थीं। दिलों इमारतें ढह रही थीं। एक उबलता हुआ नफरत का दरिया नीचे बह रहा था—शक और डर सबके दिलों में समाए हुए थे।

ध्यान से देखा जाये तो 'लौटे हुए मुसाफिर' एक ऐसा उपन्यास है जिसमें कमलेश्वर ने 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' की भाँति निम्न वर्ग और छोटे शहर (या कस्बे) की जिन्दगी की ओर एक बार फिर दृष्टिपात किया है और उसके चित्रण में अपेक्षित सफलता भी प्राप्त की है। साथ ही इस उपन्यास की एक अतिरिक्त विशेषता यह है कि यह केवल किन्हीं दो या चार पात्रों की दुःख भरी कहानी मात्र नहीं रह जाती अपितु एक पूरे समूह या समुदाय की परिस्थितिजन्य यातनाओं को प्रस्तुत करने वाली रचना के रूप में सामने आता है। मुझे आश्चर्य है तो यही कि भारत विभाजन की पृष्ठभूमि में लिखा गया यह एक सशक्त उपन्यास था पर अपने प्रकाशन के तुरन्त बाद के दिनों में सामान्यतः यह उतना चर्चित नहीं हो पाया जितना कि इसी विषय पर लिखे जाने वाले बाद के कुछ उपन्यास जैसे 'तमस' (भीष्म साहनी) या 'छाको की वापसी' (बदीउज्जमाँ) हुए। इससे यह न समझा जाय कि मैं 'तमस' या 'छाको की वापसी' पर किसी प्रकार का आक्षेप कर रहा हूँ या उन्हें श्रेष्ठ रचनाएँ नहीं मानता बल्कि मात्र यह कहना चाहता हूँ कि 'तमस' और 'छाको की वापसी' से पहले देश विभाजन और साम्प्रदायिकता पर चोट करने वाला एक अपने ढंग का अनूठा उपन्यास कमलेश्वर ने भी लिखा था। यहाँ 'लौटे हुए मुसाफिर' के साथ 'तमस' और 'छाको की वापसी' की चर्चा मुझे इसलिए भी संगत प्रतीत हो रही है क्योंकि तीनों में जहाँ अनेक अन्तर्साम्य हैं वहीं इन तीनों में एक बड़ी कमी भी है। मेरा आशय यहाँ तीनों उपन्यासों के कमजोर अन्तिम अंशों से है जो सम्बन्धित लेखकों की

विशफुल थिंकिंग के प्रभाव से मुक्त नहीं हो पाये हैं और यही कारण है यथाथ से थोडी दूर हो गये हैं। स्पष्ट कहूँ तो तमस या लेखक जहाँ विभाजन की सारी जिम्मेदारी अंग्रेजों के ऊपर छोड देता है और किसी भी प्रकार का स्वाभाविक अन्त देने में बच निकलता है, वहीं 'छाका की वापसी और लौटे हुए मुसाफिर' के लेखक-द्वय साम्प्रदायिकता का चित्रण करते-करते विशफुल थिंकिंग के शिकार होकर अपने पात्रों (या उनके उत्तराधिकारियों) को उन्हीं स्थानों पर लौटा लाते हैं जहाँ से वे विभाजन के दिनों में चले गये थे और इस प्रकार गढ़े हुए अन्त के उदाहरण पेश करते हैं। मेरा अपना मत है कि जहाँ तक 'लौटे हुए मुसाफिर' का सम्बन्ध है विभाजन की स्थिति और उसके कारणों को स्पष्ट करने के लिए उसमें 'मुसाफिरों का लौटना' उतना जरूरी नहीं है जितना लेखक का यह कहना —' गरीबी अपमान, भूख और बकमी में भी वे हार नहीं थे, पर नफ़रत की आग और शंकापूर्ण घृणा के उन्हें शिकस्त नहीं कर पाये और उनके काफिले एक अनजान देश की ओर चल गये। पर यहीं यह शंका भी की जा सकती है कि यदि यह उपन्यास इसी स्थल पर समाप्त कर दिया जाता तो इसका नाम लौटे हुए मुसाफिर न रख कर 'भागे हुए मुसाफिर रखना पडता और लेखक को शायद यह मंजूर नहीं था।

अब तक मैंने जिन पाँच उपन्यासों का विवेचन किया है वे कमलेश्वर की जीवन यात्रा के दिल्ली प्रवासकाल तक के उपन्यास हैं। इलाहाबाद और दिल्ली में अनेक प्रकार का वैविध्यपूर्ण और विषमताओं से भरा जीवन बिताने के बाद कमलेश्वर अपेक्षाकृत बडी और सम्मानपूर्ण नौकरी से बम्बई चले गये और वहाँ जाकर वे साहित्य के साथ साथ फिल्म माध्यम के भी सम्पर्क में आये। अचानक ही वे एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पत्रिका सारिका के सम्पादन का कार्य भार ग्रहण करके सम्भवत इतने व्यस्त भी हो गये कि उपन्यास-लेखन से एक प्रकार से विरत हो गये। फिर सहसा एक दिन कई वर्षों के अंतराल के बाद काली आँधी' उपन्यास सामने आया और उसी के अगले वर्ष अगामी अतीत भी प्रकाशित हुआ। कमलेश्वर की औपन्यासिक यात्रा में कुछ वर्षों के एक दीर्घ मौन के बाद ये दो ऐसे उपन्यास हैं जो सीधे सीधे सम्बन्धित फिल्मों से भी जुड़े हैं और सम्भवत इसी कारण कुछ साहित्यिक मित्रों की आँखों में खटकने लगे हैं। पर एकदम से किसी प्रशंसा या निन्दा विषयक फतवा देने से बेहतर यह होगा कि यहाँ उनकी विशेषताओं या न्यूनताओं पर उसी प्रकार चर्चा की जाये जिस प्रकार ऊपर उनके पूर्ववर्ती उपन्यासों पर की गयी है।

वस्तुस्थिति यह है कि काली आँधी उपन्यास को लेखक ने कुछ लिखा इस ढंग से है कि वह एक असफल दाम्पत्य की करुण कहानी जैसा लगता है, पर वास्तव में वह मात्र एक करुण कहानी नहीं है। और यदि उस एक करुण कहानी

ही मान लें, तो वह मात्र मालती और जग्गी बाबू की करुण कहानी नही है। वह उन दोना के साथ साथ देश मे व्याप्त राजनीतिक भ्रष्टाचार और छल छद्म की भी करुण कहानी है। दिक्कत है तो यही कि इस दूसरी अधिक व्यापक और गहरी कहानी की ओर पाठक का ध्यान नही जा पाता और इसका कारण शायद यह है कि आज का हमारा पाठक अपने चारो ओर व्याप्त राजनीतिक भ्रष्टाचार और छल छद्म की यथास्थिति का आदी हो चुका है। वह शायद यह सोच ही नही पाता कि कोई समर्थ लेखक किन्ही दो व्यक्तियो की कहानी के बहाने या माध्यम से अपने आस पास के सामाजिक और राजनीतिक यथार्थ की भीतरी कहानी भी कहता है।

आखिर क्या चाहती हैं मालती और वे किसकी प्रतीक हैं? इस बारे म इस लेख म विस्तृत चर्चा का तो अवसर नही है पर यहाँ इतना अवश्य कहना चाहूँगा कि वे हमारी पूँजीवादी व्यवस्था की उन ग़लत महत्त्वाकाक्षाओ की ही प्रतीक हैं जो अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए साधनहीन सामान्य जना को बहकाने, फुसलाने या उनका इस्तेमाल करने स परहेज़ नही करती। इस छोटी सी बात को एक बार हृदयगम कर लेने के बाद अगर कोई काली आँधी उपन्यास को पढता है तो मुझे विश्वास है कि उसके समक्ष हर वाक्य और कथन अपने पूरे परिप्रेक्ष्य म स्पष्ट होता जायेगा और फिर उसे इस उपन्यास स निराशा भी नही होगी क्योकि वह असली मुददा समझने की स्थिति म होगा।

विचारो के साथ-साथ अभिव्यक्ति की दृष्टि स भी काली आँधी एक सशक्त और सार्थक उपन्यास है इस तथ्य से इन्कार नही किया जा सकता। कमलेश्वर के पास सही शब्दो म सही बात कहने की जो कला है वह स्थान स्थान पर इस उपन्यास मे भी उजागर हुई है तथा इसे पढते हुए ऐसा कही भी नही लगता कि लेखक को अपनी बात पेश करने के लिए उचित शब्द नही मिले। उदाहरण के रूप म ये वाक्य देखे जा सकते हैं—

> सफलता कितनी क्रूर होती है कितनी जालिम होती है इसका नशा कितना गहरा होता है और खुद अपनी सफलता म व्यक्ति कैसे कैद हो जाता है, इसका जीता जागता उदाहरण हैं मालती जी। दुख और त्याग कितना जालिम होता है और उसमे व्यक्ति कैसे बुझ जाता है इसका जलता हुआ उदाहरण हैं जग्गी बाबू।"

इसी प्रकार यह संवाद भी दृष्टव्य है जो थोडे शब्दो म पूरी स्थिति का खुलासा कर देता है—

> तुम लोग सिर्फ चीज़ो का बखूबी इस्तेमाल करना जानते हो। बाढ आयी तो उसे इस्तेमाल करो सूखा पडा तो उसे इस्तेमाल करो कही कोई लडकी भाग गयी तो उसके भागने का इस्तेमाल करो

कही काई मर गया तो उसकी मौत को इस्तमाल करा तुम लोगो ने आदमी के आसुओ और जजबाता तक का नही छोडा उसकी आशाओ और सपना तक को नही बख्शा तुमने उसके सपना को भारे बना कर निचाड लिया। अब क्या बचा है आदमी के पास ? '

काली आंधी की भांति ही आगामी अतीत की कहानी भी चूकि लेखक ने दो या तीन व्यक्तियो के असफल सबधो की कहानी क माध्यम से लिखी है अत अनेक प्रकार के आरोपा और दोपा का शिकार हुई है। पर शब्दकार प्रकाशन' द्वारा प्रकाशित पूरे उपयास और उसके शुरू मे दी हुई लेखक की भूमिका को ध्यान से पढने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि यह भांति भाति के आरोप कितने सतही और निराधार हैं। पूजीवादी व्यवस्था म एक ग़लत ढग से जो 'सफलता' काली आंधी' म मालती का मिलती है वही या लगभग उसी प्रकार की सफलता' एक-दूसरे गलत रास्ते से 'आगामी अतीत' के कमल बास को मिलती है। पर उन दोनो को इस प्रकार की 'सफलता यो ही मुफ्त मे नही मिल जाती—उसकी उह काफी बडी कीमत चुकानी पडती है यानी उहें अपन निकट के लोगा अपने जान पहचान परिवेश और आत्मीय जनो को सदा के लिए छोड कर अलग हो जाना पडता है।

काली आंधी और आगामी अतीत' म, इस प्रकार मूल विचार या 'आइडिया' लगभग एक जसा ही है कि कोई व्यक्ति पूजीवादी समाज के स्पर्धामूलक परिवेश मे पडकर किस प्रकार सफलता प्राप्त करने के लिए गलत रास्तो को अपना लता है और अपने निजी परिवेश या वग से पूरी तरह कट जाता है। पर इन दाना उपयासा का मुख्य अतर यह है कि जहा काली आंधी केवल सफलता की ओर बढन तक का चित्रण प्रस्तुत करता है वही आगामी अतीत उससे आग की भी बात कहता है अर्थात उस स्थिति की बात, जब 'सफलताओ की स्पर्धा से ऊबा हुआ व्यक्ति अपने पुराने परिवेश या वग म लौटना चाहता है, पर लौट नहीं पाता।

इसी के साथ आगामी अतीत उपयास की एक अय विशेषता यह है कि वह हमारे समक्ष चांनी जसा जीवत और जीवट भरा नारी पात्र प्रस्तुत कर सका है। वस्तुत चांदनी का चरित्र एक ऐसा चरित्र है जो दूसरे किसी भी हिदी उपयास म दखन को नही मिलता और आश्चय इस बात का है कि कमलेश्वर न उसे अपन अभिव्यक्ति कौशल स बिलकुल सजीव रूप म उपयास क पृष्ठो पर खडा कर दिया है। प्रमाण के रूप म यहा प्रस्तुत हैं कुछ सवाद

(१)

हाँ ठीक कह रही हूँ। तुम अमीरो के ये इश्क विश्क के चोचले अपन

लिए वेकार है। हम इश्क नहा करत पेट भरते है पेट। पाच मिनट म एक आदमी फारिग होता है समझे। यही सब करखा है ता हमारे यहाँ एक बुढ़िया भी है। वह पचास रुपए महीने मे चली आयगी। औरत रखने की तुम्हारी हवस भी पूरी हो जायेगी और पैसा भी बचेगा।'

क्या वकती हो, चाँदनी !' कमल वास न उसे टेढी नज़रो से देखा।

'बक नही रही हूँ। सीधी बात कह रही हूँ। ईमानदारी का धधा है अपना। क्या नही है मुझम ? बोलो कानी हूँ खुतरी हूँ तुम पसे देत हो तो हम भी अपनी हडिडया तुड़वात हैं यह मास नुचवाते है कुछ करना वरना हो तो करो नही तो हम छुट्टी दो। हु दस दिन साले यो ही गुज़र गय फाकट म। साले कहत हुए वह फिर अटकी पर फिर अपनी ज़िद्द म वह साले को और जोर से बोली थी।

तुम्ह पसे से मतलब है वह तुम्ह पेशगी दे चुका हू।

'अरे, ये रखो अपना पेशगी।" कहते हुए उसने पचास रुपए के नोट उनके सामने फेंक दिये मरे इतने दिन खराब कर दिये।"

(२)

न वाबा न मुझे नही चाहिए ये हराम के पसे।' वह बोली थी।

"हराम के ?"

'और क्या ? कुछ करत धरत तो हो नही समझते हो मैं फोकट के पसे लेके चली जाऊगी। अरे बाबू एक दिन सबको ईश्वर के यहा जवाब देना पडता है। ये पाप मैं काहे को लू ? चादनी ने प्रायश्चित क लिए जस अपन कान पकड लिये थे धधा करूँगी तो पसा लूगी, य मामूली काम नही है बाबू बहुत पित्ता मार कर अनजान आदमी को सहना पडता है। तुम औरत होत तो समझ पाते।"

(३)

अच्छा एक बात बताओ तुम्हारे पास इतना पसा कसे हो गया ? पहल से था ? बहुत भोलेपन स वह बोली थी।

पहले तो मैं बहुत गरीब था।' उन्होन कहा था।

फिर ?'

'काम किया महनत की ," व बोले थे।

'मेहनत तो मेरी अम्मा भी बहुत करती थी मैं भी बहुत करती हूँ हमार पास ता नही होता।' कहकर वह उन्ह देखने लगी।

'क्या बताऊँ, कसे हो जाता है ?" उनके पास काई साफ जवाब नही था।

'अम्मा कहती थी, ईमानदार लाग हमेशा गरीब रहते हैं। गरीबी इस बात का सबूत है कि हम ईमानदार हैं। यह सच है ?' उसन पूछा था।

ऊपर के सभी सवाद जहाँ चादनी के अनूठे व्यक्तित्व और उसक वग चरित्र पर प्रकाश डालते ह वही कमलेश्वर क अभिव्यक्ति कौशल को भी प्रमाणित करत हैं। पर इसी उपन्यास म कुछ दूसरे स्थलो पर छायावादी किस्म के सवाद या विवरण भी हैं और वही मुझे लगता है कि कमलेश्वर का लेखक थोडा 'फिल्मी' हो गया है

कसक ?"

हाँ।' उसने बडी बडी आँखे चमकायी थीं।

कमक। कसी होती है कसक ?" कमल ने शतानी से पूछा था।

'अभी नही जान ? जान जाओगी कभी।" उसने बहुत गहराई स कहा था।

लख यह या ही काफी लम्बा हो गया है इसलिए इस और लम्बा खीचने की मरी काई इच्छा नहा है। पर अत म कमलेश्वर के मार उपन्यासो को पढकर कुछ खास खास बातें जो उभरकर सामने आती हैं उन्ह यहाँ निष्कष रूप म देना चाहूँगा।

(१) देवा की मा और 'राजा निरबसिया' स लेकर 'बयान और 'कितने अच्छे दिन तक की अपनी कथा-यात्रा म जिस प्रकार कमलेश्वर ने अनेक पडाव और मजिलें पार की हैं उसी प्रकार अपनी औपन्यासिक यात्रा म भी उन्होंने एक सडक सत्तावन गलियां से लेकर 'आगामी अतीत' तक अनेक मजिलें पार की है।

(२) औपन्यासिक लेखन का इस यात्रा म कइ मजिलें उन्होंने ऐसी भी पार कर ली हैं जो हिन्दी के दूसरे अच्छे-स अच्छे उपन्यासकार नही कर पाये हैं। मिसाल क तौर पर यहाँ एक सडक सत्तावन गलियां समुद्र म खोया हुआ आदमी' और काली आँधी' का नाम बिना किसी द्विधा के लिया जा सकता है।

(३) अपनी अधिकाश कहानियो की भांति अपन अधिकाश उपन्यासों म

भी कमलेश्वर की दृष्टि सदा सोद्देश्य और सजग दृष्टि रही है तथा उन्हें पढ़ने पर कहीं भी ऐसा नहीं लगता कि कमलेश्वर के दृष्टि पथ से उनका उद्देश्य थोड़ा इधर उधर हो गया है।

(४) यथार्थ जीवन की सरल अभिव्यक्ति और समर्थ भाषा कमलेश्वर के लघु उपन्यासों की जानी मानी विशेषताएँ हैं। पर यही भाषा कहीं कहीं जब बहुद काव्यात्मक हो गयी है जैसे डाक बंगला या आगामी अतीत' के कुछ अंशों में तो यथार्थ जिन्दगी से थोड़ी दूर चली गयी है और वह स्वयं कमलेश्वर के संघर्षशील व्यक्तित्व के प्रतिकूल लगती है।

(५) कमलेश्वर अपने उन उपन्यासों में बहुत सफल उपन्यासकार सिद्ध हुए हैं, जिनमें उन्होंने सहज स्वाभाविक शिल्प और शैली को अपनाया है। और इस स्वाभाविक शैली में रहते हुए भी कहाँ-कहीं वे प्रतीकात्मक ढंग से भी अपनी बातें स्पष्ट कर सके हैं जैसे एक सड़क सत्तावन गलियाँ तीसरा आदमी समुद्र में खोया हुआ आदमी' या 'काली आँधी में। इस प्रकार ये चारों उपन्यास कमलेश्वर के तो श्रेष्ठ लघु उपन्यास हैं ही, वे अब तक के श्रेष्ठ हिन्दी-उपन्यासों की श्रेणी में भी गिनाये जा सकते हैं।

कृष्ण कुरडिया

कमलेश्वर के उपन्यासों की वस्तु-चेतना

कमलेश्वर के उपन्यासों की कथाभूमि कस्बों से लेकर बड़े शहर के विभिन्न क्षेत्रों तक फैली हुई है। यह कथाभूमि ही एक प्रकार से उस 'वस्तु' को प्रक्षेपित करती है जो समसामयिक समस्याओं, द्वन्द्वों, प्रताड़नाओं, दबावों, अमानवीय यथार्थ स्थितियों कुण्ठाओं और सामाजिक विसंगतियों के विभिन्न बिन्दुओं में प्रसारित है। यद्यपि 'प्लाट' या 'कथा प्रारूप' की पुरानी धारणाएँ अब नष्ट हो चुकी हैं किन्तु 'वस्तु चेतना' के रूप में कथा के वे साधक कोण अब भी प्रासंगिक और अर्थवान हैं जो किसी भी कथा रूप को अधिक विश्वसनीय कलात्मक और मानवीय बनाते हैं। आज इसीलिए अधिकांश लेखक, विचारक और समीक्षक वस्तु के इस रूपान्तरित स्वरूप की पक्षधरता के निमित्त इसकी सार्थकता को स्पष्ट करते हैं।

आज का कथाकार वस्तु के अनेकयामी महत्त्व को समझता है इसीलिए वह वस्तु के विभिन्न आयामों को अपनी कृतियों द्वारा अनावृत करता है। वह जानता है कि रूप से अधिक 'वस्तु' ही उसे अपने पूर्ववर्तियों से अलग करती है। और वह वस्तु ही है, जिसमें वह विभिन्न माध्यमों और प्रयोगों द्वारा पाठक तक पहुँचता है। वस्तु में अन्तर्गत विषय से अधिक व्यापक दृष्टि का समावेश है। विषय माध्यम मात्र है। मूल बात वस्तु और उसके प्रति लेखक का दृष्टिकोण है जो लेखक की चेतना का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करता है।

कोई भी लेखक किसी भी विषय पर रचना नहीं कर सकता। यह उस लेखक पर निर्भर करता है कि वह अपनी विषय-वस्तु और पात्र कहाँ से चुनता है। इस सम्बन्ध में प्रायः महान लेखकों ने भी अपनी इच्छा को ही प्राथमिकता दी है। लेखक की कृति उस समाज से सम्बद्ध होती है जिसमें वह रहता है। वह स्वयमेव एक सामाजिक कृति है। लेकिन क्या लिखता है इसका परिचय उसकी जीवनी उसके अनुभव और चरित्र दे सकते हैं किन्तु इतना तो कहा जा सकता है कि वह

अपने समाज और अपने सामाजिक अनुभवों का रचना को मूलाधार बनता है।

वस्तुत लेखक की वस्तु चेतना के पीछे एक पूरे सामाजिक अनुभव की पीठिका होती है। वह समाज के अतीत और वतमान के द्वारा उसके भविष्य की चेतना के अशो का पकडता है। वह जिस वग या जाति से सबद्ध है वह वग और जाति एक महत्वपूण कारक (फक्टर) की भूमिका निभाते है। उसकी विचार दष्टि उसकी जीवनदष्टि का निर्माण करती है। इस आधार पर कमलेश्वर के उपन्यासो की वस्तु चेतना का अध्ययन एक प्रकार से कमलेश्वर की साहित्यिक दष्टि का अध्ययन भी है।

कमलेश्वर ने नयी कहानी की भूमिका म एक स्थान पर लिखा है—'अब चारित्रादि प्रमुख न होकर कथ्य ही प्रमुख है। आज किसी भी कृति के लिए 'वस्तु ही अधिक महत्वपूण है जिसके आधार पर लेखक की चेतना उदघाटित होने मे समथ हो सकती है।

कमलेश्वर नये उपन्यासकारा की उस पीढी के लेखक हैं जिन्होने जनेन्द्र अज्ञेय यशपाल और इलाचन्द्र जोशी की रूढ कथा सचेतना को नवीन और स्वस्थ सामाजिक भूमि देने की चेष्टा की है। यह सामाजिक भूमि स्वाधीनता के बाद भारतीय इतिहास म उभरने वाली भूमि है जो एक ओर अपने आप म विशिष्ट है तो दूसरी ओर नये ससार से जुडी हुई भी। इसीलिए इस भूमि पर कथा रचना करने वाले लेखको ने अपने देश और समाज की बदलती हुई स्थितियो टूटते हुए मूल्यों और इस बदलने और टूटने की प्रक्रिया को झेलने म बिखरते हुए मध्यवर्गीय और निम्नवर्गीय परिवारो एव चरित्रो का विशेष रूप स वणन किया है। कमलेश्वर ने अपने कहानी सग्रह खोयी हुई दिशाएँ की भूमिका म जो लिखा है *उसस उनके उपन्यासो की वस्तु चेतना के विषय म स्पष्ट सकेत मिलते है—*

> मुझे पात्रो ने कभी कहानिया नही दी ह मुझे हमशा उनकी स्थितियो ने ही कहानियाँ दी हैं। यदि कोई कहानी पात्र केन्द्रीय हो गयी है तो वह मेरे लखन की कमजोरी है पर जान बूझकर पात्रो को विरूप कर देने की कोशिश भी मैंने नही की है। क्योकि सच्चाइयाँ इतनी इकहरी नही है कि उन्हे भारी हाथ से उठाया जा सके।

इसके साथ ही कमलेश्वर ने लेखक की वस्तु चेतना मे जो परिवतन दष्टिगोचर होने लगे है उसके सम्बन्ध म भी अपने विचार प्रकट किये ह

> आज के पुराने लखक अपने समय म नये थे—एक सीमित रूप म, क्योकि व अपने समय के धीरे धीरे बदलते मूल्यो को वाणी दे रहे थे पर आज इस समय का लेखक उन परिस्थितियो की उपज है जो एकाएक बदली है। दूसरे महायुद्ध का निणय होने से पहले मानवता

की चिन्ताएँ दूसरी थीं जीवित रहने की शर्तें इतनी क्रूर नहीं जितनी कि अब एकाएक हो गयी हैं निर्णय लेने की उतनी जल्दी नहीं थी जितनी कि अब है। जन मानस तब आन्दोलित था, आज आकृान्त आक्रान्त है। और इसी के साथ वे सब बातें भी जुड़ी हुई हैं जो परिप्रेक्ष्य म अपना तत्काल उपचार माँगती है। तब लेखक को किनारे खड़े होकर बहाव को देखने की सुविधा थी और मन्तव्य प्रकट करना ही उसका लेखकीय धर्म था, तब वह द्रष्टा भी था पर आज का लेखक मात्र द्रष्टा नहीं है, वह भोक्ता भी है—किनारे खड़े रहने की सुविधा भी उसे नहीं है बहाव म बहना उसकी मजबूरी है।"

कमलेश्वर के प्राय सभी उपन्यासो की वस्तु निम्न मध्यवर्गीय समाज के सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक तथा वैयक्तिक जीवन स सम्बद्ध है। एक सडक सत्तावन गलियाँ,' (जो गलती से 'बदनाम गली के नाम से भी छपा है) डाक बगला' लौटे हुए मुसाफिर 'तीसरा आदमी' समुद्र म खोया हुआ आदमी', 'काली आँधी और आगामी अतीत उपन्यासो म कस्बा और बडे शहरो की जिन्दगी का यथार्थ चित्रण किया है। लेखक ने लौटे हुए मुसाफिर तीसरा आदमी समुद्र मे खोया हुआ आदमी तथा 'आगामी अतीत मे बडे शहरो की विषम परिस्थितियों मे सत्रस्त व्यक्ति को कस्बे की ओर लौटते हुए दिखाने का प्रयास किया है। वस्तुत इन तीनो उपन्यासो म व्यक्ति अधिक सकट के कारण कस्बे के सहज जीवन का अधिक उपयुक्त समझते हैं और बडे शहरो के अस्त व्यस्त जीवन को अपनी स्थितिया के अनुकूल नही पाते।

कमलेश्वर के उपन्यासों की कथाभूमि जीवन के यथार्थ को अपने वास्तविक रूप म चित्रित करती है। उनकी यह कथाभूमि स्थितिया और पात्रो के माध्यम से विश्वसनीय लगती है कही भी कृत्रिम या आरोपित नही होती। उपन्यासो का परिवेश वस्तु के अनुकूल है। उन्होंने अपने सभी उपन्यासो म मानवीय पक्ष को सवेदना के धरातल पर सर्जना और कलात्मकता स रूपायित किया है। कमलेश्वर के उपन्यासो की कथा म भाषा अधिक महत्त्वपूर्ण है। यही कारण है कि उनकी भाषा भी 'वस्तु चेतना का निर्माण करती है। उनकी भाषा इतनी सशक्त है कि उपन्यास आकार म छोटे होते हुए भी विस्तार लिये हुए प्रतीत होते हैं। शेखर एक जीवनी' झूठा सच बूँद और समुद्र कब तक पुकारूँ गिरती दीवारें' आदि उपन्यासों की भांति उनके उपन्यास आकार मे बेहद न होते हुए समय भाषा के कारण विस्तृत लगते है क्योंकि य उपन्यास के विविध आयामो को उदघाटित करते हैं। इसके साथ ही उपन्यासो म अनुभावना का जो रूप उभरकर आया है वह विश्वसनीय है। कहा जा सकता है कि आकार म छोटे होने पर भी कमलेश्वर के उपन्यास बहुत कथानक वाले उपन्यासो के समान हैं। उनम जीवन की

अर्प

रटना भाषा व मितव्ययी प्रयोग के साथ चित्रित होती हुई लगती है सम्भवत इसलिए भी कि वस्तु के विषयानुरूप विस्तार की अपेक्षा यहाँ अपने साथ व यथार्थ व अनुभवों की ओर एक सक्रिय और अथवा प्रयाण है।

कमलेश्वर ने एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास में जिस परिवेश को लिया है वह जीवन के यथार्थ धरातल पर अवलम्बित है। मनपुरी कस्बे की जिन्दगी को विभिन्न परिप्रेक्ष्य में रखकर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। उपन्यास की वस्तु स्वाधीनता से पूर्व के भारत से लेकर सन १९४७ के पश्चात के भारत तक फैली हुई है। आजादी के लिए लड़ने वाले मध्य और निम्न वर्ग के लोगों ने जिस नव समाज की कल्पना की थी उस स्थिति का मोहभंग स्वाधीनता के पश्चात् ही हो गया। मास्टर हबीब गयादीन निर्मोही और बाजा मास्टर जैसे असंख्य व्यक्तियों की आकांक्षाओं की अकाल मृत्यु का दस्तावेज यह उपन्यास स्वतंत्रता के पूर्व और स्वतन्त्रता के बाद की मानसिकता का सफल अंकन करता है। एक सड़क सत्तावन गलियाँ में निम्न मध्यवर्ग समाज के आर्थिक सामाजिक राजनीतिक तथा वैयक्तिक जीवन का यथार्थ चित्रण किया गया है। यह उपन्यास उत्तर प्रदेश के मनपुरी कस्बे की कथा है किन्तु इसमें आंचलिकता अथवा लोकल कलर (क्षेत्रीय रंग) जैसी कोई अनुभूति नहीं है। ऐसा न होना इस लघु उपन्यास की कमी नहीं विशेषता ही है। लेखक ने अपनी कथा को अधिक यथार्थ और विश्वास योग्य बनाने के लिए ही मनपुरी स्थान का नामोल्लेख किया है।"[1] इस उपन्यास में स्वाधीनता से पहले और बाद की परिस्थितियों का जो चित्र मिलता है वह सूक्ष्म और अभिव्यक्ति भी विशिष्ट है। कम्यूनिस्ट कांग्रेस विवाद कस्बे में व्याप्त साम्प्रदायिकता, रामलीला और नाटकमण्डली समाचारपत्रों की दयनीय स्थिति ड्राइवरों के व्यस्त जीवन का तनाव और प्रेम में टूटते बिखरते जीवन को यथार्थ के विश्वसनीय परिप्रेक्ष्य में चित्रित किया गया है। इसके साथ ही इस उपन्यास में लेखक ने ऐसे प्रसंगों का भी स्थापित किया है जो पूर्ववर्ती उपन्यासों में परिलक्षित नहीं होते। यह उद्घाटन सामाजिक जिन्दगी में फैले क्रूर और घिनौने—सबको सामने रखना है—

> सुबह शिवराम की आँख खुली तो देखा सरनामसिंह उसी की चारपाई पर पड़े हैं और उनका एक हाथ उसके सीने पर है यह कोई नयी बात नहीं थी। उसे अभ्यास हो जाना चाहिए था। चार साल गुजर गये इसी वातावरण में रहते। पहले बेहद उलझन होती थी '

कस्बे के लोगों की इस तरह की जिन्दगी को 'लौटे हुए मुसाफिर' उपन्यास में भी देखा जा सकता है। जिन्दगी की विरूपता का यह प्रसंग पुरुष समाज के

---

1 डॉ० घनश्याम मधुप हिन्दी लघु उपन्यास पृ १६३

'मनोविनान' को स्पष्ट करता है—"और सलमा यह सब देखती है, खून के आँसू रोती है—उन्हें यह सब करते हुए देखकर भी बर्दाश्त करती है। रात गये तक यह सब चलता रहता है और सलमा शरम की मारी रोता रोती तब सो जाती है। तथा सलमा स रूप मे स्त्री' विमुक्ति की छटपटाहट म पडी अनेक द्वन्द्वा का सामना करती है।

कमलेश्वर के उपन्यासा म उन उपेक्षित जिन्दगियो से साक्षात सवत्र मिलता है जिनका विवरण सामान्य परिजनो म वर्जित है। इस प्रकार कमलेश्वर एक प्रकार से वजना के उन क्षेत्रा की कथाओ को मुखरित करते है जो समाज के निम्न वग, आर्थिक दृष्टि मे मतप्न वग से सम्बद्ध है। कमलेश्वर ने 'आगामी अतीत उपन्यास म कस्ब की वश्याओ की जिन्दगी का अत्यन्त सूक्ष्मता एव स्वाभाविकता से अकित किया है। उनके जीवन मे आर्थिक सकट के कारण कितनी कटुता आ गयी है। लेखक न सहज और यथाथ चित्रण करके उनकी दारुण कथा तथा दयनीय परिस्थितियो को पाठक के सामन रखा है जो उनकी भाषा से ही स्पष्ट हो जाता है—

> 'चल आत है मरदुए ! इश्क लडायग अबे यहा धधा होता है, धधा ! इश्क नही अगनी बार आना वच्चू ता जेब गरम और कमर पुख्ता करके आना '[1]

इस प्रकार एक अन्य स्थल पर भी उनकी विवशता प्रकट हा जाती है—

> 'अच्छा अब तू जाता है कि नहा ! पिंड तो छोड ! जसे तसे पेट पालत हैं हम लाग। क्यो पट पर लात मारन चला आता है ?'[2]

स्पष्ट है कि यहाँ कवल प्रेम', लौकिक या भौतिक प्रम का उल्लख नही है। इसका एक आर्थिक पक्ष भी है। यह आर्थिक आधार वग' की सष्टि करता है। यह वर्गधारणा वस्तुत आज के मनुष्य को 'सघष की आर प्रेरित करती ह।

वस्तुत कमलेश्वर ने जीवन के इस कटु यथाथ को समाज क परिवेश के साथ प्रस्तुत किया है। एक ओर जहाँ एक सडक सत्तावन गलियाँ म यह स्थिति विघटित रूप म चित्रित हुई है तो लौटे हुए मुसाफिर म पारिवारिक जीवन से जुडी हुई है। मक्सूद क इस तरह क जीवन के प्रति सलमा स्वय को टूटी और बिखरी हुइ पाती है उसक गृहस्थ जीवन म विषमनाएँ उत्पन्न हो जाता है। किंतु इस स्थिति स वह चाहकर भी अलग नही हा पाती है। सकत यह है कि स्त्री क लिए मुक्ति का रास्ता पुरुष' क अत्याचारा क बीच कहीं नही है।

---

१ आगामी अतीत पृ० ६८
२ वही पृ० ७६

६ । मंदिरों में इंट-पत्थर तक इकट्ठे नहीं हुए—जा
ह भी किसी ने नहीं पीटा।
भीतर भीतर एक भूचाल आया था। बड़ा भयानक
वस्ती की चूलें हिल गयी थीं। भीतर भीतर सब कुछ
था। दिनों इमारतें ढह गयी थी। अपनेपन का जज्बा मर
नफरत की आग ने इस बस्ती को निगल लिया था और
भरी-पूरी चिक्वो की वह बस्ती सबसे पहले उजड गयी थी। पता
नहीं यह आग कहा छिपी हुई थी। नफरत की इस आग की
चिनगारियाँ बाहर से आयी थी दूसरे शहरो, कस्बा और सूबा
मे।''[1]

वस्तुत कमलेश्वर ने लौटे हुए मुसाफिर म उन अबाध लोगो की कथा को आधार बनाया है जो केवल अपनी रोजी रोटी क लिए ही सघपरत थे परंतु साम्प्रदायिकता की लहर म वह गये और न तो पाकिस्तान जा सके, न ही वापस अपने कस्बे मे लौट सके। अत म जो लोग लौटकर आये वे मजदूर बनकर ही आये।

आज के विषम और सघषपूर्ण जीवन मे जीने का सघष नितात जटिल होता जा रहा है इसके पीछे चाहे कारण सामाजिक व्यवस्था क हो या कुछ और समुद्र म खोया हुआ आदमी' म कमलेश्वर ने इस तरह की परिस्थितियो के कारण सम्बधो मे परिवतन का उदघाटन किया है। यह सब कुछ व्यक्तिगत स्वार्थों के कारण भी है और आर्थिक विपन्नता भी इसम कुछ अश तक सनिहित है। तारा अपनी माँ को आया बनाने म कोई सकोच नही करती। आज के इस जीवन म रिश्तो के अथ बदल रहे हैं, जो विश्वसनीय हो लगता है। य सारे सबध आर्थिक भूमिका पर बनते बिगडते हैं। हमारे सारे जीवनचक्र को प्रभावित सचालित और नियमित करने वाली महत्तशक्ति आर्थिक केन्द्र है। कमलेश्वर के उपन्यासो म आज क इस क्रूर और नग्न सत्य का अकन आज की सामाजिक स्थिति की अनुरूपता लिये हुए है।

काली आँधी उपन्यास म कमलेश्वर न उच्चवग व मध्यवग के राजनीतिक सामाजिक एव वयक्तिक जीवन का अत्यन्त सूक्ष्मता से यथाथ चित्रण किया है। यह उपन्यास स्वाधीनता के पश्चात् देश म व्याप्त राजनीति क आतरिक पहलुओ को निममता से उदघाटित करता है। उपन्यास की नायिका मालती राजनीति म प्रवेश करती है और निरन्तर सफलता प्राप्त करती चली जाती है। इस सफलता को प्राप्त करने के लिए उसे अनेक प्रकार के हथकडे अपनाने पडते

---

१ लौटे हुए मुसाफिर प ४

हैं। सफलता के उच्च स उच्चतर शिखर पर पहुँचन के अतराल म वह अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियो का निर्वाह नही कर पाती है। वह अपने पुत्र और पुत्री से भी विमुख हा जाती है परतु उनका अभाव उस एकात के क्षणा मे सालता अवश्य है। वास्तव म राजनीति के नश म वह इतनी अधिक चूर रहती है कि उसके और जग्गी बाबू (उसका पति) के बीच तनाव और कटुतापूर्ण स्थिति उत्पन्न हो जाती है। राजनीति कितनी घिनौनी, स्वार्थयुक्त झूठ और फरेब क धरातल पर उपस्थित रहती है राजनीति कितनी क्रूर और यातनादायक होती है इसका अनुभव जग्गी बाबू लगानार करत रहत हैं। जग्गी बाबू मालती से समझौता नहा करत हैं जो इस बात का परिचायक तो है ही कि वह उच्चवग की खोखली झूठी, छद्म और आडबरपूर्ण जिन्दगी नही जीना चाहते है अपितु इसका भी सकत है कि जग्गी बाबू अनवरत सघष करने मे विश्वास करत है और अपन वग (मध्य वग) का नहीं छोडना चाहते हैं। इसके साथ ही जग्गी बाबू अपने स्वाभिमान का भी बनाय रखना चाहते है। इस सदर्भ म मालती और जग्गी बाबू का सवाद उल्लेखनीय है—

> 'समझती ता हू पर राजनीति की इस दुनिया म साफ चेहरा रखने क लिए बहुत नुकसान भी उठाने पडत है। और हाटल का बन्द होना कोई इतना बडा नुकसान नही है कि आप मरी खातिर इतना भी नहीं कर सके
>
> —फिर मैं करूँगा क्या ?
>
> —क्यो मेरे साथ मरे काम मे हाथ नहीं बँटा सकते ? इतने गर लाग साथ रहकर काम करत हैं। कितनी चीजा को सभालना पडता है। आप दस कमेटिया के मम्बर हो सकत ह गैर लोग मुझस फायदा उठा सकत हैं पर आपके लिए मैं किसी लायक नही ?
>
> —मैं तुम्हारा पति हूँ फ़ायदा उठा सकन वाला ग़ैर आदमी नहीं मैं तुमस फायदा उठाऊगा ? सोचो, क्या बात कही है तुमने ?
>
> —कोई ग़लत बात तो नही कही अगर एक औरत इस लायक हा जाय ता इसम पति-पत्नी का रिश्ता
>
> —क्या कह रही हो तुम ?'[1]

दाम्पत्य सम्बन्धा की यह स्थिति आज के सामाजिक जीवन के उन परिदृश्या को प्रस्तुत करती है जो एक किस्म का सामाजिक तनाव करती है। यह सामाजिक तनाव सम्बन्धा के उन वविध्य को प्रस्तुत करत हैं जा सामाजिक मूल्या पर आघात करत हैं।

---

1 काली आँधी पृ 10

कमलेश्वर ने 'आगामी अतीत' उपन्यास म आज की जटिल और विषम सामाजिक परिस्थितिया म आर्थिक सपन्नता कितनी महत्त्वपूर्ण हो गयी है इस कटु सत्य को अनावृत किया है। अपनी आर्थिक विपन्नता को सम्पन्नता मे बदलन के लिए आगामी अतीत' का नायक कमल बोस (निम्नवग का एक शिक्षित युवक) पूजीवादी शक्तियो स समझौता ही नही करता है अपितु अपन वग का भी भूल जाता है। कमल बोस के अवसरवादी और सुविधाभोगी चरित्र का प्रशांत इन शब्दा म अभिव्यक्त करता है—

> 'तू फस्ट आया था बस, वही से तू कतइ दूसरी तरह के सपन बुनने लगा था। प्रतियोगिता! इस बेहूदा कपिटीशन की दौड म तू शामिल हो गया था। इस मुकाबले की दौड म जीतने के लिए अक्ल और तेजी ही नही चाहिए, इसम जीतने क लिए वे सब चीजें चाहिए जो एक सफल होने वाले आदमी के लिए बेहद जरूरी होती है—एक खूबसूरत बीवी चाहिए पसा चाहिए ऊँची रिश्तेदारी चाहिए और सबसे बडी चीज जो चाहिए वह यह कि मुकाबले की इस दुनिया म सफल होने के लिए उस दूसरे के जज्बातो का कोई खयाल नही करना चाहिए। उसे स्वार्थी हाना चाहिए सफल होने वाले आदमी को दूसरो को इस्तेमाल करना चाहिए खुद इस्तेमाल की चीज नही बन जाना चाहिए। इसलिए तुमन चदा के जज्बात इस्तेमाल कर लिये अब उसका दु ख मनाने से फायदा? पछताने का मतलब?'[1]

कमलेश्वर न अपनी कथाओ अपने पात्रो के माध्यम से इस विराट सदभ अर्थात पूजीवादी षडय त्र का पर्दाफाश किया है जो कुछ ढुलमुल चरित्रो को अवसरवादी बना डालता है। वस्तुत कमलश्वर की दृष्टि मनुष्य के सर्वांग को चित्रित करने की रही है।

कमलेश्वर के उपन्यास मानवीय सवेदना के धरातल पर अवस्थित हैं। उनके उपन्यासा का यह मानवीय पक्ष कही पात्रा के माध्यम से उभरकर आया है तो कही स्थितियो के माध्यम स। एक सडक सत्तावन गलियाँ उपन्यास के अत में कमलश्वर न सरनामसिंह का जो रूप दिखाया है वह सहज लगता है।

व्यापक मानवीय सवदना वातावरण और चरित्रा के आत्मीय परिचय और निकटता की व्यक्तिगत अनुभूति कमलश्वर के उपन्यासा म विद्यमान है। उनके सभी उपन्यासों म मानवीय सवेदना नितात भिन्न स्तर पर प्रकट हुई है जो उन्ह अपन समकालीन उपन्यासकारों से पथक करती है। डाक बगला की इरा

---

१ आगामी अतीत प ४६

की समग्र चेतना मानवीय सबधो पर आधारित है, वह किसी को भी दु खी नहीं देख सकती क्योंकि वह दूसरा के दु ख को अपना दु ख समझकर जीती है—

"पर तिलक ! मेरी सबसे बडी मजबूरी यही थी कि जो भी आदमी मेरे निकट आया उसम सु दरता की कोई न-कोई किरण मेरे लिए फूटने लगती थी। या तो उसका मन मुझे जीत लेता था, उसके दु ख मुझे हार मानने को मजबूर करते थे, या उसका अपनापन मुझे मार देता था।'[1]

कमलेश्वर की वस्तु चेतना मानवीय व्यवहार या स्थिति के विश्लेषण के प्रति अधिक सक्रिय रही है। कहा जा सकता है कि आज का उपन्यासकार अपने प्रति और जीवन के प्रति बहद ईमानदार है। वह अनुभवहीन क्षेत्र म दार्शनिक मुद्रा धारण कर प्रविष्ट नही होता, वह अनुभव क्षेत्र की तीखी चेतना को कभी तल्खी क साथ और कभी मदुता के साथ, कभी सहजता से कभी अनेक सकेत-सूत्रा से चित्रित करना चाहता है। कमलेश्वर ने 'डाक बगला म प्रेत के असहज मानवीय रूप को प्रस्तुत किया है जो व्यक्ति के जीवन को सामाजिक सदभ म प्रस्तुत कर उसकी रिक्तता और सत्रास को उद्घाटित करता है।

तीसरा आदमी म जिन सामाजिक, आर्थिक व्यक्तिगत परिस्थितियो के बीच नरेश और चित्रा के सबधो म जो कटुता आ जाती है, उसे कमलेश्वर न फिर स मानवीय व्यक्तित्व का रूप देन का प्रयास किया है—

जो कुछ भी हुआ है उस भूल जाओ और बच्चे को लेकर यहाँ चली आओ मेरे दिल मे आज कुछ भी नही है। अपमान और दारुण दु ख की जिस आग म जलता रहा हूँ, उसन अब कुछ भी शेष नही छोडा है। अब न मरे मन म घृणा है और न प्रतिशोध। कुछ भी नही है। चित्रा ! शायद हम फिर से अपनी ज़िदगी शुरू कर सकें। नही जानता इस बीच तुमन क्या-क्या सोचा है। पर मैं बहुत साफ मन से इतना ही कह सकता हूँ कि तुम्हारे चले आने के बाद सब ठीक हो जायेगा। मेरे मन म अब कही भी किसी तरह की कुण्ठा नही है। शायद इसलिए भी कि मैं उस अबोध का सिवा प्यार के और कुछ नही कर सकता। तुम्हारे पत्र की प्रतीक्षा निरतर करूँगा '[2]

तीसरा आदमी उपन्यास मे समकालीन जीवन के विभिन्न रूपो की पर्याप्त और विविध झाँकी मिलती है मनुष्य कई एक परिचित-अपरिचित रूपों के परिवेश और उसके साथ सम्बन्ध के मानवीय सम्बन्धो और परिस्थितियो के चित्र मिलते हैं। इस उपन्यास म जीवन क कटु सत्यो के सूक्ष्म और मार्मिक रूप अनुभूति

१ डाक बगला पृ० ७३
२ तीसरा आदमी, प ७२ ७३

की तीव्रता और विविधता के अगण्य स्तरो म बिखरे पडे हैं।

इसी प्रकार 'लौटे हुए मुसाफिर' म सामाजिक राजनीतिक जीवन के मूल्यों और मायताओ की पृष्ठभूमि म वैयक्तिक जीवन का भी बडा सवेदनशील और आत्मीयतापूण चित्रण हुआ है परिवार और उसके विघटन के परिप्रेक्ष्य म सहज मानव आचरण और मूल्या की विडम्बना को दिखाया गया है—

> बच्चे किसी अनाथालय म नही जायेंगे!" नसीबन ने बहुत साफ-साफ कह दिया था हम यह सब झझट जानते नही रही उनके मुसलमान होने की बात सो सोलह आने गलत है, बाप उनका जिदा है जब आयगा तब ल जायेगा। [1]

कमलेश्वर ने बदलत सामाजिक सदर्भों का सम्पूणता के साथ समुद्र म खोया हुआ आदमी उपयास म लिया है और मानवीय सवेदनाआ की अत तक रक्षा की है उ होने बदलत हुए सामाजिक परिवेश की प्रामाणिक स्थितिया की सच्चाई से अविरल रूप म प्रस्तुत किया है। इस उपयास मे श्यामलाल और तारा के माध्यम से बदलती हुई नतिक मायताआ का प्रक्षेपण हुआ है। श्यामलाल का मात्र चालीस रुपए म अपनी बेटी को हरबस को सौंपना दिल्ली के ही नहीं, भारत के किसी भी निम्न मध्यवर्गीय परिवार की यथाथ स्थिति को अनावृत करता है। यह उपयास पहल की अपेक्षा अधिक नये रूप म यक्ति को प्रतिष्ठा देता ह साधारण यक्ति म उसक सहज जीवन के साधारण सुख दुख हप विवाद मे मानवीय गरिमा की खोज करता है।

काली आधी उपयास मे मानवीय सवदना का अत्यत सशक्त शब्दा म सूक्ष्मता स रूपायित किया गया है। राजनीति के घृणित और अपमानजनक वाता वरण स सत्रस्त उपयास के नायक जग्गी बाबू अपने आत्मीय एव अतरग सम्बधो के प्रति चितित व यथित दिखायी पडत है, उनकी पीडा और यातनामयी मन स्थिति स्वाभाविक प्रतीत होती है—

> मैं नही चाहता कि मेरी बच्ची आपकी जालिम पालिटिक्स का शिकार हो जाय कल को काई उठकर यह भी कह सकता है कि यह मेरी बच्ची नही है आपकी दुनिया का ज़मीर मैं खूब समझता हू! मैं अपनी बच्ची को आपकी गलीज़ दुनिया से दूर रखना चाहता हूँ और आपकी मालती जी के नाम पर मुझे लेकर कीचड उछाला जाय यह भी मैं नही चाहता बारह बरस जो खुला रास्ता उसे देकर मैं दूसरी तरफ चला आया था उस रास्ते पर अपनी छाया तक का नही आन देना चाहता [2]

---

१ लौटे हुए मसाफिर प ६२
२ काली आंधी प ८५

काली आँधी' अतिरंजना नहीं है अपितु वह अतिरंजना का सयम है। यह सयम स्पष्ट करता है कि एक लेखक को अपने विषय कहीं से चुनने चाहिए क्योंकि उनका सीधा सम्बन्ध मानवीय सघर्ष और उसकी सफलता से है।

समुद्र में खोया हुआ आदमी में कमलेश्वर ने नारी को 'सतीत्व और देवित्व' की सीमा से निकालकर उसे इसान के रूप में देखने-समझने का प्रयत्न किया है। यही कारण है कि हरबस तारा को स्वीकार कर लेता है। विवाह पूर्व यौन-सबध स्थापित करने वाला प्रेमी हरबस समाज के भय से तारा को छोडकर भाग नहीं जाता। नैतिक मानदण्डो की उपेक्षा करता हुआ वह स्वच्छद प्रेम करता है और तारा को पत्नी बना लेता है। परम्परावादी समाजों में पूर्वजनों की यह साहसिकता जहाँ पुराने मूल्यों की अर्थहीनता घोषित करती है वहीं नये सामाजिक मूल्यों, नये सामाजिक सबधो को भी स्पष्ट करती चलती है।

उपन्यासकार का प्रत्यक्षानुभव या उसका साक्षात्कार उपन्यास की कथाभूमि को एक विशेष प्रकार की सवेदना के साथ गहन एव सूक्ष्म अभिव्यक्ति प्रदान करता है। प्रेमचद के अधिकाश उपन्यास सत्य घटनाओ पर आधारित है जबकि कमलेश्वर ने घटनात्मक सच्चाई की जगह मानवीय सच्चाई का अन्वेषण किया है। एक सडक सत्तावन गलियाँ के उपन्यासकार कमलेश्वर मैनपुरी के निवासी रहे है। बस का अड्डा, वहाँ पडे तख्त और स्वाधीनता के पहले ही प्राइवेट बसो पर काम करने वाले ड्राइवरो क्लीनरो के जीवन को उन्होंने निकट से देखा है उन लोगो के जीवन को बारीकी से समझा है। प्रत्यक्ष अनुभव से सबद्ध कथा भूमि के प्रति उपन्यासकार का एक विशेष प्रकार का सवेदनशील दृष्टिकोण हो जाता है। यह अनुभावना कथा को अधिक सशक्त बनाने में समर्थ होती है। इस उपन्यास में कमलेश्वर ने कस्बे के लोगो की जिंदगी को विविध रूपो में चित्रित किया है। उन लोगो के विषय में एक सडक सत्तावन गलियाँ में एक स्थान पर लेखक ने जो वर्णन किया है वह अनुभावना के धरातल पर ही स्थित है—

> बरसात खत्म होते होते दीवाली दशहरे की धूम शुरू होती। घरो को बहुरिया की तरह सजाया जाता। फूली और सूजी कच्ची दीवारो का खरोच-खराचकर एक सा करके मिट्टी से लेप देते। मुडेरो की काली पडी हुई घासें साफ हो जाती। दरवाजे गेरू से पुत जाते। द्वार और तारो पर अनगढ हाथों से बेल बूटे बनते। कोई दरवाजे पर तिरगा झडा बनाकर और जहिद लिखकर सजावट पूरी कर लेता सिर्फ रौनक के दिन। रामलीला की धूम! मडी का धर्मादा साल भर इस लिए इकट्ठा होता है। मडली आती और झम्मनलाल की मडी में स्टेज बनता।[१]

१ एक सडक सत्तावन गलियाँ (हस १) पृ ३०१ ३०२

'लौटे हुए मुसाफिर' उपन्यास मे पाकिस्तान बनने पर एक छोटे-स क़स्बे के मुसलमानो को किस प्रकार अपनी बस्ती छोड़कर भटकना पडता है और वर्षों के अतराल के बाद उन लोगो के बच्चे जवान होकर फिर अपने क़स्बे म पहुँचकर खण्डहरो का पहचानने का किस प्रकार प्रयास करते हैं यह विषय कमलेश्वर ने चुना है। भारत की स्वाधीनता से उन्हे क्या मिला यह एक प्रश्न है जिसे कमलेश्वर ने उठाया है। जिस सवेदनशील और आत्मीयतापूर्ण ढग से उन लोगों की ज़िदगी का चित्रण कमलेश्वर ने किया है वह वस्तु के प्रति विश्वसनीय दृष्टि का परिणाम है—

> 'सत्तार जब अपनी कोठरी म आया तो उसका मन बहुत भारी था। उसके दिमाग म तरह-तरह के खयाल आ जा रहे थे। उसे यह लगता था कि शायद पाकिस्तान बनने से एक नयी ज़िदगी की राहें खुल जायें। कुछ ऐसा हो कि उसे अपनी बेकारी और नाकामी से मुक्ति मिल जाय एक नया रास्ता मिल जाय जो ज़िदगी को खुशहाल कर दे। पर रह रहकर उसे यह भी भ्रम होता था कि यह सब कुछ होगा नही। करोड़ो मुसलमानो के बीच उसकी बिसात ही क्या है? कौन पूछेगा उसे?

इसी प्रकार उनके अन्य उपन्यास डाक बगला तीसरा आदमी और समुद्र म खोया हुआ आदमी म नगर जीवन की यान्त्रिकता कोलाहल भीड और व्यक्ति का अकेलापन और सवादहीनता की स्थिति का चित्रण हुआ है जो जीवन के यथार्थ को पूरी प्रामाणिकता और गहराई से प्रस्तुत करता है। कमलेश्वर के उपन्यास एक स्तर पर समकालीन जीवन के दूरव्यापी विस्तार को अपने भीतर समेटते हैं और दूसरे स्तर पर गहराई के आयाम म कुण्ठित तथा खण्डित व्यक्तित्व की करुणा को अभिव्यजित करते है। इन उपन्यासों म कमलेश्वर ने अपने अनुभव को सार्थक कलात्मक रूप देने का प्रयास अधिक किया है। इन उपन्यासो म वर्तमान आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियो म मध्यवर्गीय व्यक्ति चेतना के बदलते हुए तथा कुण्ठित रूप का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया गया है।

'डाक बगला' उपन्यास म इरा के माध्यम से नैतिक और सामाजिक मान्यताओ के बीच टकराहट को दिखाया है जो विश्वसनीयता के अनुभवो को अधिक प्रामाणिक रूप म प्रस्तुत करता है। यह सघर्ष अथवा द्वद्व ज़िदगी का, मनुष्य के लिए मनुष्य का अतिम विकल्प प्रतीत होता है।

आज सामाजिक विसगतियो के कारण पति पत्नी के मध्य स्वस्थ सबध नहीं रह पाते और एक दूषित और गदा वातावरण उपस्थित हो जाता है। कमलेश्वर के उपन्यास तीसरा आदमी की कथा पति पत्नी और प्रेमी की है। पति पत्नी के सबध के बीच तीसरे आदमी की अनुभूति ही पूरे उपन्यास म व्याप्त रहती है।

नौकरी, शादी, ट्रांसफर बच्चे और पत्नी इन सबके बीच वही 'तीसरा आदमी' हमेशा छाया रहता है। आज के व्यस्त जीवन में यह असंभव ही है कि व्यक्ति जीविकोपार्जन के अतिरिक्त अन्य सामाजिक स्थितियों के प्रति सचेत रहे। कमलेश्वर के उपन्यास की कथा भूमि जिस वस्तु चेतना से सम्बद्ध है, वह अनुभवना के धरातल पर अवस्थित है यही कारण है कि उनके उपन्यासों में अतिशय सजीव चित्रण हुआ है—

> यहाँ तक कि मुझे चेहरे में भी छाया का हलका सा रूपाभास दिखायी देता था। पहले चिन्ता के नक्श बिलकुल अपने थे, पर अब उनमें अन्तर आ गया था। ओठों के आसपास और नाक वाला हिस्सा बिलकुल साँचे में ढला हुआ लगता था गहन और प्रगाढ़ शारीरिक सबधों की अनवरत क्रिया के फलस्वरूप आत्मिक और शारीरिक रूप से लिप्त दोनों व्यक्तियों के रूपाकारों में शायद यह साम्य उभरने लगता है—बहुत धीरे धीरे वह शायद एक प्रक्रिया है जो अपने-आप घटित होती है शायद इसीलिए कुछ बरसों के बाद जोड़े अपनी शक्लों में पति पत्नी से अधिक भाई-बहन लगते लगते हैं[1]

कमलेश्वर के उपन्यासों में स्त्री-पुरुष सबध पूर्ववर्ती लेखन की तुलना में सर्वथा भिन्न रूप में प्रस्तुत हुए हैं। हिंदी के प्रेम सबधी उपन्यास बड़े ही अस्वाभाविक त्रास एव पीडा से भरे हुए अथवा विकृत और रुग्ण मनोवृत्ति के सूचक या व्यक्तित्व की कुण्ठा से विपाक्त होते रहे हैं। किंतु कमलेश्वर के उपन्यासों में यह स्थिति टूटती हुई परिलक्षित होती है।

'समुद्र में खोया हुआ आदमी' एक शहर में निम्न मध्यवर्गीय परिवार के विघटन की कथा है। यह कथा उस घुटते परेशान होते और टूटकर बिखरते परिवार का चित्र प्रस्तुत करने और उसके माध्यम से वर्तमान समाज में बदलते हुए व्यक्तिगत, पारिवारिक तथा सामाजिक सबधों को प्रत्यक्ष रूप में रखने का प्रयास करती है आज का मध्यवर्गीय व्यक्ति किस प्रकार अपनी अर्थवत्ता खोकर आधुनिक सभ्यता की भीड़ के एक महत्वहीन अश में रूपान्तरित होता जा रहा है।

कमलेश्वर के उपन्यासों में अनावश्यक विस्तार नहीं है जैसा कि उनके समकालीन उपन्यासकारों—राजेंद्र यादव[2], मोहन राकेश[3] नरेश मेहता[4], उपेन्द्रनाथ

१ तीसरा आदमी पृ० ७६
२ उखड़े हुए लोग
३ अँधेरे बद कमरे
४ यह पथ बधु था

अश्क[1], देवराज[2] और अमृतलाल नागर[3] आदि मे मिलता है। कमलेश्वर के उपन्यास आकार मे छोटे होते हुए भी वस्तु की प्रकृति के कारण विस्तृत प्रतीत होते हैं। इसका एक कारण यह भी है कि उनके उपन्यासो की भाषा अर्थपूर्ण है। इस सदर्भ मे श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी का कथन प्रमाण के रूप मे स्वीकार किया जा सकता है कि आधुनिक कथा शिल्प मे जीवन की सपूर्णता उस फलाव मे न हो कर सघनतम स्थितियो के चयन मे है। साथ ही स्थितियाँ अपने आप मे बडी तथा महान हो यह भी आवश्यक नही। काल की समग्रता अनुभूति की सपूर्णता मे है। इसीलिए छोटे से छोटा क्षण भी महत्वपूर्ण है यदि वह किसी समग्र अनुभूति का आत्मसात कराने मे सहायक है। घटना से अधिक महत्त्व उसके सघात का है। कथा शिल्प मे इस आतरिक परिवतन के कारण एल्बर्ट कामू की कृति द आउट साइडर' प्राय सवा सौ पृष्ठो मे पूरी हो जाने पर भी एक उपन्यास है लघु उपन्यास या बडी कहानी नही। कैनवास की व्यापकता के विस्तार से नही। दूसरी ओर दृष्टि की सपूर्णता इस सीमित आकार मे अधिक आ सकती है।

कमलेश्वर ने कई स्तरो पर अपने उपन्यासो मे सूक्ष्म-से सूक्ष्म तथा जटिल से जटिल भावो विचारो प्रत्ययो-अवधारणाओ घटनाओ स्थितियो को अभिव्यक्त किया है और भाषा को नूतन शक्ति और सामर्थ्य दी है। उनके उपन्यासो की भाषा मे आत्मीय बोध दृष्टिगोचर होता है जो कृति को सहज अभिव्यक्ति प्रदान करता है। कमलेश्वर की भाषा मे कलात्मक निखार और चित्रात्मकता भी है। उनके उपन्यासो की भाषा मे सूक्ष्मता और सीधी सरल रेखाओ से हलके हलके प्रभाव उत्पन्न करने की क्षमता है। आधुनिक जीवन का घटना विहीन निरथकता भावशून्यता और फीकेपन को उनकी भाषा बिना किसी उत्तेजना के व्यक्त कर सकती है। उसकी अत्यत सूक्ष्म सवेदनशीलता मे विशेष प्रकार की तराश है जो स्थितियो के हलके से हलके परिवतन को मूर्त कर सकती है। शायद सरलता सूक्ष्मता और मूर्तता उनकी भाषा की निजी विशेषताएँ है।

कमलेश्वर के उपन्यासो की भाषा इतनी अधिक सशक्त है कि वह कम-से-कम शब्दो मे समूचे परिवेश को उदघाटित कर देती है। इस सदर्भ मे उनके 'एक सडक सत्तावन गलियाँ' उपन्यास का निम्न स्थल द्रष्टव्य है—

> मदन देवता की बसाई हुई इस बस्ती की जिंदगी की धुरी है—यह रिक्टगज की सराय झम्मनलाल की मडी और मोटरो के अड्डे। औरतो के अपने तीज त्यौहार है। मनौती-पूजा के ठिकाने है। शीतला

---

१ शहर मे घूमता हुआ आईना
२ अजय की डायरी
३ अमृत और विष
४ रामस्वरूप चतुर्वेदी हिंदी नवलेखन पृ० १११

देवी, गमा देवी, सैयद की मजार, बाबा का थान और नीम के नीचे पडी मैन देवता की मूरत। दो चार मौके ऐसे जरूर आते हैं जब आदमी-औरतो का सम्मिलित रूप दिखायी देता है—एकरसानन्द आश्रम म साधु समागम हो या मडी मे रामलीला शुरू हो।[1]

कमलेश्वर के उपन्यासों म भाषा का प्रयोग यथार्थ के नये स्वरूप के कारण है। यथार्थ का यह चित्रण यथार्थवादी न होकर नितात सहज-स्वाभाविक है और एक से अधिक यानी विभिन्न स्तरो पर स्पश करता है। सस्कारो और कुण्ठाओ से लेकर लोगों के दनिक व्यवहारो यहा तक कि उनकी भाषा तक इस व्यापक यथार्थ के अतगत आ जाती है। भाषा प्रयोगो तथा सवादो की दष्टि से कमलेश्वर की सफलता प्राय स्पृहणीय है। एक सडक सत्तावन गलियाँ' उपन्यास म इन प्रयोगो के कुछ और नवीन आयाम विकसित हुए हैं, कस्बे की जिंदगी की सारी अनौपचारिकता निकटता तथा अश्लीलता भी इस उपन्यास म लेखक ने गहराई से पकडी है जिसका आधार उनकी अथपूण भाषा ही है। भाषा की यह विलक्षणता उनके डाक बगला और समुद्र मे खोया हुआ आदमी म भी दखी जा सकती है जहा उन्होन प्रतीको क माध्यम स स्थितियो की अभिव्यक्ति प्रदान की है।

काली आधी म व्यग्यात्मक भाषा के द्वारा देश म व्याप्त राजनीति पर तीखा प्रहार किया गया है जबकि 'आगामी अतीत म निहायत फहड भाषा से युक्त सवादो के द्वारा उच्चवग पर निममता स चोट करन का सफल प्रयास किया गया है। इससे स्पष्टत अभिव्यक्त होता है कि भाषा किस प्रकार वर्गों, जातियो एव षडयन्त्रों की प्रकृति को सामन रखती है।

कमलेश्वर की भाषा सभवत सबसे अधिक भावमय आवेगात्मक और सयत है क्योकि उसम अतिरिक्त छद्म नही है।

समुद्र म खोया हुआ आदमी म कमलेश्वर न घर को जहाज की सज्ञा स अभिहित किया है और इस चित्रण म उनकी भाषा बहुत महत्त्वपूण हो जाती है जो समूची स्थिति को प्रकट कर देती है—उसमे साकेतिकता, रूपकधर्मिता प्रतीकात्मकता आदि गुण सहज ही मिल जाते हैं—

> एक क्षण के लिए उन्हें लगा कि जस वह डूबते हुए जहाज म घिर गय हैं। चारो तरफ से सलाब पछाड खाता हुआ बढता आ रहा है और वह अब कुछ भी नहीं कर सकते। धीरे धीरे सब कुछ इस सलाब म डूबता जायेगा और फिर एक झटके म यह जहाज अतल गहराइयो म समा जायेगा—और वह सब ऊबकर मर जायेंगे। चारो तरफ निपट सूनापन छा जायेगा और कुछ भी बाकी नही बचेगा।[2]

1 एक सडक सत्तावन गलियाँ (हस १) पृ० ३००
2 समुद्र में खोया हुआ आदमी पृ० १३

इसमे सदेह नही कि कमलेश्वर की भाषा ही उनके उपन्यासों की वस्तु चेतना का निर्माण करती है। यही कारण है कि तीसरा आदमी उपन्यास आकार म छोटा होते हुए भी अपने गुणधर्मी स्वभाव का सस्पश पाकर विस्तार लिये हुए प्रतीत होता है। तीसरा आदमी म कमलेश्वर की भाषा इतनी अधिक प्रभाव शाली एव समथ है कि वह कम स कम शब्दा मे समूची स्थिति को व्यक्त कर दती है और उपन्यास की मूल सवेदना का भी प्रकट कर दती है। उसम छाया' क प्रतीक का उपकरण यह स्पष्ट भी कर देता है।

साकेतिक अभिव्यक्ति तीसरा आदमी उपन्यास की विशेषता है। वसे कमलेश्वर ने अपने सभी उपन्यासा म इसका प्रयोग किया है। छोटे कस्बे का आदमी महानगर म आते-आते टूटकर बिखर जाता है। इस उपन्यास क मैं की भी दिल्ली पहुचकर कस्बाई महत्त्वाकाक्षाओ की वह मूर्ति लगातार खडित होन लगती है। छोटी छोटी बातों से दोना के बीच मरती हुई खामोशी बनती जाती है और वे सुमन्त के नाम से बचना चाहते है। चित्रा और मैं दोना ही सशय के शिकार है।[1] और मैंने उस दिन गहराई स अनुभव किया था कि सचमुच एक तीसरा आदमी हमारे बीच कही उपस्थित है—हर बात उसी पर ढलती है। हर सशय वही इशारा करता है और हमारे बीच हर बार वही एक छाया आकर खडा हो जाती है जिसे हम खुली आँखो देखते हैं।[2]

कमलेश्वर का तीसरा आदमी उपन्यास साकेतिक अभिव्यक्ति म कस्बाई और शहरी जिन्दगी की एक जुडी हुइ कडी के रूप म प्रकट हुआ है। कमलेश्वर ने अपन सभी उपन्यासा म वस्तु चेतना के अनुसार ही भाषा का प्रयोग किया है अत यह बिना अवरोध के स्वीकार किया जा सकता है कि उनके उपन्यासा की भाषा ही वस्तु चेतना का निर्माण करती है।

कमलेश्वर ने कहानियों म यथाथ' को प्रारम्भ से ही अपनी विषय वस्तु बनाया है और उनकी दष्टि चरित्रो या व्यक्तियो के माध्यम स ही व्यजित हुई है इसीलिए वह प्रामाणिक भी लगते है और विश्वसनीय भी। पानी की तसवीर के अक्षत और मनीषा धूल उडती जाती है के जुम्मन माइ के मुकाबल म नसीबन आत्मा की आवाज का गोपाल राजा निरबसिया की चन्दा तथा भटके हुए लाग का हरबस एस व्यक्ति है जो अपनी पूरी सामाजिक स्थिति म विश्वसनीय है परन्तु कहानिया की अपक्षा कमलेश्वर के उपन्यासों की पष्ठभूमि व्यापक है। यद्यपि वह रूपात्मक विधान की ओर सतक रहे है किन्तु उन्होन सामाजिक पष्ठभूमि और उससे टकराते हुए सामाजिक मूल्यो को ही अपन उपन्यासा की वस्तु बनाया है। उनकी दष्टि उस मानवीय दष्टि को परखती तथा पोषित

---

१ डॉ० धनश्याम मधुप हिंदी लघु-उपन्यास प० १७७

२ तीसरा आदमी प० ४५

करती गयी है जो मात्र 'स्वस्थ मानव' और स्वस्थ सामजस्य' की पक्षधर है। आर्थिक प्रभाव या आर्थिक दवाव किस तरह से मानवीय मूल्यों के लिए सकट वनकर उपस्थित हुए हैं, उसकी सक्रियता को कमलेश्वर के उपन्यासो ने पकडा है। प्रारम्भिक उपन्यास 'एक सडक सत्तावन गलिया और 'डाक बगला मे रूप-वध भी है कथानक भी है चरित्र भी है और सवेदना भी है। लेकिन उनका परिवेश नया है। वह परिवेश परिचित है क्योंकि वह साधारण मनुष्य के अनुभव के दायरे से लिया गया है। इसीलिए कमलेश्वर के उपन्यासो मे सहजता है।

कमलेश्वर न अपने उपन्यासो म व्यक्ति के आन्तरिक सघष और बाह्य इयत्ता को यथाय रूप म प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। मानवीय मस्तिष्क के लिए चलन वाले सघष बहुत गहरे आन्तरिक धरातल पर उन सूत्रा का अनुसधान भी करते जाते है जिनके कारण वह भविष्य क सम्भावना रूपा को चित्रित करत हैं, यह सघष केवल वतमान के लिए नही अपितु उस भविष्य के लिए भी होता है जो वतमान की विद्रूपता म और अधिक अन्धकारमय हो गया है। वतमान परिस्थितियो म सघष की दिशा निश्चित है किन्तु सघष क रूप कई हो सकते हैं। प्रश्न मर्यादा के अनुसधान का उतना नही है जितना अमर्यादा अनीति और गलत परम्पराओ के टूटने का है। कमलश्वर न अपन परिवेश म जीवित रहन और उसकी गति शीलता का महसूस करने की बात उठायी है और उनकी बहुचर्चित और सफल कहानिया तथा इन उपन्यासा म यह परिवेश बहुत स्पष्ट रूप स उभरता है। ये कलागत मूल्या का जीवन स अलग नही मानने। अपितु जीवन के भीतर मे अर्जित मानत हैं। मनपुरी कस्ब स जुडे हुए कमलेश्वर न अपनी प्रारम्भिक कहानियाँ और उपन्यास— एक सडक सत्तावन गलिया' और 'लौटे हुए मुसाफिर —एक निश्चित वग का केन्द्र मानकर लिखे हैं क्रमवाई निम्न मध्यवग—वषम्य शोषण और सामाजिक असमानता का चित्रण लेखक न अपनी प्रगतिशील विचारधारा के आधार पर लिखा है। लकिन यह प्रगतिशीलता यशपाल या नागाजुन जसी राजनीतिक सिद्धान्त प्रधान नहीं है। जीवन के सघर्षों से उत्पन्न उनकी यह विचारधारा हर मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी वग की है।

आधुनिक सचेतना को कमलेश्वर न अपने उपन्यासा के माध्यम से वहन किया है। वह निमल वर्मा तथा आधुनिक कथाकारो की भाँति अपने परिवेश से कटकर कृत्रिम आभिजात्य म नहीं जीते। कारीडार बियर किचन नाइट-क्लब और बार की जिन्दगी स दूर उनके उपन्यासों म आम हिन्दुस्तानी की जिन्दगी दीख पडती है। यही कारण है कि कमलश्वर की कथा-कृतियो म रोजी रोटी पति पत्नी की कलह और प्रेम, शकाएँ आस्था और निराशा आदि सब कुछ अपन यथाथ रूप म आत हैं। सामाजिक दायित्व का निर्वाह एव सादृश्यता उनके उपन्यासा की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

स्वातन्त्र्योत्तर काल के प्रमुख कथाकारो मे कमलेश्वर एक विशिष्ट रचनाकार के रूप मे स्थापित है। वह मूलत कहानीकार हैं। जीवन की असगतियों के बीच ताल मेल बैठाने की जद्दोजहद करने वाले कमलेश्वर के उपन्यासो म मध्यवग का यथाथ स्पष्ट रूप से उभरा है। मैनपुरी का बस अड्डा (एक सडक सत्तावन गलियाँ'), दिल्ली के कमरे म घुटते पति पत्नी की जिन्दगियो ('तीसरा आदमी) आदि की विश्वात्मकता, इस मध्यवर्गीय तथा निम्नवर्गीय जीवन का यह दमघोट विवरण आर्थिक सामाजिक विषमताओ के परिणाम के विवरण है। कमलेश्वर अपनी कथाओ म युग सत्य को उदघाटित करने म काफी सफल रहे ह। उनके उपन्यासो म बडी सूक्ष्मता और साकेतिकता के साथ सामाजिक यथाथ को निरूपित किया गया है।

एक सडक सत्तावन गलियाँ, डाक बगला लौटे हुए मुसाफिर तीसरा आदमी, समुद्र म खोया हुआ आदमी काली आँधी और अगामी अतीत कमलेश्वर की औपन्यासिक यात्रा के सात पडाव ह। युग और समाज को एक सम्पूर्ण परिवेश म प्रकट करने की लेखकीय उत्कण्ठा के परिणामस्वरूप लिखे इन उपन्यासो म लघु किन्तु पूर्ण सामाजिक चित्र फलक प्रस्तुत किया गया है। युग बोध और युग सत्य को कमलेश्वर ने सदव प्राथमिकता दी है। राजेन्द्र यादव के निम्नलिखित शब्द इस बात की पुष्टि करते है— कमलेश्वर अपना सच नहा बोल सकता मगर युग और अपनी पीढी का सच वह जरूर बोल सकता है। उसके पास जबान ह और उसे बात करनी भी आती है क्योंकि इसी समय सच पर आकर बड बडे जबानदार लोग चुप हो जाते है।'

कमलेश्वर सदव अपने युग की किसी समस्या के मानवीय पक्ष को रचना का आधार बनाते है। यह उनके रचना दृष्टिकोण या चिन्तन का निर्माण करता है उनके सभी उपन्यासो और कहानियो म उसका प्रमुख स्थान रहता है। किन्तु उनका चिन्तन दाशनिकता के बोझ से बोझिल नहीं होता जैसा जैनेन्द्र के कई उपन्यासो मे पाया जाता है। उनका चिन्तन एक ऐसे बुद्धिजीवी का चिन्तन है जो जन सामान्य की चिन्ता म उत्पन्न जनवादी चिन्तन है। उसमे अतिरिक्त आग्रह नही है। न उनकी कृतियो म कुण्ठाग्रस्त परिस्थितियाँ, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण तथा यौन की विकृतियो का अतिरिक्त आग्रह है। उनकी कृतियाँ एक प्रकार से पाठको को अपने साथ इन्वाल्व करने वाली कृतियाँ है क्योकि जिस मार्मिक मानवीय पक्ष का वे चित्रण करते है वह हमारे सामाजिक जीवन का हमारा अपना अनुभव होता है।

खण्ड · ५

अपने समय का साक्ष्य

कमलेश्वर

कमलेश्वर ने एक भाषण में कहा

सर्वहारा के संघर्ष में शामिल, परिवर्तन के लिए प्रतिबद्ध और उसी से सम्बद्ध समांतर रचना ही वह कारगर विकल्प है जो हमारे समय में जगत तथा मनुष्य के लिए सार्थक हो सकती है। सत्य निरपेक्ष नहीं है। हर सत्य मनुष्य और समय-सापेक्ष है। कोई कला या साहित्य मनुष्य से बड़ा या उससे ज्यादा महत्त्वपूर्ण नहीं है।

ललितमोहन अवस्थी

कमलेश्वर एक प्रतिबद्ध वामपंथी

किसी व्यक्ति की वचारिकता ही—उसकी आस्थाएँ और सस्कार ही—उसके व्यक्तित्व एव कृतित्व का मुख्य निकष होती है। वचारिकता से या व्यक्ति की आस्थावान विचारधारा से अलग रखकर किसी व्यक्ति के चरित्र और कृतित्व को परखना न केवल नितान्त अवज्ञानिक है वरन सवथा गलत भी है। यह तथ्य रचनाधर्मी विचारवान साहित्यकारो पर विशेष रूप से लागू होता है।

इस मूल कसौटी पर कमलश्वर (कमलेश्वरप्रसाद सक्सेना) के अब तक के कृतित्व रचनात्मकता और व्यक्तित्व को लगभग ढाई दशक पूव जब उन्होंने एक कथाकार के रूप म हिन्दी साहित्य म प्रवेश किया था, तब से लेकर आज तक यदि परखा जाये तो उसे दो ही शब्दा म व्याख्यायित किया जा सकता है कि—कमलश्वर एक प्रतिबद्ध वामपथी हैं।

मैनपुरी (उत्तर प्रदेश) के एक साधारण सामान्य मध्यवर्गीय परिवार म जन्मे कमलेश्वर ने राष्ट्र समाज एव परिवार के भौतिक परिवेश एव परिस्थितिया में तथा भोगे हुए कटु यथाथ के दारुण आघाता म देश के सामान्यजन की भाँति ही जो अनुभवजनित सस्कार अर्जित किये है मुख्यत उन्होंने ही उनकी वचारिकता—व्यक्तित्व एव कृतित्व—को रूपायित किया है। चाहे कानपुर म रहकर ट्यूशनें करके खुद अपनी पढाई लिखाई का खच चलाने वाले, या इलाहाबाद म साइकिल पर बठकर प्रगतिशील लखक सघ की बैठकें आयोजित करने के लिए सडको पर दौड लगानेवाले, या नयी कहानियाँ के सम्पादक बनकर या महानगरी दिल्ली मे बेरोजगारी की हालत म फाका मस्ती करने वाले दक्षिण कोरिया के नयी दिल्ली स्थित राजदूतावास पर एक जनवादी कोरियाई कवि को फाँसी के तख्ते से मुक्त करान के प्रदशन की अगुआई करने वाले या टाइम्स ऑफ इडिया प्रेस (बबई के कमचारियो की हडताल म नतिक भौतिक समथन देनेवाले, या

मुसीबत जदा विपन्न साहित्यिक मित्रों को गुप चुप मदद देने वाले, आदि आदि—कमलेश्वर के जितने भी रूप है वे सभी उनके प्रतिबद्ध वामपथी' होने की गवाही देते हैं।

इन सबसे बढकर चौथे दशक के अतिम चरण से लेकर, जब कि कमलेश्वर ने लिखना शुरू किया था आज तक के उनके कृतित्व से—चाहे वह रचनाधर्मी कथाकार के रूप में हो या नयी कहानियाँ अथवा सारिका के सम्पादक के रूप में हो—एक ही गवाही मिलती है कि, वे प्रतिबद्ध वामपथी है।

रचनाकार की वचारिकता की वास्तविक पकड उसके लेखन एव कृतित्व से ही होती है। सामाजिक या व्यक्तिगत जीवन मे छद्म या ओढा हुआ व्यक्तित्व लेकर चला तो जा सकता है (पूजीवादी समाज म ऐसे दोहरे चेहरे वाले या द्वित्व चरित्र वाले लोगो की कमी नही होती खासतौर से व्यापार उद्योग एव राजनीति के क्षेत्र म) किन्तु ऐसी काठ की हाँडियाँ या मुलम्मेदार चरित्र कब तक चल पाते है ? अन्तत वे बेनकाब होते ही हैं। तब इतिहास उन्हे कूडे के ढेर म फेंक कर आगे बढ जाता है। साहित्य के क्षेत्र म छदम या ओढा हुआ व्यक्तित्व लेकर कोई रचनाकार एक पल नही टिक पाता। कृति की सजना मे कृतिकार का मुलम्माहीन व्यक्तित्व प्रकट हुए बिना रह ही नही पाता। कोई साहित्यकार कसा है क्या है उसकी वचारिकता उसकी आस्थाएँ और सस्कार उसका चरित्र, उसके मन्तव्य उसके उद्देश्य और लक्ष्य आदि क्या है—यह सभी उसकी रचित कृतियो से स्पष्ट परिलक्षित होते है। कृति के चौखटे मे ही कृतिकार की छवि रहती है। रचना के दपण म ही रचनाकार का रूप झाकता दिखायी देता है। किसी भी साहित्यकार की असलियत उसके द्वारा सृजित साहित्य से ही प्रकट होती है। अत कृति ही कृतिकार की चारित्रिक-वचारिक कसौटी है। कृति से कृतिकार को पृथक करक देखा-परखा हो नही जा सकता। इसीलिए लेखक की सच्ची पकड उसके लेखन से ही होती है।

कमलेश्वर की पकड भी उनके लखन म ही निहित ह। उनकी पूरी वैचारिकता उनकी रचनाओ मे रची बसी है।

इसलिए यदि कमलेश्वर की विचारधारा को दखना-समझना और परखना है तो हम उनकी रचनाओ के भीतर ही झाँकना होगा।

इस उद्देश्य क लिए यहा मैं अपनी दृष्टि कहानी मासिक 'सारिका' के उन दस समानर कहानी विशेषाको' तक ही सीमित रख रहा हूँ जो अक्टूबर १९७४ स जुलाई १९७५ तक प्रकाशित हुए थे और जिनम सम्पादक के रूप म कमलेश्वर ने मेरा पन्ना क अन्तगत सम्पादकीय टिप्पणियो म अपनी विचारधारा आस्थाओ और मान्यताओ का खुलासा किया है। इसके दो मुख्य कारण है—एक तो यह कि, समातर कहानी आदोलन के प्रणेता के रूप म इधर कमलश्वर न केवल बहुचर्चित

ही हैं वरन् उन पर अनेक क्षेत्रों से अनेक प्रश्नचिह्न भी लगाये जा रहे हैं। और, दूसरा यह कि यह सभी दस सपादकीय उनकी ताजा मानसिकता और विचार धारा के लिखित-मुद्रित ऐतिहासिक दस्तावेज हैं, व्यक्ति की वैचारिकता, खासतौर से उसकी राजनीतिक मान्यताएँ तथा सम-सामयिक ज्वलत प्रश्नों पर उसके आर्थिक, सामाजिक सास्कृतिक विचार आदि यदि वह सम्पादक है तो उसके द्वारा लिखित सम्पादकीय टिप्पणियों से ही प्रकट होते हैं। सम्पादकीय अभिमत पत्र-मालिक के बजाय सम्पादक की ही धरोहर होते हैं, खासतौर से तब जब कि वे 'मेरा पन्ना की भाँति सम्पादक (कमलेश्वर) के हस्ताक्षर मे छपते हैं। मेरा पन्ना' मे कमलेश्वर ने अपनी बातें और अपने विचार खुलकर पूरी ईमानदारी के साथ प्रकट किये हैं—यह मेरा पन्ना' की सबसे बडी खूबी है। इसलिए 'मेरा पन्ना कमलेश्वर की कमजोरियों और क्षमताओं दोनो की, खुली गव ही देता है।

'सारिका' के 'समातर १ से 'समातर १०' तक के सम्पादकीय हिन्दी-साहित्य क वतमान समातर नव-लेखन एव आदोलन के घोषणापत्र (मेनीफ़ेस्टो) माने जा सकते हैं। उनम वतमान दौर के हिंदी साहित्य हमारे समाज और राष्ट्र के जीवन से जुडे हुए तमाम राजनीतिक आर्थिक, सास्कृतिक सामाजिक, नतिक प्रश्नो तथा अतराष्ट्रीय सदर्भों पर समातर लखको के अभिमत की व्याख्या प्रस्तुत की गयी है—इस दृष्टि से उनका विशेष महत्व है।

१९७१ मे समातर आन्दोलन का सूत्रपात हिन्दी के नव प्रगतिशील आन्दोलन के पर्याय के रूप म हुआ था, जा समय की अपेक्षाआ और आवश्यकताओ का प्रतिफलन था, किसी व्यक्ति या व्यक्तियों का कृत्रिम प्रयास मात्र नही। कमलेश्वर प्रगतिशील आदोलन के प्रथम दौर से ही उसके साथ जुड़े रहे हैं—लेखन एव सगठन दोना स्तरो पर। सातवें दशक के अन्तिम चरण तक हिन्दी साहित्य म जो अराजकता एव गतिरोध व्याप्त रहा था नय जनवादी एव प्रगतिशील रचनाकार तथा लघु पत्रिकाए उसे तोडने के लिए बेचन थी। कुठा सत्रास और दिग्भ्रम से ग्रसित असाहित्य का घोर असास्कृतिक दौर पश्चिम की आयातित जजर मान्यताओ एव जीवन हीन मूल्यो के प्रभाव म राष्ट्रीय परम्पराओं जनवादी मानवतावादी आदर्शों आदि की जडा पर ही कुठाराघात कर रहा था। रूपवाद क्षणवाद अस्तित्ववाद आधुनिकतावाद, भोगे हुए यथाथ आदि की मान्यताएँ अमानवीय मूल्यो का प्रचार प्रसार करन म सलग्न थी। हिन्दी कहानी सतही सैक्स रिश्तों की सडाँध से ग्रसित हो चुकी थी। गाली गलौज के लुम्पेनवादी साहित्य की प्रवत्तियाँ बोल्डनेस की आड म सराही जा रही थी। ऐसे जीवन विरोधी दौर म राष्ट्र की प्रगति आम आदमी के सुखी भविष्य अन्यायहीन शोषणहीन वर्गहीन समाज की सरचना से प्रतिबद्ध एव पक्षधर जनवादी प्रगतिशील नये-पुराने रचना

बार पुन अपने ऐतिहासिक दायित्व के निर्वाह हेतु सन्निय हो उठें। स्थान स्थान पर स्वत स्फूत सगठन और आन्दोलन समय के तकाजे के रूप म सामन आन लगे। और तभी, इसी शृखला म, समातर आदोलन सामने आया।

इस प्रकार समातर आदोलन हिंदी साहित्य म प्रगतिशील आदोलन और नयन को पुन स्थापित करन की उत्कट लालसा स परिपूण रहा है। अस्तु उसकी सही परख भी प्रगतिशील आन्दोलन के आधारभूत दशन—'माक्सवाद लेनिनवाद' के आधार पर ही की जा सकती है या की जानी चाहिए। यह इसलिए भी आवश्यक है कि समातर लखक मूलत प्रगतिशील एव प्रतिबद्ध लेखक है और माक्सवाद लनिनवाद ही उनकी आस्थाओ का कोष है। इस सदभ म कमलेश्वर की ऐतिहासिक भूमिका यह रही है कि सारिका के माध्यम से वे तमाम नये नये प्रगतिशील जनवादी परिवतनकामी प्रतिबद्ध रचनाकारो और उनकी रचनाओ के सपक म आय और बने रहे तथा उन्होने एसे ही रचनाकारा को जोड बटोरकर समातर आदोलन क रूप मे उन्ह एक मच प्रदान किया—मिलने जुलन, विचार विमश करने और अपने लेखन को आम आदमी के पक्ष म प्रखरतर करने के लिए।

प्रगतिशीलता साहित्य को मानसिक खुजली मिटाने का साधन कदापि नही मानती। उसके लिए साहित्य आस्थावान रचनाकारो के हाथ मे सामाजिक क्रांति और परिवतन का अत्यत प्रभावी अस्त्र है। साहित्य एव साहित्यकार की इसी महत्त्वपूण भूमिका की ओर इगित करते हुए जोसेफ स्टालिन ने कहा था—साहित्यकार मानव आत्मा का शिल्पी होता है। प्राचीन भारतीय मनीषियो का साहित्य के उद्देश्यो एव स्वरूपो म सत्य शुभ एव कल्याण की आदशवादी स्थापनाओ से लेकर हजारो सालो की मानवीय परपराओ स गुजरते हुए सन १९३६ म लखनऊ मे हुए भारतीय प्रगतिशील लखको के प्रथम सम्मेलन के मच से सभापति के रूप म अपना मन्त्र य प्रकट करत हुए जब मुशी प्रेमचद ने कहा था कि—'हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा जिसम चिंतन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौन्दय का सार हो सजन की आत्मा हो जीवन की सच्चाइयो का प्रकाश हो जो हमम गति सघष और बेचनी पदा करे सुलाये नही'—तब उन्होने साहित्य की इसी भूमिका को उजागर किया था कि साहित्य जन मानसिकता का निर्माण कर सामाजिक परिवतन और क्राति के हितो की पूर्ति करता है। यही माक्सवाद लनिनवाद की स्थापना है। यही समस्त प्रगतिशील समातर लखको की मान्यता है।

इसी मान्यता की ओर इगित करत हुए प्रतिबद्ध वामपथी के रूप म कमलेश्वर ने सारिका के समातर ८ (मइ १९७४) के अक म मेरा प ना' म साहित्य एव साहित्यकार की भूमिका का सवाल उठाते हुए साफ श दो म पूछा था ' आदमी अगर अपनी जिन्दगी का नक्शा बदलना चाहता है और एक व्यवस्था की मारक

स्थितियो से उबर कर एक बेहतर व्यवस्था को निर्मित करना चाहता है तो उसके लिए साहित्य की कोई कारगर भूमिका क्यो नही रह जाती ?" स्पष्ट रूप म इस प्रश्न मे उनका मन्तव्य निहित है—यानी वतमान सदर्भों म सामाजिक परिवतन क सिवा साहित्य की कोई अन्य कारगर भूमिका हो ही नही सकती। मारक व्यवस्था (यानी पूँजीवादी व्यवस्था) को समाप्त कर एक बेहतर व्यवस्था' (यानी समाजवादी व्यवस्था) का निर्माण करने के जन-सामान्य के क्रांतिकारी प्रयासो म साहित्य एव साहित्यकार की भागीदारी ही प्रगतिशीलता तथा प्रतिबद्धता की अनिवाय शत है।

इसी सिलसिले मे कमलेश्वर न पुन प्रश्न रखा था— 'क्या साहित्य के लिए कोई और विकल्प हो सकता है जो साहित्य की आत्मा (उसकी रचनात्मकता) को खडित न होने दे और आम आदमी की खडित आत्मा के लिए क्राति की रचना कर सके ? जो क्राति के महाद्वार तक आदमी के धड और सिर को अलग-अलग न पहुँचा कर मुजस्सिम आदमी को पहुँचा सके ?"—(सारिका, मई १६७५, पृष्ठ ११)

सामाजिक क्राति टुकडो टुकडो म नही होती और न आम आदमी की भागीदारी के बिना वह कभी सफल होती है। क्राति की सफलता और चरितार्थता की पूव शत है श्रमशील, जनवादी प्रगतिशील जन-वर्गों की एकजुटता जन प्रयासो का एकीकरण—मार्क्सवाद की यही शिक्षा है। इसी तथ्य को कमलेश्वर ने साहित्यिक भाषा म इन शब्दों म अभिव्यक्त किया है—' अगर क्राति आम आदमी की आत्मा को तजस्वी नहीं बनाती तो मदन लगती है।" (सारिका, अक्टूबर १६७४, पृष्ठ १०)

किंतु क्राति के हितो का पोषक साहित्य पोस्टर पैम्फलेट या हैंडबिल नही होता। उसे मूलत रचनात्मक एव श्रेष्ठ कला-मूल्यो स सयुक्त रहना पडता है। श्रेष्ठ एव प्रभावी प्रगतिशील साहित्य की यही विशेषता है। क्रातिकारी साहित्य की इस रचनात्मक आवश्यकता पर जोर देते हुए कमलेश्वर न लिखा था – क्या साहित्य रचनात्मक रहते हुए भी क्राति की भूमिका (अन्य लडाकू वर्गों के साथ) निभा सकता है ? इसका सीधा और साफ उत्तर यही है कि मानसिकता निर्माण के आग की भूमिका को भी सिर्फ सही रचनात्मक साहित्य ही निभा सकता है। (साहित्य) क्राति क प्रति और पक्ष म लिये गये मानसिकता निर्माण क दायित्व को क्राति के प्रति सपूण आस्था म तब्दील करता है।" (सारिका मई १६७५, पृष्ठ ११)

एक सच्चे वामपथी की भाति यहाँ कमलेश्वर का दृष्टिकोण हर मामले म साफ है—साहित्यकार देश और समाज के अन्य लडाकू वर्गो के साथ मिलकर क्राति की भूमिका निभाता है अलग या अकेला नही, क्योकि साहित्यकार कोई

विशिष्ट जन नही होता, वल्कि "सामायजन का ही एक अग होता है।" और यह कि रचनात्मक साहित्य ही सही अर्थों मे क्राति का पोषक होता है।

इस सदभ म यह ध्यान म रखन की वात है कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद वामपथी-सकीणतावाद या अध क्रातिवाद को एक बचकाना दोष तथा कठमुल्लापन मानता है। अतिक्राति का दशन सामाजिक परिवतन का पोषक होने के बजाय उल्टे उसके हिता पर ही कुठाराघात करता है। अतिक्रातिवादी लोग गरमा गरम क्रातिकारी शब्दावली के इस्तेमाल और लफ्फाजी म माहिर होते हैं किंतु वस्तुत वे क्राति विरोधी होत हैं और क्राति विरोधी शक्तियो—प्रतिक्रियावादियो नव फासिस्टो आदि क सगी-साथी हात हैं। ट्राटस्कीवादी एव माओवादी, इसके स्पष्ट प्रमाण हैं और राष्ट्रीय पमाने पर जयप्रकाश नारायण के नतृत्व म सपूण क्राति' का नारा देने वाली शक्तियाँ भी इसका स्पष्ट प्रमाण हैं। कमलेश्वर ने इसी क्रातिविरोधी, लफ्फाजी स भरी हुई कठमुल्ला एव वामपथी सकीणतावादी के रोग से ग्रसित अतिक्रातिवादियो के दशन पर कटु एव निमम प्रहार करते हुए सारिका के 'समातर ३ दिसम्बर १९७४ क अक मे मरा पन्ना के अतगत लिखा था—'(वे) वामपथी शब्दा से अमल म, दक्षिणपथी लडाई लड रहे हैं। (यानी जे० पी० के इद गिद गोलवद हुए लोग)। इसी सदभ म 'कलम बनाम वदूक के दशन को उघाडते हुए उ होंने लिखा था—' असल म कलम बदूक, तोप या वारूद नही होती। कलम स्वय एक दुग होती है और कलम अभेद्य दुर्गों की रचना भी करती है। (पृष्ठ ८) उन्होने यह भी लिखा था कि—' बदूकें परिवतन का कारगर औजार नही हाती वल्कि परिवतन को रोकने का कारगर औजार होती है। और परिवतन के विरुद्ध या कि उसे राकने के लिए बदूका का इस्तेमाल वही लोग करत है जा साहित्य या विचारो की क्राति से भयग्रस्त हैं या अनभिज्ञ है।" (पृष्ठ ८)।

कमलेश्वर के इस कथन की सत्यता बागला देश एव चिली की दु खद घटनाओ से स्पष्टतया प्रमाणित हो जाती है। फासिस्टो और अतिवामपथियो को बनकाब करते हुए इसी सम्पादकीय म उन्होने कहा था— जो लोग आदमी की सपूण और सम्यक लडाइ म शामिल नही है वे हा कलम को बदूक बनाने की वात करन म ज्यादा माहिर हैं। (पृष्ठ ९) और यह कि — क्राति म लेखक सबसे आग होगा। सबस आगे हाने का यह दम्भ उन्ही व्यवस्थाओ ने लेखको को दिया है जा शोषण की पोषक रही है। लेखक सबसे आगे आगे नही होता वह क्रातिकारी शक्तियो की समातर सहधर्मिता का सहयात्री है दरअसल क्राति क लिए ज़िदगी की रफ्तार को और तज करना हाता है और यह तय करना पडता है कि कलम किसके लिए रचना करें। (पृष्ठ ९) यही सच्चा मार्क्सवादी दृष्टिकोण है जो प्रतिबद्ध लेखक को क्राति के हितो का पोषक बनाता है।

इसी सदभ मे प्रतिक्रियावादी एव बुर्जुआ साहित्य के सबध म कमलेश्वर की यह टिप्पणी भी कितनी साथक, महत्त्वपूण एव दृष्टव्य है—' जो नकली लेखन मुक्ति या क्राति का मात्र सतही और बौद्धिक आह्वान करता है या वह दोगला लेखन, जो मानवतावाद' के नाम पर केवल करुणा को यथास्थिति का अस्त्र बनाकर आत्मा की आवाज़ की बात करता है—वह यह भूल जाता है कि आदमी की आत्मा और बोध को कितने भयानक अतर्विरोधो और दबावो म फँस दिया गया है, कि उसकी आत्मिक और भौतिक जरूरतो के बीच म भयानक खाई पैदा कर दी गयी है।' (सारिका समातर १ अक्टूबर १६७४, पृष्ठ १०)

एक प्रतिबद्ध या सच्चे प्रगतिशील साहित्यकार का दायित्व होता है कि वह मात्र करुणा का चित्रण ही नही करता या वह मात्र शोषण-दमन-अन्याय के घिनौने यथाथ को ही उद्घाटित नही करता वरन् वह पाठक वग म वह आग, वह आक्रोश, वह दृढता और वह क्रातिकारी भावना उत्पन्न करता है जो सामाजिक परिवतन की पूव शत होती है। प्रगतिशील लेखक बुर्जुआ रचनाकारो की भाँति अपने को 'महान' मानने के दम्भ से ग्रसित नही होता, वह अपने को सामान्यजन का, जुझारू क्रातिकारी शक्तियो का सेवक मानता है। क्रातिकारी मानसिकता का निर्माण ही एक प्रतिबद्ध वामपथी लेखक एव लखन की सही भूमिका हाती है। इसलिए वह साहित्य को राजनीति से अलग नही मानता। साहित्य का जन जीवन से सीधा नाता होता है, और जन-जीवन समाज विशेष की व्यवस्था एव राज नीतिक प्रणाली का प्रतिरूप होना है। अस्तु साहित्य समय-सापेक्ष राजनीति स अलग नही रह पाता। साहित्य को राजनीति से अलग रखने का प्रयास, उन्हे दो धडा म बाटने का प्रयास और शुद्ध साहित्य की परिकल्पना घोर बुर्जुआ एव प्रतिक्रियावादी दशन है। प्रगतिशील रचनाकार राजनीति को साहित्य का आधार मानकर ही चलते है। इसी तथ्य को कमलेश्वर ने स्पष्ट शब्दो म स्वीकार करते हुए लिखा था— जो लेखक समातर समय की सापक्षता को मजूर करता है, वह राजनीति से निरपेक्ष हा ही नही सकता क्योकि राजनीति स्वय अर्थों की प्रक्रिया की ऊर्जा स जन्मी भौतिक सक्रियता ही है।' (सारिका, अक्टूबर १६७४, पृष्ठ १०) और यह कि—" जब कि आज की सही रचना और रचनाकार राजनीति से अलग होने को अपराध मानता है आज का लेखक जब स्वय सामान्य जन है ता वह मानसिकता के निर्माण के आगे की अपनी भूमिका को अनिर्धारित कसे छोड सकता है?' (सारिका, मई १६७५, पृष्ठ ११)

यही नही इससे दो कदम आगे बढकर एक सच्च मार्क्सवादी लेनिनवादी विचारक के रूप म कमलेश्वर ने फिर लिखा कि—"अत समय सापेक्ष मूल्यो को लेकर चलने वाला साहित्य और उन मूल्यों को (अर्थात समाजवादी मूल्यो को—लेखक) व्यावहारिकता मे फलित करने वाली राजनीति, (अर्थात वामपथी

राजनीति—लेखक) यही ऐसे माध्यम हो सकते हैं जो शोषित और दलित विराट मनुष्यता को असली मुक्ति का आधार दे सकते है।" (सारिका, जून १९७५ पृष्ठ ११)

वस्तुत समाजवाद की लडाई किसी एक देश या राष्ट्र मात्र की एकातिक लडाई नहीं है। यह चाहे भारत मे हो या अगोला म या चिली मे या बागला देश म, या एशिया अफ्रीका लटिन अमरीका यूराप के किसी देश म—यह समाजवाद के विश्व व्यापी सघष का ही अग है। जब तक दुनिया के किसी भी भू भाग म पूजीवाद, साम्राज्यवाद उपनिवेशवाद या फासिस्टवाद का अवशेष या अस्तित्व कायम है तब तक मानव मुक्ति का यह विश्व व्यापी सघष चलता रहेगा। यह सभी लडाइया एक है एक दूसर से जुडी हुई है। वह दिन भी अवश्य आयेगा (और वह दिन अधिक दूर नही है) जब कि स्वय अमरीका म भी समाज वाद का सघष तीव्रतर होगा सफल होगा। इस तथ्य को सभी समाजवादी देशा और उनके अगुआ सोवियत रूस न भली भाति माना है। तभी उनकी अतर्राष्ट्रीय या विदेश नीतियो मे दुनिया के किसी भी छोर म मानव मुक्ति के प्रयासो को भर पूर नतिक भौतिक समथन प्रदान करना शामिल है। कमलेश्वर ने जब कहा—"क्योकि मनुष्य की मनुष्य बनकर जी सकने की लडाई अब तक विश्व व्यापी निणय के छोर तक नही पहुँच पायी है" (सारिका अक्टूबर १९७४ पृष्ठ ११) तब उन्होने स्पष्ट रूप म मानवमुक्ति एव समाजवाद के अतर्राष्ट्रीय सघष की ओर ही सकेत किया है, उसकी आवश्यकता एव महत्त्व की ओर ही इगित किया है। समाजवाद कोई वायवी कल्पना नही है। वह वग विहीन शोषण मुक्त अन्याय मुक्त एव वैज्ञानिक आर्थिक राजनतिक जीवन प्रणाली है—इतिहास का यथाथ है जिसम समाज की उत्पादक शक्तिया ही उत्पादन के स्रोतो और साधनों की वास्तविक मालिक होती है और सत्ता का सचालन भी उ ही के हाथो मे रहता है। इसलिए अपने देश म समाजवाद की रचना को कमलेश्वर न इन शब्दो म अभि व्यक्त किया है—'जब तक हम परिवतन करने वाले जन सामा य और उसके जीवन की शर्तें पदा करने वाले उत्पादन के स्रोतो तथा साधनो का रिश्ता यथासभव साफ न कर लें" (समातर-५, सारिका फरवरी १९७५, पृष्ठ ९)।

कमलेश्वर ने मेरा पन्ना म अध्यात्मवाद सामाजिक न्याय नतिकता आदि प्रश्नो को भी उठाया है। इन प्रश्नो की चचा माक्स लनिन तथा समाजवादी चितको और मनीषियो न भी अपनी रचनाओ म की है क्योकि समय समय पर बुर्जुआ एव शोषक शक्तियाँ तथा उनके पिष्ट पोषक बुद्धिजीवी इन्ही प्रश्नो को उछाल कर या इस्तमाल कर आम आदमी म भ्रम और भटकाव उत्प न करते है ताकि उनका शोषण का बाजार सष्टि के अ त तक गरम बना रहे। इसलिए प्रति बद्ध वामपथी या प्रगतिशील लेखको का इन प्रश्नो के बारे म अपनी समझ बिलकुल

साफ रखनी होती है। अध्यात्मवाद, ईश्वरवाद या धर्म सदैव से ही शोषक शक्तियों द्वारा आम आदमी के शोषण के अस्त्र के रूप में प्रयुक्त किये गये हैं और राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन का लगातार घोर विरोध इन पुरोहितवादी शक्तियों ने किया है।" (कमलेश्वर, सारिका, अप्रैल १९७५, पृष्ठ ९) किन्तु —
'भारतीय मनीषा की विराटता और विशेषता ही यह है कि उसने लौकिक के बिना पारलौकिक की परिकल्पना ही नहीं की है। उसने मनुष्य की आदिम वृत्तियों के शमन और संयमन से बहत्तर मानव कल्याण की दृष्टि को विकसित करने की कोशिश की है।" (कमलेश्वर वही) भारत के आध्यात्मिक व धार्मिक साहित्य का वैज्ञानिक अध्ययन इसी तथ्य को उद्घाटित करता है। किंतु बुर्जुआ एवं शोषक शक्तियाँ इस तथ्य पर परदा डालने की चेष्टा करती हैं तथा धार्मिक व आध्यात्मिक साहित्य का अपने हितों की पूर्ति के लिए अंधविश्वासों रूढ़िवाद, भाग्यवाद जैसी जर्जर शोषणवादी विचारधारा के प्रचार प्रसार में प्रयुक्त करती हैं। वेदों से लेकर संत कबीर तक भारतीय धर्म-दर्शन में मानव के लौकिक कल्याण का ही आग्रह व्याप्त रहा है। अपने उपर्युक्त कथन में कमलेश्वर ने इसी तथ्य पर जोर दिया है। और बुर्जुआ साजिश को बेनकाब किया है।

नैतिकता का सवाल भी एक अहम सवाल है। किंतु नैतिकता समाज सापेक्ष होती है व्यवस्था-जनित होती है। पूंजीवादी नैतिकता या नैतिक मूल्य समाजवादी नैतिकता या नैतिक मूल्यों से भिन्न घृणित एवं निम्नकोटि के होते हैं। इसी प्रकार सामंतवादी नैतिकता भी पूंजीवादी नैतिकता से भिन्न होती है। क्योंकि प्रत्येक युग एवं व्यवस्था के अपने भिन्न नैतिक आदर्श होते हैं। पूंजीवाद स्वतंत्र व्यापार एवं व्यक्तिगत स्वामित्व के आधार पर निर्मित होता है इसलिए पूंजी और मुनाफा ही उसका एकमात्र ध्येय या इष्ट होता है। स्वामित्व और मुनाफे को बरकरार रखने के लिए पूंजीपति इजारेदार स्वतंत्र व्यापारी आदि झूठ, फरेब शोषण अन्याय, भ्रष्टाचार आदि के अस्त्रों का खुलकर उपयोग करते हैं। इसीलिए पूंजीवादी नैतिकता झूठ और भ्रष्टाचार की नैतिकता होती है ताकि वह निजी मुनाफे के लिए मिलावट जमाखोरी घूसखोरी हत्या अपहरण तस्करी चोरबाजारी टैक्स चोरी वेश्यावृत्ति आदि को बरोक टोक जारी रख सके। पूंजीवादी जरायम और अपराधों की नैतिकता को पनपाता है। जहां पूंजीवाद है वहाँ घृणिततम अपराध भी है। दोनों का चोली दामन का साथ है। अपराधों को पनपाये बिना पूंजीवाद टिक ही नहीं पाता। आज हमारे देश में नैतिकता के संकट की जोर शोर से चर्चा है। यह नैतिकता का संकट वस्तुतः पूंजीवाद का ही संकट है उसी की उपज और देन है। यह अकेले भारत की ही नहीं, समस्त पूंजीवादी देशों (अमरीका में सर्वाधिक) की सच्ची तस्वीर है। पूंजीवाद अपने अस्तित्व के लिए समस्त मानवीय आदर्शों और उज्जवल जीवन मूल्यों की हत्या करता है,

पाप और भ्रष्टाचार को पनपाता है—यद्यपि वह अनाप शनाप पसा खच करके धम और नैतिक आदर्शों के प्रचार का ढोंग भी बहुत अधिक रचता है। दरअसल पूजीवाद नैतिक मूल्यो को इस हद तक मिटाता है कि आम आदमी मे उनके अस्तित्व पर ही सदेह व्याप जाता है उन पर आस्था ही समाप्त हो जाती है पूजीवादी नतिकता को बेईमानी की नैतिकता का नाम दिया जा सकता है। इसान बेहतर अच्छा या ईमानदार हो सकता है—पूजीवाद इसे कतई नही मानता। भारत का आम आदमी इसी सकट को भाग रहा है जिसे चारित्रिक सकट' की सज्ञा दी गयी है। किन्तु नैतिकता का यह सकट अथवा यह चारित्रिक सकट तब तक दूर ही नहीं हो सकता, जब तक उसे जल देने वाली और पनपाने वाली पूजीवादी व्यवस्था का समूल नाश नही हो जाता। पूजीवाद की भ्रष्ट नैतिकता का एकमात्र विकल्प समाजवादी नैनिकता म निहित है—प्रत्येक समाज वादी देश इसका ज्वलत प्रमाण है, जहाँ न वेश्यावत्ति है न जरायम न अन्य अपराध और जहा न हत्याएँ होती हैं न अपहरण, न चोरी, न डकती, न मिलावट न घूसखोरी न चोरबाजारी या जमाखोरी। यानी कि समाजवादी व्यवस्था ही उन परिस्थितियो को समूल नष्ट कर देती है जिनमे ये अपराध जन्म लेते या पनपते है। सच्चा इसान अच्छा इसान, बेहतर इसान—यह आज की दुनिया म समाज वाद की ही देन है। इसान ईमानदार हो ही नही सकता—इस पूजीवादी नतिकता को समाजवाद ही इस वास्तविकता म बदलता है कि 'इसान बेईमान होता ही नही।'

कमलेश्वर ने सारिका के समातर ६ विशेषाक (माच १९७५) के मरा पन्ना मे भारत म व्याप्त 'नतिकता क सकट की गहराई से चर्चा की है। और इस कटु वास्तविकता को प्रकट किया है कि— नतिकता के ह्रास का यह जो भयानक सकट आज मौजूद है उसने आदमी का इस कदर अकेला और शका-ग्रस्त कर दिया है कि वह सिवा अपन, किसी और के ऊपर विश्वास टिका नही पाता।' (पष्ठ ६) यह सकट अत्यन्त दारुण भी है और महत्त्वपूर्ण भी। इसी सिलसिले म कमलश्वर ने इसी अग्रलेख म पूजीवादी प्रजातन्त्र प्रणाली की खामिया का भी जी खोलकर चर्चा की है, और यह माना है कि —' धममूलक नतिकता की व्यक्ति केद्रित धारणा को जब तक समाजमूलक नैतिकता के जन केंद्रित सम्बोध मे बदला नही जाता, तब तक आज के सही नतिक प्रश्नो तक पहुचा ही नहीं जा सकता। यानी कि दूसरे शब्दो म कहा जा सकता है कि जब तक पूजीवादी व्यवस्था को समाजवादी व्यवस्था म तब्दील नही किया जाता, यह नतिकता का सकट मिट नहीं सकता। इस पष्ठभूमि म पूजीवादी समाज-व्यवस्था म जीने वाल प्रगतिशील या प्रतिबद्ध वामपथी लेखको के दायित्व और भूमिका पर गौर करें तो उसकी विराटता, और महत्व का सही बोध होता है। भारत के प्रगतिशील लखको

को आज इस भूमिका को निभाना है यानी उन्ह पूजीवादी नैतिक मूल्यो का उन्मूलन कर उनके स्थान पर समाजवादी नतिक मूल्यो की जन-समाज म स्थापना करनी है अपनी रचनाओ और अपनी लेखनी के द्वारा। इसी दायित्व की ओर इशारा करते हुए कमलेश्वर ने लिखा है—' नतिकता के इन नय मूल्यो की तलाश और सस्थाओ (सब तरह की) की शक्ति के पुननिर्धारण के लिए साहित्य अत्यन्त कारगर भूमिका निभा सकता है बल्कि इन सस्थाओ और व्यवस्थाओ के वग-चरित्र को बदलने से ही नयी नतिकता हासिल हो सकती है।'' (सारिका, मात्र १९७५ पष्ठ ९) आज के प्रगतिशील लेखकों का इसलिए व्यवस्था के वग चरित्र को बदलने यानी समाजवाद की रचना करने के महत उद्देश्य के प्रति समर्पित होना है ताकि नये नैतिक मूल्य हासिल किये जा सकें।

'सारिका' के 'समातर १०' (जुलाइ १९७५) के मरा पना म कमलेश्वर ने वतमान समाज-व्यवस्था म न्याय के सवाल को उठाया है। उन्होने लिखा है—' कानूनन जो स्वतन्त्रताएँ मिलती हैं वे आदमी की कारगर स्वतन्त्रताएँ तभी बन सकती हैं जब उसे अपने समाज मे न्याय प्राप्त हो।" (पष्ठ १०) किन्तु पूजीवादी समाज म आम आदमी को न्याय नाम की वस्तु सवथा दुलभ रहती है उसे सदैव न्याय से वचित रखा जाता है क्योंकि वहाँ आम आदमी के हितो के ऊपर शोषक शक्तियो के स्वाथ हावी रहत हैं। यही पूजीवादी साजिश है। इसे उदघाटित करते हुए कमलेश्वर ने लिखा है—"न्याय की सही व्याख्या को रोक रखने या स्थगित किय रहने के लिए सब हथियार इस्तेमाल किये जाते हैं—धम, नीति, दशन इतिहास राजनीति, अथशास्त्र समाजशास्त्र और पुरातन मस्कार।" (पष्ठ १०) इसके पीछे मूलत पूजीवादी वग के निहित स्वाथ होत है जिसे कमलेश्वर न इन शब्दो म प्रकट किया है—"पूजीवादी अथव्यवस्था के मुनाफे का मूलाधार सास्कृतिक रूप से कितना जघन्य है व्यक्तिगत सम्पत्ति का सवाल सास्कृतिक रूप से कितना ओछा और अन्यायपूण है—सामाजिक विषमता का प्रश्न सास्कृतिक रूप से कितना क्रूर और अमानवीय है और "यही वह महीन साजिश है जो विषमता पीडित और शोषित वग के सीधे सपाट साफ और जरूरी प्रश्नो को सास्कृतिक प्रश्नो म बदल देती है। (पष्ठ ११) और आम आदमी न्याय से वचित रह जाता या रखा जाता है। इसलिए परिवतनकामी प्रतिबद्ध रचनाकारो को इस साजिश को तोडने म जुटना है ताकि आम आदमी न्याय स वचित न रह सके यह तभी सम्भव होगा जब उसे जीवन के सभी अवसर और सुविधाएँ सवसुलभ होगी। समाजवाद का यही तकाजा है जिसे इन रचनाकारो को पूरा करना है।

किन्तु इसके लिए शताब्दियो से देश के जन-जीवन म व्याप्त सामन्ती रुढिवादी सस्कारो का तोडना और बदलना अत्यन्त लाजमी है। यह सामन्ती सस्कार

जातिभेद, सम्प्रदायवाद वर्णभेद आदि के रूप मे अपनी जडे जमाये हुए है। इन रूढिया का ताड बिना आम आदमी को सामाजिक परिवतन की सक्रियता म लामवद नही किया जा सकता। इसलिए "जरूरत है सस्कारो क परिष्कार और पयाय की। (कमलेश्वर, सारिका, फरवरी १६८५ पष्ठ ६) जब तक कोई जाति स्वय अपने लिए विचार और मूल्य तय नही करती तब तक सस्कार नही वनत।' (वही) भारत की जनता ने अपने जीवन मूल्यों और लक्ष्य को ममाज वाद के रूप म निर्धारित और निरूपित किया है। भारतीय सविधान का सशाधित कर इस लक्ष्य का भारतीय गणतन्त्र के स्वरूप एव चरित्र के साथ जाडा जा रहा है और उस सावभौम, जनवादी, धम निरपेक्ष, समाजवादी गणत त्र का नाम दिया जा रहा है—यह खुशी की बात है। नये मूल्या के साथ अब नये सस्कार जन्म लेंगे। क्याकि 'सस्कार-ग्रस्तता (यानी पुरातन रूढिवादी, सामती सस्कारो की जकड—लखक) को ताडना ही लाजमी नही है, बल्कि नये सस्कारा (समाज वादी सस्कारा—लखक) का सृजन भी उतना हा अपेक्षित है। मनुष्य कभी भी शू य म सस्कारो का नही त्यागता। वह हमशा नय सस्कारो क पक्ष म रूढ सस्कारा का छाडता है। परिवर्तित विचार और मूल्य हा सस्कार ग्रस्तता का पयाय हो सकत ह (कमलश्वर, सारिका फरवरी १६७५, पष्ठ ८)।

हमार देश के आम आदमी का अपढ और रूढिग्रस्त बनाय रखने की शोषक शासक वर्ग की भयकर साजिश रही है जिसकी वजह स सामाजिक परिवतन की गति तीव्रतर नहा हा पाती। दश म परिवतन की तीव्र कामना है किन्तु जाति, वण, सम्प्रदाय आदि के भेदा मे बँटा आर फसा आम आदमी अपनी इस कामना का सक्रियता म नही बदल पाता। सस्कार आडे आ जाते है। कमलश्वर ने साफ लिखा है— यह सही है कि सबक धीरज का बाध टूट चुका है पर यह भी सही है कि सबके सस्कारो क बाध म दरार तक नही पडी है। (सारिका फरवरी १६७५ पष्ठ ८) इसलिए सास्कृतिक सच्चाइया और राजनीतिक मतव्या (इच्छामूलक सच्चाइया) म जब तक तालमेल नही हाता, तब तक सम्यक परिवतन की बात लगडाती रहगी। (वही) निस्सदेह प्रगतिशील समातर साहित्य का इस दायित्व का निभाना है—यानी सामन्ती सस्कारा को तोडकर नये सस्कारा की रचना करनी ह। व्यापक और कल्याणकारी रचना के लिए वण और वग भेद से ग्रस्त और त्रस्त विषमता मूलक समाज के द्वन्द्व को नकारा नही जा सकता। (सारिका जनवरी १६७५ मेरा पन्ना पृष्ठ ६) किन्तु मच्चा सवाल वण भेद की लडाई का वग भेद की लडाई म बदलने का है।' यह काम भी प्रगतिशील रचनाकारा का ही पूरा करना है। क्योकि बुजुआ एव पूजीवादी बुद्धिजीवी तथा राजनीतिक सम्व सुधारवाद का बहकावे का रास्ता पकडते हैं। कमलश्वर ने साफ लिखा है— वर्ण

मन के क्षेत्र में सुधारवादी बनना और वर्ग भेद के क्षेत्र में शान्तिपूर्ण विकासवादी होना—ये दो बहाने हैं जिनके तहत सांस्कृतिक और आर्थिक शोषण की प्रक्रिया जारी है। अब तो यह स्पष्ट हो चुका है कि सांस्कृतिक सुधारवाद और आर्थिक विकासवाद—दोनों ही सामान्य जन के विरुद्ध जा चुके हैं' (सारिका जनवरी १९७५ पृष्ठ ९)। बुर्जुआ विद्वान अक्सर समन्वयवाद की रट लगाते हैं और वर्णों एवं वर्गों के बीच समन्वय तथा सहयोग का नारा देते हैं। ऐसी स्थिति में कमलेश्वर का कहना है कि—'द्वैत या द्वन्द्व के कारणों को समझे बिना समन्वय की बात करना याने आज के सन्दर्भों में सुधारवादी विकासवादी संतुलन को मंजूर करना साहित्यकार को एक थोथी दार्शनिक गरिमा तो दे सकता है, उस समय की सापेक्ष सहधर्मिता प्रदान नहीं कर सकता।'' (वही) किन्तु संतोष की बात है कि इस समय सापेक्ष सहधर्मिता को समांतर, प्रगतिशील एवं वामपंथी साहित्यकार तथा दलित साहित्य आन्दोलन के प्रणेता पूरे तरीके से निभा रहे हैं।

अक्सर प्रतिक्रियावादी प्रगतिविरोधी रचनाकार अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का भी सवाल उठाते हैं और इस सवाल की आड़ में वे अनैतिकता, अन्याय और शोषण की प्रक्रिया को बनाये रखने की स्वतन्त्रता चाहते हैं। इस साजिश का पर्दाफाश करते हुए कमलेश्वर ने साफ लिखा है कि—'अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता एक सरासर शहरी और सतही धारणा है... स्थापित व्यवस्था में आदमी की घटती या बढ़ती औकात ही उसकी अभिव्यक्ति की शक्ति को तय करती है' (सारिका जून ७८ पृष्ठ ११)।

जहाँ तक देश के राजनीतिक आर्थिक यथार्थ का सवाल है कमलेश्वर ने सारिका के 'समांतर १' (अक्तूबर १९७८) विशेषांक के मेरा पन्ना में इसकी विस्तार से चर्चा की है। आजादी मिलने के दिन से लेकर आज तक देश में सामन्तवाद-पूँजीवाद को पाला पोसा और पनपाया गया है तथा इजारेदार पूँजीवादी व्यवस्था की रचना की गयी है। देश में मिश्रित अर्थतन्त्र की जिस दोगली अर्थ व्यवस्था' का पालन किया गया है उसने राष्ट्रीय इतिहास को एकदम नंगा कर दिया है। और आज स्थिति क्या है? जीवन के तमाम साधनों और स्रोतों पर पूँजी का प्रभुत्व कायम है। सम्पन्न वर्ग की कसती हुई अँगुलियाँ उन नसों को भी दबा रही हैं जिनमें रक्त दौड़ता है और उन रन्ध्रों को भी बन्द कर रहा है, जिनमें साँस आती है। 'यही नहीं बल्कि जहाँ अस्पतालों में जल्लाद बैठे हैं और अदालतों में व्यापारी, दुकानों में लुटेरे और दफ्तरों में दगाबाज, मनों में जमाखोर और उद्योगों में सूदखोर। मतलब यह कि यह पूरा देश अब एक भयंकर दलदल बन चुका है और इस दलदल को बनाने वाले लोग प्राचीरों-परकोटों पर जाकर बैठ

गये हैं और दलदल म धँसते, दम तोडते आम आदमी के मरण का उत्सव मना रहे हैं। इस दारुण यथाथ का मूल कारण यही था कि अग्रेज साम्राज्यवादियो से जल्दबाजी म आम आदमी की पीठ पीछे समझौता करके राजनीतिक सत्ता जिन लोगो के हाथो ने प्राप्त की थी व राष्ट्रीय बुजुआ नेतृत्व के लोग थे, जो सामन्त वाद पूजीवाद के रक्षक एव पोषक थ। कमलेश्वर ने लिखा है कि— सत्ताधारी राजनीतिक शक्ति बुनियादी तौर पर उदार साम तवादी थी जिसमे अवसर खोजी और अवसरवादी म य वग भी आ मिला था। लगातार राजनीतिक शक्ति उसके पास रहने क कारण उसका चरित्र बदलत बदलते पूजीवादी हो चुका है।" (सारिका अक्तूबर १९७४ पष्ठ ९)

इस प्रकार साम तशाही और पजीशाही को बरकरार रखने वाला राष्ट्रीय बुजुआ नेतवग आज़ादी के दिन म लेकर लगातार 'यथास्थिति का बनाय रखने के प्रयासा म लीन रहा है। कि तु अब इतिहास न करवट ली है परिवतनकामी आम आदमी के आक्रोश दबाव एव सघर्षों न यथा स्थितिवादियो को पीछे हटने के लिए विवश कर दिया है और सत्ताधारी वग न दक्षिणपथी प्रतिक्रिया वादियो तथा नवफासिस्टो पर प्रबल प्रहार करते हुए प्रगति के माग पर चरण बढाये है। कमलेश्वर न लिखा है— वह (यानी सत्ताधारी वग—लखक) अपने आ तरिक कारणा स यथास्थिति के पोषण के लिए मजबूर है। लेकिन परिवतन के लिए चौवती करोडो जनता का जो दबाव सत्ता पर पडता है उससे वह द्वद्व की स्थिति म फँस जाती है और कुछ करती दिखायी पडती है।" (सारिका, अक्तूबर १९७४ पष्ठ ९)

कमलेश्वर ने स्पष्ट रूप से इस प्रकार के समय सापक्ष साहित्य की आवश्यकता पर मेरा पना म लगातार जोर दिया है। उ होन लिखा है— सीमित धारणाओ स आग इतिहास और मनुष्य की द्वद्वपूण स्थितियो को समझत हुए और मनुष्य की चि तन अपराजेय शक्ति म आस्था रखने वाला समातर समय का साहित्य ही अखडित आम आदमी की पक्षधरता और पूरे परिवतन की उत्कट आकाक्षा का प्रतिबद्ध प्रहरी और सम्बद्ध सहगामी हो सकता है। (सारिका अक्तूबर १९७४, पष्ठ ११)

बल्कि समय सापेक्ष समातर साहित्य ही आदमी की प्रकृत अपेक्षाओ और पदा की गयी 'शर्तों के दष्टिभ्रम को भद सकता है तथा उसके द्वद्व को रूपायित कर सकता है बल्कि सम्पूण परिवतन की आधारभूत आकाक्षा को भी सक्रिय करता है और उसक विरुद्ध स्थापित कर दी गयी जीने की शर्तों को खडित ही नही करता, बल्कि यथास्थिति के पक्ष म चालित प्रयासो को निष्क्रिय भी करता है। (सारिका, नवम्बर १९७४ पष्ठ ९)

उ होने फिर लिखा है कि— इसीलिए आज का साहित्य तटस्थता और

निरपेक्षता को बहुत पीछे छोड़कर प्रतिबद्धता और उससे भी आगे बढ़कर सम्पूर्ण सम्बद्धता की बात करता है और यहीं पर नहीं रुकता—वह मूल्यों के व्यवहार में लाये जाने के तकाजा पर गिद्ध-दृष्टि भी रखता है। उनका कार्यान्वन भी करना चाहता है।' (सारिका, अप्रैल १९७५, पृष्ठ ६)

निष्कर्ष रूप में कमलेश्वर की वैचारिकता के इस अध्ययन विवेचन से एक ही तथ्य उभरता है कि वे एक प्रतिबद्ध वामपंथी हैं।

यहाँ महत्त्वपूर्ण बात ध्यान में रखने की यह है कि कमलेश्वर ने अपनी इस विचारधारा मान्यताओं और आस्थाओं को प्रकट करने के लिए किसी वामपंथी राजनीतिक दल के किसी मुखपत्र के मंच का उपयोग नहीं किया है बल्कि जैसा सर्वविदित है, एक इजारेदार घराने की पत्र शृंखला की एक कड़ी हिन्दी की एक विख्यात प्रतिष्ठानी व्यावसायिक पत्रिका 'सारिका' का जिसके वे सम्पादक हैं, एक अस्त्र और माध्यम के रूप में प्रयोग किया है। इससे यह बात स्पष्ट रूप से प्रमाणित होती है कि 'टाइम्स आफ इंडिया' संस्थान में काम करते हुए भी उन्होंने एक ईमानदार प्रतिबद्ध वामपंथी के रूप में अपनी वैचारिकता और अपनी मान्यताओं व आस्थाओं का किसी रूप में भी समर्पण नहीं किया है और न किसी प्रकार का समझौता किया है। यह उनके जीवन और साहस का प्रतीक है। हिन्दी के प्रगतिशील आन्दोलन के पुनर्गठन और विकास में कमलेश्वर ने 'सारिका' के माध्यम से महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। चाहे लम्बे अन्तराल के बाद, बाँदा (उत्तर प्रदेश) में फरवरी १९७३ में सम्पन्न हुए अखिल भारतीय प्रगतिशील हिन्दी साहित्यकार सम्मेलन का मामला हो या चाहे मई १९७५ में गया (बिहार) में सम्पन्न हुए अखिल भारतीय प्रगतिशील लेखक सम्मेलन का मामला हो या चाहे अगस्त १९७५ में नई दिल्ली में आयोजित दक्षिणपंथी प्रतिक्रियावाद के विरुद्ध साहित्य और संस्कृति में संघर्ष विषय पर आयोजित अखिल भारतीय परिचर्चा का मामला हो। कमलेश्वर ने इन सभी घटनाओं का 'सारिका' के माध्यम से अभिनन्दन किया, उनके विवरण और समाचार प्रकाशित किये जबकि इजारेदार घराने की अन्य पत्र पत्रिकाओं ने इनका पूर्ण रूप से 'ब्लैक आउट' किया। यह सभी तथ्य उनकी ईमानदार प्रतिबद्धता को ही प्रमाणित करते हैं। यहीं पर व्यक्ति की भूमिका का महत्त्व भी प्रमाणित हो जाता है। यदि सारिका धर्मवीर भारती जैसे किसी प्रतिक्रियावाद-पूँजीवाद के चरण सेवक चाकर के हाथों में रहती तो वह भी धर्मयुग (जो टाइम्स आफ इंडिया घराने की ही एक अन्य पत्रिका और सारिका की बहन है) की भाँति प्रगतिशील साहित्य एवं आन्दोलन के विरुद्ध इस्तेमाल की जाती। विश्वविद्यालयों या महाविद्यालयों के बड़बोले हिन्दी के आलोचक-अध्यापक खीझ द्वेष और वैमनस्य के वशीभूत होकर जब

सारिका' या कमलेश्वर पर वाग्बाणों का उपयोग करते हैं, तब जान-बूझकर वे इन तमाम सच्चाइयों से आँखें मूद लेते हैं। कमलेश्वर एक प्रतिष्ठानी पत्रिका में काम करते हुए भी एक ईमानदार, प्रतिबद्ध एवं समर्पण समझौता न करने वाले वामपंथी की जो भूमिका निभा रहे हैं क्या उसका दशमांश भी विश्वविद्यालय महाविद्यालय सरकारी संस्थानों इजारेदार घरानों आदि में कार्यरत अन्य आलोचक प्रवर निभा रहे हैं ? राजगृह (बिहार) के समातर लेखक सम्मेलन के समय (दिसम्बर १९७५) जब कुछ साहित्यकारों ने अनौपचारिक वार्ता के दौरान कमलेश्वर से यह स्पष्ट प्रश्न पूछा था— भाई साहब ! आप 'सारिका' में यह सब कैसे लिख-छाप लेते हैं ? तो उनका स्पष्ट उत्तर था—' आप सबकी ताकत के बल पर ! वामपंथी प्रगतिशील तहरीक की ताकत के बल पर ! मैं जिस दिन यह समझूँगा कि मैं आम आदमी की लड़ाई के पक्ष में या प्रगतिशील तहरीक के पक्ष में सारिका का इस्तेमाल नहीं कर सकता उसी दिन बिना एक पल की देर लगाये, मैं उससे अलग हो जाऊँगा मैं तो नित्य अपनी जेब में इस्तीफा लेकर टाइम्स आफ इंडिया जाता हूँ।

कमलेश्वर के यह शब्द उनकी निष्ठावान प्रतिबद्धता के परिचायक हैं।

•

लिफ्ट में बम्बई

एक शाम चार बजे दफ्तर के लिफ्ट से कमलेश्वर उतर रहे थे। तीसरे फ्लोर से उनके संस्थान टाइम्स आफ इण्डिया के तत्कालीन जनरल मैनेजर भी आ गये। दुआ सलाम हुआ। जनरल मैनेजर ने कमलेश्वर से कहा—साहब आप सम्पादक लोग ही मजे में हैं जब मर्जी हुई तब आते हैं जब मर्जी हुई चले जाते हैं ! हम देखिये सुबह आठ माने आठ आते हैं शाम को सात-साढ़े सात बजे जाते हैं आज तो बाहर एक एप्वाइंटमेंट है इसलिए चार बजे निकलना हो गया ।

कमलेश्वर ने कहा—कम से कम हम सम्पादक लोग आते और जाते तो हैं आपको हमने कभी न आते देखा न जाते देखा आज देख रहा हूँ कि आप जा रहे हैं।

जनरल मैनेजर ने मुस्कराते हुए कहा—सुबह आठ बजे आया था।

कमलेश्वर बोले—आप आये न होते तो जाते कैसे ?

•

दया पवार
(मराठी कहानीकार विचारक)

कमलेश्वर दलित मानवता के एहसासों का लेखक

कमलेश्वर की कहानी से परिचित हो इससे पहले मेरी खुद उन्ही से पहचान हो गयी। यह सौभाग्य मुझे प्र० श्री० नेरुरकर की कृपा से मिला। कमलेश्वर अपने टी० वी० के कार्यक्रम के लिए कुछ दलित लेखको की खोज मे थ। नेरुरकर न उन्हे बाबूराव बागूल अर्जुन डागले और मेरा नाम सुझा दिया। बस यही हमारी पहली मुलाकात थी पर इस पहली मुलाकात म ही हम उनसे निकट से बात करने का मौका मिल गया। प्रसन्न व्यक्तित्व और अनायास ही अतर की बातें कह देने वाली आख कमलेश्वर की पहचान है। वसे तो इस परिचय के पूर्व भी उनका नाम सुनता रहा था पर मिलना न हो सका था, और जब यह पहली मुलाकात हुई तो उनके नाम के साथ जुडे हुए टी० वी० सिने क्षेत्र म उनके महत्त्वपूर्ण कामो की फहरिस्त और 'सारिका' के सपादक, हिन्दी के प्रख्यात लेखक आदि बडे बडे विशेषणो के कारण उनके साथ बातचीत प्रारम्भ करने म मुझे जरा हिचकिचाहट सी महसूस हुई। फिर इधर मेरी बबई-टाइप हिन्दी और ऊचे पदो पर रहने वाले लोगों से चार हाथ दूर रहन की आदत भी आडे आयी—ऊचे पदो पर रहनेवाले लोग अक्सर अहकारी जो होते ह—पर कमलेश्वर न मिलते ही हम अपना बना लिया। उनके स्वभाव म अहकार का लेश दिखायी नही दिया। अपनत्व ऐसा, जसे कई दिनो के बिछुडे उस अभिन्न से मिल रहे हो।

मराठी के दलित साहित्यिक खुद ही अपने साहित्य पर थोडा बहुत विचार विमर्श कर लेते है अन्यथा यह विचार मराठी साहित्य म उपेक्षा की दृष्टि से ही देखा जाता है। कभी-कभी तो उसका सदभ भी हास्यास्पद बना दिया जाता है। पर ऐसे नये विचारो को कमलेश्वर बडी आत्मीयता स उठा लेते हैं। और इन विचारो को अन्य प्रातो म पहुचाने की नीयत से उन्होने 'सारिका' के दो विशेषाक निकाल डाले यह उनके और सारिका दोनो के लिए गौरव की बात है।

'समांतर और 'दलित' साहित्य म कमाल की समानता दिखायी दी है इसलिए इस बात पर आश्चर्य तो बड़ा ही आश्चर्य होता है कि जब इन विचारों से जुड़ी हुई नियमहली सारे भारतवर्ष म फैली हुई मिल सकती है तब केवल मराठी साहित्यकारों क कानों म ही य 'समांतर विचार क्यों नहीं पड़ पाये ? अगर सात समुदर पार के 'अस्तित्ववाद' 'नयी पीढ़ी' नाराज पीढ़ी आदि विचार महाराष्ट्र से निकलनेवाली सभी उच्च स्तर की पत्रिकाओं और विद्यापीठों के अभ्यासक्रमों में भर जा सकते हैं तो अपने खुद के 'समांतर विचार मराठी साहित्य म प्रवेश क्यों नहीं पा सके ? यह एक पहेली ही तो है। भाषाओं और प्रांतों की विसंगतियों नीतियों के कारण जन जन के बीच विचारों की दीवालें खड़ी हो गयी हैं। ऐसे वातावरण म उस तरुण लेखक को, जो जन-सामान्य से अपना नाता जोड़ता है, उसके जीवन से समरस होने का प्रयत्न करता है, ऐसा नहीं लगता कि उसका जीवन जन-सामान्य से अलग है। उसके पास केवल सिद्धांत नहीं बघारते पर अपने भोग हुए जीवन को सही अर्थों म व्यक्त करते हैं। इस संदर्भ म 'दलित साहित्य एक ऐतिहासिक घटना के रूप म उभरा है। पिछले एक-डेढ़ वर्षों से हम समांतर साहित्य की खूब चर्चा सुन रहे हैं 'नयी कहानी' और 'समांतर म समानता और भेदा के विचार सुनने का मिले हैं इस नयी विचारधारा का कथन करने वाली उनकी कहानियाँ पढ़ने को मिली हैं।

इससे पूर्व कमलेश्वर की एक-दो कहानियाँ मराठी म पढ़ने को मिली थी। 'तलाश', 'नीली झील' और एकाध और। इन कहानियों को पढ़कर कोई विशेष संतोष नहीं हो पाया था। मराठी साहित्य-क्षेत्र म कमलेश्वर की प्रतिमा एक ऐसे रोमांटिक लेखक क रूप म बन गयी थी जो स्त्री-पुरुषों के जीवन म नाजुक क्षणों को पालकर रख देता है। उनकी कहानियों का अनुवाद करने वाले भी मध्यमवर्ग के लोग ही रहे हैं जिनकी पसंद की अपनी सीमाएँ हैं। वे ऐसी सुरक्षित कहानियाँ ही अनुवाद के लिए चुनते हैं जिनसे सामाजिक व्यवस्था को धक्का न लगे। इसलिए सच्चे व प्रखर कमलेश्वर अब तक मराठी साहित्य से खूब ही दूर रहे हैं। मराठी के कुछ प्रगतिशील लेखक साहित्य के मंच पर से अपने 'वामपंथी होने की घोषणाएँ करते रहते हैं, पर उनके लेखन म वाम की विचारधारा ढूँढ़े नहीं मिलती। शुरू म लगा था कि यही हाल कमलेश्वर के साथ भी होगा पर सारिका' के समांतर विशेषांक म जब उनकी कहानी इतने अच्छे दिन' पढ़ी तब अपने विचारों को बदल देना पड़ा।

'इतने अच्छे दिन की विषयवस्तु खूब परिचित थी। वह हड्डियाँ बेचनेवाले एक दलित कुटुंब की दुःखांत कहानी है। आसपास चारों ओर अकाल फैला हुआ है। अपने पेट के लिए कुछ थोड़ा सा कमा लेने के लिए तरुण भाई-बहन को हड्डियाँ

बचन का काम करना पडता है। पर जानवरो की हड्डियाँ भी आखिर कितनी मिलती ? इसलिए उन्हे उस श्मशान की शरण लेने का बाध्य होना पडता है जहाँ मुर्दों को दफनाया जाता है। कहानी के उत्कट क्षण तब आते हैं जब वे अनायास ही अपनी दादी की कब्र को खोद डालते हैं और दादी के पैर की उँगलियो म पडे काँसे के छल्ला को पहचान लेते हैं। कहानी को पढते समय मराठवाडा का अकालग्रस्त प्रदेश आखा के सामने घूमता रहता है। अकाल से त्रस्त अनेक कुटुम्बो को आदमी की हड्डियाँ बेचकर अपना जीवन निर्वाह करना पड रहा है इस पर मुझे एसेंबली म हुई गरमागरम बहस याद आने लगती है। अखबारो मे छपी जो खबरें समय के साथ विस्मत हो चुकी थी, कमलेश्वर की कहानी पढ़ते समय याद आने लगी। अपने अनुभवो का उन्होने कथा माध्यम से बडे ही प्रभावी ढग से चित्रित किया है। सवसामान्य लोगो के इन कष्टो की कहानी पढत समय आज भी मन क्रदन करने लगता है।

इन कष्टो का वणन करते समय कमलेश्वर शब्दो को किंचित् भी उफनन नही देते। समातर साहित्य सिद्धात का प्रचार करता है नारेबाजी नही ! मराठी क्षत्रो म किये जाने वाले इस दुष्प्रचार मे कि कुछ भी बकवास लिख देन का नाम समातर है कितना उथलापन है यह समानर कथाओ को पढे बिना नही जाना जा सकता ! इतन अच्छे दिन' क शब्द प्रहार कलेजे पर किसी पन हथियार स कम घाव नही करते। कहानी का एक प्रसग यो है—'श्मशान मे हड्डियाँ इकटठा करते हुए नाती को अपनी दादी के साथ हुई बातों की याद आने लगती है। नाती नदी किनारे जाकर लौटा है। दादी उससे नदी के पानी का रग पूछती है। नाती कहता है लाल। इस पर दादी कहती है कि नदी का पानी लाल नही सफद है ! इस पर नाती कहता है—नही दादी नदी का पानी सफेद नही वह खून के समान लाल है ! इस बातचीत की सहायता से पाठक को कहानी म वर्णित दु खों का अदाज वे पहल से ही दे देते हैं।

महाराष्ट्र म घटी इस दारुण घटना का चित्रण मराठी लेखकों ने क्यो नही किया ? जब इस सबध म सोचता हूँ तब मुझे लगता है कि लेखक जीवन की ओर देखन के अपने दष्टिकोण से ही विषय का चुनाव करता है। अपन अनुभवो का वह जो अथ लगाता है वही उसकी कहानी मे उद्धत होता है। स्वय कमलश्वर ने १९६३ के आसपास अपने दष्टिकोण की चर्चा का है। वे लिखते है-- अच्छी या बुरी कहानी होने का सवाल तब उठता है जब कि वे दिमागी ऐयाशी के लिए लिखी गयी हों। ऐयाशी का वह वक्त हमारे हिस्से म नही आया। मेरी दृष्टि मे कहानी की कीमत इसमे ही नही है कि वह अच्छा है या बुरी उसकी सार्थकता और

निरयक्ता भी मेरी नज़र मे बहुत माने रखती है।" ('खोयी हुई दिशाएँ' की प्रस्तावना से)।

१९६३ से कमलेश्वर द्वारा कथा क्षेत्र म किया गया काम देखकर लगता है कि उन्होने अपनी कथाओ म सामाजिक मर्यादाओ को तोडा नही है। 'इतने अच्छे दिन' जैसी प्रभावी कहानियाँ पढकर बडी तीव्र इच्छा हो जायी थी कि कमलेश्वर का सारा कथा साहित्य पढ़ लिया जाय।

कमलेश्वर को आज समृद्ध भौतिक जीवन तथा प्रसिद्धि प्राप्त है। और कोई होता तो शायद सज धज कर बैठ जाता और अपनी सफलता के ढोल पीटता रहता पर कमलेश्वर अभी भी शात नही बैठ पाय है। साहित्यिक आदोलनो से उन्होन अपना नाता नही तोडा। उत्साह इतना कि नौजवानो को भी लजा दें। बेकार के विवादो मे पडना उनकी आदत नही। हिंदी साहित्यजगत म जहा उनका खूब आदर है वहाँ एक असतुष्ट वग उनसे नाराज भी है उनकी निंदा करता है। यह निंदा कमलेश्वर को झुका नहीं पाती, उलटे उनके वक्तव्यो म पनापन बढा देती है। ऐसे मौको पर अक्सर उनके मुह से निकल जाता है "अभी मजा आ जायेगा।" साहित्य क्षेत्र के बडे-बडे स्तभो को वे आसानी से हिला देते हैं। अनेक बार व ऊचे-ऊचे लेखको से मिलना टाल जाते हैं पर तरुण दलित लेखको के साथ व घटो बैठे रहते है। उनके लिए अपना मूल्यवान समय नष्ट करने म व नही झिझकते। अपने विचारो से उन्हे अवगत कराते है और उनके विचारों को समझते है अपने विचारो म कही कमी दिखायी दी तो उन्हे बदल डालने म सकोच नही करते। नये विचारो के प्रवाह की दिशा म अपने विचारो को मोड देते है। उनकी इस प्रवृत्ति के कारण उनकी कहानियो म विचारो की नवीनता भरी रहती है।

कीर्ति के शिखर पर पहुँचे हुए कमलेश्वर अक्सर बड बेचैन से दिखायी देते हैं आप स वे गप्पें मारते रहेंगे, साहित्य ससार के मनोरजक किस्से सुनते रहेंगे पर उनके हावभाव से आप पायेंगे कि वे कही और खोये हुए है। अपने इसी स्वभाव के कारण आसपास के कोलाहल से वे पारे के समान अलिप्त रह लेते हैं और इस वातावरण म से वे अनजाने ही अपने कथा विश्व को खोज निकालते हैं। 'खोयी हुई दिशाए' 'पराया शहर' 'दुख भरी दुनिया' आदि कहानियाँ पढकर उनके भोगे हुए भूतकाल की चुभन और बेचैनी स्पष्ट नज़र आती है। लगता है कि अपने भोगे हुए भूतकाल का बूस कधे पर लादे हुए कमलेश्वर बढते जा रहे हैं अपनी सपादकीय कुर्सी और आसपास के ऐश्वर्य कीर्ति की उन्हे परवाह नही है और फिर पाठको का वे अपने जैसे ही सामान्य कमलेश्वर नज़र आने लगते हैं। उनका यही चेहरा अब सुपरिचित हो चुका है।

उनका कथा ससार कौन सा है? उनकी कहानियों को पढते समय उनके

पाठक, अर्थात सामान्य जिंदगी जीने वाले लोगों को उनमे अपने जीवन का चित्रण, अपनी आशा-आकांक्षाओं और अपनी वेदनाओं के दर्शन होने लगते हैं। उनकी एक कहानी है— देवा की माँ।' देवा नाम का एक तरुण राष्ट्रीय क्रांति मे भाग लेता है। उसने अपने दु खो के मूल को पहचान लिया है। उसकी माँ अनन्य कष्टों को झेलकर बेटे का पालन करती है। पिताजी ने वह घर त्याग दिया है क्योंकि वह उच्च मध्यमवर्ग मे प्रवेश कर चुके हैं और दूसरा घर कर लिया है। तभी बेटे को सजा हो जाती है। मा उसे छुडाने के लिए पति के पास सहायता के लिए जाती है पर पति बेटे के कामो को मूर्खतापूर्ण काम बताते हुए पत्नी को घुडकी देकर निकाल देता है। जेल से छूटकर बेटा पिता से मिलने की इच्छा व्यक्त करता है पर माँ कठोर हो जाती है और उसे पिता से मिलने से रोक देती है। उसका कहना है कि बाप होते हुए भी उसने बाप जैसा व्यवहार नहीं किया। कहानी पूरी होते होते मा के मन की कुण्ठा पाठकों के मन को घेर लेती है। इस कथा मे उन्होंने वर्तमान समाज व्यवस्था का स्पष्ट मार्ग किया है। कहीं भाषणबाजी किये बिना उन्होंने अपने पाठकों से बहुत कुछ कह दिया है।

कमलेश्वर ने अपनी अनेक कहानियों मे बाप बेटा, माँ-बेटों का आपसी द्वंद्व चित्रित किया है पर उन्होंने केवल स्वातंत्र्योत्तर काल के २५ वर्षों के जेनरेशन गॅप का सहारा नहीं लिया है। उनकी आंखो के सामने केवल चरित्र चित्रण ही नही रहता वे किसी भी पात्र पर अन्याय नही करते। पात्रो को काला या सफेद बनाना या राम और रावण के गुणों से रँगना, उनका ध्येय नही रहता। उनके सारे पात्र आसपास के भीषण वातावरण में जीते हैं और अपनी ओर अपने पाठकों का ध्यान आकर्षित करने का प्रयत्न करते हैं। उनकी कहानियों की यही विशेषता उन्हें सफलता देती है।

कमलेश्वर से बातचीत करते समय जब उनसे पूछा गया कि अच्छे कहानीकार की क्या पहचान है, तब उन्होंने एक बडे ही मार्मिक प्रसंग के जरिये अपनी बात कही। प्रसंग एक सर्कस सुंदरी और उसके साथ काम करनेवाले एक अन्य कलाकार के जीवन से लिया गया था। वह कलाकार सर्कस सुंदरी से प्रेम करता था। किन्हीं कारणों से वह सर्कस सुंदरी उस कलाकार को धोखा देती है। कलाकार ईर्ष्या और क्रोध से जल उठता है। उस सर्कस सुंदरी का सिर उतार लेने के लिए तैयार हो जाता है। रात का सर्कस के समय उस सुंदरी की आँखें बांध दी जाती हैं कलाकार के हाथों मे लपलपाती हुई छुरियाँ होती हैं। पर कला मे निपुण उस कलाकार के हाथ सर्कस सुंदरी का शिरोच्छेद करने को तैयार नही होते। कमलेश्वर ने अच्छे कलाकार की भी यही पहचान बतायी। उसके हाथ मे छुरा दे दिया जाय तो भी वह अपने कथा विश्व को विकृत करने को तैयार नही होगा। उनका एक

अश्लील कहानी' को पढते समय उनके उक्त वक्तव्य की सचाई स्पष्ट होती है। इस कहानी के अंत को पढ़कर कमलेश्वर के अपने अनुभव, विश्व की ओर देखने के दृष्टिकोण का पता चलता है। कथा पढना शुरू करने पर लगता है कि उसका अंत ठीक किसी बाजारू कहानी के समान होगा, पर कमलेश्वर का सामाजिक जकडनों का ज्ञान इतना पक्का है कि ऐसी कहानियों में भी उनकी पकड ढीली नहीं होती।

'राजा निरबसिया' ने हिंदी साहित्य में खूब धूम मचायी। इस कहानी में वर्णित दुःख विराट है पर इस कहानी के शोकांत का ज़िम्मेदार कौन है? राजा निरबंसिया कैसे एक एकदम साधारण व्यक्ति है। कहानी का प्रारंभ किसी लोक कथा जैसा किया गया है— एक था राजा। उसकी पत्नी अंत में पतित सिद्ध होती है। कहानी में जिस प्रकार पत्नी का पतन नजरों में आता है वैसे ही निरबंसिया की पत्नी का भी। पत्नी का व्यभिचार व्यभिचार नहीं लगता पर वह आसपास की गिरी हुई परिस्थितियों का परिणाम मालूम होता है। लगता है कि जीवन के सारे मूल्य बिगडी हुई अर्थ-व्यवस्था के कारण खिसक रहे हैं। स्त्रियों की समस्याओं को वे वैज्ञानिक और मानवीय दृष्टिकोण से देखते हैं। यह दृष्टिकोण उनकी अनेक कहानियों में दिखायी देता है— एक थी विमला, 'मांस का दरिया' कोई नहीं कुछ नहीं इसके कुछ उदाहरण हैं। शूद्र और नारी को तुलसीदास ने ताडना का अधिकारी माना था। कमलेश्वर इस उतरती बीसवीं सदी में निर्भय होकर उनकी मुक्ति के गीत गा रहे हैं।

मांस का दरिया कमलेश्वर की एक विशिष्ट कहानी है। एक वेश्या है जिसके अंग गलने लगे हैं, उस दुःखी वेश्या के घर यूनियन का एक कार्यकर्ता लाल झंडा लेकर आया करता है। मजदूरों के एक कार्यकर्ता का ऐसा चित्रण पाठकों को अस्वस्थ कर सकता है। उन्हें वह 'एण्टीहीरो लग सकता है। यह कार्यकर्ता राजनतिक आदोलनों में भाग लेते हुए ऊँचा उठा है। उसके अंदर वासना है पर साथ ही उसके विचार बाजारू ग्राहकों के विचारों से बिलकुल भिन्न हैं। वेश्या बीमारी की अवस्था में बिस्तर पर पडी है। उधार वसूल करने लिए आये हुए होटल मालिक दूकानदार वगैरह उसकी इस अवस्था में भी उसका भोग करने से नहीं चूकते पर यूनियन का यह कार्यकर्ता उसे करुणा की दृष्टि से देखता है। वह उसका स्पर्श तक नहीं करता और पैसे देकर वापस लौट जाता है। वेश्या अपनी खिडकी से जाते हुए देखती है। वह कार्यकर्ता और किसी दूसरी वेश्या के कोठे पर नहीं चढ़ता। वेश्या के चेहरे पर इससे एक संतोष की झलक दिखायी पडती है। उसे यह अच्छा लगता है।

कमलेश्वर की यह कथा प्रतिभा उनकी अपनी है। उनके विचारों की छाप उस प्रतिभा पर स्पष्ट दिखायी देती है। उदाहरण— बसों में भीड है। लोग ठंडी

सीटो पर सिकुडे हुए बैठे हैं और कुछ लोग बीच मे ही ईसा की तरह सलीब पर लटके हुए हैं। बाहें पसारे—उनकी हथेलियो म कीलें नही—बस की बर्फीली चमकदार छडें हैं।'

आज के सामान्य व्यक्ति के बारे म कमलेश्वर की यही धारणा है। कमलेश्वर ने कितना लिखा है इसकी अपेक्षा उन्होने क्या लिखा है यह अधिक महत्त्वपूण है। हमारे आसपास असम्य घटनाएँ रोज घटा करती हैं। अपने अनुभवों के द्वारा उन घटनाओ को नया अथ देने का काम बहुत ही कम लेखक कर पाते है। कमलेश्वर का स्थान इस रूप म बहुत ऊँचा है। कमलश्वर की अनेक कहानिया मे दलित साहित्य म समाविष्ट नकार विद्रोह, समता व विनाननिष्ठा के दशन होते हैं और लगने लगता है कि भापा की दीवार उनके आडे नही आती। अखिल भारतीय भाषाओ के स्तर पर उनकी यह आवाज ऊँचे स्वरो म सुनायी देती है इसका हम गव है।

•

कॉफी हाउस इलाहाबाद

उपेन्द्रनाथ अश्क अपनी रौ म थे। हिन्दी और हिन्दीवालो से नाराज। बोल रह थ—हिन्दी मुझे स्वीकार करे या न करे पर उदू मुझे नही भुला सकती! या उदू जुबान और हिन्दी का खर कोइ मुकाबला भी नही! हिन्दी वाले तो नाशुक्रे हैं उदू मुझे हमशा याद रखेगी कहेगी—फिदाये अदब! उपेन्द्रनाथ अश्क! है कोई ऐसा खूबसूरत और खाकसारी से भरा शब्द हिन्दी म फिदाये अदब! उपेन्द्रनाथ अश्क ?

कमलेश्वर ने कहा—अश्कजी, शब्द तो है और वह आप पर बखूबी लागू भी हाता है पर आपकी हिन्दी ही कमजोर है तो मैं क्या करूँ ?

—बोला बोलो! बताओ! अश्कजी चहके।

कमलेश्वर न कहा—वह शब्द है, बिगाये अन्व! उपेन्द्रनाथ अश्क!

•

प्र० श्री० नेरूरकर

न खोया हुआ आदमी

कुछ एसा याद आता है कि मैंने कमलेश्वर का नाम सबस पहल नयी कहानी' क सदभ मे सुना था। इस बात को एक दशक या शायद डढ दशक बीत चुका है। उनका नाम सुनने के बाद मैंने निश्चय किया था कि नयी कहानी पर लिखी गयी उनकी पुस्तक नयी कहानी की भूमिका को जरूर पढ़ूगा, पर जब वह पुस्तक हाथ लगी तब उसके पन्ने पलट कर रह गया और फिर आज तक उसे पढ़ने का अवसर नही मिला। अब कभी मौका मिला तो उनकी अलमारी म से उस निकाल लाऊँगा (बशर्ते कि वह उनकी आलमारी म मौजद हो) और उसे एकाग्र चित्त हो एकान्त मे अवश्य पढ़ूगा।

पर इधर कमलश्वर 'नयी कहानी से चलकर समातर कहानी की ओर मुड गये हैं और बात कुछ ऐसी बन गयी है कि मुझे 'समातर कहानी पर उनके पुस्तक लिखन की प्रतीक्षा नही करनी पड़ेगी कारण यह है कि इस समातर कहानी के आदोलन के साथ मराठी के हम कुछ लेखक भी जुड गये है और कमलेश्वर के बहुत निकट पहुँच गये है। कमलेश्वर भी हमारे बहुत समीप आ चुके हैं और मराठी के दलित साहित्य का सजनात्मक क्रातिकारी आदोलन हिंदी के 'समातर' आदोलन के साथ हाथ म हाथ डाल आगे बढ चला है।

कमलेश्वर से मेरी पहली मुलाकात टाइम्स ऑफ इडिया की उनकी केबिन म हुई। यद्यपि मैं हिंदी साहित्य का निरतर अध्ययन करता रहता था पर तब तक मैंने उनकी बहुत ही थोडी रचनाए पढी थी। मेरा छोटा भाई प्रकाश, जो चित्रकार है ओर टाइम्स आफ इडिया के ही पुस्तक विभाग म काम करता है हर महीने सारिका का अक लाता रहता था। वह यदाकदा 'सारिका की कहानिया चित्रित भी करता रहता था। एक अक म तो उसके दाढी वाले चित्र के साथ उसका परिचय भी छपा था। इसलिए हमारे परिवार म जब भी साहित्य चर्चा होती थी, कमलश्वर का जिक्र जरूर आ जाता था।

'सारिका' का जो स्तंभ मुझे सदैव आकर्षित करता रहा है वह है कमलेश्वर का 'मेरा पन्ना'। वह 'पन्ना' मुझे अनेक कोणों से स्पर्श कर जाया करता था। (आजकल 'सारिका' में से यह पन्ना गायब है, पर कमलेश्वर चिंता न करें मैं उन्हें उसके लिए परेशान नहीं करूँगा क्योंकि चाहे साहित्य का पन्ना हो चाहे जीवन का वह जिसका होता है उसका अपना होता है और उसे स्वतंत्रता होती है कि वह उसे लिखे या न लिखे)। उस 'पन्ने' की पहली विशेषता जो मुझे स्पर्श कर जाती वह है उसकी दुधारी छुरी के समान पाठकों की संवेदनाओं को तीक्ष्णता से काटती जाने वाली विज्ञाननिष्ठ वैचारिकता। कमलेश्वर की कलम की सुदृढ़, स्वस्थ और शुद्ध वैचारिकता की विशेषता है कि वह पाठकों के आत्मनिष्ठ विचारों तथा तरल व सूक्ष्म भावनाओं से ओतप्रोत होकर उन्हें उनके आसपास की सचाइयों की ओर झुकाने की सामर्थ्य रखती है। 'मेरा पन्ना' की दूसरी विशेषता है उसकी भाषा की सौंदर्य-स्पर्शी चारुता, शैली की मोहक कोमलता और उसकी ताजगी। लगता है मानो उसकी चिरनवीन हरीतिमा कभी फीकी नहीं पड़ेगी। वह पन्ना कभी पुराना नहीं पड़ेगा। मानव-जीवन की सचाइयों को व्यक्त करने के लिए ताल ठोककर ऊँची उछाल मारने के लिए तैयार रहने वाली उसकी सृजनाशक्ति कभी क्षीण नहीं होगी।

सो सच यह है कि मैं कमलेश्वर से मिले बिना ही उनसे मिल चुका था। उनके निकट जाये बगैर ही मैं उनके बहुत निकट पहुँच चुका था। उनसे आमना सामना नहीं हुआ था पर वे मुझसे बहुत कुछ कह गये थे। ऐसे विचारों में खोया हुआ देह नाम की अपनी गठरी को संभाले हुए अनियंत्रित भ्रमित-सा मैं एक दिन टाइम्स की पत्थर की इमारत में जा घुसा। लिफ्ट एक एक मंजिल पार करती हुई मुझे चौथी मंजिल पर ले गयी। लिफ्ट से बाहर निकला और सीधे कमलेश्वर की केबिन के दरवाजे को धकेल कर अंदर घुस गया। ठंड का मौसम था या नहीं यह याद नहीं पर उस दिन मैं ग्वालियर का गरम सूट पहने हुए था। और आश्चर्य यह कि उस दिन मेरे सामने अपनी कुर्सी पर आराम से बैठा हुआ अपनी दोनों कोहनियों को सामने की चौकोर टेबिल के बीचोंबीच टिकाये हुए कमलेश्वर नाम का सारिका का संपादक भी काला-नीला गरम सूट डाटे हुए था। कहीं मैं नई दिल्ली में तो नहीं हूँ? मैंने क्षण भर हिचककर खुद से पूछा। न मालूम कमलेश्वर ने मुझसे 'बैठिये' कहा था या नहीं पर मैं खुद ही कमलेश्वर के सामने की बीच की कुर्सी पर जाकर बैठ गया। मैंने अपना कार्ड अंदर नहीं भिजवाया था (कार्ड था ही कहाँ) न कोई चिट आदि भेजी गयी थी और न किसी ने मध्यस्थी करके परिचय ही कराया था। मैं कमलेश्वर को पहचान गया था पर कमलेश्वर ने थोड़े ही मुझे पहचाना था! और अगर अपना परिचय देता भी तो कौन वे मुझे पहचान लेते! अधिक से-अधिक वे यही समझ पाते कि मराठी का कोई लेखक मिलने आया है

बस ! कुछ क्षणा तक हम दोनो ही एक दूसरे से न बोले, मैं कमलेश्वर की तरफ देख रहा था और वे शायद मेरी तरफ। हम दोनो ही उस दोपहर के विश्रांतिकाल मे अपने अपन म खो से गये थे। हम दोनों म से कोई एक अपना मुह खोलता कि इतने म केबिन का दरवाज़ा फिर खुला और कमलेश्वर की टेबिल पर गरमा गरम रगदार चाय का बडा सा कप रख दिया गया। इसी बीच शायद मैंने कमलेश्वर को अपना नाम धाम बता दिया था। कमलेश्वर ने एक कप चाय और लाने को कहा और अपने सामने रखा हुआ गरमा गरम चाय का वह खूबसूरत प्याला एक हाथ से मेरी ओर सरका दिया

'पीजिय।'

जी हा।

इससे ज्यादा हमारी और कोई बातचीत नही हुई मैंन सिफ इतना कहा—'कभी आपकी साहित्यिक मुलाकात लेना चाहता हूँ '

जरूर।'

बस ! इसके आगे बोलने को कुछ बचा ही कहा था ? मैं उठकर खडा हुआ। कमलेश्वर बैठे रहे। मेरी आखें कमलश्वर नाम धारण किये हुए मरे सामन वैठी हुई उस आकृति पर गडी थी—ऐसा श्यामवण जिसे काला कहा जायेगा ठिगना कद। आखो पर चश्मा था या नही। शायद नही था। हाँ आखें उनकी मेरी आँखो स सतत टकराती रही। किसी के अतर की थाह ल लन म समथ उनकी दृष्टि ! खूब बोलने वाले, फिर भा कुछ न बोलने वाले—हाथ आठ और अतर की बाता को छिपाये रखने म कुशल कुछ गोल कुछ लबा-सा चेहरा पुष्ट और सुदर—मानो काले पत्थर का तराश कर बनाया गया हो। नाक और ठोढी स पौरुष झलकता हुआ। आकषक होठ—जिन्ह देखकर अनायास ही इजिप्ट के स्फिक्स के होठों की याद आ जाय। हाँ कुछ कुछ वैसे ही। होठा क किसी कोन मे छिपी हुई रहस्यमयी मुस्कराती हुई हँसी ! कुछ ऐसी हसी जिसे रहस्यमयी भी कहा जा सकता है और करुणामयी भी जो दोनो का भ्रम पदा कर दे। सिर पर काल बाल। चौडा माथा जिस पर दृष्टि टिक जाय। न जाने किस रसायन का बना हुआ था यह व्यक्ति कि मैं जान को उठा, तब भी उसके पास दुबारा आन की इच्छा बनी रही। मुझे कमलेश्वर से क्या चाहिए था ? परिचय ? मुलाकात ? अपनी किसी मराठी कहानी का सारिका म हिंदी अनुवाद ? मुझे उनकी मुलाकात जरूर लनी थी पर जल्दी नही थी। अभी तक मैंन कमलेश्वर को पढा ही कहाँ था ! छिटपुट दो चार कहानिया पढी होगी। पर यह तो मुलाकात के लिए काफी नही था।

एक बात सच है। कमलेश्वर का नाम मुझे बहुत भाया था। उस नाम म एक जादू था। एस जादू भरे नामा के पीछे मैं बिना हेतु बिन बुलायें भागता रहा हू। कई

बार ऐसे नामों से मिलकर मेरा मोह टूटा है सचाई सामने आयी है। मानव जीवन की विसंगतियाँ स्पष्ट हुई हैं। पर कमलेश्वर से मिलने के बाद ही मुझे लगने लगा था कि उनके विषय में ऐसा कुछ नहीं होगा। कमलेश्वर से आज्ञा लेकर मैं बाहर निकला तो एक विचार मेरे मस्तिष्क में बड़े ही स्पष्ट रूप में आ रहा था। वह यह कि उनके सामने जो भी जाकर बैठता था उसके विषय में उनका मन पूर्णतः कनक चक था। पत्थर की कोरी सिल के समान, कोरे कपड़े के समान। मेरे विषय में जानने को वे निरुत्सुक ज़रा भी तो नहीं थे पर उस पल शायद उनके मन में मुझे जानने की उत्सुकता भी नहीं जगी थी।

दिन बीतने लगे। व बीतते भी तेज़ी से ही हैं।

इसी बीच बंबई के प्रसिद्ध क्रास मैदान में किसी भव्य प्रदर्शनी का आयोजन हुआ। शायद सरकारी थी। अखबारों में पढ़ा कि इस प्रदर्शनी के पण्डाल में रोज़ शाम को साहित्यकारों, कलाकारों, कवियों, शास्त्रियों आदि की गोष्ठियाँ जमेंगी जिनमें चर्चाएँ हुआ करेंगी। एक शाम मैं उस कार्यक्रम में जा पहुँचा। डा० मुल्कराज आनंद डाम मोराएस, कमलेश्वर विजय तेंडुलकर (तथा कुछ और भी जिनके नाम अब याद नहीं रहे) अपने अपने जीवनों पर आत्मकथ्य प्रस्तुत करने वाले थे। मुझे यह कल्पना बड़ी भायी। चित्र विचित्र तरीकों से सजायी गयी तथा चारों ओर से घिरी हुई उस प्रदर्शनी के एक कोने में एक छोटा सा एम्पी थियेटर था। खुला हुआ। कुर्सियाँ सजी हुई थीं। सामने मंच था। मंच पर बोलने वालों की कतारें थीं। खचाखच भरे श्रोताओं में विविध भाषी, विविध-ढंगी स्त्री-पुरुष बैठे थे। एक एक वक्ता कुर्सी से उठने लगा। धीरे धीरे वह माइक तक जाता, अपनी ऊँचाई के अनुसार उसे ठीक करता। फिर बोलता। मैं वहाँ कमलेश्वर को बहुत दूर से, पर फिर भी बहुत पास से देख रहा था। सफेद पेंट (जो क्रिकेट खिलाड़ियों की याद दिलाती थी), सफेद ही कमीज़। शाम का समय था। प्रकाश किंचित-सा धूमिल होता जा रहा था। आस पास बिजली के बड़ी पावर के बल्ब जल रहे थे। वातावरण रंगीन होने लगा था। श्रोता लगातार दाद दे रहे थे। उनकी उत्सुकता प्रति क्षण बढ़ती जा रही थी। मंच पर बैठी हुई उस प्रतिभावान मंडली में कमलेश्वर की आकृति ही ऐसी थी जो नज़रों में भरने में समय लेती थी, पर फिर अचानक नज़रों को आकर्षित कर लेती थी। मुझे कमलेश्वर से पहली मुलाकात का स्मरण आने लगा। मैं कमलेश्वर के शब्दों को सुनने और गुनने को आतुर होने लगा। उस दिन तो कमलेश्वर मुझसे एकाध शब्द ही बोले थे। आज वे शब्दों पर शब्द बोलने वाले थे। अपनी आत्म-कहानी कहने वाले थे।

कमलेश्वर की आत्म कहानी सुनने में मैं रम गया। उनकी कहानी एक निश्चयी और मधपरत व्यक्ति की कहानी थी। यह व्यक्ति वैसे तरुण था। उसे

अभी न जाने कितनी गरमी बरसातें मेलनी थी। पर अपने बीस-तीस के जीवन में ही जो कुछ वह देख चुका था, अनुभव कर चुका था भोग चुका था, सहन कर चुका था, वह असीम था। दारिद्र्य उपेक्षा भ्रांति धोखा, संघर्ष टीका, अनाथपन—सब कुछ उसने सहा था। मैं कानों मे जान डालकर सुन रहा था और कमलेश्वर शब्दों में जान डालकर बोल रहे थे। मैं अन्दर ही अन्दर किसी समान सहानुभूति से भरता जा रहा था। मैं और अन्य दलित साहित्यिक मित्र अपनी तरुणाई में कदम रखते रखते जो कुछ भोग चुके थे वही—नही उसके कुछ अधिक ही मेरे सामने मंच पर खड़ा कमलेश्वर नाम का वह प्रतिभावान और मनस्वी हिन्दी साहित्यकार भोग चुका था। जीवन के दारुण अनुभवों के विश्व मे हम सहोदर थे। आपस में बंधु थे। हम एक दूसरे के निकट नहीं आये थे पर आपो आप एकजीव एकरूप होते जा रहे थे। मेरे मन में यह प्रतिक्रिया तीव्र होती जा रही थी। वह कहाँ जाकर रुकेगी यह मैं समझ नहीं पा रहा था। क्या एक बार फिर कमलेश्वर से मिलना हो सकेगा? क्या कमलेश्वर मुझसे फिर मिलेंगे? पर मिलने से क्या लाभ होगा? एक हिन्दी लेखक था दूसरा मराठी। एक प्रस्थापित लेखक था, जिसे साहित्यिक मान्यता प्राप्त थी। दूसरा ज्यों-त्यों मान्यता पाने के स्तर तक पहुच पाया था। एक वह जिसकी इमेज भारतीय साहित्य के सारे क्षितिजों पर चमकने वाली थी। दूसरे की प्रतिभा ज्यादा हुआ तो सम्प्रत मराठी साहित्य में उठकर सीमित रह जायेगी भले ही वह स्वयं एक ही भाषा के घेरे का स्वीकार न करता हो। दोनों में समानता की अपेक्षा असमानताएँ ही ज्यादा थी।

मैं एक बार फिर कमलेश्वर की ओर खिंच रहा था। वह व्यक्ति जीवन और साहित्य के बंधनों को विराट मानवीयता के रूप में स्वीकार करता था। वह लेखक केवल हीनता के मायाजाल में फँसा हुआ नहीं था। साहित्य की सृजनात्मकता को स्वीकारते हुए उसने इस मानवीय भौतिक सूत्र को अपनाया है कि साहित्य निर्माण का केन्द्र बिन्दु केवल आदमी ही हो सकता है। वह इस सूत्र की उपासना करता है। आदमी आदमी के झगड़े मे आदमियत का पक्ष लेकर वह उसमें घुस जाता है। तिथि तो याद नहीं, पर उसके बाद 'सारिका' के एक अंतर्राष्ट्रीय कथा-अंक के संदर्भ में मैंने कमलेश्वर का अभिनन्दन करते हुए तथा लेखकों के कथा शिल्प के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए कमलेश्वर के पास प्रकाश के हाथों एक पत्र भिजवाया था। तुरन्त ही कमलेश्वर का एक सुन्दर सा हिंदी मे टाइप किया हुआ पत्र मिला। उन्होंने फ़ुरसत मे मुझे मिलने बुलाया था। मेरे पत्र का रचना शिल्प संबंधी भाग उन्होंने 'सारिका' के अगले अंक के पाठकीय में भी छाप दिया था। हाँ, मैंने जो पत्र लिखा था वह हिंदी में ही था। मैं थोड़ी बहुत हिंदी बोल लेता हूँ लिख भी लेता हूँ अब तो कमलेश्वर से मिलने जाना अनिवार्य सा हो गया। मेरा मन कमलेश्वर से एक दीर्घ, पर अंतरंग बातचीत करने के लिए उथल पुथल करने लगा।

पर उससे पहले कमलेश्वर का पढना आवश्यक था। मेरा पन्ना' तो मैं नियमित रूप स पढा करता था। एकाध कहानी भी पढ रखी थी। पर नयी कहानी पर उनकी पुस्तक जब हाथ लगी थी तब उसे पढने का समय ही नही निकाल पाया था। उन दिनो कमलेश्वर की एक कहानी 'बदनाम बस्ती' पर बनी प्रायोगिक फिल्म की बडी चर्चा थी, उस फिल्म का विशेष आमन्त्रण भी मिला था पर उसे देखन नहीं जा सका था। इतना ही क्यों, बदनाम बस्ती' की मूल कहानी भी मैंने नही पढी थी। तब उन्ही के साहित्य पर मैं उनसे क्या बातचीत करता। इसी बीच मैं अपनी पूर्वी अफ्रीका की यात्रा क दौरान दो महीने के लिए मारीशस रह आया था। मारीशस न मुझे मोह लिया था। मारीशस क उपन्यासकार तथा कवि आनन्द भरत के यहा मेरे सम्मान म मारीशस लेखक सघ' की ओर से एक समारोह आयोजित किया गया था। वहाँ मारीशस के उपन्यासकार उदित गोपाल से भेंट हुई। गोपाल की और मेरी खूब दोस्ती जम गयी। 'सारिका' म अभिमन्यु अनत की हिन्दी रचनाएँ छपती रहती थी। मारीशस म उमसे भेंट न हो सकी थी। हिन्दुस्तान म मिलन की आशा थी।

एक दिन मुबई मराठी साहित्य सघ स बुलावा आया। मारीशस के कुछ लखक सघ म निमत्रित थ। शाम को जल्दी जल्दी म मैं वहा पहुँचा। मराठी लेखको के एक छोटे से सम्मेलन म मैंने अभिमन्यु अनत तथा उदित गोपाल का परिचय कराया। सभा समाप्त हुई तो गोपाल मुझसे बोला—

'तुम हमारे साथ चलो।'

कहाँ ?' मैंने पूछा।

कमलश्वर के यहा हमारा खाना है।

पर मैं कस चलू ?" मैंने सकोच से पूछ तो लिया, पर मन म कमलेश्वर क घर जाने की इच्छा और भी बलवती हो आयी। मारीशस के ये दोनो लेखक सरकारी महमान थ। मुम उनसे भी दिल खोलकर बातें करनी थी। मन कडा करक मैं सरकारी गाडी म बठ गया और गोपाल तथा अभिमन्यु क साथ कमलश्वर के फ्लट पर पहुच गया। कुछ गिन-चुने विद्वान ही उस पार्टी म आमत्रित थे। महफिल खूब रग लायी। उस दिन मैंने कमलेश्वर को घरेल वातावरण म देखा। वहाँ व मुम बहुत खुले खुले व स्वतत्र दिखे। उनकी पत्नी भी सहज भाव से मेहमानो का स्वागत कर रही थी। भोजन शुद्ध भारतीय पद्धति का था और सामिष था। बुफे पद्धति स हम उसक साथ न्याय कर रह थ। आपस म बोलत जाते परिचय करत जात। कमलश्वर क घर की हवा मारीशस मय हो गयी थी। सभी बढिया मूड म आ गय थ। कमलश्वर के पढन लिखने के कमरे म आधुनिक ढग की आलमारिया म किताबें ही किताबें सुन्दर ढग से सजी हुई थी। अन्दर गाव तकिया की भारतीय बठक दखकर मैं खुश हो गया। सात समुदर पार के अपन मित्रा स

पुर्नमिलन का अवसर होते हुए भी मेरा सारा ध्यान कमलेश्वर की ओर ही था। उन्होंने पाजामा पहन रखा था। ऊपर पीला कुरता था। पैरों में चप्पलें थीं। विद्युत प्रकाश में उनके चेहरे पर बदलते भाव स्पष्ट दिखायी दे जाते थे। वे जब खिलखिलाकर हँसते तो ऐसा आभास होता था, मानो चारों तरफ मदिरा के प्याले हाथों से छूटकर एक दूसरे से टकराकर झनझना गये हों। और वे अगर किसी गंभीर मुद्दे पर बोलने लगते तो अकस्मात अंतर्मुखी हो उठते। फिर मस्ती और हँसी के फव्वारे क्षण-आध क्षण में ही रुक जाते और एक गहन गंभीर सन्नाटा कमरे में छा जाता। कमलेश्वर किसी भी विचार विमर्श, संवाद अथवा बातचीत में 'डॉमीनेट' नहीं करता था, वरन कभी-कभी तो जरूरत से ज्यादा धीरे और 'एपालाजिटीकली' बोलने लगता था। पर फिर भी सारे संभाषण की और सब सुननेवालों के अंतमन पर अगर कोई छाप पड़ती तो वह कमलेश्वर की ही थी। वह मनुष्य सामान्य से भी सामान्य था। पर असामान्य से असामान्य भी था। गरीब से गरीब था पर अमीर से अमीर भी था। कमलेश्वर के घर उस रात बीतने वाले हर क्षण में मुझे रवीन्द्रनाथ की एक उक्ति याद आती रही। रवीन्द्रनाथ ने 'उन लोगों' को उद्देशित करते हुए कहा था—'उनकी गरीबी उनकी अमीरी में होती है हमारी अमीरी हमारी गरीबी में है।' कमलेश्वर गरीब थे या अमीर? खानदानी थे या रईस? 'प्रास्परस' थे या अफ्लुएंट? मेरे मन में ये प्रश्न यों ही उठ रहे थे और मैं उन्हें बार-बार झटक रहा था। उस समय कमलेश्वर नाम के उस मनीषी व मनस्वी व्यक्ति के और भी निकट पहुँचने की बड़ी इच्छा हो रही थी। मेरा अंतःकरण कह रहा था कि उसकी व मेरी पटरी खूब जमेगी।

एक अलौकिक मस्ती में अपने मारीशियन मित्रों के साथ मैंने उस दिन कमलेश्वर से विदा ली। मेरा प्रवास कमलेश्वर की दिशा में प्रारंभ हो गया था और उसमें गति आने लगी थी। लगता था कि कमलेश्वर नाम का कोई टापू है और उस पर रहने के लिए मुझे जाना है। मैं भी एक टापू बन जाने वाला था। वैसे हम दोनों ही मारीशस के टापू से बँध चुके थे। यह बंधन जुल्म का नहीं, आनन्द का था।

इसके कुछ दिनों के बाद ही की बात है। मराठी के नये उत्साही तरुण प्रगतिशील लेखकों ने 'तरुण मित्र मंडल' या ऐसे ही किसी नाम से एक संस्था स्थापित की थी। कवि कार्यकर्ता सतीश कालसेकर उस संस्था के प्रमुख थे। यह तरुण मंडली हिंदी के कवि विचारक श्री गजानन मुक्तिबोध की 'एक साहित्यिक की डायरी' को पढ़कर उससे प्रभावित थी। गजानन मुक्तिबोध के संपूर्ण साहित्य का अध्ययन यह मंडली बड़ी भावना और बुद्धि से करती थी। गजानन मुक्तिबोध बीमार थे। फिर उनकी मृत्यु की खबर मिली तो हम सब घायल और व्याकुल हो उठे। मुक्तिबोध का काव्य संग्रह 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' बाद में हम लोगों के हाथ आया। 'तरुण

मित्र मडल' की बठकों म उनका पारायण किया जाता था। सतीश ने वह पुस्तक मुझे लाकर दी (कोई भी नया ताजी अन्तर्प्रांतीय अथवा अतर्राष्ट्रीय पुस्तक तत्काल उपलब्ध करा देने वाला सतीश जसा लेखक शायद ही कोई दूसरा होगा)। तरुण मित्रमडल ने गजानन मुक्तिबोध की पहली पुण्यतिथि मनाने का निर्णय किया। स्थान तय किया गया मुबई मराठी ग्रन्थ सग्रहालय की नयागाव शाखा। ग्रन्थ सग्रहालय की इमारत मे दूसरी मजिल स प्रकाशक वामनराव भट इस शाखा का सचालन करते है। वहा उसका पुस्तकालय है। उस छोटे से लम्बे कमरे म सभा भरी। उन दिनो की सारी सतप्त कवि-मडली, पत्रिकाओ के सपादक तरुण अध्यापक प्राध्यापक कलाकार वहाँ मौजूद थ। कमरा ठसाठस भरा हुआ था। मैं भी वहाँ एक वक्ता के रूप म उपस्थित था। कमलेश्वर मुख्य अतिथि थ। शाम का समय था। पर एकदम शाम भी नही थी। दोपहर गुजर चुकी थी। मैं, सतीश आदि कुछ लाग गट पर कमलेश्वर के इतजार म खडे थे। ग्रन्थ सग्रहालय के दरवाजे से गुजरते हुए उस फुटपाथ पर हमेशा भीड लगी रहती है। फुटपाथ के साथ गुजरनेवाले रास्ते पर तो हमेशा मेला-सा लगा रहता है। भालू के नाच से लेकर जडी बूटी बचने वालों तक और जादू टोना करने वालों स लेकर कलाबाजियाँ दिखाने वालो तक के करतब वहीं रास्ते पर ही चला करते है। सामने ही कोहनूर मिल है। उसकी छुट्टी होती तो उसके कमचारी धडाधड बाहर आते। दूसरी पारी के कमचारी ठठ के ठठ अन्दर जाने के लिए दरवाजे पर खडे रहते हैं। रास्ते पर भीड ही भीड है। कोई यहाँ से वहा आ जा रहा है कोई यो ही बीच म रुक गया है तो कोई यो चल रहा है कि रास्ता न हुआ कोई भूल भुलैया हुआ। ऐसी भीड म ठीक समय पर कमलेश्वर अपनी छोटी सी फिएट को फुटपाथ से ला भिडाते हैं। उस स्थान के लाग तितर बितर हो जाते हैं, फिर जम जाते है। कमलेश्वर हमेशा जसे लगे—कुरता पाजामा और केशो का वही उच्छ खल रग ढग। होठो पर हँसी और सिगरेट। आँखो म अजीब गहनता। कमलेश्वर औपचारिक बातें बोलते हैं तब भी उनकी बोली म एक रौनक और आद्रता रहती है। लगता है, मानो उनके होठो स शब्द मूक होकर निकलने स इनकार कर देते हैं। मराठी भाषा की तरुण मडलों गजानन मुक्तिबोध स नाता जोड रही थी उन्हें अपनी श्रद्धाजलि द रही थी। व उनके जीवन से लेखन से प्रेरणा ले रहे हैं, यह जानकर कमलेश्वर प्रभावित हुए हैं यह बात उनके भाषण के हर शब्द से प्रगट हो रही थी। गजानन मुक्तिबोध की कविता ब्रह्मराक्षस की रचना तथा उसके पीछे की बीसवी सदी के मानवीय जीवन की दारुण व्यथा की प्रतीकात्मकता पर गहन व अपूर्ण भाषण हुए। मुक्तिबोध की कविताओ का पाठ हुआ। महामानव महाकवि मुक्तिबोध वहाँ उपस्थित प्रत्येक जन के अतमन म पठ गये।

मुझे लगता है कि उस दिन मित्र-गोत्र के मराठी लेखकों के बीच हिन्दी के इस

श्रेष्ठ लेखक का जिसने नये विचारों को स्वीकार किया है पहली बार आगमन हुआ था। मराठी तरुणों ने कमलेश्वर को संपूर्णत स्वीकार कर लिया था। उन दिनों कमलेश्वर की एक कहानी पर बनने वाले प्रयोगात्मक चित्र 'फिर भी' की खूब चर्चा थी। मराठी म उन्हीं दिनों स्थापित हुए प्रभात चित्र मंडल' की ओर से चित्रा टाकीज़ म रविवार की एक सुबह विशेष आमंत्रितों तथा मंडल के सभासदों के लिए उस चित्र का एक प्रदर्शन हुआ। यह भी कहा गया था कि उस दिन कमलेश्वर भी वहाँ उपस्थित रहेंगे। मैं बडी उत्सुकता से वहाँ पहुँचा। पर कमलेश्वर नहीं आये। चित्र में नवीनता थी। उसके चित्रीकरण म उपयोग में लाये गये नये तंत्र आँखों को भाते थे। कथा वस्तु का प्रभाव अंतर्मन म गहराई तक जाकर असर करता था। कुछ तांत्रिक कमियाँ भी थी जो अनायास ही ध्यान आकर्षित कर लेती थी। कमलेश्वर अपनी कहानी पर बने इस चित्र पर चार शब्द बोलेंगे इसी आशा से मैं पहुंचा था। पर कमलेश्वर नहीं आये।

गजानन मुक्तिबोध को आदरांजलि अर्पित करने के लिए बुलायी गयी सभा समाप्त हो गयी थी। दिल्ली के एक और तरुण लेखक कमलेश्वर के साथ आये थे। उस सभा को देखकर और वक्ताओं को सुनकर वे भी किंचित से भावविभोर हो उठे। शाम हो गयी थी। कमलेश्वर वार्डन रोड की ओर जाने वाले थे। मुझे नाना चौक अपने भाई के यहाँ जाना था कमलेश्वर ने मुझे लिफ्ट दी। मैं तो इस अवसर की फिराक म ही था। कमलेश्वर ड्राइव कर रहे थे या कि उनका ड्राइवर था कुछ याद नहीं आता, पर हम लोग पीछे बैठे थे। कार चली तो हमारी बातचीत भी चल पडी। मैंने कमलेश्वर से वे प्रश्न पूछ डाले जो मेरे मन म घुमड रहे थे।

आप उस दिन फिर भी' के शो म क्यों नहीं आये ? ऐसा घोषित किया गया था कि आप आयेंगे।

मुझे आना ही नहीं था मैंने कहलवा भी दिया था।"

'फिर भी उन्होंने आपके आने की घोषणा कर दी ।

'यह वे जानें ।'

'पर न आने का कारण ? आपकी कहानी पर बनी इस फिल्म की बडी चर्चा है।'

'मैं उस चर्चा म सहभागी नहीं हूँ ।'

मुझे लगा कि कमलेश्वर कुछ एक्साइट हो रहे हैं। उनका धूम्रपान सतत चालू था। फिर वे हो बोलने लगे—हिंदी के साथ साथ बीच बीच म अंग्रेजी मे।

'मुझे जो कुछ कहना था, वह सब उन्होंने डिस्टार्ट (distort) करके रख दिया। फिर मैं ऐसी फिल्म के उत्सव म क्से जाता ? आफ आल द पीपुल आई विल बी द लास्ट वन टु आस्क माई करेक्टर टु एक्सेप्ट (of all the people I will

be the last one to ask my character to accept) सर्वोदयवाद ! उन लोगो ने यही दिखाया है मेरा और सर्वोदय का क्या सम्बन्ध ? उन्होने मेरे मार्क्सवादी दृष्टिकोण को तोड मरोडकर सर्वोन्यवाद म ढाल दिया ऐसी फिल्म को मैं अपनी फिल्म कसे मान सकता हूँ हिन्दी फिल्म ससार म यही होता आया है मुझे लगा था कि स्वय को वास्तववादी मानने वाले नये विचारो के चित्र निर्माता व कलाकार मेरी कहानी के साथ न्याय करेंगे पर उनसे भी मुझे निराशा ही हाथ लगी।"

कमलेश्वर सचमुच गुस्से म थे। उनकी वाणी म सात्विक सताप व्यक्त हो रहा था। उसके बाद मैंने उन्हें अन्याय के विरुद्ध सतप्त होते हुए कई बार देखा, परन्तु एक बात हमेशा ध्यान मे रहनी चाहिए कि गुणी भारतीय लेखको के लेखन के आगे न जान कितनी सीमाएँ बँधी रहती हैं वह किसी भी भाषा का भी लेखक क्या न हो। सुलह का प्रश्न हो नान-कन्फॉर्मिज्म का प्रश्न हो व्यवस्था को अस्वीकार करन का प्रश्न हो बगावत का प्रश्न हो लेखको को आवश्यक सुविधाएँ देने का प्रश्न हो अथवा उनकी आर्थिक स्थिति सुधारने और उन्हें सुरक्षा देने का प्रश्न हो भारतीय लेखक की अवस्था बडी विचित्र और दयनीय होकर रह गयी है जिसे देखकर क्रोध आ जाना स्वाभाविक है। ऐसी परिस्थितियो म भी कमलेश्वर अपन आपको बिलकुल अलग, अपनी स्वतत्र पहचान और समाज के लिए पोषक और उसे प्रगति की ओर ले जाने म समय अपनी क्रातिकारी प्रतिभा को बनाये रखत हैं। उनके यही गुण मुझ सदैव उनकी ओर खीचत रहत हैं। इसी बीच मराठी में दलित साहित्य के क्रातिगामी आन्दोलन ने रूप ले लिया। अपने 'रिवोल्ट तथा अपनी आइडेंटिटी को प्रस्थापित करने म उसे सफलता मिलने लगी। उन्हीं दिनों सारिका क एक से एक बढकर समातर कहानी विशेषाक निकलने लग। मराठी के प्रगतिशील साहित्य तथा दलित साहित्य के क्षेत्रों म समातर कहानी पर उपयोगी और गभीर चर्चाएँ होने लगी। इस सिलसिले म कमलेश्वर स बार-बार मिलने का अवसर आन लगा—चर्चाएँ होने लगी।

तीन वष हान का आये दलित तरुण साहित्यकारो की दलित पैंथर' नाम की क्रांतिकारी सस्था स्थापित हो चुकी थी। उन्होने अमरीकी ब्लैक पैंथर' से स्फूर्ति ली। बम्बई के वरली क्षत्र म दलित पैंथर' ने हडकम्प मचा दिया। बी० डी० डी० चॉल के दलित युगा-युगा के अन्याय के विरुद्ध उठ खडे हुए। उस आन्दोलन को (जसा कि हमशा ही एस आन्दोलनो क साथ होता है) आपो आप राजनतिक स्वरूप मिल गया। अपनी वतमान एतिहासिकता प्रस्थापित करन क पश्चात इस विद्रोही प्रवृत्ति और प्रखर आग की ओर लोगो का ध्यान तो गया पर कालान्तर म वह बुझन लगी। इस आन्दोलन का एक नेता था नामदेव ढसाल, जो दलित कवि व लेखक था। सच बात तो यह है कि 'दलित साहित्य' के आन्दोलन

के सहारे ही दलित पेंथर जसी आक्रामक परन्तु समाज-परिवतन की निश्चित दिशा की ओर बढ़न म समय और सक्रिय सस्था का जन्म हुआ था इधर मराठी के प्रस्थापित साहित्य म अनेक वर्षों से एमी कोई घटना घटी भी नही थी। हाथो मे कलम रखनवाले लेखकों ने अपनी कलमो को रख दिया और अन्याय के विरुद्ध झगडने के लिए समरागण म उतर पडे। इतिहास और क्रान्ति को साक्षी रखकर उन्होंने बडी श्रद्धा से मानवता पर बलिदान हो जाने की कसम खायी। इस 'दलित आन्दोलन' का उठाव केवल बम्बई शहर मे ही हुआ हो यह बात नही है। उसकी गूज हो ना करते सारे भारत म और फिर भारत से बाहर निकलकर सारे विश्व म फल गयी। प्रावदा' से न्यूयाक टाइम्स तक ने इस आन्दोलन की चर्चा की। दलित पेंथर के तरुण नेताओं से की गयी भेंटो के विवरणों से पाश्चात्य और पूर्वीय पत्रिकाओ के स्तम्भ रग जाने लगे। दलित साहित्यकारों की विद्रोही और आदमी पर केन्द्रित कविताओ के अनुवादो की माँग बढने लगी। शोषित पीढी के दलित और मेहनत मजदूरी करने वाले समाज म साहित्य के जरिये किस प्रकार चेतना जागरित की जा सकती है मराठी दलित साहित्य इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। उसकी ध्वनि प्रतिध्वनियाँ विश्व की सभी भाषाओ के साहित्य से उठने लगी। कालान्तर म दलित पेंथर आन्दोलन तो शान्त हो गया पर उस आन्दोलन का साहित्यिक स्वरूप मिटाया न जा सका। उलटे समय के साथ साथ उसकी कलाए और भी उज्ज्वल होने लगी। और उनकी चमक विचारको का ध्यान आकर्षित करने लगी। फिर बम्बइ म बसने के लिए आये हुए कमलेश्वर अपवाद कसे रह जाते ?

दलित साहित्य का उदगम भल ही मराठी साहित्य म हुआ हो परन्तु वह मराठी साहित्य तक ही सीमित नही रह पाया। उसका प्रभाव अन्य प्रान्ता पर भी पडने लगा। इसी बीच तरुण पत्रकार व विचारक दिलीप पाडगावकर आठ नौ वर्षों तक पेरिस म टाइम्स आफ इण्डिया के प्रतिनिधि रहकर भारत लौटे। वे पुन टाइम्स अफ इण्डिया के स्टाफर बने। उनके साथ डेरिल डिमोट थे। उन दोनो के पास टाइम्स म रविवारीय सस्करण का काम था। १६७३ के नवम्बर महीने के एक रविवारीय अक म दिलीप के सपादकीय के साथ दलित साहित्य पर विशेष सामग्री छपी। इस अक की लाखो प्रतियाँ सारे भारतवष म देखते-ही देखते बिक गयी। टाइम्स के कार्यालय म उस अक की माँग करते हुए तार पर-तार और चिटिठया पर चिटिठयाँ आने लगी। भारत के बाहर एशिया यूरोप तथा अमरीका म इस सस्करण का बडा स्वागत हुआ। नामी गिरामी समाचार-पत्रों म उस पर टिप्पणियाँ छपी। पाश्चात्य पत्रिकाओं के भारतीय प्रतिनिधियों ने दलित साहित्यिकों क घर जा आकर उनसे भेंट की। दलित साहित्य का अपूव ख्याति मिली और वह विश्व साहित्य मे गिना जाने लगा।

इस रविवारीय सम्करण पर चर्चाएँ करने के लिए टाइम्स' की इमारत मे कमलेश्वर के चेंबर म मरी तथा अय दलित साहित्यकारा की बठकें होने लगी। वरली के बी० डी० डा० चॉल से बीच-बीच म दगा की खबरें आती रहती थी। नयागाव की बी० डी० डी० चाल तक दग की चिनगारियाँ फल गयी। बम्बई जैसी प्रगतिशील महानगरी म भी दलिता पर अत्याचार होते थे। उनके घरों पर पत्थर फेंके जात थे। आग के शोल फेंके जाते थे। पुलिस की गाडिया और पुलिस की टुकडिया रात दिन चौकसी रखती। चौबीसो घटो का कफ्यू लगा दिया जाता। वातावरण म गरमी थी। स्थिति विस्फाटक होती जाती थी। बम्बई म टेलिविजन प्रारम्भ हो चुका था और कमलेश्वर हर मगलवार को अपना लोकप्रिय कायक्रम 'परिक्रमा' प्रस्तुत करने लग थे। कमलश्वरजी ने अपने दो कायक्रम केवल दलित साहित्य' पर चचा करने के लिए रखे। एक कायक्रम म कमलश्वर के साथ बाबूराव बागूल और मैं था। कमलेश्वर की शुद्ध हिन्दी और कमलश्वर जा के ही शब्दा म, बागूल और मरी बम्बइया हिन्दी म वह कायक्रम बडा लोकप्रिय रहा। दिल्ली, अमतसर और कश्मीर टी० वी० स भी वह कायक्रम प्रक्षपित किया गया। दलित साहित्य और दलित साहित्यिको' का परिचय प्राप्त करने के लिए मराठी भाषा की सीमा उलाघकर अय भाषा भाषिया के पत्र कमलेश्वर के पास आने लग। कमलश्वर क घरपर प्रगतिशील साहित्यकारो और दलित साहित्यकारा की बठकें होने लगी। गम्भीर चर्चाएँ होती। हिन्दी के समातर कहानी लखका और साहित्यकारा के दल भी, समान दृष्टिकाण होने के कारण उन बठका म शामिल हान लग। डा० जितेन्द्र भाटिया, राम अराडा, हृदयलानी, सुदीप, श्रीमती सुधा अराडा, कभी मनुकरसिंह कामतानाथ इब्राहीम शरीफ सिंधी क ए० जे० उत्तम विष्णु भाटिया कच्छी के मनुभाई पाँची गुजराती के चन्द्रकात बक्षी आदि भी कभी कभी शामिल हात। कमलेश्वर और श्रीमती कमलेश्वर ता रहत ही। इन बैठका म दलित साहित्य' और समातर सोच पर सारिका के विशेषाक निकाले जान पर विचार विमर्श हुआ। इन अको का सोद्देश्य सयोजन किया गया। कामा का बँटवारा कर दिया गया। रात रात भर 'दलित और समातर साहित्य पर विश्व साहित्य के सन्दभ म चर्चाए होती। कमलेश्वर के घर ये बठकें खूब जमती। शाम को सात साढ सात तक हम सब एक एक कर कमलश्वर क मकान पर इकटठे हा जात। खाने-पीन की सारी व्यवस्था घर म मौजूद रहता। कभी-कभी क्या हाता कि हम सब ता इकटठे हैं और कमलश्वर गायब! और कभी कमलश्वर बठे हैं अपन अध्ययन कक्ष म, धूम्रपान करत हुए सबकी राह दख रहे है और हम सब गायब! घुटन टककर झुके हुए लिख रहे हैं। रात बढ्ती जा रही है पर कोई आ हा नहीं रहा है। और फिर एक-एक कर महफिल जमा हुई नहीं कि आधी रात कब हा गयी किसी का

एहसास भी न रहता। हम सब चर्चाओं मे ऐसे रम जाते कि सब कुछ भूल जाते। ऐसी चर्चाएँ! ऐसी रातें! ऐसी महफिलें! ऐसी गोष्ठिया! इन बैठको म कमलेश्वरजी की एक विशेष मुद्रा रहती जो हम सभी को बहुत भाती। दानो घुटने जमीन से टिके हुए है घुटनो पर हाथ टिके हुए ह और वे बाल रहे ह। लगता है कि बोल चुकन के बाद नमाज़ पढने लगेंगे। करीब-करीब राज़ाना जमनवाली बीस-पच्चीस लोगो की इन महफिलो म कमलेश्वर का कभी उतावला हात नही देखा गया। वे सबों को बोलने का अवसर दते है। जितेन्द्र भाटिया नोटस लते रहते हैं। किसी भी लेखक का महत्वपूण मुद्दा टाले बिना कमलेश्वर चर्चाओं का सकलन तयार करते जाते हैं और फिर अपनी शली म उसे सबक सामन पेश कर दते हैं। उनके प्रस्तुतीकरण म दढता होती है पर दुराग्रह ज़रा भी नही होता। सारी सभा पर कमलेश्वर का अधिकार रहता है। सभा जीत लेने का तो कोई सवाल ही वहाँ नही उठता था। बस काशिश होती थी उसे समद्ध और सफल करने की। बेमतलब की भूमिकाओ म समय बरबाद करने की जगह सही और सुदर बोलना कमलेश्वर की दूसरी विशिष्टता है। एक विशेषता कमलेश्वर म और है और वह है उनका खिलाडी स्वभाव और श्रेष्ठ विनोद। अपने सामने और आसपास बठे प्रत्येक व्यक्ति का वे सूक्ष्म और सही सही निरीक्षण करते जाते हैं और जब वे किसी को अपनी कोहनी मार दते हैं या छोटा सा मज़ाकिया जुमला कम दते हैं तो उनकी कोहनी या जुमले की वह मार भी बडी मीठी महसूस हाती है। सावजनिक सभाआ के समान आपसी सवादा म भी उनके बोलने का लहजा उत्कृष्ट होता है। इसलिए अत्यन्त गम्भीर और जटिल साहित्यिक अथवा सैद्धान्तिक चर्चाओं की ऊब आपो आप नष्ट हा जाती है उत्सुकता पदा होने लगती है चर्चा म आनन्द आने लगता है। राम अरोडा और कमलेश्वर की बातो म बडा ही मजा आता है। वे सुनन याग्य होती हैं। राम एक अजीब साहित्यिक जीव है। ऊँचा एकहरा बदन लम्बा आवपक चेहरा गौरवण ढीली ढाली पोशाक बिखरे हुए बाल, सवेदनाशील पतल हाठ और आँखो पर मोटा चश्मा किंचित सा कामिक पर गम्भीर अधिक। कुछ चिडचिडा सा भी। राम अराडा पुरुष कमलेश्वर की मानो आध्यात्मिक प्रवृत्ति है। अपनी मस्ती म और आदत क अनुसार वह नगे परो सारी बम्बई पैदल नाप आता है। सफदपोश लेखक की कल्पना मे ही न आय एस किसी व्यक्ति का अनाखा उध्वस्त उपेक्षित व उग्र ससार वह अपनी आँखा स दख आता है और अपनी सवेदनाआ में उसे उतार लता है और फिर कागज़ पर कागज़ भरकर अपनी कहानी लिख डालता है। और फिर कहानी पूरी हुइ नही कि वह कमलेश्वर की तरफ दौड पडता है। अन्दर से वह जलता रहता है पर बाहर एकदम शान्त ठडा माना कोई ज्वालामुखी हा। अपनी कहानी पर कमलेश्वर की प्रतिक्रिया जानन की उसम उत्सुकता होती है। और अगर उस

उनकी प्रक्रिया नही मिल पायी ता वह उनसे लडने को तैयार रहता है। वह उन्हें अपनी कहानी वापस ले जाने की धमकी भी देता है। पर कमलेश्वर शाति से मुस्कराते हुए राम भाइ की पाडुलिपि हाथ म उठा लेते है। उन्ह नटखटपन सूझना है। वे हाथा म तौलकर उसका वजन रखत हैं, फिर उसे सपादक की 'ट्रे' म रख देत हैं। महीन दो महीन, कभी कभी छ महीने बाद भी जब राम अरोडा की वह कहानी प्रकाशित होती है तब कमलेश्वर के नम्र विनोदी शब्दो मे—'उसकी स्थूल मोटी फफस चरबी भरी चिन्ताजनक हालत' बहुत सुधरी हुई नजर आती है। वह छरछरी चपल पतली और लचीली हो जाती है। उनकी यह बात सुनकर राम किचकिचाता है चिढता है उठापटक करता है। सत्याग्रह भी करता है पर आखिर कमलेश्वर की ही शरण जाता है। इसलिए अगर किसी बठक म राम अरोडा नहीं हुआ तो कमलेश्वर को भी उस बठक मे चन नही पडता। और हम लोगा को भी।

अप्रल १९७५ का सारिका का अक कमलेश्वर ने 'समातर कहानी विशेषाक ७ के अतगत दलित साहित्य (मराठी) आम आदमी के आसपास आज की रचनाए' की घोषणा करके निकाला। फिर अगले महीने मे 'भारतीय दलित साहित्य समातर कहानी विशेषाक ८ के अतगत निकाला। अप्रल अक मे मेरा पन्ना मे कमलश्वर लिखत ह — आज का मराठी दलित साहित्य समातर साहित्य ही की तरह जब सम्यक परिवतन की बात करता है तो मात्र साहित्य की चिताओ तक सीमित नही रह जाता—क्योंकि दलित साहित्य उन शपथों स आगाह है जो हर युग म ली गयी है। आज दलित साहित्य का यह उन्मेष मात्र साहित्यिक घटना नहा है। यह ऐतिहासिक घटना है और यह इतिहास का सम्पूण, वैज्ञानिक और विराट सामाजिक पुनमूल्याकन करना चाहता है ।'

आग उन्हाने लिखा— दलित साहित्य उन निरपक्षतावादियो, सौंदयवादियो और निराशावादियो के लिए भी एक उत्तर है जो यह मान बठे हैं कि साहित्य की कोई सक्रिय भूमिका अब नही रह गयी है। इसी साहित्य ने दलित पथर जैसे लडाकू सामाजिक और राजनीतिक आन्दालन को जन्म दिया है।' इतना लिखकर 'मेरा पन्ना' को समाप्त करते हुए कमलेश्वर लिखते हैं सूचना के लिए इतना कह देना जरूरी हागा कि मराठी अपने देश की जबान है महाराष्ट्र अपने ही देश का एक राज्य है और दलित साहित्य अपने हा देश के इस राज्य की भाषा मराठी मे लिखा जा रहा है।'

समातर और दलित साहित्य पर सम्यक विचार करते हुए सारिका' के 'मई' के मेरा पन्ना मे उन्हाने लिखा है

और तब आज का लखक क्राति की मानसिकता के निर्माण की भूमिका तक जाकर रुक जाता है—या रोक दिया जाता है। आज का लेखक जब स्वय ही

सामान्य जन है तो वह मानसिकता के निर्माण के आगे की अपनी भूमिका को अनिर्धारित कैसे छोड सकता है ? और यही पर आज का वह सबसे नाजुक सवाल आता है कि क्या साहित्य रचनात्मक रहते हुए भी क्रांति की भूमिका (अन्य लडाकू वर्गों के साथ) निभा सकता है ? इसका सीधा और साफ उत्तर यही है कि मानसिकता निर्माण के आगे की भूमिका को भी सिर्फ सही रचनात्मक साहित्य ही निभा सकता है। वह साहित्य, जो क्रांति के निर्णय की मात्र उत्तेजना से व्याप्त है निर्णय क्षुब्धता की प्रतीति तक जाकर रुक सकता है उससे आगे वही साहित्य सक्रिय हो सकता है जो (क्रांति को एक तात्कालिक निर्णय भर न मानकर) क्रांति के प्रति और पक्ष में लिये गये मानसिक निर्माण' के दायित्व को क्रांति के प्रति सम्पूर्ण आस्था में तब्दील करता है। यथार्थ के अनुभव से अर्थ अर्थ से विचार विचारों से निर्णय निर्णयों से मानसिकता निर्माण और मानसिकता से आगे क्रांति में ही (अन्ध आस्था को नहीं) वैज्ञानिक आस्था का केन्द्रीकरण। जाहिर है कि ऐसी रचना की व्याख्या रचना के प्रश्नों से नहीं की जा सकती। ऐसी रचना की व्याख्या सिर्फ राजनीति के सपाट प्रश्नों से भी नहीं की जा सकती। क्योंकि ऐसी रचना क्रांति के राजनीतिक परिवर्तन में शामिल होते हुए सांस्कृतिक परिवर्तन की महत्त्वपूर्ण भूमिका भी अदा करती है। क्रांति के प्रति वैज्ञानिक आस्था से समर्पित रचना ही विषमता मूलक सांस्कृतिक सवालों के सर्वव्यापी राजनीतिक उत्तर दे सकती है और प्रतिक्रिया प्रेरित राजनीतिक सवालों के सर्वव्यापी सांस्कृतिक उत्तर। और जब मनुष्य को आर्थिक सामाजिक के साथ-साथ अपने सांस्कृतिक उत्तर भी साहित्य से मिलने लगते हैं तब शपथों और संकल्पों को व्यवहार में आते देर नहीं लगती। इसी भूमिका की तैयारी में दलित और समांतर साहित्य लगे हुए हैं।''

कमलेश्वर जी के संदर्भ में बताना जरूरी है कि पहला समांतर प्रसंग ११ जून, १९७१ को बम्बई आई० आई० टी० के हॉस्टल के एक कमरे में घटा। 'समांतर' विचारों के तरुण कहानी लेखकों का जो दल वहां उस दिन इकट्ठा हुआ था उनके नाम काफी महत्त्वपूर्ण हैं—कमलेश्वर कामतानाथ मधुकर सिंह रमेश उपाध्याय जितेन्द्र भाटिया इब्राहीम शरीफ से० रा० यात्री सुदीप, सतीश जमाली राम अरोडा, दामोदर सदन, आशीष सिंहा विभुकुमार अरविन्द निरुपमा सेवती श्याम गोविन्द सनत कुमार मदुला गर्ग श्रवणकुमार प्रभात कुमार त्रिपाठी शीला रोहेकर रवीन्द्र वर्मा राधेश्याम शाहिद अब्बास अब्बासी, चन्द्रकान्त मित्तल महेश चन्द्र वद्योपाध्याय और एल० एन० दास। इस बैठक का उद्देश्य था 'कहानी पर विचार करना कहानी लेखन में अपनी भूमिका और अपनी आइडेंटिटी को खोजना। बैठक का नेतृत्व कमलेश्वर के पास था। एक तो वे उस नयी कहानी युग के सर्वश्रेष्ठ कथाकार थे और दूसरे 'सारिका' के रूप

म वे एक नये विचार और नयी प्रेरणा लेकर उभरने वाले उत्साही और ज्वलत साहित्यिक मच के प्रवतक व सगठक थे। यह कहा जाय तो गलत न होगा कि लगातार तीन दिनो तक चलने वाली उस महफिल म नयी कहानी' का युग समाप्त होकर समातर कहानी का जमाना प्रारम्भ हुआ। इसका अथ यह नही कि हिंदी साहित्य से 'नयी कहानी' एकदम समाप्त हो गयी और 'समातर कहानी न जडें जमा ली। साहित्य म ऐसा कुछ अपन आप नही हो जाता। सजनात्मक साहित्य म होने वाले परिवतनों के बीच एक सक्रांति काल आता ही है। पहले नयी कहानी के आलोचक थे आज समातर कहानी के कटु आलोचक भी मौजूद हैं। इन आलोचकों का कहना है कि 'नयी कहानी हो चाहे समातर कहानी उनम यथाथवाद को कुछ अधिक ही स्थान दिया जाता है। 'दलित साहित्य' की कहानियो अथवा कविताओ की समालोचना करते समय इन टीकाकारो का मत समातर कहानी' पर दिय गये उनके मतो स भिन्न नही है। पर ये टीकाकार जानबूझ कर अथवा स्वाथवश, या फिर तथाकथित कलामूल्यो क आग्रहो के कारण यह बात आसानी स भूल जात हैं कि समातर कहानी', 'दलित कहानी अथवा प्रगतिशील कहानी अपन भौतिक और मानवाधिष्ठित आशयो को लेकर ही अवतरित होती है या यो कहे कि कहानी के इस रूप म और उसम वर्णित वास्तविकता म सपूण अद्वत होता है। सघषहीन द्वत का व्यक्तिवादी भूमिका स खुद का खोखला अयशून्य, सम्प्रदायवादी तथा परतन्त्र, दिखावटी, तात्रिक व सौन्दयमूल्या से बँधकर यथास्थिति का पोषण अथवा मनुष्य को पराभूत करन वाल साहित्य या सोच से यह कहानी आज क आदमी को बचाकर रखती है। इसका यह अथ कदापि नहा है कि समातर' दलित' अथवा 'प्रगतिशील' साहित्य कला व सौंदय मूल्यो की अवहेलना करता है। यह साहित्य प्राचीनतम लोक कला व लोक साहित्य की प्रेरणा से सतत निर्माण होते रहने वाले कला व सौन्दय मूल्यो का आदर करता है और उसे स्वीकार करता है। उसी मे स जनवादी, मानववादी वास्तववादी वस्तुनिष्ठ नय वतमानकालीन कालसापेक्ष, चैतन्यमय कला और सौदयतत्वो का निर्माण होता है। इस प्रकार भिन्न परतु जन जीवन स जुडा हुआ जो स्वतन्त्र सौदयशास्त्र, कलाशास्त्र व साहित्य निर्मित होता है वह निरन्तर मूल्यगभ और मूल्यप्रसव होता है।

इसीलिए समातर प्रसग के अवसर पर एकत्रित होनेवाले प्रतिबद्ध हिंदी कहानीकारो न साहित्य और कहानी के साहित्यविश्व का साक्षात्कार देने वाले जो विचार समय समय पर प्रस्तुत किय व ऐतिहासिक महत्व के सिद्ध हुए। कमलेश्वर ने प्रतिबद्धता व समातर कहानी के सदभ म विचार करने के लिए जो साहित्य-सूत्र रखे, वे निम्न प्रकार सकलित किये जा सकते हैं

(१) आज का आदमी प्रताडित और पीडित महसूस करता रहता है। इस

स्थिति ने हमारे समय के आदमी के व्यक्तित्व को भयानक रूप से लपेट लिया है। आर्थिक, सामाजिक, नागरिक, पारिवारिक, वैयक्तिक—किसी भी सदर्भ म सामान्यजन अपमानित होन के बोध से मुक्त नही है।

(२) यह अपमान बोध कभी-कभी हममे हीनता का भाव पैदा करता है और कभी आक्रोश को जन्म देता है। पर यह सच है कि तनाव आज के आदमी के अस्तित्व का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है।

(३) व्यक्ति रूप मे अपमानित और समूह रूप म दलित—यह है आज क मनुष्य की सच्चाई! और यही से लेखक एक नया तवर अख्तियार करता है

(४) मैं हर उस कथाकार को अपना समकालीन मानता हूँ जो अपने समय के समातर सोच और लिख रहा है, तथा हर उस कथाकार को अस्वीकृत करता हू जो अपने समयगत सत्यो मे कटा हुआ है।

(५) प्रतिबद्धता को एक सलग्नता या सपूर्ण सबद्धता (involvement) ही माना जा सकता है। सामान्य आदमी क प्रति और पक्ष म! जिसम हम सब भी शामिल है

(६) सबद्धता समातर स्थितियो म जीने की शत भी है और लखन क सदभ म अनुभव के अर्थों का समाहित करके लिये गये रचनात्मक निणयो की एक अनिवाय परिणति भी (इधर की रचना इसका प्रमाण भी है)।

(७) यह सबद्धता हर स्तर पर है क्योकि मामूली आदमी हर स्तर पर भय छल शोषण अपमान, दमन स आहत है। मूत व अमूत तकलीफो से ग्रस्त है। हम इसी वग के प्रति और इसी वग से सबद्ध है।

(८) हमारी यह सबद्धता ही हम वाम बनाती है। और यह वाम ही हम हमारी जिन्दगी, हमारे यथाथ, हमारे सपूर्ण सघष और हमारे लखन के द्वारा हम वैज्ञानिक मार्क्सवाद क स्रोत से जोडता है।

(९) हमारी आस्था जीवन म है, और उस जीवन को वहन करन वाला केन्द्र है—मनुष्य! मामूली आदमी! और उसी से सबद्ध हैं हमारे लेखन और जीवन की आकाक्षाएँ।

(१०) इसलिए वाम निरन्तर जीवित रहने वाली एक सहज और अनिवाय सच्चाई है। जब तक सम्पूर्ण मनुष्यता गलत इतिहास गलत सामाजिक व्यवस्था से मुक्त होकर अपने लिए समाजवादी रचना नही कर लती और साम्यवाद क स्तर तक नही पहुच जाती तब तक वाम ही हमारा पथ है। वाम चिरतन है! उसक बाद मुक्त मनुष्य को राजनीति की जरूरत ही नहीं रह जायेगी!

(११) आज के लेखक के सामने सबस बडी समस्या सकटग्रस्त आदमी की समस्या है। रूपवादी अस्तित्व क सकट की समस्या नही।

(१२) आज की कहानी ने सबसे बडा काम भी यही किया है कि लेखक को उसकी गगनचुम्बी मीनार' से उतार कर धरती पर खडा कर दिया है। अब उसकी नजर ऊपर स नीचे की ओर नही जाती है। ऊपर प्रतिष्ठापित होने वाले 'लखकों' का युग अतीत के अधसागर म खो चुका है। आज क लेखक की नियति है—मामूली आदमी की नियति !

(१३) यह आदमी (साधारण जन) कभी कभी नहीं जान पाता है कि वह एक बडे सघष का धारक है और उसी का वाहक भी बन गया है ! क्योंकि सघष म शामिल होते हुए भी वह सस्कारो स बुरी तरह ग्रस्त रहता है

(१४) हम (लखक) यदि हथियार हैं तो जटिल और विषम परिस्थितियो म फँस मनुष्य क हथियार हैं, अवसरवादी राजनीति क औजार नही। साहित्य ऐसी मौक्रापरस्त राजनीति क मातहत नहीं लाया जा सकेगा। लखक की भूमिका हमशा प्रतिपक्ष की ही रहगी और हर गलत व्यवस्था म, शोषण क सदभ मे लेखक और खासतौर स नया लखक अपने काम का इतिहास के यथार्थिक विश्लेषण के आधार पर निश्चित और तय करगा—उस कोई बना बनाया काम नहीं दिया जा सकता।

(१५) लखक के अनुभव की बातें तो होनी हैं पर हम यह क्या भूल जात हैं कि पाठक के अपन अनुभवों का भी एक ससार है। कहानी इन दोनों अनुभवो की पूरक है या सेतु या इन्ह(गलत और ग्रस्त अनुभव ससार को)ध्वस्त करन वाली एक सच्चाइ !

(१६) आदशवादी पाठक के दिमाग म कहानी की साथकता ही अलग है। वह समय-बोध स चालित न होकर शाश्वत मूल्य बोध स ग्रस्त रहा है। अत जब आज की समय सापेक्ष कहानी एक अलग अनुभव लेकर आती है तो एक समातर ससार निर्मित करती है—वह ससार जो आदशवादी, बोधवादी, सनातनवादी, मनोरजनवादी, मानसिकता स एकदम अलग है। वह यथाथवादी ससार है !

(१७) जहाँ तक प्रयोग करन का प्रश्न है, वह लखक हमशा करगा, इन प्रयोगो क द्वारा ही लेखक रचनात्मक परिवतन उत्पन्न करता है और उस शून्य को भरता है जो रचना और समय क बीच आता रहता है। प्रयोग प्रयोग क लिए न होकर समय के बदले तेवर की अभिव्यक्ति क लिए ही हो सकत हैं।

कमलेश्वर का 'साहित्य विचार प्रतिबद्धता व समय सापेक्ष मानव केन्द्रित यथार्थवाद का क्रांतिवादी दृष्टिकोण है। यह विचार कलावादी राजमहलो के भ्रामक व मोहक मायावाद म फसने से इनकार करता है। सारिका क एक के बाद एक सरस और समृद्ध समातर कहानी विशेषाको का अपने सशक्त सपादन द्वारा पेश करके उन्होंने उक्त दृष्टिकोण को सिद्ध कर दिया है। पहला 'समातर

प्रगत' बम्बई मे घटा। चार पाँच वर्षों मे ही 'समातर' क्षेत्र कमलेश्वर की प्रेरणा से विस्तृत हो उठा। मराठी के प्रगत तथा दलित साहित्य का भी उसम समावेश होने लगा। 'सारिका' के सातवें और आठवें 'समातर कहानी विशेषाक' तो मराठी साहित्य का ही अपण कर दिये गये। कुछ अधूरेपन और कुछ अतिशयोक्तियों के बावजूद सारिका के इन अको का विचारो का प्रतिनिधित्व व समातर प्रतीकात्मकता प्राप्त हुई इसम शक नही। बम्बई म दलित साहित्यकारों समानर साहित्यकारो प्रगतिशील साहित्यकारो की आज तक न जाने कितनी महत्त्वपूण गोष्ठियाँ कमलेश्वर ने आयोजित कर डाली है। दो गोष्ठियाँ तो माटुगा लेबर कम्प म स्थित बाबूराव बागूल के कमरे म हुइ और खब जमी। मजदूरो के इलाके म केशव मेश्राम के घर गोष्ठियाँ हुइ जहाँ पानी भर जाता है। बठन वही भी क्या न जम, कमलेश्वर अपनी फिएट लेकर पहुँच जात है। बाबूराव बागूल के कमरे म पहुँच कर खुशी खुशी चटाई पर पालथी मारकर बठ जात है। कमरे म बठे अय साहित्यकारो से भिचक्कर बठने म व नही हिचकत। फिर कुछ बठकें वर्सोवा म जितेन्द्र भाटिया के फ्लट म गयी। दो-तीन गोष्ठियाँ कमलेश्वर के वर्सोवा वाले फ्लट म भी हुइ जहाँ वे जाजिमा और चटाइयो पर आधी रात तक खूब जमी। एक रात कमलेश्वर अपन निजी जीवन और मजबूरियो म बीते वक्त की यादो म खो गय—वे दिन जो उनके लिए भयानक सघष के दिन थ। कमलेश्वर जसे दृढ प्रवृत्ति के व्यक्ति को उस रात मैंने पहली बार भाव विह्वल होते हुए देखा। खामोशी छा जाती है और वे एक छोटे से भावुक बच्चे के समान चुप हो जाते है। उस क्षण कमलेश्वर के भीतर का पिता पति मित्र लेखक विचारक क्रान्तिकारी, कलाकार खुद ही हार जाता है। उनकी अवस्था अपने ही द्वारा रचे गये, 'समुद्र मे खोया हुआ आदमी' जसी दयनीय हो जाती है। उस दिन हम पहले पहल उनके वर्सोवा के फ्लट पर गये थ। समुद्र के किनारे को पार कर यह इमारत खडी की गयी है। अँधेरी रात थी। पिछले दरवाजे की खिडकी खुली हुई थी। और बस! काल चक्र मानो समुद्र का रूप लेकर घूम रहा था ताण्डव नत्य कर रहा था।

यह अदभुत दश्य दखकर हम सभी समुद्र म खोये हुए' हो गये कमलेश्वर स हमने कहा। उस समय व पीला कुरता और लाल रग की लुगी पहन हुए थे। उसी रात कमलेश्वर द्वारा ड्राफ्ट किय गय समातर दलित व प्रगत' साहित्य के आदोलन के घोषणा पत्र पर हमने परिपूण चर्चा की। उसम आवश्यक सुधार किय और मजूर किया। फिर उस पर हस्ताक्षर किय। इस सबम आधी से ज्यादा रात कब गुजर गयी पता भी न चल पाया।

फिर हम लोगो की एक समातर गोष्ठी जितेन्द्र भाटिया के ब्रह्मचारी मित्र अरुण रहालकर के कमर पर वर्सोवा म हुई। कमलेश्वर तब तक पहुच नही थ। रात के करीब आठ बज चुके थे। उस दिन की गोष्ठी म 'दलित साहित्यकारो

की सख्या ज्यादा थी। हम सबो का आग्रह था कि कमलेश्वर जरूर आयें। इस आग्रह के पीछे कारण भी वसा ही था। कच्छ के कहानीकार व लेखक डॉ० पाँधी आये हुए थ। १९७५ की समातर परिपद बिहार स्थित राजगीर म नवम्बर म भरी थी। १९७६ की परिषद क लिए डॉ० पाँधी न आमत्रण दिया था। आमत्रण तो दिल्ली, काठमाडू, त्रिवेंद्रम और हरियाणा से भी मिल थ। पर कच्छ का आमत्रण स्वीकार कर लिया गया था। उसी परिषद की योजना तैयार करन क लिए डॉ० पाँधी स्वय आये थे और 'समातर' मण्डली के साथ बठकर उस रात वह योजना बनने वाली थी। साठ की आयु पार कर जान पर भी डॉ० पाँधी चत य की मूर्ति हैं। आखिर रहालकर के यहाँ बठक शुरू हुई और तभी देखा कि कमलेश्वर बदहवास दौडते भागते चले आ रहे हैं। हमशा की तरह 'एपॉलाजी' व्यक्त करत हुए, सिगरेट का फ़व्वारा उडाते हुए वे कमर म घुस और बूट, पैंट, बुशशर्ट समत फर्श पर पालथी मारकर बठ गय। इस बम्बई के महाअरण्य म व कहाँ कहाँ भटकत रहे होंगे किन किन से मिले होंगे, न जान कौन-कौन-स बचे हुए काम निपटाकर आये होंगे, कितने नय काम पूरे करके या उन्ह पूरा करन का वचन देकर वे आय होंगे। और अभी भी उन्हें जल्दबाजी थी। मानू और मानू की माँ उनका इतजार कर रही होंगी। फ्लैट पर पहुँचना था। इधर समातर परिषद का कमिटमट भी उतना ही महत्त्वपूण था। कोई दुबल मन स्थिति का व्यक्ति होता तो एसी परिस्थिति म परेशान हो जाता, अधमरा-सा हो जाता। पर कमलेश्वर नाम का वह आदमी अपन मन की छतरी ताने एक तार पर कसरत-सी करत हुए अपना वजन सम्भाल, कभी खडा है तो कभी बैठा है कभी एक पर पर खडा है और दूसरा पैर हवा मे झूल रहा है और कभी चीटी की चाल से आग बढ रहा है तो कभी बेतहाशा भाग रहा है। रात बढती जा रही थी। दीवाल पर लटकी घडी हर आत क्षण-जाते क्षण का हिसाब रखती हुई घनघनाती जा रही थी। सभा समाप्त हुई तो आधी से बहुत ज्यादा रात बीत चुकी थी। अब बस कहाँ स मिलेगी? दूर-दूर से लोग आये हुए थे। अधेरी स्टेशन तक कस पहुँचा जाय! मत फिक्र कीजिये जी 'कमलेश्वर सबको निलामा दत हैं। फिर उनकी फिएट के दरवाज़े खुलते हैं। अन्दर जो जसे समा सके, समाने लगता है। बचे हुए रुक जात ह। उन्हें दूसरे फेरे म स्टेशन तक पहुँचाने के लिए कमलेश्वर लौटेंगे ही। मैं उस कमलेश्वरी लीला को नींद से भरी अपनी मिचमिची आँखो से देखता रहता हूँ। किसी जमाने म 'पढरी नाथ महार' बन थ वसा ही अनाथा का नाथ कमलेश्वर आज ड्राइवर बना है और आधी रात को वर्सोवा से अधेरी स्टेशन तक गाडी ड्राइव कर रहा है। वर्षा हो तूफ़ान हो अधेरा हो समय हो, कुसमय हो यह व्यक्ति सबो क हिस्से म बराबर-बराबर आता है। किसी का न कण भर कम, न कण भर ज्यादा।

इस कमलेश्वर का 'खोना' धातु से बड़ा प्रेम है। 'खोया', खोयी, 'खो गया' आदि शब्द उनके कथा उपन्यासों में कितनी बार आते हैं यह देखने की बात है। उनकी एक कहानी का नाम ही 'खोयी हुई दिशाएँ' है। मुझे वह कहानी बहुत पसन्द है। इस कहानी का पात्र चन्दर और कोई नहीं, खुद कमलेश्वर ही है यह कहने के लिए किसी ज्योतिषी की आवश्यकता नहीं होगी। हो सकता है कि वह कमलेश्वर नाम के लेखक की आत्मकथा का एक अंश ही हो। चन्दर इसी प्रकार भटक भटककर रात को घर लौटता है। निर्मला खाना बनाकर उसकी प्रतीक्षा करती है। वह आता है तो पत्नी उसका स्वागत करती है। उसे खाना खाने को चलने को कहती है पर उसे खाने की इच्छा नहीं है। सुबह भी वह आधा पेट खाकर ही गया था। निर्मला को उसके मूड्स का ज्ञान है। वह सो जाती है। रात को दो के घंटे बजते हैं। चन्दर बिचक कर उठ बैठता है। वह अपनी दिशाएँ भूल गया है। उन्हें खोजता है। अकेला, एकाकी फिर अचानक गहरी नींद में खोयी हुई निर्मला के दोनों कंधे झकझोर कर उठाता है और घबरायी हुई आवाज में उससे पूछता है— मुझे पहचानती हो निर्मला? ' उस कहानी के पाठक के मन में उसके प्रति सहानुभूति उपजती है और वह कहने-सा लगता है— चन्दर को उसकी दिशा मिल जाय! पर कमलेश्वर के बारे में यह कोई नहीं कह पायगा! क्यों? क्योंकि दिशा भूले हुए आदमी की कहानी वे भले ही लिखते हों पर वे स्वयं अपनी व अपने साहित्यसृजन की दिशा भूल नहीं हैं पा चुके हैं।

यह व्यक्ति खोया हुआ' तो है ही नहीं वह दृढता से बँधा हुआ भी है। यह बंधन कमलेश्वर नाम के एक आम आदमी को संसार के किसी भी भाग के आम आदमी से युगों युगों से बाँधे है।

तरुण और उभरते हुए साहित्यिकों के लिए वह एक दिशा बोध करानेवाला और भारतीय लेखकों के लिए एक प्रगतिशील पथ का निर्माण करने वाला सृजन समृद्ध व समय सापेक्ष दीप स्तम्भ है!

•

बम्बई दीपावली

दीवाली की रात को नये वर्ष की शुभकामनाएँ देते हुए बम्बई में एक लखपति ने कमलेश्वर से कहा—कमलेश्वर जी! आज रात अपने घर का दरवाजा खुला रखियेगा लक्ष्मी जी आयगी!

कमलेश्वर ने कहा—दोस्त आप मेहरबानी करके अपने घर का दरवाजा भी खोल दीजियेगा, नहीं तो लक्ष्मी जी कैसे निकल पायेंगी!

•

सुदीप

कमलेश्वर समय का साक्ष्य

श्रीमान जी ! यह इनसान रेलवे-गार्ड बनना चाहता था

जी हाँ रेलवे-गार्ड ही—और वह भी किसी मेल, एक्सप्रेस या पैसेंजर गाडी का नही (सुपरट्रेन्स का तो सवाल ही नहीं उठता, क्योंकि तब तक वे चली नहीं थी और इस इनसान ने उनकी उन दिनों कल्पना भी नहीं की थी वस भी यह आदमी कल्पना में उतना विश्वास नहीं रखता जितना अपनी खुली आख के सामने की जिन्दगी मे) इसके सपनों की वह रेलगाडी जिसका यह इनसान गार्ड बनना चाहता था पन्द्रह-बीस मील प्रति घटा की गति से चलने वाली कोई मालगाडी थी।

और मालगाडी भी कोई ऐसी-वैसी छोटी मोटी नहीं ऐसी गाडी जिसमे कम-से कम दो-ढाई सौ डिब्बे हो—और एकदम आखिर मे इसका केबिन हो। गाडी मे जुड़ा हुआ फिर भी उससे अलग थलग—जिसके पहिये तो इंजन की रफ्तार से मेल खा रहे हो पर इंजन के धुएँ और भाप आवाज और सीटी से जिसका कोई सम्बन्ध न हो—और कोई सम्बन्ध हो भी तो सिर्फ इतना-सा जितना इस एहसास को जिन्दा बनाये रखने के लिए काफी हो कि आग दूर कहीं कोई है कोई अमूर्त-सा अस्तित्व कोई धडकन कोई हलचल—पानी और आग और गति का कोई स्रोत—उस स्रोत के पहरेदार दो-तीन लोग—ड्राइवर फायरमैन इंजिन की हेडलाइट बायलर मे धधकते हुए लाल-पीले शोले पर धुंध और धुआं नहीं धुंध और धुआं इस इनसान को कभी पसन्द नहीं आया।

और अपने केबिन के बारे मे यह इनसान क्या चाहता था ?

जी नहीं इस इनसान ने सुख सुविधाओं की कल्पना कभी नहीं की थी—वैसे भी सुख-सुविधाओं की कोई सीमा नहीं है। इस इनसान ने यही सोचा था कि गार्ड वाले इसके काले बक्स मे जिस पर सफेद से इसका नाम लिखा होगा (किसी शहर का नाम नहीं) इसकी जरूरत की चीजें होगी—कुछ जरूरी कपडे, एक

पुलओवर, एक लम्बा कोट, दो जोडी मोजे, मफलर, बूट, चप्पलें, एक थर्मस, एक गिलास चिटिठ्यां लिखने के लिए कागज कलम स्याही और ढेर सारी किताबें, एक कनस्तर बिस्किट—क्रीम नग, कुरकुरे, जायकेदार, पौष्टिक क़िस्म के बिस्किट नही, उस किस्म के बिस्किट जो अग्रेज़ी राज के ज़माने म लाम पर हिन्दुस्तानी फौजियो को दिय जात थे जो काफी सख्त हात थ किसी भी तरह की चर्बी के बगर बनाय गये बहुत कम मीठे, और जिन्हे चबाते वक्त दाँतो को काफी कसरत करनी पडती हो।

और इस इनसान की मालगाडी का रास्ता भी कोई मामूली रास्ता नही था। इसकी यात्रा भी कोई छोटी मोटी यात्रा नही थी। इस इनसान की मालगाडी की यात्रा हिमालय के पार मानसरोवर के आसपास से शुरू होती थी—बर्फ स घिरी उस झील स जिसमे राजहसो के निर्दोष झुड अपनी गर्वीली उन्नत गरदनें और अबोध आँखें लिये शिशुओ की तरह कल्लोल करत थे—और इसका अन्त होता था कन्याकुमारी के आसपास—और अन्त भी नही—वहीं स वापस यात्रा की शुरुआत हो जाती थी।

और इस यात्रा के बीच म क्या था? कश्मीर की बर्फ से लदी आखो को अपनी ठडक और दूधिया सफेदी से बाध लने वाली पहाडियाँ सफेद और चिनार के पेड केसर की क्यारियाँ दूर तक जाती एकाकी पगडडिया, नीचे के इलाके के लम्बे चौडे मैदान, रेत नदियाँ पुल यहाँ-वहाँ मस्ती से चारा चरते गाय भसो के झुण्ड किसी पोखर के पास टील पर बठा कोई चरवाहा लडका—अपनी मस्ती म खोया बाँसुरी के सुरो से अपने माहौल को सगीतमय बनाता—विन्ध्याचल की पहाडिया और उनके बीच पलाश के अग्निमय फूलो से दहकती घाटियाँ केरल के नारिकेल कुज और इस यात्रा के रास्ते से छिटके वो प्रदेश जिनके अपने ही जादू भरे आकर्षण थे अपनी धडकती हुई जानदार दुनिया थी।

पर श्रीमान जी आप जानते है यह इनसान क्या सोचता था? यह इनसान क्या चाहता था? इसके सपनो मे यह यात्रा कसे चलती थी?

बहुत अजीब था इस इनसान का सोचना और चाहना और सपने देखना, और बेहद अजीब था इसका वह सफर यह सोचता था मालगाडी के आख़िरी छोर पर जुडे अपने केबिन म वह अकेला बठा होगा—धरती के इस छोर स उस छोर तक फले खूबसूरती भरे नजारे इसकी आखो के सामने से फिसलते चले जायेंगे। केबिन की खिडकी म बठा या दरवाज़े से टिका, रलिंग पर कुहनियाँ टिकाये आधा झुका खडा यह इस आसपास की दुनिया को नजरें भर भरकर देखता चला जायेगा थक जायेगा तो किताब पढने लगेगा किताब स थक जायेगा तो चिटिठ्यां लिखने लगेगा, और उन्हे यो ही हवा म उडा देगा या किसी भी स्टेशन

पर लगे लेटर बॉक्स म डाल देगा, या किसी नदी म बहा देगा। भूख प्यास महसूस होगी तो बिस्किट खा लेगा, फ्लास्क म से पानी पी लेगा और गाडी आगे बढती रहेगी केबिन भी गाडी के साथ चलता चलगा गाडी कही भी किसी भी समय, किसी भी पहाडी के मोड पर छोटे से स्टेशन पर किसी भी बियाबान जगल म या किसी भी बडे स्टेशन के बाड मे खडी हो जायेगी नीद आयेगी तो यह सो जायेगा जागगा तो जाने सवेरा होगा या आधी रात मुमकिन था गाडी किसी जगल के छोटे से स्टेशन पर पूरी रात रुकी रहती और उस बियाबान रात के अँधेरे म—दूर गाव मे, बस्ती म या जगली झोपडियो म टिमटिमाते दिय की लौ उसे अपनी गर्मी और प्रकाश मे बाँधे रहती पर इस इनसान का इससे कोई सरोकार न होता वक्त किसी धार की तरह उसकी आखो के सामने बहता रहता और यह इनसान इस धार के पार कही देखता रहता ।

आप मुसकरा रहे हैं श्रीमानजी मैं जानता हूँ आपकी इस मुसकराहट का रहस्य क्या है। शायद आपको अग्रेज कवि शली की याद आ गयी है। लगता है आपने उसके बारे म पढा है। शायद उसका वह बिंब आपके मन म कौंध गया है जिसम वह किसी सरिता के किनारे फैल पसर खेत म कविताओ की किताब लिये बैठा (या लेटा) पढता रहता है—प्यास लगती है तो सरिता का पानी पी लेता है भूख लगती है तो जकेट की जेब म ठुसी डबलरोटी का टुकडा निकालकर कुतरने लगता है। डबल रोटी खत्म हो चुकी होती है तो पहले तो मन मारे रहता है फिर उठकर बस्ती की ओर भाग जाता है किसी भी बकरी से दो-चार पाव रोटियाँ लेता है उन्हे जेबो म ठूसता है और वापस सरिता के किनारे वाले खेत की ओर लौट जाता है ।

पर एक फर्क है श्रीमानजी शैली नाम का रोमैंटिक अग्रेज-कवि आत्महता था—और कमलेश्वर नाम का यह भारतीय कथाकार आत्महता न कभी हो सकता था, न कभी रहा है और मैं दावे के साथ कह सकता हूँ यह आत्महता कभी हो भी नही पायगा यह आत्मजयी और कालजयी भी नही है लेकिन जिन्दगी को अपने ढग से भरपूर ढग से उसे अपनी बाँदी बनाकर रखने और जीने का हुनर इसे आता है ।

और श्रीमान जी आपकी मुसकराहट जो धीरे धीरे हँसी म बदलती जा रही है उसका कारण भी मैं समझ रहा हूँ। मैं जान रहा हूँ कि आपके मन म क्या है ।

श्रीमान जी, आप सोच रहे हैं कि मालगाडी का गार्ड बनने की इच्छा रखने वाला यह इनसान लेखक कैसे बन गया? और लेखक ही नही एक सफल पुरुष कैसे बन गया—इतना सफल कि लोग इसके बारे म तरह-तरह की बातें करते हैं। ये जो आपके सामने की मेज पर आरोपो और शिकायतो का इतना

बडा पुलिंदा रखा हुआ है तय है यह किसी ऐसे आदमी के बारे म तो हो नही सकता जो अनाम किस्म का जीव हो !

आपका सोचना बिलकुल सही है श्रीमानजी पर एक और बात भी सही है—और वह सही बात यह है कि आप इस इनसान के बारे म बहुत कुछ जानने के बावजूद कुछ नही जानते है। आप मेरी इस बात से कतई नाराज न हों—मैं अपने इन शब्दों के लिए आपसे माफी भी चाहता हूँ—पर मेरे माफी माग लेने से भी बात की सच्चाई म कोई कमी नहीं आ पायेगी ।

आप हैरान है न कि यह इनसान, जो मालगाडी का गाड बनने का सपना देखा करता था इतना नामी कैसे हो गया ? वह मालगाडी क्या हुई ? इसकी यात्राएँ क्या हुई ?

मैं आपको अभी बताता हूँ, सब बताता हूँ यही सब कुछ बताने के लिए तो मैं आपके सामने हाजिर हुआ हूँ—ताकि आप ही फैसला कर सकें कि कहाँ क्या गलत हुआ है और कहाँ क्या सही ?

श्रीमान जी मुझे यह भी पता है कि आपके मन म सबसे बडा द्वन्द्व इस बात को लेकर चल रहा है कि आपको कुछ तथ्यो म विरोधाभास नजर आ रहा है। सही है। बात ही कुछ ऐसी है। आपने यह तो जान ही लिया है कि इस इनसान का सपना क्या था— और यह बात आपकी समझ म आ नही रही है कि मालगाडी का गाड बनने की इच्छा रखने वाला यह आदमी इतना सपन्न कैसे हो गया कि उस अपनी जिन्दगी म किसी तरह की कोई कमी ही नजर नही आती। यह जो इनसान आज एक बहुत बडी कपनी की बहुत नामी पत्रिका का बहुत चहेता सपादक है जिसके पास अपना घर है गाडी है फ्रिज है रेडियोग्राम है टी० वी० है जिसके पास बीसियो सूट हैं जिसकी स्टडी मे डेढ टन का एयरकडीशनर लगा हुआ है क्योकर इस कदर सतुष्ट नजर आता है, कि दुनिया भर की तकलीफें सामने आने के बावजूद यह विचलित नही होता इसके चेहरे पर एक शिकन तक नहीं आती ! यह सब कैसे हो गया ?—यह सवाल आपके सामने नहीं है। आपको यह सवाल दश दे रहा है कि ये सब क्योकर हो गया !

श्रीमान जी इस सवाल का पहला जवाब तो यह है कि यह सवाल ही गलत है—गलत ही नहीं गलीज भी है क्योकि इसके पीछे हमारी वह रूढ सास्कारिकता काम करती है—कि जो सघर्षशील है उसे फटहाल और विपन्न होना ही चाहिए ।

और दूसरा जवाब यह है श्रीमान जी कि आप अपनी मध्यवर्गीय मानसिकता के सताये और मारे हुए तो है ही आपके वर्ग के अन्य बहुजन भी आपको पूर्वाग्रहो से बाधे हुए है—वरना आपके सामने ये शिकायतें न होती ये आरोपो का पुलिंदा न होता।

और तीसरा जवाब यह है, श्रीमानजी, कि गाडी का रूप इस इनसान ने चाहे बदल लिया हो पर यात्रा का रूप इसने आज भी नही बदला है—बल्कि इसके रूप म विस्तार ही हुआ है।

आप मुस्कराइए नही श्रीमानजी मैं जानता था आपकी प्रतिक्रिया यही होगी आप कृपा करके मुसलाइए नही क्योकि आपके मुसलाने से यह बात अधूरी ही रह जायगी और बात अधूरी रह गयी तो इसका गलत अर्थ निकाल लिया जायगा और बात का अर्थ अगर एक बार गलत निकल गया तो उस गलत को सही करने मे ही आधी सदी गुजर जायेगी ।

मैं बहकना और बात से भटकना नही चाहता, श्रीमानजी इसीलिए मैं फिर वही लौटकर आता हूँ, जहा से मैं शुरू हुआ था।

तो सवाल यह है कि मालगाडी का गार्ड बनने का सपना देखने वाला यह इनसान लेखक कैसे बन गया ?

यह तो आप भी जानते हैं श्रीमानजी कि इस दुनिया म आज तक तो कोई ऐसा आदमी पैदा हुआ नही है जिसके मन म अपने कार्यकारी जीवन का सवाल आया हो और उसने सोचा हो कि वह लेखक बनेगा दरअसल यह स्थिति ही बडी अजीब है कि आदमी डाक्टर इजीनियर अध्यापक क्लर्क, दूकानदार बनने की बात सोचता है पर वक्त है कि उसके हाथ मे कलम थमा देता है कि लो भई यह तेज चुभती हुई नोक है इसे अपने खून म डुबोओ और अपने खून की कमाई खाओ अगर कमाई होती हो तो वरना खून भी देते रहो और धीरे धीरे मरते भी रहो ।

पर आदमी लेखक भी क्या यो ही बन जाता होगा श्रीमानजी ? मेरी बात आपको बडी लग सकती है। पर सच्ची बात छोटी भी हो तब भी बहुत बडी लगती है—और वह छोटी-सी बात यह है, श्रीमानजी कि लेखक होना ताजिंदगी अपने कधो पर एक क्रास ढोना है।

आप फिर मुसकरा रहे हैं। आप मुसकरा रहे हैं और उस परिंदे की ओर देख रहे हैं। मेरी बात सुन रहे हैं और उन विरोधाभासो पर गौर कर रहे हैं जो आपको अपने सामने दिखायी दे रहे हैं। कहाँ यह सफलता यह सतुष्टि, यह बेफिक्री और कहाँ यह क्रॉस को ढोते रहने की बात ? यही सोचकर मुसकरा रहे हैं न आप, श्रीमानजी ?

श्रीमानजी फिर छोटे मुह बडी बात कहने जा रहा हूँ। पर अपनी सफाई मैं मुझे यह भी कह लेने दीजिये। उम्र मे मैं इस इनसान से दस साल छोटा हूँ—जाहिर है यह इनसान मुझसे दस साल पहले पैदा हुआ था—लेकिन इस इनसान के जिन्दगी का मैं साक्षी भी रहा हूँ। इस नाचीज-खाकसार को इस ख़ाकसार की अति व्यस्त जिन्दगी म से बहुत सारे क्षणों का साथ प्राप्त

होता रहा है। (वसे तो यह इनसान वक्त के छोटे छोटे सैकड़ो हिस्सों मे बँटा हुआ है—यह शायद इतना ज्यादा बँट गया है कि इसके पास अपने लिए भी बहुत कम वक्त बच पाता है—लेकिन उस अपने छीने हुए वक्त मे से भी बहुत-सा वक्त मैंने इससे छीन लिया है। यह भी मुमकिन है कि मेरे संग को इसने किसी गैर या दूसरे का संग न माना हो अपने आपका ही संग माना हो) और ऐसे क्षणों मे—कई बार लम्बे घंटों म—यह आदमी अपनी पुरानी डायरियों की तरह मेरे सामने खुलता रहा है इन पन्नो का खुलना किसी तरतीब या तिथिक्रम से नहीं हुआ है जब भी जो पन्ना सामने आ गया उसी की तहरीर पढ ली गयी जरूरत पडी तो उसमे भी फ्लशबक या फ्लश फारवड मे चले गये लेकिन अत हमेशा एक ही जगह पर हुआ—वतमान पर कि आज क्या है इस घडी क्या है। इस व्यक्ति ने उन चीजों का जिक्र बहुत कम किया है जो इसे नही मिली या जो इसे हासिल हो सकती थी पर इसने हासिल नही की, जो हासिल हुआ है, उनकी बातें इसके पास बहुत ह और उसकी भी एक खास वजह है यह हासिल इसका अकेले का नहीं है वह इसके आसपास के लोगों का माहौल का, वक्त का, सब का साझा हासिल है वसे भी आप जानते ही होंगे श्रीमानजी, अभाव और गैर हासिल व्यक्ति के अपने होते हैं उसके हासिल और उपलब्धियो पर सब का अधिकार हो जाता है।

तो श्रीमानजी उन निजी क्षणो के साक्ष्य म से ही मैं कुछ बातें आपके सामने रख रहा हूँ - य वो बातें हैं जिन्हे मैंने इस इनसान के मुँह से उन क्षणो म सुना है जब यह अपने आपसे बात कर रहा होता है (जो नही श्रीमानजी यह इसकी बड़बड़ाहट या विक्षिप्त प्रलाप नही है। प्राय यह इनसान जब दूसरो से बात कर रहा होता ह तब अपने आपसे भी बात कर रहा होता है। दूसरो से तो यह बात करना भी इसीलिए है कि जो कुछ वह सोच रहा है उस पर दूसरो की राय जान सके—या अपने विचारो की पुष्टि कर सके।) या फिर मैं उन चीजो को आपके सामने रखूँगा जिन्हे मैंने उन क्षणो म जब मैं इसके साथ था, घटित होते हुए देखा है।

तो सुनिये श्रीमानजी ।

आपने कभी काली पीली लाल आँधियाँ देखी हैं? शायद देखी भी हों! काली आँधी आती है तो आसमान पर अँधेरा ही अँधेरा छा जाता है (वसे विशाल टिड्डी दलो के आने पर भी काली आँधी का सा आभास होता है), पीली आँधी आती ह तो आसमान म भूरी धूल ऐसे छा जाती है जसे सारी धरती की हल्दी उड उड़कर आसमान पर पहुँच गयी हो—लेकिन सबसे भयानक आँधी होती है लाल या खूनी आँधी। तब आसमान म ऐसी भयावह लाली छा जाती है जसे पूरे नरक के लालमुख प्रेत एक साथ आसमान म नाचने लगे हो और धरती

को निगलने के लिए आतुर हो ! ऐसे वक्त म दादियाँ, नानियाँ क्या कहती है, जानते हैं श्रीमानजी ? वे अपन पोता नातिया के न ह न ह हाथो मे चाकू या छुरियाँ थमा देती ह और कहती हैं—जहा हवा का बगूला हा, इस चाकू से उसे काट दा खूनी आँधी भाग जायगी जहाँ चाकू चलेगा, वहा खून जरूर टपकेगा और वह खून उन खूनी प्रता का हागा जो इनसाना का खून चुसन आये है। न ह बच्च बडी आस्था स चाकू या छुरी चलात हैं श्रीमानजी, पर खून कभी नही टपकता—उन्हें लगता है उनक चाकू या छुरी मे काट की सामर्थ्य नही है—वे कुद हैं या उनक फल मे जग लगा है (यही उन्हें बताया जाता है—कफियत के रूप म) पर उन काली लाल पीली आधिया के गुजर जाने के बाद घोर सन्नाटा छा जाता है हर तरफ दमघोटू खामाशी होती है और आसमान मे अपना चारा ढूढत हुए गिद्धा के झुड दिखायी दने लगत हैं। इनसान की भोली आस्था और अबोध विश्वास को नाचने क लिए आतुर गिद्ध !

उन घडिया म कसा लगता है श्रीमानजी ?

जानना चाहत ह ता इस इनसान से पूछिये श्रीमानजी—क्योकि इसका जन्म इन काली पीली-लाल खूनी आधिया क इलाके म ही हुआ था। उत्तर प्रदश के एक सुनसान से कस्बे—जो कभी रियासत भी था—मनपुरी म।

तीन साल की उम्र तक इस इनसान ने अनेक ऐसी आधियाँ देख ली थीं और इनम सबसे ज्यादा भयावह अधड तब आया था जब उस छाटी सी उम्र मे ही इसन अपन पिता का मृत्यु के बवडर म गुम हा जाते दखा था ।

तब कसा लगता है श्रीमान जी, जब आप बहुत जोर देकर भी अपन पिता की शक्ल का याद न कर पायें ? आपकी कल्पना म तरह-तरह की लकीरें उभरती रह उन लकीरा स आप तरह-तरह के चेहरे बनाते रह, लकिन एक वही चहरा सामन न आय, जिसकी आपको तलाश है। उन सभी लकीरो को काट छाँट देने का मन करता है न आपका !

लकिन माँ न इस सहारा दिया था—इस अपने स्नेहसिक्त आँचल मे समेट लिया था। माँ कहानियाँ सुनाती थी। वे कहानियाँ कम इतिहास अधिक होती थी इन कहानियो म इस बच्च क पूवजा की बातें रहती थी कि कस किसन ब्रितानवी सरकार स लोहा लिया कि कसे किसने गद्दारी की कि कैसे किसने अपने शरीर क सुख के लिए लाखा क सुख को बलाये-ताक रख दिया कि कसे किसने आह श्रीमानजी उस इतिहास की बात मुझस मत पूछिय क्योकि इतिहास को यथाथ क रूप म स्वीकार करना बडा यातनादायी होता है। (हम वह यथाथ कहाँ दिखाया देता है ? हम ता राजाओं रानिया की कहानियाँ पढन का शौक है वही हम साउम्र करत रहत हैं।)

कसा लगता है श्रीमान जी (मैं फिर वही सवाल दोहरा रहा हू), जब घर म

सब कुछ हो फिर भी आपके लिए कुछ न हो ? इतिहास आपको यथार्थ के भयावने चेहरे-सा लगे ? जब आपका भविष्य बनने के लिए उत्कंठित हो और आप एकाएक बहुत अकेले हो जायें ? छोटी सी उम्र मे ही आप क्रांतिकारी दल के सदस्य हो जायें और आपकी टांग मे गोली लग जाये ? भरे-पूरे घर के रहते हुए भी आप अपने पैरो पर खड़े होना चाहें ? अँगीठी के कच्चे कोयले आपको दूसरे शहर से लाने पड़ें और रेलगाड़ी से आपका रिश्ता जुड़ जाय ? आप पढ़ने के नाम पर घर से अलग दूसरे शहर मे चले जायें और अपना खर्च चलाने के लिए साइनबोर्ड पेंटर बन जायें ? कोई अपने छज्जे या चौबारे से हर रोज़ आपको देखता रहे—अपनी बड़ी बड़ी, काली काली, उदास आंखें लिये—और आप अपनी उलझनों मजबूरियों मे इस कदर मुब्तिला हों कि उधर नज़र उठाकर देख भी न सकें ? जीवन आपके सामने साक्षात संकट बनकर खड़ा हो जाये ? सिर्फ जी सकना ज़रूरी हो जाय, जीवन आपके लिए न रह जाय !

ऐसे मे केवल दो ही विकल्प हो सकते है, श्रीमान जी। या तो आप अपने तमाम तनावों और संवेदनाओं के साथ मानसिक रूप से असंतुलित हो सकते है—या फिर लेखक हो सकते है।

आप जब अपनी आंखें खुली रखते हैं श्रीमानजी, और अपने आसपास फैली यातनाओं को देखते है और प्रतिक्रियाशील होते हैं, तो आप लेखक हो जाते हैं और यह लेखक हो जाना अपने-आप मे एक बहुत बड़ी यातना है। प्रतिक्रिया करने से आप अपने आपको रोक नही सकते और पत्थर दिल आप हो नही सकते—रोना और प्रलाप करना आप चाहते नही—तो फिर लेखन के अलावा आपके सामने रास्ता ही क्या है ? इसीलिए तो मैंने कहा था श्रीमान जी, लेखक होना ताज़िंदगी अपना त्रास ढोना है और यह भी एक अजीब बात है कि लेखक ज्यो ज्यो स्थापित होता जाता है त्यो त्यो उसकी यातना भी बढ़ती जाती है, जैसे जैसे रचनात्मकता मे निखार आता जाता है और उसके परिचितों का दायरा बड़ा होता जाता है वैसे-वैसे उसका अकेलापन भी बढ़ता जाता है।

पर लेखक अगर रचनात्मक होने के साथ-साथ रूढ़ियों का विरोधी भी हो, तो ? अगर वह साहित्य और सौंदर्यशास्त्र के सदियों से चले आ रहे, पर एकदम जड़ हो चुके सड़े हुए मानदंडों और मूल्यों को नकारने लगे, तो ? अगर वह लेखक के साथ जुड़े प्रभामंडल को स्वीकारने से इनकार कर दे, तो ? अगर वह लेखक को आम आदमी—बल्कि संघर्षशील आम आदमी मानता हो, तो ?

तो श्रीमान जी उसकी यातनाएँ और अकेलापन तो बढ़ता ही है चारों ओर उसका विरोध भी बढ़ जाता है। हमारी त्रासदी ही यही है श्रीमान जी, कि हम दोशाला ओढ़ने वाले बहुत धीमी आवाज़ मे बोलने वाले, दाढ़ी लगाये घूमनेवाले शिष्यों की पाँत की पाँत को अपने पीछे खदेड़ते चलने वाले, खस की टट्टियाँ लगा

कर बैठन वाले लसका को ता लखक मानते हैं अपने समय के समक्ष और समातर खड़े रहन वाल और उसक साथ चलने वाल लखक को प्रचारवादी कहकर उसका विरोध करन लगते हैं। खासकर तब तो हमारा आक्रोश और भी तीखा हो जाता है जब उसकी बात को स्वीकार करने वाल उसकी ही तरह सोचन वाल अन्य लखक उसके साथ हो जाते हैं और रूढ़िवादियों के विरुद्ध जेहाद छेड़ देते हैं। आप तो जानते ही हैं श्रीमान जी, परपरा विरोधी हर व्यक्ति को हर काल में विरोध का सामना करना पड़ा है—सुकरात को इसीलिए जहर का प्याला पीना पड़ा था, इसीलिए गलीलियो को उम्रभर कैद म रहना पड़ा था, इसीलिए भारतेंदु हरिश्चन्द्र को अपमानित होना पड़ा इसीलिए प्रेमचंद और निराला ताजिंदगी मुफलिसी का शिकार होते रहे ।

मुझे इजाजत दें तो श्रीमान जी मैं एक लिखित बयान पेश करूँ। यह इस इनसान के एक पत्र का हिस्सा है जो इसने सन् १९६२ में अपने एक परिचित को लिखा था और जिसकी एक कापी इसकी पुरानी फाइलों में लगी हुई है। यह आदमी क्या है इसकी आस्थाएँ और विश्वास क्या हैं किस मानसिक स्तर पर जीता है यह व्यक्ति इसका एक जायजा आपको इससे मिल सकेगा। तो लीजिये यह तहरीर आपके सामने है—इसी इनसान के लफ्ज़ों में—सन ६२ की, आज सन ७७ है

> अभी सिर्फ कुछ ही मिनट हुए हैं। सब कुछ जीवित-सा है। तुम्हारी आवाज़ साँसें तेज़ खाँसी और नज़रें। और वह सब भी जो बिलकुल कहा जा चुका है। कितना अजीब है कि जब कुछ भी कहने को शेष नहीं रह जाता तब ही बहुत कुछ कहने को भी रह जाता है।
>
> लगता है मुझे पूर्ण होना था। जो कुछ जन्म जन्मांतरों का बोझ था, उसे निपटा कर अब इस जन्म में कुछ करना था।
>
> धर्म की अंध प्रतीति में मेरा विश्वास नहीं है—पर धर्म और दर्शन में यदि भेद करें दर्शन और संस्कार में यदि भेद करें तो संस्कार वश मुझे यह सोचना अच्छा लगता है कि आत्मा अपनी पूर्णता के लिए बार-बार जन्म लेती है। इससे मेरे मार्क्सवादी चिन्तन पर भी चोट नहीं पहुँचती क्योंकि यह शायद पारलौकिक संघर्ष का एक जरिया है। मैं भाग्यवादी नहीं हूँ मैं इसमें विश्वास या प्रतीति रखते हुए भी मूलतः संघर्षवादी हूँ। इस संसार में संघर्ष इस संसार से परे संघर्ष।
>
> मैं तब तक लिखता जाऊँगा जब तक जाने का क्षण नहीं आ जायगा। यह लिखते चले जाना उतना ही सहज है—जैसी सहजता से फूल खिलते और कुम्हला जाते हैं। हम मिलते और कुम्हला जाते हैं। मिलते हैं और छूट जाते हैं। जितना सहज मिलना है उतना ही

सहज अकेला छूट जाना भी है—जसे हवा वह जाती है—वसे ही हम भी बह जाते हैं पर मुझे कहने की आज्ञा दो मैं वही आज तक बँधा नही था, मैंने एक कवच बना लिया था, उसे ओढे रहता था और अपनी नितात अकेली जिंदगी म मैंने जानबूझ कर किसी को आने नही दिया। ऐसा तो नही कि कोई आया नही पर कोई आया तो शरीर तक आकर तृप्त हो गया, कोई मेरी मित्रता से सुखी हो गया, कोई मुझसे मिल कर प्रसन्न हो गया—पर ऐसा कोई नही था जो मर अस्तित्व के आधारभूत सवेगो की दुनिया म पहुच पाता।

मेरे भीतर एक पाताल लोक है वह अधेरा नही है। बहुत आलोकित है। उस पाताल तक शायद मैंने किसी को नही आने दिया—या शायद यह मेरी ही कमी थी। या मेरी शक्ति थी अब यह भी मेरी ही कमी या शक्ति है कि सब कुछ मेरा है—पर बिस्तरा या शैयाओ पर नही—इस समय के असीम विस्तार म है।

जब भी अपनी चीजें समटता हूँ—कही स भी सामान बटोर कर चलता हूँ तो आँखें भर आती ह। उसी तरह मुझे चल देना है जस बजारे चल देते ह। पर यह बजारा फिर आयगा और अपनी छोटी सी दुनिया समेट बटोर कर फिर चला जायेगा पर यह अपना जिन्दगी भरपूर जियगा और एक दिन अतिम रूप से चला जायेगा।

कमलेश्वर नामक लखक से मरा परिचय बहुत पुराना है श्रीमान जी पर इस व्यक्ति से मरा परिचय सिफ दस साल पुराना हाते हुए भी बहुत ज्यादा पुराना है सघष की भी कोई उम्र होती है? वह तो अन्तहीन है श्रीमान जी और कुछ लोगा से मिलकर ऐसा लगता है न जसे आप किसी गैर से नही अपने आप से ही मिल रहे हो!

तो इस अपने आप से पहली (?) मुलाकात हुई थी सन १९६७ म। कमलश्वर नामक यह लखक 'सारिका' का सपादक हाकर आया था—और आते ही उसकी रीढ की हड्डी म तकलीफ उठ खडी हुई थी—स्लिप डिस्क। और दो महीने के लिए बिस्तर से उठने की मुमानियत। एक पत्रकार दोस्त को 'नानोदय' की एक परिचर्चा के सबध म कमलश्वर का इटर यू लेना था और मुझे तस्वीरें खीचनी थी। इटरव्यू हो गया लेकिन तस्वीरें नही ली जा सकी मरी फ्लैशगन ने काम करन से इन्कार कर दिया था—पर जो तस्वीर दिलो दिमाग पर उतरी थी, उसके प्रिंट बडे शाप थे।

उस स्लिप डिस्क की भी अपनी दास्तान है श्रीमान जी! यह लेखक जिस तरह की स्थितिया म जीता रहा है उसम सुविधाएँ कभी मुहैया नही थी। लिखने

के लिए चौकी तक नहीं थी इसलिए यह फ़र्श पर ही बैठ कर—बल्कि लेटकर—लिखने का आदी हो गया। (आज भी यह लेखक उसी मुद्रा में लेटकर लिखता है) और इस मुद्रा का ही प्रताप था कि बरसों के दबाव ने इसकी रीढ़ की हड्डी को हिला दिया वह हड्डी तो आज अपनी जगह पर जम चुकी है लेकिन उसका दर्द कभी-कभी उठ आता है इतना ही नहीं, उस हड्डी ने अपना असर यह छोड़ा है कि कमलेश्वर को थोडा-सा तन कर चलना पडता है। पर विरोधी हैं श्रीमान जी कि वहन से बाज नहीं आते कि बबई पहुँच कर कमलेश्वर ने तनकर चलना शुरू कर दिया है।

पिछले नौ-दस बरसों के दौरान इस लेखक का जितना विरोध हुआ है उतना हिन्दी में आज तक किसी लेखक संपादक का नहीं हुआ था। आपकी मेज पर रखा वह पुलिंदा, इस बात का गवाह है श्रीमान जी! पर सच बात तो यह है कि विरोधियों की विरोध-अभिव्यक्ति से उनके अपने विरोधाभासों को ही अभिव्यक्ति मिली है।

छठे दशक के इसके समकालीन लेखकों की शिकायत है कि कमलेश्वर ने उन्हें भुला दिया, कि उसे हर पांच साल बाद लेखकों की एक नयी जमात खडी कर देने की आदत है कि बडे संस्थान में पहुंच कर वह भी व्यवस्था का एक अंग हो गया है कि वह मीडियॉकर लेखकों को प्रोत्साहन देता है क्योंकि ऐसे लेखक खुशामद करने के लिए हमेशा तत्पर रहते हैं।

छोटी पत्रिकाओं के संपादक, नयी पीढ़ी के अनेक लेखक, आलोचकों की बहुत बड़ी संख्या भी करीब करीब यही कहती रही है। विरोध की स्थिति यह है कि कोई विरली ही छोटी पत्रिका निकलती होगी जिसमें कमलेश्वर को चुनिंदा गालियाँ न दी गयी हों!

पर एक बात है श्रीमान जी कमलेश्वर ने अपने साथियों को कभी इग्नोर नहीं किया लेकिन उसने अपने विरोध में छपे लेखों टिप्पणियों को भी कभी इग्नोर नहीं किया। मुमकिन है अपने साथी लेखकों की प्रशंसात्मक रचनाओं की कतरनें उसके पास न हों लेकिन अपने विरोध में प्रकाशित एक एक पंक्ति की कतरन उसके पास है और मजेदार बात यह है कि इन कतरनों को यह इनसान अपनी बहुत बडी संपत्ति मानता है। किसी पत्रिका में अपने विरोध में छपी पंक्तियां को दस-पढ़कर वह मुस्करा देता है, और जब कोई अंक खाली चला जाता है तो यही कहता है—इस बार मेरा पता नहीं आया।

विरोधियों की बातों का जवाब तो मैं बाद में दूंगा श्रीमान जी, लेकिन पहले नये लेखकों के बारे में कुछ कहना है—यह भी एक तरह से जवाब ही है।

यह तो आप भी जानते होंगे श्रीमान जी, नये लेखक में कितनी उमंगें होती हैं कितना आक्रोश होता है कितनी संवेदनशीलता होती है। पर इन सबसे बड़ा

होना है धय। कमलेश्वर म कमाल का धय है और यह धय पनपता है आस्था और विश्वास से। किसी नये लेखक की चुभती हुई रचना देखकर जितनी खुशी इसे होती है उतनी शायद लेखक को भी नही होती होगी लेकिन उसके बाद लेखक के धय की परीक्षा शुरू हो जाती है। प्रकाशन एक चट्टान बन जाता है और नये लेखक के हाथ उस पर चोट करने के लिए आगे बढते हैं। बहुत-से लेखक ऐसे भी होते हैं जो दो चार चोटों के बाद ही पीठ दिखा जाते हैं पर जिनमे रचनात्मक धय होता है वे लगातार चोट करते चले जाते हैं यह सोचे बगर कि उनकी उगलियाँ लहूलुहान हो गयी है या हथेलियों की खाल छिल गयी है। एक बार यह परीक्षा हो जाने के बाद कमलेश्वर नये लेखक को जिस आव के साथ सामने लाता है वह देखने लायक होता है।

मेरे अपने कुछ दोस्त हमउम्र कम ही लोग है जिन्हे मैंने क्या से क्या होते देखा है। अपनी बात कहूँ तो मैं यहाँ कहूँगा श्रीमानजी कि उन दोस्तो को दोस्त के रूप म स्वीकार करना तो दूर उनसे पाँच मिनट जमकर बात कर पाना तक सभव नही था (कई बार अब भी नही होता)। ये ऐसे लोग हैं जिनके पास अनुभवो का अद्भुत ससार मौजूद है पर जो अपने अनुभवो को बयान करने से सदा कतराते रहते हैं— सडक के आदमी और सडक के बगल म बनी झोपडपट्टी के आदमी की जिन्दगी को इन लोगो ने इतने पास से देखा और जिया है कि कुलीन उनके हाव भाव तक से चिढ सकता है कधे सिकोड कर इन्हे झटक कर अलग कर सकता है। घटो ये लोग कमलेश्वर को शब्दश बोर करते रहे है—अपनी बातो से नहीं अपनी खामोशी से क्योकि ये लोग बोलते बहुत कम हैं जब बोलते भी हैं तो आधी बात इनकी जबान पर होती है आधी हवा म पर यह इस इनसान का ही धय है कि बरसो इसने इन खामोश जबानो के खुलने का इन्तजार किया है। पर यकीन मानिये श्रीमान जी बोलते ये लोग अब भी बहुत कम है पर जब बोलते हैं तो इनके शब्दो म सामान्य आदमी की जिन्दगी बोलती है। इनकी कलम ने जिदगी के उन अनछुये क्षेत्रो को आवाज दी है जो अब तक बे आवाज थे। इन्होने उसकी कटीली अनगल जबान को साहित्य की जबान बना दिया है। आप ही बताइये श्रीमानजी क्या आप म इतना धय है कि आप लगातार निराश किये जाते रहे— एक बरस दो बरस चार बरस पाँच बरस —आप सोचते रहे कि इस कक्टस म अभी तो एक फूल खिलेगा और आपने धय न खो दिया हो। मैंने इस इनसान को पाँच-पाँच बरस तक इस एक फूल के खिलने के लिए इन्तजार करते पाया है—बिना बेचैन हुए बिना अपना धीरज खोये पर फूल वह खिला है और उस फूल को इस इनसान ने अपनी धरोहर की तरह सहेजा और सींचा है।

एक बात मैं और बता दूँ श्रीमान जी। कक्टस या नागफनी के उपमान को मैं यों ही बीच म नही घसीट लाया हूँ इसकी भी अपनी महत्ता है। सो कसे ? यह

भी सुन लीजिये ।

कैक्टस का फूल खिलने का आप महीनों इंतजार करते हैं न और उस पूरे अरसे के दौरान आप उसके बेधक काँटों को भी बर्दाश्त करते हैं। इन नौजवान लेखकों में से अनेक ऐसे हैं जो कहानियों के फूल तो कभी कभार ही खिलाते हैं, पर काँटों की चुभन अक्सर दे जाते हैं—अपने व्यवहार से भी अपनी रचनाओं से भी। आप ही बताइये श्रीमान जी आप ऐसी स्थिति में क्या करेंगे, जब आप किसी पर अपना स्नेह निरंतर बरसा रहे हों इस बात का इंतजार कर रहे हों कि यह कोई किसी दिन अपनी रचना के फूल उठाकर देगा और वह कोई आपके स्नेह के बदले में आपको अपमानित करके चलता बने ? आप बौखला जायेंगे न ? बार बार यह कहते नजर आयेंगे न कि देखो साले ने क्या किया! पर ऐसी स्थिति में—यकीन मानिये, ऐसी स्थितियाँ कई-कई बार इस इनसान के सामने आयी है—इस आदमी ने अपने चेहरे पर शिकन भी नहीं आने दी है। एक क्षण के लिए खामोश जरूर रह गया है पर दूसरे ही क्षण इसने अपने मित्रों से कहा है—चलो, दोस्तो खाना ठंडा हो रहा है ।

अभी-अभी जो आदमी साथ बैठकर हमप्याला हो रहा था, और जो ह्विस्की या रम से भरा गिलास फर्श पर पटककर गालियाँ देता हुआ चलता बना है वह अब दृश्य से ही गायब नहीं हुआ है, बातों में से भी गायब हो गया है। कोई बीच में उसके व्यवहार पर खेद प्रकट करता है तो कमलेश्वर का बड़ा आस्थावान जवाब उभरता है—जायेंगे कहाँ ? लौट आयेंगे कल नहीं तो परसों ।

और सचमुच अगले ही दिन वह आदमी वापस लौट आता है और इस इनसान का उससे ऐसा व्यवहार होता है जैसे कल कुछ हुआ ही न हो ।

इस अपार धैर्य और विश्वास ने कमलेश्वर को दोस्तों का दोस्त तो बनाया ही है दुश्मनों का दोस्त भी बना दिया है कम से कम यह इनसान तो अपने विरोधियों को भी अपना उतना ही दोस्त मानता है जितना अपने सहचिंतकों सहकर्मियों सहयात्रियों को।

कभी-कभी ऐसा भी हुआ है कि उन सहकर्मियों सहचिंतकों में से कोई अपने निजी और व्यक्तिगत कारणों से इस संघर्षशील यात्रा के किसी पड़ाव पर चुपके से अलग हो गया है—हाँ तब इस इनसान को बेहद तकलीफ हुई है—तकलीफ इसलिए नहीं कि कोई साथी अलग हो गया बल्कि इसलिए कि किसी साथी ने पीछे छूटे रहना स्वीकार कर लिया और इस तरह अपने विश्वास को तो कुंद किया ही इस इनसान के विश्वास को भी कहीं ठेस पहुँचायी।

ऐसे क्षणों में श्रीमान जी मैंने इस इनसान की बेहद उदास और डबडबायी आँखों के छोर तक पहुँच पाया है। इस इनसान ने बहुत पाया है—यह मैं पहले ही कह चुका हूँ, इस इनसान ने बहुत कुछ खोया भी है—यह भी मैं पहले कह चुका हूँ पर

इस खाने और पान के दौरान अपनो द्वारा ठस पहुँचाने की कोशिश ने इस इनसान को कही और अधिक आस्थावान भी बनाया है। यकीन मानिए श्रीमान जी यह इनसान फरिश्ता या मसीहा नही हैं कि इस चोट की जाये और इस तक्लीफ न हो पर अपनी तक्लीफ का दूसरो की तक्लीफ बना देने की भी इस इनसान की आदत नही है। जीवन और रचना यात्रा के विभिन्न पडावो पर जो साथी इस इनसान का एक एक करके छोडते चले गये हैं उनकी यादों को इस इनसान ने अपनी सबसे बडी उपलब्धियो के रूप म सहेजा है। माँ भाई दोस्त—एक एक करके इसे छोडकर जाते रहे हैं और कही इसे बहुत अकेला छोड जाते रहे हैं। अकेलेपन म यह आदमी सन्न रह गया है शायद पथराया भी है पर दूसरो के बीच आते ही इसने अपनी तकलीफ को मन के किसी अनाम कोने म बन्द कर दिया है क्योकि जो छूट चुका है छिन चुका है वह अतीत है (और वह इसका निजी अतीत है) पर जो सामने है प्राप्त है वह वतमान है और यह वतमान सबका साझा है।

श्रीमानजी इस आदमी ने दूसरो के विरोध को भी स्वीकार किया है क्योकि यह इनसान हर इनसान को अपनी तरह ही कमजोरियो और शक्तियो का मिला जुला रूप मानता है यही कारण है कि जब इसके विरोधी विभिन्न पत्र पत्रिकाओ मे इसके खिलाफ अपना गुबार उगल रहे होते हैं यह इनसान उनकी चिटिठयो को देख रहा होता है और उनम बयान की गयी उनकी व्यक्तिगत तकलीफो के समाधान के लिए चिंतित हो रहा होता है। उनके दोगलेपन को भी यह इनसान आदमियत के एक अंग के रूप म स्वीकार करता है ।

आप कहेगे श्रीमान जी तुलसीदास जी भी लिख गये हैं -- समरथ को नहिं दोष गुसाइ पर श्रीमान जी असमथ से समथ होने तक की यह दुखद यात्रा क्या कोई अथ नही रखती ? क्या किसी का विरोध महज इसलिए किया जाना उचित है कि वह समथ है ? *क्या यह भूल जाना उचित है कि अपनी समथता का वह क्या* इस्तेमाल कर रहा है ?

समथ होने की स्थिति तो बहुत बाद म आयी श्रीमान जी तब की बात क्यो भूल जाते है जब इस इनसान की जेब म एक चवन्नी होती थी और उसीके भरोसे उसे घर से दफ्तर भी *जाना होता था* वापस घर भी आना होता था दिन भी बिताना होता था और बच्ची के दूध का इन्तजाम भी करना होता था। वह वक्त भी था जब एक आदमी का दो सौ रुपये का उधार चुकता न कर पाने के कारण इस कोट से नोटिस मिल गया था। पर तब भी रचनात्मकता और दोस्ती की *रक्षा के लिए यह आदमी सघषशील रहा गलतिया दोस्त करते रहे और उनका* खमियाजा यह इनसान भुगतता रहा—और आज तक भुगत रहा है।

श्रीमान जी यह बडी अजीब बात है कि जब इस इनसान के तथाकथित सह

धर्मी मकान घर और परिवार बनाने में लगे हुए थे, तब यह आदमी कहानी को साहित्य की केंद्रीय विधा बनाने में लगा हुआ था, जब वे लोग अपनी जिंदगी की सुविधाओं को अपने आसपास संचित कर रहे थे, तब यह इनसान कहानी को आम आदमी की तकलीफ का मूल रूप बना देने में जुटा हुआ था, जब वे लोग घर से बाहर अपने संबंध बनाने में जुटे हुए थे तब यह इनसान दिल्ली से दूर मैनपुरी में पैदा हुई अपनी बच्ची की मृत्यु का समाचार सुन रहा था और एक बार उस बच्ची की शक्ल देख आने की बजाय पुरातनपंथियों और रूढ़िवादियों से नये विचारों के लिए टक्कर लेने के लिए किसी साहित्यिक सम्मेलन या गोष्ठी में पहुँचने की तैयारी कर रहा था। कुरबानी की बातें करना बहुत आसान होता है श्रीमान जी किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अपना खून देना बहुत मुश्किल होता है। और अपना खून देकर ही इस इनसान ने अपने लक्ष्य की प्राप्ति की है। और अजीब बात यह है कि वह लक्ष्य भी इसका निजी या व्यक्तिगत नहीं, समय-सगत सत्यों की स्थापना के लिए रहा है—यानी करोड़ों-करोड़ सामान्य लोगों के लिए।

पर, श्रीमान जी, विरोध करने वालों को यह सब दिखायी नहीं देता। कोई बात नहीं न दिखायी दे। पर जो दिखायी देता है, उसे नकार देना तो एक तरह का अधापन है।

जो दिखायी देता है, श्रीमान जी, उसका वर्णन मैं पहले ही कर आया हूँ। जिसे देखने की जरूरत है वह यह है, श्रीमान जी, कि इन तथाकथित सुविधाओं और सहूलियतों का क्या इस्तेमाल यह इनसान कर रहा है, इस पर गौर किया जाय।

व्यवस्था के विरोध की बात बहुत लोग करते हैं (वे भी करते हैं जिनकी शिकायतों का पुलिंदा आपके सामने है) पर उनमें से कितने हैं जो मौका मिलते ही व्यवस्था का अंग बन जाने को आतुर नहीं हैं? व्यवस्था के बाहर रहकर व्यवस्था के विरोध की बात करना बहुत आसान है श्रीमान जी क्योंकि आप बात कहकर उससे अलग हो सकते हैं—पर व्यवस्था में रहकर व्यवस्था का विरोध करने की सामर्थ्य कितने लोगों में है? इनमें से कितने ऐसे लोग हैं जो अपनी कलम को सरेआम नीलाम कर देने को तैयार नहीं हैं? व्यवस्था का दुर्ग बहुत सुदृढ़ है, श्रीमान जी। इसकी चौहद्दियाँ भी बहुत विशाल हैं—और तकलीफ देह बात यह है कि ये चौहद्दियाँ हमें दिखायी भी नहीं देतीं—क्योंकि हम जो कुछ खाते-पीते पहनते ओढ़ते हैं, उस तक में तो व्यवस्था का कोई न कोई अंश मौजूद है हमारे विचारों संस्कारों तक पर परंपरा की व्यवस्थाओं का शिकंजा कसा हुआ है—फिर एक बड़ी कंपनी के केबिन में बैठने वाला आदमी ही क्यों अकेले पत्थरवाह किया जाये? खासकर तब, जब वह आदमी उस केबिन की काँच की दीवारों में समाया रहने से इनकार करता हो। खासकर तब, जब वह दुर्ग के

भीतर रहकर दुग के ध्वम के लिए कारगर तरीके से अपनी लेखनी का इस्तेमाल कर रहा हो। जब उसका यह ओखिम भरा काम चद छिछली मानसिकता के लोगो का ढोग लगता हो, पर लाखो आम लोगो को साफ साफ अपने हित म लडी जा रही लडाई का अग नजर आता हो।

और इस बात की गवाही तो मैं भी दे सकता हूँ श्रीमानजी, कि इस आदमी ने अपनी सामथ्य और सुविधाओ और कलम का इस्तेमाल अपने हित के लिए कभी नही किया वरना इस इनसान की पत्नी इतनी अस्वस्थ न होती कि उसे रोज रोज कपसूल खाने पडते और इजेक्शन लेने पडते। न ही इसकी इकलौती बच्ची इतना अकेला महसूस करती कि इस इनसान के कमरे म झाँक भर लेने म उसे हिचकिचाहट होती सच बात यही है श्रीमान जी कि इस इनसान के पास अपने लिए—अपनी खुशी क लिए अपनी बच्ची के लिए कोई वक्त नही है इस इनसान का परिवार इतना छोटा नही है न ।

मुझसे पूछियें श्रीमान जी तो इस इनसान का नही, उन लोगो को आपके सामने खडे होने और कफियत देने की जरूरत है जिनकी शिकायतो का पुलिदा आपके सामने रखा है। यह इनसान तो वक्त के साथ यात्रा कर रहा है—वक्त की तरह इसकी यात्रा का भी कोई अत नही है। जवाब तो उनको देना चाहिए जो विभिन्न पडावो पर उतरकर अपने तम्बू तानकर बैठ-ठहर गये हैं। यह आदमी तो अपने काम म लगा हुआ है। सवाल है —वे लोग क्या कर रहे हैं ?

इस इनसान ने तो जून की लू दिसबर जनवरी की बर्फीली सद हवाओ को झेला है बसत और हमत को एक सा माना है क्योंकि सघषशील यथायवादी और अपने समय म जीने वाला व्यक्ति बदलते हुए मौसमो से ज्यादा प्रभावित भी नही होता—पर जो लोग इन बदलते हुए मौसमो को ही नकार बठ हैं—जिन्होने एक ही तरह की धूप और पानी का पीना और जीना सीख लिया है उनका आप क्या करेंगे ?

जवाब अगर वे लोग दे सकते हो तो दें।
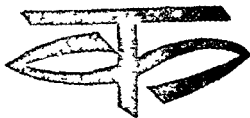
' तथाकथित साहित्य जो विचार मूल्य और संवेदना देता है वे मनुष्य के काम क्यों नहीं आ पाते ? आम आदमी अगर अपनी ज़िंदगी का नक्शा बदलना चाहता है और एक व्यवस्था की मारक स्थितियों से उबर कर एक बेहतर व्यवस्था निर्मित करना चाहता है तो उसके लिए साहित्य की कोई कारगर भूमिका क्यों नहीं रह जाती ? साहित्य क्या उसकी संघर्षपूर्ण असफलता में व्यर्थ दिलासा देता या ज़्यादा से ज़्यादा मात्र तमाशबीन की तरह शामिल होता है ? इसका सारा दाय स्वयं साहित्य का है। क्योंकि सदियों से हमारा साहित्य विचारों और मूल्यों को मानव शुभ की बड़ी-बड़ी शपथें बनाकर सिर्फ प्रस्तावों के रूप में पेश करता रहा है उन्हें असली जामा पहनाने या पहनाये जाने से गुरेज़ करता रहा है। इसीलिए हम साहित्य को समाज का दर्पण मानने की ग़लतफ़हमी का शिकार होते रहे हैं भारतीय दार्शनिक और साहित्यिक चिंतन इसीलिए महामूल्यों और विराट कल्याणकारी परिकल्पनाओं के बावजूद सिर्फ एक खूबसूरत और उदात्त कथन के रूप में मरते हुए आदमी की प्रतीक्षा में बिक्री के लिए मौजूद रहा है इसलिए यदि आज के असमान संघर्ष में मरता हुआ आदमी साहित्य का तिरस्कार कर दे, तो ज़्यादती क्या है ? कोई आदमी अपनी आत्मा के लिए कफ़न नहीं खरीदता। साहित्य जब तक आम आदमी की आत्मा का लिबास नहीं बनता तब तक उसकी नियति निष्क्रिय प्रतिबिम्ब बन रहने की ही है या ज़्यादा से ज़्यादा 'बौद्धिक विचार' बन जाने की। (नया लेखन आज इससे अवगत है)

श्रममूलक विचार और विचार मूलक श्रम की अभिव्यक्ति सामान्य जन को जो पूरे सम्मान और न्याय के साथ प्रतिष्ठित कर सके और हर मंजिल में बार-बार झूठी पड़ गयी आस्था-अवधारणा को साकार कर सके—वही अपने युग का युवा लेखन साहित्य होगा।

— कमलेश्वर के मेरा पन्ना (मई सन ८४ से)

दामोदर सदन

एक शक्ति-पुज कमलेश्वर

कमलेश्वर के बारे म लिखना एक वेहद नाजुक और जोखिम भरा काम है। यकीन मानिये मरे हाथ-पाँव की चर्बी सद होने लगी है और दिमाग सुन्न। कमलेश्वर एक बहुत बडी पत्रिका का एडीटर है एक बहुत बडे सहयोगी प्रकाशन का चीफ और समातर ग्रुप का एक मात्र लीडर और एक बहुत बडा लेखक और उससे भी ऊपर एक बहुत बडा इनसान। आज हि दी साहित्य म इसकी एक बहुत बडी शख्सियत बन गयी है। पूर्ववर्ती कइ एक महारथियों की तरह की। जब यह किसी सभा या मजमे म जाता है तो लोग इस उसी तरह घेर लेते हैं जैसे रूस म लोग एक्टरो की बजाय लेखको को घेर लेते हैं। वह हिन्दी साहित्य का मसीहा बनना पसन्द नही करता, लेकिन अनजान मे बन गया है और उसका एक बेहद खूबसूरत अन्दाज है। लेकिन फिर भी उसका व्यक्तित्व बरगद के पड जसा बाँझ नही है जिसके आसपास कुछ नही उगता। इसलिए लोगो को भी इसमे कुछ आपत्तिजनक नही लगता। साहित्य म उसकी तुलना एक ऐसे व्यक्तित्व से की जा सकती है, जिसके आसपास सदी के बहुतरीन सितारे चमक रहे थे। आज हिन्दी साहित्य कमलेश्वर का ऋणी है कि उसन 'सारिका' के माध्यम स सचेतन, अकहानी और बहुत से उखडे हुए आन्दोलनो को खत्म कर कहानी को आंधो के जगल स छुडाने के लिए हिन्दी साहित्य का एक से एक जगमगाते नक्षत्र दिये। मैं यहा उन सितारो के नाम नहीं गिनाना चाहता जिनकी शिनाख्त आज समातर कहानीकारो के नाम स की जाती है। इन मशहूर लेखको की कहानियाँ सदियो तक समातर के लाइट-हाउस की तरह आने वाली पीढ़ियो का पथ प्रदर्शन करेंगी। और इन सितारों को कहानी के आकाश पर टाँकने का श्रेय कमलेश्वर का ही है। वह अपने लेखको को कैसे धीरे धीरे बाँधता है, उसका एक जायजा मैं यहाँ उसके द्वारा लिखे गये ७ १ ६६ के खत के माध्यम स दे रहा हूँ—

प्रिय सदन,

तुम्हारी कहानी सत्राम के सम्बन्ध म बहुत देरी स कुछ लिख पा रहा हूँ। इधर सब कुछ अस्त-व्यस्त था। हड़ताल के दिनों मे बहुत-सी चीजें डिस्प्लेस हो गयी थी। तुम्हारी कहानी भी उसी लाट म थी।

इस पत्र—मुझे यह कहानी बहुत-बहुत अच्छी लगी। इसे बहुत जल्दी छाप रहा हूँ।

तुम अपनी सुन्दर कहानियाँ और भिजवाओ ना। ऐसी ही अछूती पृष्ठभूमि पर। इधर किसी का नजर ही नही जाती। सब जौंधों क जगलो म दर्द।

मैं तुम्हारी अन्य कहानियो की प्रतीक्षा करूँगा। और समाचार भी देना।

यदि इसका शीषक बदल दूं तो ? कोई आपत्ति तो नही, बताना।

सस्नेह

कमलेश्वर

इस एक खत से मेरा होसला बढ गया। और इसके बाद मैंने कभी मुडकर पीछे नही देखा। कमोवेश यही हाल समातर क सभी लेखकों का है—उसने विज्ञान इजीनियरिंग मेडिकल शिक्षा—सभी क्षेत्रो स अपने लेखको को तलाशा नये होने के कारण उनकी कहानियो को चार चार महीने तक पटक रखा चुना और छापा।

हिन्दी के इस महान व्यक्तित्व से मुलाकात का माध्यम मेरा दोस्त स्वर्गीय दुष्यतकुमार बना जो हिन्दी म नयी कहानियो का एक को प्राडयूसर भी था। लेकिन इतना सच है कि नयी कहानी की पूरी रण-नीति एक कुशल जनरल की तरह कमलेश्वर ने ही तयार की। उसके जैसा योजनाकर्ता आज हिन्दी साहित्य म दूसरा नही है। वह किसी भी आन्दोलन की शुरुआत कर सकता है उसका थियरोटीशियन भी बन जाता है उस आन्दोलन के खिलाफ कौन कौन उठेगा और लिखेगा इसकी सूची तक सोच कर बता देता है जो एकदम सही निकलती है। उन दिनो मैं दुष्यत के (भोपाल म नये नये बने रहे) अगाड म उसकी चिलम भर रहा था। वह हमेशा कमलेश्वर की बात करता। उसके बारे म तरह-तरह की झूठी सच्ची बातें बताता। इन दोनो की दोस्ती और प्रतिद्वंदिता भी अजीब थी। कमलेश्वर नयी कहानियाँ का सम्पादक था उसका दोस्त था। बात सन १९६० या ६१ की थी दुष्यन्त म कहानियो की अदभुत पकड थी। वह मुझसे कहता—प्यार कहानी ले आना मैं कमलेश्वर को भेज देता हूँ छाप देगा। और मैं कहानी

दुष्यन्त को दिखाता, भेज देता और दुष्यन्त कमलेश्वर को खत लिख देता। तब तक दुष्यन्त, कमलेश्वर के बारे मे बनाये हुए सैकडा लतीफे मुझे सुनाता। मैं सोचता, कैसा आदमी होगा यह ? मेरी और कमलेश्वर की मुलाकात रू ब रू दिल्ली टेलिविजन पर हुई थी, जहा मैं इटरव्यू के लिए गया था। मैंने उसे पहली बार देखा—नाटा कद, मँझले आकार की आखे, बडा खूबसूरत माथा और भवें सिर बालो से भरा हआ और चुस्त-दुरुस्त और मोहक चेहरा। मुझे लगा—जैसे यह चेहरा मेरा जन्म जन्मातर से पहचाना हुआ है, यदि इसका कद लम्बा, सिर बडा, गदन बगालीनुमा और आखें बडी बडी होती तो यह मेरा भाई दिखता। अब भी वह दिखता है। हिन्दी साहित्यकारो पर यदि गौर किया जाये और यदि उनकी तुलना जानवरो से की जाय तो उन्ह दो खेमो म बाटा जा सकता है—एक तो इस मदान मे तमाम घोडनुमा चेहरे जुटे हुए है या बिलौटे जसे। कमलेश्वर का चेहरा दूसरी श्रेणी म गिना जा सकता है। दुष्यत ने कमलेश्वर के व्यक्तित्व पर व्यग्य मे लिखते हुए कहा था कि वह एक बेहद झूठा आदमी है यदि उसे दिल्ली जाना है तो बम्बई बतायेगा और यदि बम्बई जाना है तो दिल्ली लेकिन मेरे उसके रिश्ते के दरमियान एक बार भी एसा नही हुआ।

जाने वह किस टेक्सचर से बना है इतना ढेर सारा स्नेह वह लोगो म कैसे बाटता है। माण्डू म हुई समातर कान्फ्रेंस मे मैंने उसे दसियो बार कहते सुना—सदन, सुनो ! वही जितेन्द्र, कामता और अवस्थी धार या रतलाम मे भटक न जाय। कालीकट मे सुभाष पत को आयी चोट पर मैंने उसे कलपते हुए देखा है। वह समातर परिवार का मुखिया है। जब समातर का कोई सम्मेलन देश के किसी भी हिस्से म होता है तो उसकी व्यस्तता देखते ही बनती है। जब तक समातर के एक एक सदस्य को डिब्बो म बिठाल नही देता तब तक उसे चैन कहाँ ? सबके बाद ही वह डिब्बे मे इतमीनान से बैठ पाता है। सम्मेलन के कई कई दिनो पहले वह सबको ठकठकाता है तार से इत्तला मगवाता है।

कमलेश्वर एक शक्ति-पुज है—वह बोलता है, बोलता है और बोलता है, और बेहद अच्छा बोलता है। इतना अच्छा कि उसके बोलने और बात करने के सम्प्रेषित हो जाने म कोई फासला बच नही पाता। यदि उसके सारे भाषणो को टेप कर लिया जाये तो बिना एडीटिंग के अच्छा बढिया वाङ्मय तयार हो जाये। वह हिन्दुस्तान के इतिहास उसकी जनता प्रतिभा और उनकी बीमारियो पर ठीक जगह उँगली रखने म कामयाब हो जाता है। वह एक अच्छा दार्शनिक, एक बढिया सयोजक और प्लानर और सभाओ का उस्ताद है। किसी भी टेबुल पर वह उस्ताद ही साबित होता है। एक बेहद अच्छा लेखक होने के नाते उसने कहानी के आकाश म एक से एक खूबसूरत सितारे टाके है। मुझे अचरज है वह इतने सारे काम एक साथ और इतने खूबसूरत ढग से कैसे अजाम दे देता है ! जो आदमी

बोलने म अपनी इतनी सारी शक्ति लगा दे वह लिखने की प्लानिंग कसे, क्यो और कब करता होगा, यह राज आज तक मैं जान नही सका।

कमलश्वर को देखकर मेरे दिमाग़ म एक ऐसे जनरल की तस्वीर उभरती है जो अपने तम्बू म नक्शे फैलाकर बठा है और दूर दूर तक फले हुए जगे-मदान की रणनीति को सचालित कर रहा है। छडी उसकी टेबुल पर पडा है और नक्शा सामने। तम्बू म बठे इस जनरल की पशानी पर आप बल नही देखग, वह इधर उधर चहलकदमी करता हुआ भी नजर नही आयगा बहुत स पानी क गिलास भी हलक म नही उतारगा। वह खतर को सूघने म माहिर है दुश्मन क तम्बू म भी शिवाजी की तरह पठ जाता है और दुश्मन का गहरी स गहरी चाल को भी जान बूझकर कम आंकता है। अभी उस दिन ३ अप्रल को इन्दौर के एअरपोट पर वह कह रहा था अजीब है यह हिन्दुस्तान और यहा क लाग। य लाग इतन अप्रत्याशित है कि कौन आदमी कब क्या हरकत कर दगा आप जान नहा सकत। आप दिल्ली या बम्बई म बठ है और फिर आपका एकाएक मालूम हाता ह कि अमुक आदमी ने आपका कायम्बतूर म गाली दे दी। यदि आप कारण ढूढने जायें तो कुछ भी नही। बस उसक जी म आया और उसन जबान ताल पर लगा दी। यानी आखेट हर भारतीय का शगल है बस वह हमला भर कर देता है।

कमलश्वर का व्यक्तित्व दुनिया भर क उन बवा की तरह नही है जा फल हो जाते हैं वह एक पुख्ता और गम रत है। आप उस पर जितना दौडना चाह दौड सकत है। यह दास्ती का बक है जहा आप आसानी स अपना खाता खोल सकते है और उसक साथ मिलकर दुनियावी न्यामता का भरपूर इस्तमाल कर सकते हैं। विश्वास दे सकत ह पा सकत है।

लोग फालतू बाता पर उससे दुश्मनी कर बठत है। किसी की रचना वापस आ गयी किसी क मत का जवाब नहीं मिला किसी स वह अपन चेंबर म बात नही कर सका किसी ने उसस हर महीने कुछ रुपया का इतजाम चाहा या अपनी कहानी पर फिल्म बनवाने म मदद मागी— और कमलश्वर यदि यह सब नही कर सकता तो उसके लिए गालिया की बौछार शुरू हा गयी। मुझे इसम भी कोई बुराई नही लगती क्योकि उसका व्यक्तित्व एक भयकर तिलिस्म बन गया है और *लाग उससे बहुत ज्यादा उम्मीद लगाये हुए है।* मरी और उसकी दोस्ती का राज यह है कि मुझे कमलेश्वर जैसा बशकीमती और अप्रतिम दोस्त अब ढूढने स भी नही मिल सकता। मरी दास्ती रफ्ता रफ्ता परवान चढा है मुझ समझने और मेरी गलतियो को माफ करने की क्षमता उसम है।

उसके व्यक्तित्व म मौलसिरी क फूला की गध और एक दिन के रुई के गाले जसे बच्च की नरमाई है। जब वह किसी के घर आता ह ता ऐसा नही लगता कि वह कोई खास पाहुन है और उसके लिए वी० आइ० पी० नुमा इतजाम करना

है। उसे आप मछली-चावल खिला दें या आदिवासियों का पानिया या महाराष्ट्रियन खाना—वह खुशी-खुशी खा लेगा (सफद रम उसे बहुत पसद है) और जब वह विदा होगा तो उसे यही लगता रहेगा कि कहीं उसने किसी प्रकार की कोई तकलीफ तो नहीं दी।

उसस भोपाल छिन्दवाडा, धार बम्बई और कालीकट मे मुलाकात के वक्त मैं हरदम यह सोचता रहा कि इस आदमी की कामयाबी का आखिर राज क्या है? इतना अच्छा लेखक वक्ता सम्पादक नेता, आदमी—इसका उत्तर भी मैंने पा लिया है। इसकी अदभुत प्रतिभा जबरदस्त विनोदप्रियता, कडी मेहनत और सबसे बडी बात दूसरो पर हावी न होने की स्वाभाविक प्रवृत्ति। वह जानता है कि यदि वह दूसरो पर हावी होने की कोशिश का जरा भी आभास देगा तो भारी जोखिम उठायगा। वह इस बात स भी बखबर नहीं है कि दूसरे अपने को हावी होने देने के लिए तैयार बैठे है बशर्ते कि उन्हे उसके अच्छे व्यक्तित्व का इतमीनान भर हो जाये। मैंने उसे अपने से नाराज आदमी को दसियो खत लिखते देखा है ताकि उसकी नाराजी घट जाये। और फिर रफ्ता रफ्ता वह एक्टोपस की तरह गैर को अपने मोहजाल मे फास ही लेता है। उसे बाधने की कला आती है जहा तक हो सके वह किसी को अपने से अलग नहीं होने देता। वह जानता है कि हिंदुस्तान एक खूब मजी-सँवरी जीन से कसी हुई मनोहारी घोडी की तरह सुन्दर देश है और यहा के बाशिन्दे भी उतने ही सुन्दर। इसलिए वह दुलार पुचकार से उस पर सवारी करता है वाज़-वक्त दुलत्तिया भी खाता है। कभी-कभी जब यह घोडा बागी हो जाता है तो उसकी पिछाडी भी सहता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि उसे दोस्तो दुश्मनो की परख नहीं है। वह जानता है कि दोस्त-दुश्मन मे केवल रेशम की डोर का अन्तर भर होता है। वह अपने विरोधियो को उदारता से सहता और मारता है। यदि वह उदारता से न सँभले और न मरे तो उसे एसे ढग से खत्म करता है कि उसकी हड्डी पसली का भी पता न चले।

बात मैं गालियो की कर रहा था। यदि उसे मालूम हो जाये कि आधा हिन्दुस्तान उसे गालियाँ दे रहा है तो उसके चेहरे पर कोई शिकन नहीं आयेगी लेकिन यदि कोई कहे कि कमलेश्वर तुम्हारा वह दोस्त तुम्हे गाली दे रहा था, तो उसके चेहरे पर उसकी कोई तत्काल प्रतिक्रिया नहीं होगी, वह कैप्सटन सिगरेट के छल्ले मे उसे उडा देगा। लेकिन वह मत तो नहीं ही है। धुएँ के छल्ले की गोलाई मे ही उसके दिमाग मे वे सारे दिन चक्कर काटने लगते हैं जब उस दोस्त ने कमलेश्वर का इस्तेमाल सीढी की तरह किया था और उसके बाद अपने किसी स्व के लिए उसने उस सीढी को दरकिनार कर दिया। उसके दिमाग मे रफ्ता रफ्ता उससे हुई मुलाकात का दिन भी चक्कर काटने लगता है जब उसने उसकी दोस्ती, प्रतिभा और सीमा को पहचानकर उसे ऊपर और ऊपर, ले जाने का फ़ैसला किया

था। इस दोस्ती म आखिर कौन सा नट कहाँ ढीला हो गया—वह सोचता है ? लेकिन कुछ बोलता नही है क्योकि तब भी वह अपन पिछले रिश्तो को यकायक झटक देने के लिए तैयार नहा है। वह इस तकलीफ को सहन करता है।

कमलेश्वर की एक बडी खासियत यह भी है कि वह कभी नही सोचता कि लेखन के क्षेत्र मे वह अपने इतन सारे प्रतिद्वदी पैदा कर रहा है, जो किसी दिन उसके लिए मुश्किल पदा कर सकते हैं। वह इतनी छोटी कैनवास पर अपनी जिन्दगी का दाव नही लगाता।

वह सवदनशील है और कठोर भी, भोला प्रतीत कराने की कला उसम कूट कूट कर भरी है लेकिन है वह बेहद सतक। एक बार उसने मुझसे कहा था—सदन मुझम राक्षस भी है और देवता भी। मुझमे से जा जसा व्यवहार निकालना चाहे निकाल सकता है। उसके अपने व्यक्तित्व का उसके द्वारा इससे अच्छा विश्लेषण और क्या हो सकता है ? लेकिन मैं यहाँ एक बात पूरी जिम्मेदारी और आत्मा की पूरी शक्ति के साथ कहना चाहता हूँ कि वह कमीना नही है। यदि उसका दुश्मन पानी के बिना किसी स्टेशन पर तडप रहा होगा तो वह उस पानी जरूर पिला देगा। वह एसे परिवार से सम्बन्ध रखता है जो अपनी उदारता म उजड गया। आज उसके पास सब कुछ है। फिर भी जाने क्यो कमलेश्वर की मेरे दिमाग म जो तस्वीर उभरती है वह अजीब है। मुझे लगता है जस वह तपते हुए रेगिस्तान म घूम रहा है और पानी की एक एक बूद के लिए तरस रहा है। पसो को उसने कभी कोई महत्त्व नही दिया। वह उसको चीजो म तबदील करना जानता है। वह बेहतरीन कपडे पहनता है अच्छे से-अच्छे होटलो म ठहरकर बढिया शराब और खाना पीता खाता है हवाई जहाज और अपनी कार से सफर करता है दोस्तो के साथ बठे हुए सबसे पहल बिल देने के लिए उठना है, अपनी गल-फ्रेण्ड या दोस्त क लिए दोनो मुट्ठियो स खच करता है। वह एकदम सधुक्कडी किस्म का इनसान है जिस पर पैसा हावी नही है उसके मन के भीतर कारू का खजाना छिपा हुआ है।

वह एक भयकर अभिमानी प्रकृति का इनसान है। लेकिन यह अभिमान बेहद निखरा हुआ है दिखायी नही देता। जो भी उसके इस अभिमान को आहत करने की कोशिश करेगा तो वह उसे खत्म करने मे कोई कोशिश नहा उठा रखता। आज मोहन राकेश और दुष्यन्त के मरने के बाद वह अपने को बेहद अकेला महसूस करता है। दुष्यन्त की मौत के बाद उसने मुझे जो चिट्ठी लिखी उससे उसकी बेहद कोमल भावना सामन आती है।

क्यो सदन,

तुमने भी नही बताया कि दुष्यन्त क्यो चला गया ? तुम तो

उसके मन की बातें जानते थे। वही मध्यप्रदेश मे थे। दोस्ती का दम
भरत भरते यह दुश्मनी करके पीठ देना क्या मुनासिब है ?
किस पर भरोसा करूँ ? आवाज लगाता हूँ—कोई है ? तो
उसकी आवाज आती है—पर लोग कहते हैं कि वह नही है। तुम
उसकी आवाज भी पहचानते हो—गवाही दो मुझे, सदन।

लकिन फिर भी मुझे ऐसा लगता है जैसे उसके रेशे मजाक पसन्द होने के कारण बहुत मजबूत हैं। वह तनावो म नही जीता। उसे रात गहरी नीद आती है और सुबह वह बिलकुल ताज़ा होता है ऐसे लोग १०० साल की उम्र का पार कर जाते हैं और उन्हे कभी हार्ट-अटैक नही होता। ठिगना कद हान के कारण उसमे मेहनत करने की अपूर्व ताक़त है। वह लिखने की फ़ुरसत निकाल लेता है हर महीने सारिका का सम्पादन करता है अनेक ग्रन्थो का एकमात्र सम्पादन कर रहा है फिल्मो और टेलिविजन के लिए लिख रहा है और देश और विदेश म अनक यूनिवर्सिटीज और सस्थाओ म भाषण करने जाता है और अपनी जादूभरी बातो से सबका मन मोह लेता है। उन जगहो पर यदि उसका कोई दोस्त मिल जाये तो वह विशिष्ट-से विशिष्ट व्यक्ति की मोटर पर बैठकर भी फुर नही हो जाता बल्कि अपने दोस्तों के साथ रहता है। उसकी यह वफ़ादारी मुझे बहुत अच्छी लगती है। उसके मन म प्यार का विशाल समन्दर हहराता रहता है। जो भी मिले, वह कब उसका हो गया, पता ही नही चलता। वह प्यार बाटता फिरता है नफ़रत के लिए उसके दिल मे कोई जगह नही है। इसीलिए यदि कोई जान-बूझकर उसका दुश्मन भी बन जाये ता भी वह अपने सस्कारो के कारण उसके साथ कमीनजदगी और गलीज बर्ताव नही करता, शायद कर भी नही सकता।

उसकी लतीफ़ेबाज़ी के अनेक क़िस्से देश के इस कोने से लेकर उस कोने तक मशहूर हैं। दोस्तो पर वह इतनी प्यारी बौछार करता है कि देखते ही बनता है। यदि इन लतीफ़ों का कहीं सकलन कर लिया जाये तो हास्य-व्यग्य के बेहतरीन लेख या बेहतरीन नाटक पैदा हो सकते हैं।

कमलेश्वर की योजनाओ को देखकर ऐसा लगता है जैसे वह एल० एस० डी० लेकर ट्रिप पर हो। लेकिन सच कहूँ—वह ट्रिप पर नही होता। क्योकि जितनी भी योजनाएँ उसके दिमाग़ म होती हैं उन्हे पहले वह बडी शिद्दत से महसूस करता है शायद रात दिन उसी के बारे म सोचता है सपने भी उसी के देखता है और विश्वास करता है कि वे योजनाएँ अमल म ला दी गयी हैं और फिर पूरी-की पूरी योजना को अमल म ला देता है। वह अपने का नही बदलता वह कही भीतर खुद टोंचड व्यक्ति है वह हमेशा यही सोचता होता है कि उसने सामने वाले आदमी का मन तो नही दुखा दिया। सुखो के दिनों मे अपने बुरे दिनो को याद करके वह

खुश हो लेता है।

अपने दोस्तो के बारे म कमलश्वर जब कोई कहानी गढ़कर सुनाता है तो रपता रपता वह उस पर यकीन स भी आता है और उस इतनी खूबसूरती से फनाता है कि वही कहानी उसीके पास हजारो-हजारा साता स लौट लौट आती है। — क्यो कमलेश्वर, तुम्हारे साथ वह फर्ना शहर म अजीब घटना हुई थी ना !' और कमलश्वर भी उसी शिद्दत से कहता है— हूँ हाँ। अजीब ता थी ही। क्या करूँ ऐसी चीज तो रोजमर्रा मरे साथ होती ही हैं।' और सामनवाल का हाथ या कधा दबाकर जोर स ठहाका लगाता है। वह एकदम उदार और पुख्ता व्यक्तित्व का मालिक है उसका व्यक्तित्व कही स भी गढा हुआ नही लगता।

कमलश्वर हीरा है कमलश्वर घलताधर है वह अपने पराए दाना को प्यार देकर जिदा कर नता या खादकर गाड दता है वह अपन दोस्ना का आसमान की छत फाडकर ऊपर बिठा दता है वह आज कलकत्ता म दिखायी दिया था कल पूना और परसा मारिशस म। वह वस्त्र का आदमी है वह महानगर का आदमी है। वह फिल्मी आदमी है वह असली आदमी है आंधी या किसी फिल्म की कहानी लिखत वक्त उसकी आंखो के सामन फर्ना व्यक्ति का डिजाइन था फलां का नही वह किस्सा गो है वह किस्सागो नहा है। ऐसी तमाम किवदतियाँ उसक बारे म फली हुई हैं। लकिन इतना माना जाना चाहिए कि वह अपन व्यक्तित्व और अपनी कहानियो का सबस अच्छा सबूत है।

लेकिन मुझ एसा लगता है कि कमलश्वर किसी भीतरी देहात म अलाव के पास आग तापन वाला इनसान या एक दिन के बच्चे जसा निमल इनसान भर है। वह निहायत मौलिक और चतुर आदमी है। उसके व्यक्तित्व म अच्छाइयाँ और बुराइयाँ वस ही भरी हुई हैं जसे वह दुनिया के किसी भी दूमरे आदमी म भरी हाती हैं। जा आदमी उसस अच्छाई की उम्मीद करता है उस पर भी यह जिम्मेवारी अपन आप आयद हा जाती है कि वह उसक साथ भी अच्छाई का सलूक करे। वह कोई पाप नही है।

कमलेश्वर की सबसे बडी खासियत यह है कि वह अपने दोस्ता दुश्मना से वैसा ही सलूक करता है जस वे है उन्ह कसा हाना चाहिए यह सोचकर वह दोस्ती नही करता। उसने अपन-आपका एक अलग माडल क रूप म पेश किया है। दखना है वह माडल कितने सालो तक चलता है। उसकी छवि बन चुकी है जिस माडल क रूप म वह जनता क सामने पेश होना चाहता था, वह चल निकला है। फिलहाल लोगो को एसे माडल से कोई आपत्ति नही है वह शेर भी है और लोमडी भी सम्पादक के रूप म शब्दा और विचारो का मौलिक उत्पादक भी है खरीददार भी है और विक्रता भी। उसम ताकत है यह ताकत उसने अपनी रचनात्मकता और प्रखर विचारो से अर्जित की है इसीलिए वह एक फ्रेज भी बन गया है और लीजेण्ड भी।

सच्चिदानन्द धूमकेतु

नये लेखक और कमलेश्वर

२ दिसम्बर '७५। स्वर्णिम रश्मियाँ बिखेरता राजगीर (बिहार) का आकाश। नन्ही पत्तियों एवं जंगली फूलों की अनपहचानी महक में लिपटी शांति स्तूप से निरंतर आती हुई ढाक के वजन की मधुर आवाज़!

सुबह के आठ बजे थे। भारत के विभिन्न राज्यों से समांतर सम्मेलन में आये साहित्यकार होनेवाली अगली गोष्ठी में भाग लेने हेतु अपने को तैयार करने में जुटे हुए थे। लेकिन टूरिस्ट बँगले के सामने घास पर एक व्यक्ति निहायत ही साधारण पतलून और स्वेटर पहने बैठा था। उसके चारों ओर बहुत सारे नये लेखक और बिहार के सुदूरवर्ती ग्रामांचलों से आये दर्जनों अपरिचित युवा चेहरे जमा थे। वह व्यक्ति उन्हें समय सापेक्ष और वर्ग सापेक्ष चिंतन के परिप्रेक्ष्य में सार्थक सर्जना की महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ और रचना धर्मिता के नित्य बदलते तेवरों के विषय में समझा रहा था। परिवर्तित संदर्भों में लेखक आज किन शर्तों के साथ अपने को साहित्य सर्जना के साथ जोड़कर सार्थक रचना की उपलब्धि करे, इन सारे मुद्दों पर वह व्यक्ति बहुत ही सीधी सपाट किन्तु ओजपूर्ण और प्रवाहमयी शैली में बोल रहा था। साहित्यिक प्रतिभाओं से युक्त वे अपरिचित चेहरे और नये हस्ताक्षर बीच में अपने-अपने प्रश्न पूछ रहे थे। वह व्यक्ति किसी ट्यूटर की तरह उन्हें समझाता जा रहा था।

इसी तरह एक बार फिर उसी चेहरे से साक्षात्कार हुआ १२ सितम्बर '७६ को आरा प्रगतिशील लेखक सम्मेलन में। नागरी प्रचारिणी सभा भवन के विशाल हाल में दर्शकों और श्रोताओं की भीड़ इकट्ठी थी। साहित्यकार पत्रकार प्रोफेसर वकील शिक्षक—जैसे बुद्धिजीवियों का मेला लगा था। मंच पर अमरकांत अजीत पुष्कल, मधुकर सिंह डा० खगेन्द्र ठाकुर, राकेश ज्योति प्रकाश सुभाष पंत डा० सुरेन्द्र चौधरी जैसे विचारक साहित्यकार, बिहार राज्य के विभिन्न

ज़िलो से आये हुए प्रतिभा सपन्न नौजवान लेखक एव भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के कामरेड उपस्थित थे।

वह व्यक्ति जब बोलने के लिए उठा तो हाल तालियो की गडगडाहट स गूज उठा। बोलते हुए एक जगह वह बाला—

> ' लेखको को यह मलाह दना कि वे गांवा की तरफ जायें इसकी जगह जरूरत है ग्रामीण अचलो, कस्बा और एसी ही छोटी छोटी जगहो से उन प्रतिभाशाली नये लेखको की तलाश करने की जो आम आदमी के दु ख दद क सहभोक्ता है सहयात्री हैं। सवहारा के सपूण जीवन के बीच मे जो रहत है। यत्रणामय त्रासद स्थितियो की जिंदगी के प्रत्यक टुकडे की स्पष्ट जानकारी जिन्ह है जो प्रतिक्षण उनके ही हास्य रुदन का आत्ममात करते है। हम ऐसे अपरिचित हस्ताक्षरा को ढँढना है जा सही मानसिकता के साथ अपनी लेखनी को आम आदमी और सवहारा के इद गिद रखत हैं। जो साहित्य की नयी परिभाषा के साथ अपन को उसी परिप्रक्ष्य म जाड चुके है जिस परिवेश मे उन्होने जीवन को जीया है ।

हाल की गम्भीरता के बीच कभी कभी तालियो की गडगडाहट!

और जब सम्मेलन की समाप्ति पर अन्य साहित्यकार डाक-बगले के डाइग रूम मे बठे हल्की फुल्की बातें कर अपनी थकान मिटा रहे थे एक साहित्यकार बरामदे के नगे फश पर साधनारत था। देह पर लुगी और मामूली सा कुर्ता। वह अकेला नही था। उसके चारा ओर नये लखक और पटना, गया नवादा मुजफ्फरपुर, मोतीहारी जसे शहरा और ग्रामीण क्षेत्रा से आयी अनेकानक युवा प्रतिभाएँ जमा थी। तजी से बदलत आज के राजनीतिक आर्थिक और सामाजिक परिवेश म वह साधक उन्ह साहित्य की विभिन्न स्थितियो और वचारिक सघर्षों के बारे म समझा रहा था। लम्बी यात्राए तय करन के बाद जब समाज निणय की ओर दौड लगाते हुए महत्त्वपूण मुहिम पर पहुच चुका है तो इन क्षणो म नये लखक और उभरते हस्ताक्षरो की भूमिकाएँ क्या होनी चाहिए—य नय लखक किस तरह अपनी लडाई तेज करें। वह उन्हें सामाजिक अन्तद्व द म निहित वग सघष और अवाम की जिन्दगी को उद्घाटित करन और उनकी जिजीविषा को साहित्यिक सुरक्षा प्रदान करने की प्रेरणा दे रहा था।

कितना आडम्बर रहित व्यक्तित्व था वह। बिलकुल अपरिचित उन हस्ताक्षरा स क्या पाने की उम्मीद लिये वह उनक बीच बठा था? दोना सत्रो क सम्मेलन म घटो तक बालत रहन और बार बार श्रोताओ द्वारा प्रदत्त तालियो की लबरेज़ ध्वनि सुनने के बाद अनगिनत युवक-युवतियो का आटोग्राफ दने के पश्चात भी कौन सी ऊर्जा उस साधक क हृदय म कुलाचें भर रही थी जो दिन भर की थकान

भुलाकर, गहरी रात की खुनकती हवा और वर्षा की फुहार म नहायी बयार का आनन्द छोडकर नये लेखक और अपरिचित पौध को साधना के सही मार्गों की जानकारी दे रहा था।

जाहिर है कि वह साहित्यिक प्रतिभाएँ खोज रहा था। नये प्रतिमानो और ऐसे चेहरो की तलाश कर रहा था जिन पर आनेवाला साहित्य गव करेगा। उन नये साहित्यकारो के दिमाग मे सायक साहित्य रचने का प्रगाढ विश्वास पैदा कर रहा था। उन्हें युगबोध की सही जानकारी प्रदान कर रहा था। सवहारा, दलितो और समाज के वचित वग जो सदियो से उपेक्षित तिरस्कृत और पीडित रहे हैं और जो देश की अस्सी प्रतिशत जनसख्या का प्रतिनिधित्व करत हैं उनके लिए और उनकी भाषा म साहित्य रचने की प्रेरणा दे रहा था। सही समझदारी से उन्हें लैस कर रहा था। लगता था कि किसी मत्रणा कक्ष म लडाई के मुद्दे निर्धारित किये जा रहे हो।

उपस्थित चेहरो की आँखें उस मनीषी पर अपलक टिकी थी। वे उस मनीषी के पास किसी छपास की भूख लेकर नही जमा हुए थे और न किसी स्वार्थसिद्धि के तहत ही वे अपनी स्थापनाएँ चाहते थे। उनका नता जिस तरह स्वाथ रहित था साहित्य के वे तरुण प्रहरी भी किसी महत्त्वाकाक्षा के निमित्त नही आये थे। वे अपने नेता की तकरीर से अपने अन्दर अदभुत ताकत महसूस कर रहे थ। उनके चेहरे पर जूझारुपन का लेप चढता जा रहा था। वे साहित्यिक वचनाओ के विरुद्ध अपनी कलम तेज करन पर आमादा दिख रहे थे। सामाजिक मूल्यो को व कप्तान क निर्देशानुसार नये परिवेश म देखन और आँकने के लिए कटिबद्ध थे। सामान्य जन का साहित्य गढने यथाथ स्थितियो को साहित्यिक मान्यताएँ प्रदान करन और सवहारा के हितो की रक्षा करने क उद्देश्य स लेखकीय आयाम देने की खातिर युवा पीढी के वे लेखक प्रतीक्षित दीख पड रह थे।

वह एकान्त साधक बहुत दर तक उनस बातें करता रहा। रात गहरा चुकी थी। साहित्यिक चर्चाओ का दौर समाप्त हुआ। अब वह मनीषी सबसे नितान्त वयक्तिक बातें करने लगा— क्या करत हो परिवार मे कितन व्यक्ति हैं फसल कैसी है—कहा तक पढे हो यहा से कितनी दूरी पर तुम्हारा गाव है वक्त मिला तो कभी आऊँगा' जैसी सौहाद्रपूण बातें होती रहीं।

अनौपचारिक बैठक जब समाप्त हुइ तो लग रहा था कि व सभी काफी सतुष्ट ह। आश्वस्त हैं। उन्होंने अपन विश्वास को सही व्यक्ति मे पाया है। उन्होन नाम के अनुरूप ही उस साहित्यिक मनीषी को पाया है जो निश्छल है निष्कलुष है आडम्बर स परे है। अपन व्यक्ति को दूसर के ऊपर आरोपित करने की ललक उसके अन्दर नहीं है। अपने अनुभव और लम्बी अवधि तक साहित्यिक यात्रा करन का दप उसकी आँखो म नही है। प्रतिष्ठा, पद और यश पान का जिसे तनिक

भी मान नही है। महतो जैसा दप और उथलापन उसक व्यक्तित्व म नही है। लफ्फाजी, बयानबाजी का पाठ पिलाकर वह नयी पौध का भग्माता नही है। गुरुडम दिखाने की लालसा उसकी पेशानी पर नही है। व्यक्तित्व का दूसर के ऊपर थोपने की भूख उसकी आँखो मे नही है और न किसी लोभ के तहत वह किसी गुटबाज की तरह ही है।

उसने साहित्य की यात्रा की है। लम्बी यात्रा तय की है। सफल यात्राएँ पूरी की हैं। बावजूद इसके वह भारत क श्रेष्ठतम महानगर की सारी सुविधाओ का छोडकर कष्टदायक लम्बे फासला को तय करता हुआ छोटे छोटे कस्बों शहरों और यहाँ तक कि दूर दराज गाँवा की साहित्यिक गोष्ठिया म भाग लेता है। मैंने उसे कटकटाती सर्दी म मुजफ्फरपुर की ऊबड खाबड सडको पर चिलचिलाती धूप मे जमशेदपुर के राजमाग के पिघ त कालतार पर राजगीर की नगी पहाडी पगडडियो पर, नुकीले पत्थरा वाल रास्त पर आरा की गीली रपटीली सडको पर चलते देखा है। पीछे लेखक विद्वान और सम्मानित स्थानीय व्यक्तियो की बहुत बडी भीड! सभी उसके साथ चलत हुए! जहाँ कही भी उसे देखा मैंने पाया कि वही भोला भाला चेहरा! साँवला रग! आँखा मे दृढ विश्वास! और उसके पीछे स्नेह बरसाते शुभ कामनाएँ लुटात लेखक और पाठको का लम्बा हुजूम। वह सबका दोस्त है—अतरग दोस्त। सभी उसे चाहते हैं। बिलकुल नय लेखको से लेकर पके बालो वाल अनुभवी साहित्यकारो का एक बहुत बडा समुदाय उसे प्यार करता है। उसक साहित्य को लोग प्यार करते है। उसकी जादुई शली म लिखी गयी कहानियो का प्यार करते हैं। साहित्य क प्रति उसक अनुराग को पसन्द करते है। उसके इकहर व्यक्तित्व की प्रशसा करत है। बनावट रहित उसके व्यक्तित्व का आदर करते है। उसक धधकते विचारो का लकर बहसें करत और दिशा पाते हैं। यह वही साधक है जिस मन राजगीर म लेखको के बीच घिरे हुए देखा था—कमलेश्वर!

मच पर पहुँचत ही उसे मालाएँ नहा चाहिए। चलन क समय वह किसी सवारी की फरमाइश नही करता। वह साधारण आदमी है। साधारण लागा की पंति म खडा रहना चाहता है। इसम उसे आत्मिक सुख की अनुभूति हाती है। पुराने साहित्यकारो स अधिक वह नये और उभरत हुए साहित्यकारो से घुल मिलकर बातें करता है। वह रिक्शावाल से भी बीडी माँगकर पीन म नहा चूकता। रास्ते भर उनके पारिवारिक जीवन के बार म पूछने म उस आनन्द आता है। वह मजदूर है। सच्चा और ईमानदार मजदूर। साहित्य का मजदूर। कलम का मजदूर!

बगैर किसी भूमिका के मैं स्पष्ट शब्दा म कहना चाहूगा कि कमलेश्वर ने साहित्य को नयी जमीन दी है। दिशाहीन लेखक ऐय्यारी और सस्ते रोमाटिक

साहित्य पढने वाले पाठकों को कहानी विधा के प्रति आकृष्ट किया है। नये रचनाकारा को रोशनी दिखायी है। सहयात्रियो को दष्टि दी है। नयी-नयी प्रति भाओ की तलाश की है। कहानी को जीवत बनाया है। कहवाघरा और महानगरा, काक्टेल पार्टियो और सेक्स की दहलीज से अद्धचतनावस्था म पडी कहानी को उठाकर सवहारा क दरवाज़े पर ला खडा किया है। प्रतिक्रियावादी समझ से आक्रात नय लेखका को सही मानसिकता की पहचान करायी है। कहानी के टुच्चे स्वभाव का बदलकर उसे दबग और शक्तिशाली बनाया है। लिजलिजी सवेन्ना, यौन कुठा और अजनबीपन व्यक्त करनेवाले साहित्य को नकारकर उसे साथकता प्रदान की है। अन्तमुखी कहानी को वहुमुखी बनाया है। कहानी को नयी परिभाषा दी है।

कमलेश्वर न लेखका को खासकर नये लेखको को अपने परिवेश और जीवनानुभव म स कथ्या को चुनन की समझ दी है समय सगत कथ्य का छाँटने की दष्टि दी है और उन कहानियो को नये लेखको के जीवन म से निकाला है जो आदमी क प्रत्येक क्षण के साथ जी रही हैं आम आदमी की विभिन्न मुद्राएँ जहा स चौंकती हैं घुटन और टटन के विरुद्ध अपनी अकूत ताकत के साथ जो सघपरत हैं, जो समय के सम्पूण अनुभव की शिनाख्त कराती है इन्होने अपने को सवहारा क साथ सीधे जोड लिया है प्रामाणिक स्थितियो के बीच जिनकी सासें सुनायी पडती हैं। वयक्तिक यथाथ को उदघाटित करनेवाली कहानियाँ अपने असली तेवरो को लेकर वग सापक्ष और समय सापेक्ष स जुड चुकी हैं। इसने बहुविध कोणा म जीवन के आतरिक पक्षा को देखा है। इसकी अभिव्यक्ति शिल्प विधान, भाषा शब्द-याजना और साकेतिकता पर नही है। अब कहानी यथाथ का बाध कराती हुई भी बिलकुल सहज है। भाषा शिल्प रूपकात्मकता, गठन, कथ्य और गुण म अपनी सहजता न्मने नहीं खायी है। इसकी दिशा सघषरत व्यापक सामाजिक पक्ष की है। यह स्थितिशील नहीं गतिशील है।

य कहानियाँ सहज ह। आस्थावान हैं। असरदार हैं। इनम मारविडिटा नहीं है। ये स्वाभाविक अभिव्यक्ति की पक्षधर हैं। इनकी कहानिया स्वय बोलती है और लेखक तथा पाठक का तटस्थ नहीं रहन देती। उनक ऊपर रचनाकारो की आवाज लगी नहीं रहती। कहानी के वक्तव्य उथली सतह पर नहीं हाते। वह गहराइया म उतरकर आदमी के अन्दर ध्वनित हो रहे हैं। इसे सामती मुहावरा और रपवाद म विश्वास नहीं है। ये कहानियाँ वतमान का मानवीय विश्लेषण करती हुइ भविष्य के निर्धारण की दिशा खोलती हैं और य नय लखक अपने साथी सहयात्री नेता के विश्लेषणा के आधार पर और अपन द्वद्वात्मक यथाथ का पहचान कर अपनी कहानिया क माध्यम से आदमी क सम्पूण जीवन को परिभाषित कर रहे ह।

प्रश्न है कि किस साहित्यिक जडता के विरोध म कमलेश्वर न नये लेखको की तलाश शुरू कर दी ? कहानी कहा भटक गयी थी और उसकी रचना प्रक्रिया कौन सी उदासीनता आ गयी थी जिस पाठक स्वीकार नही कर रहा था ? वह कौन सा उपेक्षित पक्ष था जिसकी अपक्षा स्थापित साहित्यकारो से थी ? सजन प्रक्रिया की वह कौन सी गरिष्ठ अवस्था थी जो पाठको के जेहन म नही उतर रही थी ? पूववर्ती कहानिया म वह कौन सी अवास्तविक गरजरूरी उबाऊ और असम्प्रेषित टुकडे थे जो पाठका का हमशा हाशिए पर ही रहने के लिए मजबूर करते रहे पाठको का असम्पृक्त छोडत रहे ? ये कहानियाँ पाठक और लेखका के बीच तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित करने की अपेक्षा अलगाव की स्थितियाँ ही उत्पन्न करती रही। दानो क बीच का फासला और लम्बा हा गया। स्पष्ट विभाजक रेखा खिच गयी। दो ध्रुवा पर रचनाकार और पाठक अलग अलग रहने लगे। कहानी का वह कौन सा शिथिल दष्टिकोण था जो उस दौर क कहानीकारो को सही सदर्भों म आम आदमी के सम्बन्धा के साथ नही जाड पाया ? उनक मस्तिष्क म कहानी अपनी स्थायी पहचान नही बना सकी। क्या पाठक कहानी से ही नहा साहित्य स विमुख होने लगा ?

इतिहास पर नजर दौडाने के बाद स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दी कहानी को अपनी लम्बी यात्रा म बहुत सारे मुकामो और पडावा पर ठहरना पडा है। पहली कहानी इन्दुमती (सन १९०० ई०) अथवा दुलाईवाली (सन १९०७) से लेकर नयी कहानियो के कथा कान-खण्ड को अगर हम दखत है तो स्पष्ट रूप से पता चलता है कि इसके विकास की गति सीधी और स्पष्ट नहा है। वैतुके आदर्शों वादा परम्पराआ धाराआ विचारा और आन्दोलना के उबाऊ और रपटील क्षणो को इसे झेलना पडा है। सरस्वती इन्दु सुदशन और भारतमित्र म प्रकाशित बुजुर्गों का कहानिया उत्पत्ति और प्रयाग की कहानियाँ कही जाती रही हैं। यह प्रयाग काल अपनी पूणता गुलेरी जी की कहाना म प्राप्त करता है।

पच परमेश्वर' (१९१६ ई०) क साथ कथा यात्रा की एक नयी शुरुआत होती है। उसके बाद लगभग डेढ दशक तक प्रमचन्द की एकल प्रतिभा कथा साहित्य पर छायी रही। प्रेमचन्द न वतमान का ही चुना था। यथाथवादी और समाजोन्मुख दष्टिकाण उनकी कहानियो का परम्परा थी। व घटनाश्रयी न होकर जीवनाश्रयी था। कथानक जीवन-अशा को प्रस्तुत करत थ और यही प्रस्तुतीकरण प्रमचद की सफलता थी।

उस परम्परा के समानान्तर दूसरी परम्परा भी चल रही थी जिसका प्रति निधित्व जयशकर प्रसाद कर रह थ। यद्यपि प्रमचन्द और प्रसाद एक-दूसर के साहित्यिक पूरक बनकर रह लकिन दानो का दष्टिकोण भिन्न था। एक का मनुष्य म विश्वास था तो दूसरे का व्यक्ति म। एक न समय सापक्ष से अपन का जोड

लिया था तो दूसरा अतीत के खण्डहरो म आदर्शवादी परतो को तराशते हुए विचारोत्तेजक, रोमानी और काल्पनिक कहानियो की ही खोज करता रहा। इसलिए प्रसाद अधिक दिना तक अपनी परम्परा को कायम नही रख सके। रायकृष्णदास विनोदशकर व्यास चण्डीप्रसाद हृदयेश और गोविन्दवल्लभ पत के बाद यह प्रवर्तित परम्परा आगे नही चल सकी। आग चलकर यह परम्परा प्राकृतवाद और नग्न यथाथ क रूप म उग्र चतुरसेन शास्त्री पदुमलाल पन्नालाल बक्शी की रचनाओ म बदनक्र आयी जिसे साहित्य न अस्वीकार कर दिया।

सन १९२८ ई० म विशाल भारत म जैनेन्द्र अपनी कहानी खेल लेकर आये जिसे कहानी परम्परा का तीसरा अध्याय माना जा सकता है। प्रेमचद न किसानो और निम्न मध्यमवग को विषय बनाया था जबकि जैनेन्द्र घरो और नारियो की तस्वीर ही अपनी कहानियो म खीचत रहे। वे अन्तमन के मनोविज्ञान और अन्त द्वन्द्वो के चित्रण म ही अपन को उलझाये रहे। इनकी कहानिया समस्याओ का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण ही करती रही।

यद्यपि अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी और पहाडी आदि ने इस परम्परा का स्वीकार करते हुए उसे पुष्ट करन का प्रयास किया लेकिन शिल्प और विधान-योजना को छोडकर उनम नवीनता नही आयी और सभ्यता के ऊपरी सस्कारो पर लेप ही य कहानीकार चढात रह।

कहानी जब मनोवैज्ञानिक मकडी जाल मे बुरी तरह उलझी हुई थी तो यशपाल न प्रेमचद की परम्परा को पुनर्जीवित कर कहानी को नयी दिशा देन का प्रयत्न किया। लकिन सिद्धान्तो की स्थापना और सामाजिक मूल्यो के पुनर्निर्धारण से अधिक वे कुछ नही कर पाये। प्रेमचद ने समस्त भारतीय समाज को अपनी कथाओ म समेटा था जो यशपाल और उनके बाद क कहानीकार अमृतराय, चन्द्र किरण राधाकृष्ण आदि नही कर पाय। इसका नतीजा यह हुआ कि कहानी म गतिरोध की स्थिति पैदा हो गयी।

आजादी के बाद जब तक नयी कहानियों की परम्परा नही चली तब तक कहानी अनकानेक वादो जैसे विचारों और प्रवृत्तियों के बन्द चौखटो के अन्दर ही घुटती रही। नये-नये प्रयोग हुए। नारे लगाकर इसे निरूपित करने का प्रयास किया गया। इसकी चीर फाड की गयी। कहानी को बहुविध कोणो स आंका गया। लकिन इसका स्वरूप जर्जर, अनुभवहीन, अयथार्थ, परम्परा, नितान्त वैयक्तिक और अस्तित्वहीन ही बना रहा। और इन्द्रनाथ मदान तक को लिखना पडा कि यदि उन्हें आधुनिकता का एक प्रक्रिया क रूप म स्वीकार किया होता और कहानी की मानसिक भूमि का वयक्तिकता तथा सामाजिकता के कटघरों म विभाजित न किया होता सामाजिकता तथा प्रयोगात्मकता की श्रेणियों म न

बाँटा होता तो आज की कहानी को नये नारे लगाने की शायद आवश्यकता न पड़ती।'

स्वतन्त्रता प्राप्ति के तत्काल पहले और शुरू के सालों में एक लम्बे अरसे तक बिखराव और भटकाव की आमद और विडम्बनापूर्ण स्थितियों को लेकर जब कहानी एक नयी परम्परा के साथ जुड़ी तो इसका कहानीपन, इसका भारतीय स्वरूप और इसका सहज यथार्थ पाठकों के समक्ष उभरकर आया।

सक्रान्तिकाल का युग समाप्त हो चला था। कहानी का गत्यावरोध खत्म होने की स्थिति में आ पहुंचा था। और सचमुच हुआ भी। पाठक कहानी के अस्तित्व को स्वीकार करने लगे थे। कहानी पर छाये सिद्धान्तवादी प्रभावों को अस्वीकार कर दिया गया। भाई भतीजेवाद वाली राजनीति, भ्रष्टाचार, प्रशासनिक सड़ाँध, स्वार्थपरता, टूटे हुए सामाजिक रिश्ते, बिखरे मानवीय सम्बन्ध, विकृत मर्यादाओं, कुण्ठित मनोविज्ञान, प्रचारवादी प्रवृत्तियों, यथार्थ और विसंगत परिवेश में समकालीन आदमी को केन्द्र बनाकर बहुत सारी कहानियां लिखी गयीं।

कस्बे का आदमी (१९५५), राजा निरबंसिया (१९५६), नौकरीपेशा (१९५६), मलबे का मालिक (१९५६), जानवर और जानवर (१९५६), जहाँ लक्ष्मी कैद है (१९५७), तीसरी कसम (१९५७), भूखे और नंगे लोग (१९५८), नीली झील (१९६०), दुःख भरी दुनिया (१९६२), खोयी हुई दिशाएँ (१९६२), आमन्त्रित (१९६२), दुनिया बहुत बड़ी है (१९६३), फौलाद का आकाश (१९६२), टूटना (१९६३), फसला (१९६४), बदबू, सात बच्चों की माँ, डिप्टी कलक्टरी, छिपकली, कर्मनाशा की हार, समय रेखा, भाग्य रेखा, ढिबरी गुल, की बन्ना, चौदह कोसी पचायत आदि तमाम जीवन सत्य से जुड़ी और प्रामाणिक यथार्थ को लेकर कहानियां लिखी गयीं और एक लम्बे काल-खण्ड की गतिहीनता को तोड़ने का सफल प्रयास किया गया। नयी कहानी की उपलब्धियों का दौर लगभग एक डेढ़ दशक तक कथा ससार में छाया रहा। कमलेश्वर, मोहन राकेश और राजेन्द्र यादव तो नयी कहानी के स्तम्भ माने जाते थे, इनके अतिरिक्त लेखकों का एक अच्छा खासा वर्ग जीवन से जुड़ी हुई कहानियों को देने और कहानी विधा को समृद्ध करने में सचेत रहा। लेकिन अचानक '६५ ई० के बाद नयी कहानियों का दौर समाप्त प्राय सा लगने लगा और नयी कहानी के नाम पर अयथार्थ, फ़ार्मूलाशिप से भरी हुई जीवन से कटी हुई कहानियाँ आने लगीं। स्वयं कमलेश्वर १९६६ के 'भरे पूरे अधूरे' कहानी के बाद बिलकुल सतही अनुभव की कहानियां देने से अपने को रोक नहीं सके। इसका नतीजा यह हुआ कि कहानी में एक बार फिर से गतिरोध की स्थिति उत्पन्न हो गयी। ६४, ६५, ६६, ६७ के आसपास के लेखकों की कहानियों के पात्र उबलते झाग के उफान की तरह पाठकों को थोड़ी

दर तक चमत्कृत जरूर कर देते थ लेकिन वे स्थितिया क्षणिक ही बनी रही। उनम विदशी नयापन था लेकिन भाषायी दुरूहता की चपेट से वे अपने को उबार नही सके। स्नॉबरी स भरे अन्दाज को लेकर, रामानी चादरो म ढँकी वैयक्तिक यथाथ से लकर सवहारा के बनावटी दु खो से भरी जि दगियो की कहानिया भी लिखी गयी। लेकिन कुछ कहानियो को छोडकर वे काल्पनिक ही लगती रही। उनम अनुभवो का अभाव परिलक्षित होता रहा। व भाववादी और फशनवादी अधिक, वस्तुवादी कम थी। वे पराजयबोध और अस्वीकृति की सीमा म बँधी हुई थी। उनम ओढा हुआ नयापन अवश्य था लेकिन 'आम आदमी की पीडा पर वे अपनी वाच्छा की मुहर' नही लगा पायी। उनका दद उधार लिया हुआ था। इन कहानियो के रचनाकार अपन समय की प्रख्यात त्रयी (मोहन राकेश, कमलेश्वर और राजेन्द्र यादव) की पात म जल्दी से जल्दी खडा होना चाह रह थे। सिद्ध होने के पहल ही उन्ह प्रसिद्ध होने की भूख थी। नतीजा यह हुआ कि इनकी कहानिया के पात्र निहायत अपरिचित होकर आने लग। वे अपन पाठको को अपनी ओर आकृष्ट करने के बजाय उनके मन म कहानी क प्रति वितृष्णा उत्पन्न करन लग। अवाम के नाम पर उनके चेहरे को ही बुरी तरह नाचन-खसोटन लग। रचना अस्वाभाविक चित्रण क आधार पर विकृत होती बिगडती रही।

कहानी को कभी चरित्र प्रधान बनाया गया तो कभी शिल्पोन्मुख। कभी वयक्तिकता सामाजिकता क धरातल पर इसके रेशे उधाडे गय तो कभी नारो के शार म और आन्दालनो की चपेट म यह अस्तित्व विहीन बन गयी। किसी न इसे परम्परा से जोडा तो किसी ने परम्परा को तोडकर इसे शून्य से जोड दिया। कहानी क ऊपर इतनी बार छुरिया चली कि यह अपने अस्तित्व को खो देन की स्थिति मे पहुँच गयी। कुछेक कहानीकारो को छोडकर बाकी कहानीकारो की रचनाएँ कभी परिचित रही तो कभी नितान्त अपरिचित। सकुलता और अराजकता का यह स्थिति शायद इसीलिए कायम हो गयी थी कि कहानीकार भावबोध से अनुप्रेरित अधिक थ, समाज सत्य से कम। उनम शिल्प की कुशलता थी लेकिन अनुभूति की प्रामाणिकता का नितान्त अभाव था। उनके पात्र स्थिर थे। चरित्रों मे गतिहीनता थी। वे चरित्र अपन परिवेश म पूरी विश्वसनीयता के साथ अपनी ओर देखन के लिए पाठको को आमन्त्रित नही कर पा रह थ। चित्रों बिम्बो, उपमाओ प्रतीको तथा छायावादी सुकुमार शब्दावलियो के माध्यम से जब कहानी के स्वरूप को बनान का (शायद बिगाडन का ?) प्रयत्न कुछ कहानीकारो द्वारा किया गया तो रचनाएँ प्रयोग की प्रक्रिया मे ही उलझकर रह गयी। इन कहानीकारों न सरलीकरण की प्रक्रिया म गौड लगात हुए कहानी के स्वरूप का और भी दुरूह अग्राह्य, अपाच्य तार्किक, 'बिखरी अलकें ज्यो तक जाल'-सा बना दिया। व्यक्ति को उसके परिवश स काटकर उस उसकी सनकमयी समग्रता म देखन की

चिन्ता म, नय नये मूल्या क नामें पर अत्याधुनिकता की ओर दौड लगाती हुई ये कहानियाँ अधिक रूढ हठी और स्टीरियो-टाइप बन गयी। तभी तो राजेन्द्र यादव को मानना पडा कि—"नयी कहानी जहाँ आ गयी है, वह उसका समाप्त होना नहीं है आगे गति न होने के कारण बिखर जाना है।

बिखराव की इस स्थिति को जब नयी कहानियो के कहानीकार तमाशे क रूप म देखत रहे, ता कमलश्वर ने आग बढकर इसे पुन एक बार नया सस्कार देकर कहानी का बिखरने से बचा लिया। निरपेक्ष उदासीन और तटस्थ बैठे रहना उन्ह पसन्द नही था। उन्हान आधुनिकता के नय मान मूल्या को स्वीकारा और कहानी को नयी सास्कारिकता के साथ जाडा।

जिस तरह कमलेश्वर ने नयी कहानी को स्थगित करने और उस मान्यता दिलान मे अपना गहरा और व्यापक प्रभाव कथा ससार पर छाडा उसी तरह रूढ समझकर उमे नकार भी दिया। जिम तरह चखन न कहानी का शास्त्रीय रूप तोडा उमी तरह कहानी म गतिशीलता लाने के लिए कमलेश्वर ने उसके रूढ और हठी स्वभाव को बदला। कहानी क मिजाज की विरक्ति और उदासीनता तोडकर आतरिक कुण्ठा और अनास्था का अस्वीकार कर स्वाभाविक अभि व्यक्ति की वकालत कर रचना का सवेद्य बनाकर आम आदमी के लिए और उसकी ही नियति स कहानी को जोडकर जिस नयी धारा और परम्परा की शुरु आत कमलेश्वर ने की है वह नय लखकों क लिए पथ प्रदर्शिका तो बन ही चुकी है आनवाल रचनाकारा के लिए भी वह प्रकाश स्तम्भ है।

नयी कहानी के मलब पर उस पीढी क लखक जब अपनी रचनाआ को पाठको के जहन म उतारन की तरकीबें बुन रह थ, जहाँ व अपनी डगमगाती स्थापना की सुरक्षा म जुट हुए थ वहाँ कमलश्वर साहित्य गढन क साथ ही साथ साहित्य कार भी गढ रह थ। बिलकुल उसी तरह जिस तरह हिन्दी क सर्वांगीण विकास के लिए भारतन्दु हरिश्चन्द्र न नय लखका की कतार खडी कर दी थी। जिस काम को डा० जानसन ने अग्रेजी क लिए किया एण्ड्रीगाइड न फ्रेंच क लिए और सानिजाका न जापानी साहित्य क लिए किया कमलश्वर न भी वही काम हिन्दी साहित्य क उत्थान क लिए किया।

इस अथ म कमलश्वर प्रतीक-पुरुष ह। उन्हान साहित्य को नयी परख दी है साहित्यकारों को गढा है। सवहारा के हितो की रक्षा और आम आदमी क जीवना त्थान क लिए प्रतिभा-सम्पन्न अनगिनत नय लखका का खाजा और गढा। उन्हें समय सगत सही वचारिक दृष्टि दी है।

एक सहभोक्ता होन क कारण व अकहानी क दौर की कहानियो की खामियो का खुली आँखो स दख रह थ। व साहित्य का जन-साधारण की चीज बनाना चाहत थे। गोष्ठियो और खाली वक्त को काटनवाल पाठका की भाड की परवाह

न कर उन्होंने कहानी के भड़कीले वस्त्र को उतारकर सादे और मामूली कपड़े पहनाकर उस आम आदमी तक पहुँचाया। नये लेखकों के माध्यम से उन्होंने सुदूर गाँवों की चौपाल और अलाव के पास ढिबरी की रोशनी में पढ़ी जाने वाली कहानियाँ भेजी। महानगरों और नगरीय जीवन से उलझी कहानियों को वहाँ से निकालकर उसे गाँव-कस्बे और छोटी छोटी जगहों में पहुँचाया। साधारण स्तर की समझदारी रखने वाले पाठकों और श्रोताओं को भी कहानी पढ़ने के लिए आकृष्ट किया।

सातवें दशक को ही अगर मूल्यांकन किया जाये तो बातें साफ हो जाती हैं कि सौ से भी अधिक नये लेखक कमलेश्वर के अन्वेषण हैं। ये सारे रचनाकार इनकी खोजों के ही प्रतीक हैं। प्रत्येक वर्ष सारिका का कम से कम एक नवलेखन अंक, नयी पौध स्तम्भ, सामान्य अंकों में भी नये रचनाकारों को समाहित करने की परम्परा टी० वी० के माध्यम से नये लेखकों को परिचित कराने का कार्य, कस्बों, और गाँवों में की गयी छोटी छोटी गोष्ठियों की रपट और नये हस्ताक्षरों की वैचारिक टिप्पणियों का 'सारिका' में प्रकाशन न केवल नये लेखकों की चिन्तनधारा को अग्रसर करने में सहायक हुआ है बल्कि उन्हें अजस्र शक्ति देने के साथ-ही साथ निरुत्साहित होने से बचाता भी रहा है। युवा सम्पादकों की छोटी-छोटी पत्रिकाओं का 'सारिका' के माध्यम से मूल्यांकन और उन उभरती प्रतिभाओं की पुस्तकों की समीक्षाओं का प्रकाशन कर नये लेखकों के हृदय में साहित्य के प्रति अनुराग और अपनी रचनात्मक प्रतिभा पर विश्वास पैदा कराने में कमलेश्वर ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। इस तरह नये लेखकों के एक बड़े वर्ग को नेपथ्य के अँधेरे से साहित्य के सामने लाने का श्रेय कमलेश्वर को है।

दूसरों को परम्परा से जोड़ने की प्रक्रिया बहुत ही कष्ट-साध्य है। बूंद-बूंद संचय कर सागर को बनाने वाला मेघिल आकाश ही जानता है कि उसे कितनी बार धरती की उष्णता, बिजली के विद्रोह और हवा के भयानक झंझाड़े सहने पड़े हैं। किन्तु निर्माण का ऐसा महत्त्वपूर्ण कार्य साधारण व्यक्तित्व के वश का नहीं होता, उसके मूल में ज्वलंत जिजीविषा और रचनात्मक आनन्द ही होता है। ऐसे ही असाधारण व्यक्तित्व के प्रतीक हैं—कमलेश्वर। नये लेखकों को निरन्तर रचने गढ़ने की उनकी प्रवृत्तियों को देखकर याद आती है टी० एस० इलियट की ये पंक्तियाँ—

Because I can not hope to turn again
Consequently I rejoice having to construct something upon
which to rejoice

खण्ड ७

टेलिविज़न और कमलेश्वर

निसीम इज़ीकेल प्रसिद्ध अंग्रेज़ी कवि और विचारक ने कहा और लिखा

"कमलेश्वर के कार्यक्रम (परिक्रमा) भारतीय टेलिविज़न की उपलब्धि हैं। वे कार्यक्रम हैं ही नहीं घटनाएँ हैं। अब बार-बार कमलेश्वर के कार्यक्रमों के बारे में लिखने और कहने को कुछ शेष नहीं रह गया है।'

•

प्रसिद्ध संगीतज्ञ और अंग्रेज़ी लेखक मुरिन्दर सिंह ने लिखा

कमलेश्वर की 'परिक्रमा' अद्वितीय है। टेलिविज़न पर कमलेश्वर जिस तरह से मामूली लोगों का इंटरव्यू लेते हैं और उनकी मजबूरियों को उगलवा लेते हैं—और संगत कथ्य को रेखांकित कर देते हैं वह अपने में एक अनुभव है। कमलेश्वर ने इंटरव्यू करने के तरीके को कला बना दिया है।'

•

फॉर यू अंग्रेज़ी पत्रिका में विक्रम वोहरा लिखते हैं

सड़क का आदमी ही 'परिक्रमा' कार्यक्रम की जान है। इसके लिए ज़रूरी था कि मध्यवर्गीय बूर्ज़ुवा समाज के संस्कारों से मुक्ति पायी जाय। शायद यही मुख्य कारण है कि कमलेश्वर का परिक्रमा कार्यक्रम इतना लोकप्रिय है।

प्रसिद्ध सिने-अभिनता आइ० एस० जौहर ने एक जगह लिखा
जो लोग चार हज़ार रुपये खच करके टी० वी० खरीदते हैं, वे हज्जामो और कुलियो के कायक्रम नही देखना चाहते। कमलेश्वर के प्रोग्राम बकवास है'

कमलेश्वर ने टी० वी० पर ही उत्तर दिया

'जो लोग अपनी आँखो पर चार हज़ार का चश्मा लगाये बठे हैं, उन्ह जो दिखायी नही देता, वही मैं अपने कायक्रमो म पेश करता हूँ।

ख्वाजा अहमद अब्बास

टेलिविजन स्टार—कमलेश्वर

कमलेश्वर के व्यक्तित्व के कई पहलू है।

वह सबसे पहले एक कहानीकार है। उसने बहुत-सी कहानियाँ लिखी हैं जिनमें से अक्सर बहुत अच्छी हैं प्रगतिशील हैं, सच्चाई की आईना हैं।

हिन्दी कहानी के विकास में उसका बड़ा हिस्सा है।

साथ में वह उपन्यासकार भी है। मालूम नहीं कहाँ से अच्छे उपन्यास लिखने के लिए वह समय निकालता है! सच तो यह है कि वह कमाल का उपन्यासकार है जो जिन्दगी के निकटतम पात्रों का अपने उपन्यासों में पेश करता है।

वह धीरे धीरे फिल्म के क्षेत्र में भी आ रहा है। कभी स्क्रीन-प्ले और सीनरियो अपनी कहानियों ही के प्लॉट पर आधारित उसने लिखे हैं। मुझे उसकी फिल्म फिर भी और 'मौसम' बहुत पसन्द आयी है।

'सारिका' का वह सम्पादक है। पहले वह नयी कहानियाँ पत्रिका का सम्पादक था। सम्पादन आसान काम नहीं है। खासकर कहानियों की पत्रिका का। ढेर सारी कहानियों में से कहानियों का चुनाव करना, बहुत मुश्किल काम है। लेखकों से अकसर एडिटर के निजी सम्बन्ध होते हैं। कहानी न छापी तो गलत-फ़हमी का डर होता है। लेकिन एडिटर की कुर्सी पर जब कमलेश्वर बैठ जाता है तो वह दोस्त नहीं रहता, एक कड़ा आलोचक बन जाता है। आप उसके चुनाव को न मानें, पर उसकी ईमानदारी और खुलूस को मानना पड़ता है—क्योंकि बड़ी ईमानदारी से वह कहानियों और लेखों की परख और चुनाव करता है।

वह बहुत सी सरकारी समितियों और ग़ैर-सरकारी संस्थाओं का सदस्य और कारकुन भी है। अक्सर हवाई सफ़र में रहता है। कान्फ्रेंसों और गोष्ठियों में भी शरीक होता है।

वह दोस्त भी है। जब दोस्त बुलाते हैं तो वह झटपट समय निकालकर दोस्तों की महफिलों मे बिना तकल्लुफ पहुच जाता है—समय की कमी का बहाना नहीं करता है।

इस 'अष्ट पह' इनसान की सबसे नयी और अनोखी विशेषता यह है कि वह टेलिविजन स्टार भी है जिससे वह जनता के करीब आता है।

फिल्म स्टार तो हमने देखे हैं।

पर हमारे देश म टेलिविजन स्टार होना नयी चीज़ है। यह शख्सियतें अभी पाँच-छह बरसो से उभर रही हैं।

दो टेलिविजन स्टार तो बच्चन प्रभू और याकूब सईद हैं जिनका हास-परिहास प्रोग्राम हर रविवार को बम्बइ से पेश होता है—वे हँसने-हसान का सामान जुटाते हैं।

एक टी० वी० स्टार पेंटर है जो अपने लडडू सिंह म हमारे पूरे समाज का आईना दिखाता है—हँसाता भी है और थोडा बहुत सोचने पर भी बाध्य करता है।

एक और टी० वी० स्टार हमारी पुरानी दोस्त तबस्सुम है जो साधारणत फिल्मी दुनिया के घिसे पिटे व्यक्तियो को प्रस्तुत करती है और उनके बहाने से फिल्मी गीत भी पेश करती रहती है। लेकिन कभी-कभी परशुराम जैसे लोगो को पेश करके फिल्मी जगत के विरोधाभास और आर्थिक ऊँच नीच के बारे म हम सोचने पर मजबूर कर देती है।

एक टी० वी० स्टार देहली के डी० मतो साहब हैं जो अपने 'Perspective' प्रोग्राम म आज के भारत की उन्नति ठहराव या पतन की साप्ताहिक तस्वीर पेश करते हैं। कभी उनका प्रोग्राम सचमुच चौंका देनेवाला होता है। कभी वह सामाजिक ट्रजिडी का आईना दिखाते हैं और हम रो पडते हैं (जैसे कोढियो के साथ होने वाले व्यवहार को जब वह पेश करते हैं) मगर आमतौर पर वह सामाजिक और आर्थिक समस्याओ को पेश करके हमे सोचने को उकसाते और तयार करते हैं।

और एक टेलिविजन स्टार हमारे कमलेश्वर साहब हैं जो अपने प्रोग्राम 'परिक्रमा' के जरिये हम अपने जैसे दूसरे लोगो से परिचित कराते हैं और इन इनसानो के जरिये हमारे समाज के दुखते हुए हिस्सो पर हाथ रख दिखाते हैं।

पहले जब यह परिक्रमा प्रोग्राम शुरू हुआ तो उन्होंने पढे लिखे लोगो को दिखाया। उनकी सामाजिक समस्याओ पर उन्हें बोलने का मौका दिया और उनसे वाद विवाद किया। सवाल ऐसे तीखे किये कि रयाकारी और कपट (कुछ रयाकारी पुरखुलूस भी होती है) का पर्दा हट गया और हमे अपने समाज की रूपरेखा इन पात्रो म दिखायी देने लगी।

यह प्रोग्राम चलता रहा और एक के बाद एक तबके के प्रतिनिधि हमारे सामने आते रहे—

प्रोफेसर लेखक विद्वान आलोचक, शिक्षक, डॉक्टर, साहित्यकार कवि और शायर।

यह सब आये। अपना अपना दुखड़ा रोया और चले गये।

फिर कमलेश्वर के प्रोग्राम ने पलटा खाया और वह अवाम की जिंदगी के और करीब आ गया।

दस रुपये प्रति व्यक्ति हजामत बनाने वाले 'आवराय नेरल्न' के नाई से लेकर रेलवे स्टेशन पर चवन्नी में बाल काटने वाले नाई।

मकान बनाने वाले मजदूर।

विक्टोरिया चलाने वाले।

खाने के डिब्बे सिर पर उठाकर पहुँचाने वाले।

झोपड पट्टी में रहने वाले।

टैक्सी वाले।

कचरा जमा करने वाले।

गटर में उतरने वाले।

सड़कों पर गाने वाले।

यह था कमलेश्वर का इम्तहान बहैसियत एक इनसान के इनसान के दोस्त के, बहैसियत एक सोशलिस्ट लेखक के। इस इम्तहान में वह पूरा उतरा।

ऐसे-ऐसे सवाल किये उसने और चौंका देनेवाले जवाब पाये जो न केवल हमारे ऊँच-नीच, विषमता और विरोधाभास को दिखाते हैं बल्कि उनके बारे में हमारी जानकारी भी बढ़ाते हैं और सचमुच के इनसानों से हमारी मुलाकात और दोस्ती कराते हैं।

यह टेलिविजन की सामाजिक व सोशलिस्ट परिकल्पना थी जो कमलेश्वर के परिक्रमा प्रोग्रामों से उजागर हुई।

जो काम वह एक कहानी लिखकर कर सकता था—पर कितने लोग कहानी पढ़ते हैं ?—वह काम उसने इन पात्रों को हमारे सामने ला करके उनसे ऐसे-ऐसे सवाल करके किया जो पूरे तबके के आर्थिक और सामाजिक प्रश्नों पर रोशनी डालते हैं।

टेलिविजन स्टार कमलेश्वर की एक और विशेषता है। वह एक खूबसूरत (पर फिल्मी हीरो जैसा नहीं) नौजवान (मैं तो नौजवान ही कहूँगा) आदमी है जो मामूली बुशशर्ट और पैंट में दिखायी देता है—लगता है किसी दफ्तर से कोई बाबू उठकर चला आया है।

प्रोग्राम से पहले वह भूमिका पेश करता है—उसे भाषण नहीं कहा जा

सकता, भाषण कहकर उसका मजाक उड़ाना होगा—क्योंकि उसकी बोलचाल धीमी आवाज में होती है जैसे वह हर टी० वी० दर्शक से व्यक्तिगत तरीके से बातचीत कर रहा हो वह हमारा ध्यान उन पात्रों और उन तथ्यों की तरफ दिलाता है जो उस दिन के प्रोग्राम में हिस्सा लेते हैं।

फिर वह उन तीन हस्तियों से हमारा परिचय कराता है जिन्हें वह न जाने कहाँ कहाँ से खोज खाजकर यहाँ लाता है।

पर वह ऊपर से उनसे ऐसे सवाल नहीं करता कि वे self-conscious हो जायें। वह उनसे दोस्तों की तरह बातें करता है चाहे वह कोई भी हो। और यही उसका कमाल है उसका आर्ट है उसकी ज़िन्दगी का नज़रिया है। वह हर एक को ऐसे इत्मीनान से बिठाता है कि वह भूल जाते हैं कि वह टेलिविज़न कमरे के सामने हैं। वह ऐसी हमदर्दी से बात करता है कि वे उसे एक दोस्त समझने लगते हैं जो उनकी जिन्दगी और उनकी समस्याओं में दिलचस्पी रखता है।

और उनसे बातचीत करके जब वह बातचीत का सारांश सुनाता है तो आप को ऐसा लगता है कि जितना कुछ बोला गया है वह कमलेश्वर ने अपने हस्सास दिमाग से जज्ब कर लिया है।

यह टेलिविज़न स्टार मामूली आदमियों को इन्टरव्यू करने में महारत रखता है इसलिए कि वह खुद एक हस्सास लेखक है और सच्चा लेखक दुनिया भर के दुख दर्द को अपना दुख और दर्द समझता है। तब ही तो उसके साहित्य में—उसकी कहानियों और उपन्यासों में—जान पड़ जाती है।

कमलेश्वर एक सामाजिक और सोशलिस्ट विचार वाला लेखक है जिसका आर्ट टेलिविज़न के माध्यम से बारह लाख टी० वी० दर्शकों तक हर हफ्ते पहुँचता है।

जितेन्द्र भाटिया

एक 'चमत्कारी माणस' की बाबत

काफी पहले 'मेरा हमदम मेरा दोस्त' के अतगत पढा था कि 'कमलेश्वर झूठ बहुत बोलता है।" शायद यह एक ऐसा अनुभव हो जो राजेन्द्र यादव के व्यक्तिगत सदर्भ म सही हो, परन्तु अगर अधिक व्यापक सदर्भों की बात की जाये तो यकीनन यह जोडना पडेगा कि कमलेश्वर सच भी बहुत बोलता है और सच बोलने की यह अच्छी या बुरी आदत आज कमलेश्वर को एक विलक्षण साहित्यिक प्रतिभा के रूप म लगातार जिंदा रखे हुए है।

सुपरलेटिव्ज कभी कभी व्यक्ति के खिलाफ काम करते हैं, विशेष रूप से ऐसे सुपरलेटिव्ज जो दोस्तो और नजदीकी सहकर्मियो द्वारा दिये गये हों। परन्तु सारी विनम्रता बरतते हुए भी कम से-कम इतना जरूर कहा जा सकता है कि पहले नयी कहानी और अब समातर कहानी' के अग्रणी कथाकार के रूप म कमलेश्वर का हिन्दी साहित्य से विस्थापित कर पाना असम्भव है। यही नही, अपने लेखन के अतिरिक्त भी कमलेश्वर साहित्य में जितनी सही गलत चर्चाओ और बहसों के केन्द्र पर रहे हैं उतनी का पात्र शायद ही कोई स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी साहित्यकार हुआ हो। ये दोनो तथ्य अपने आप मे कमलेश्वर के साहित्यिक व्यक्तित्व को तमाम विरोधियों की कुल-जमा उठा पटक के बावजूद एक अनोखी गरिमा प्रदान करते है।

कमलेश्वर की प्रशसा म और उनके विरोध म बहुत कुछ लिखा गया है। अगर प्रशसात्मक लखन का एक तरफ रखकर जालधर से लेकर कलकत्ता तक से छपने वाली किसी भी प्रतिक्रियावादी या भावुक उग्रपथी छोटी बडी साहित्यिक' पत्रिका के पन्ने उलटने की तकलीफ कोई निष्पक्ष व्यक्ति उठाये तो अन्य बातो मे पहले वह इस निष्कर्ष तक पहुँचेगा कि बम्बई म एक कुख्यात शख्स है जो 'सारिका' नाम की पत्रिका का सम्पादक है और जिसने इन पत्रिकाओ म

छपने वाले सैकडो 'साहित्यकारो की रातों की नींद हराम कर रखी है। दरअसल प्रशंसकों और विरोधियों का यह अपनाह हुजूम ही कमलेश्वर की सबसे बड़ी ताकत है और यह ताकत अपने साथ एक जादुई प्रभाव भी लिए हुए है। विरोधियों की गम्भीर गोष्ठियाँ अक्सर आश्चर्यजनक ढंग से सिर्फ एक ही व्यक्ति की चर्चा करने वाले कमलेश्वर समारोहों में परिवर्तित होती देखी गयी हैं। 'ऐयाश प्रेतों के विद्रोह' का इतना वक्त हो गया और इन वर्षों में इन प्रेतों को अपनी स्वतन्त्र साहित्यिक पहचान बनाने के पर्याप्त अवसर भी मिले हैं पर आज तक वे जिद्दी प्रेत पत्र पत्रिकाओं में सिर्फ कमलेश्वर के ही आस पास अपनी मुम्मली मुट्ठियाँ फेंकते और कमलेश्वर के इलाहाबाद जाने पर उन्हीं के बंगले के इर्द गिर्द अभिवादन की मुद्रा में चक्कर लगाते पाये जाते रहे हैं। रातों रात क्रांति की घोषणा करने वाले विद्रोही लेखक एक तरफ कमलेश्वर और उनकी पत्रिका के विरोध में आवाज उठाते हैं और दूसरी तरफ उन्हीं को प्रकाशनार्थ भेजी गयी कहानी के साथ लिजलिजी खुशामदी चिट्ठी भी लिखते हैं। यह अजूबा आज तक मेरी समझ में नहीं आया पर मुझे लगता है कि अगर ऐसे दागले विरोधी कमलेश्वर का समर्थन करने लगें तो शायद कमलेश्वर को वर्तमान स्थिति से अधिक तकलीफ होगी। ऐसे ही एक महान विरोधी ने एक बार दिल्ली में मुझसे अपनी कुंठा जाहिर करते हुए कहा था "कमाल है यार! तूफान हम लोग उठाते हैं और आलोचना सिर्फ कमलेश्वर की होती है।

निस्सन्देह आज कमलेश्वर साहित्य में एक बहुत चर्चित व्यक्ति है। जब तथाकथित गैर व्यावसायिक और मुक्त लेखन व्यावसायिक पत्रिकाओं के खिलाफ जहाद छेड़ते हैं तो पहला राउंड कमलेश्वर की ही तरफ दागा जाता है और जब व्यापक साहित्यिक और सामाजिक प्रतिबद्धता की बात उठती है तो सबसे पहले पुष्पहार के हकदार भी मेरा पन्ना के लेखक कमलेश्वर ही बनते हैं। गरज यह कि हिन्दी साहित्य में आप कमलेश्वर से वास्ता रखे बगैर नहीं गुजर सकते और जिसने भी यह कहा था कि "कमलेश्वर को इन बुलंदियों तक पहुँचाने में उनके विरोधियों का भी बहुत बड़ा हाथ रहा है" वह कम से-कम पचास प्रतिशत सच जरूर बोल रहा था।

अगर कमलेश्वर के बाहरी व्यक्तित्व को नजदीकी से देखा जाये तो सबसे पहली खुशी (या निराशा) इस बात को जानकर होगी कि उनमें लेखकीय संपादकीय मुद्राओं का सर्वथा अभाव है। सारिका का उनका दफ्तर टाइम्स आफ इंडिया के किसी संपादक का कमरा कम और किसी यूनियन का दफ्तर *अधिक लगता है। शायद कमलेश्वर उस बिल्डिंग में काम करने वाले* व्यस्ततम संपादकों में से होंगे लेकिन फिर भी मिलने और बोर करने वालों के लिए उस कमरे में घुसने पर कोई पाबंदी नहीं है। कोई भी ऐरा गैरा नत्थू खैरा (जिनमें

कभी कभी मैं भी शामिल होता हू) बरोक्टोक उस केबिन म घुसकर उस मसरूफ आदमी क काम म खलल डाल सकता है उसके कीमती वक्त म उसी के नाम पर चाय का प्याला पी ध यवाद बटोरता हुआ बाहर निकल सकता है। मैंने इन मौक़ो पर उस बुशशटधारी सम्पादक का कभी भी चुझलाते हुए या अपन विनम्र लहजे को धूमिल करते हुए नही दखा। बातें छाटी छाटी हाती हैं लेकिन मैं जानता हू कि उन छोटी छाटी बाता से सामने वाले आगतुक को कितना अधिक फक पडता है। पिछले कुछ साला मे मैं उस केबिन क जरिये लेखका फोटो ग्राफरा पत्रकारा फिल्म अभिनेताओ शिक्षित वकारा कलाकारों और समाज-सविकाओ से लेकर चमत्कृत पाठको, टलिविजन तकनीशियनो, रडियो कम चारियो और अपनी (तब) होन वाली पत्नी तक स मिल चुका हूँ और हर बार मैंने सम्पादक की उस कुर्सी म बैठ कमलश्वर का एक ऐसा 'एक्सक्लूसिव भाव प्रदशित करत पाया है जसे वह सुबह से आप ही क आन का इतजार कर रहे हो।

बम्बइ दूरदशन पर कमलेश्वर एक साप्ताहिक हिदी कायक्रम चलात हैं—'परिक्रमा'। हर मगल की शाम को उह पौन नौ बजे यानी कायक्रम शुरू होने से ठीक पद्रह मिनट पहले तज कदमा स दूरदशन केद्र के मकअप रूम की ओर बढते देखा जा सकता है। प्रोग्राम अक्सर लाइव हान वाला होता है उससे उसम भाग लने वाल अय यक्तिया के चेहरों पर हवाइया उड रही हाती ह (क्योंकि आध घटे क उस कायक्रम का उह सिफ विषय भर मालूम होता है) पर कमलेश्वर बिलकुल सहज भाव से मुसकरात हुए खडे रहते हैं। और प्रोग्राम सचमुच बहुत बढिया बन पडता है। इतना बढिया कि उसमे भाग लेन वाले व्यक्तियो को स्वय अपनी क्षमता पर आश्चय हाने लगता है और कमलेश्वर अपन घर पहुचकर आधी रात तक बधाई के टलीफोन रिसीव करत रहत है। बगर तयारी के, किसी भी विषय पर विचारात्तेजक चर्चा मचानित करन म कमलेश्वर सिद्धहस्त है। यही कारण है कि गम्भीर और गर फिल्मी विषयो पर एक ही तरह स बठकर लिये गये इटरव्युओ का कायक्रम हाने के बावजूद परिक्रमा आज बम्बई दूरदशन के सबसे लोकप्रिय और सफल आयाजनों म स है। (बम्बई की पत्रिका डेबोनेयर न उहें सन् ७५ के सवश्रेष्ठ टी० वी० व्यक्तित्व के रूप म चुना भी है।)

मैंने एक बार एक गदी बस्ती की चालनुमा कोठरी म टी० वी० का यह काय क्रम देखा था। कायक्रम दखन के लिए पूरी बिल्डिंग की भीड जमा थी। उनम एक पचहत्तर साल का अशिक्षित बूढा भी था जो कायक्रम के खत्म होत होते मुग्ध भाव से गाली दते हुए चिल्ला पडा था आयला! काय चमत्कारी माणस आह! (क्या चमत्कारी आदमी है!) और यही मुग्ध भाव एक अंग्रेजीदाँ ह्लाइट कालर वाले एक पजाबी साहब क चेहरे पर था जब उहान कहा था कि परिक्रमा

कार्यक्रम को सुनने के बाद उन्होंने किसी भाषा के जादू को पहचाना है। मैंने उस दिन के बाद से भाषा की सम्प्रेषणीयता के संकट पर कभी बहस शुरू करने की कोशिश नहीं की। कितनी ही बार सड़क पर उनकी गाड़ी के साथ साथ चलती कारों में बैठे अनजान बच्चे महिलाएँ खिड़कियों से हाथ हिलाकर विश करते चलते हैं। परिक्रमा पर कमलेश्वर का वह जाना पहचाना चेहरा हर टी॰ वी॰ दर्शक को इतना अपना लगता है।

कमलेश्वर बोलते बहुत अच्छा हैं आपको उनका हर श्रोता बतायेगा। मुझे व्यक्तिगत रूप से भाषण देने वाले साहित्यकारों से काफी परहेज है क्योंकि अधिकांश साहित्यकारों के लिए भाषण देने का मतलब कम से कम नामों की समझ में आने वाली बात कहने या घुमा फिराकर अपनी प्रशंसा करने से अधिक कुछ नहीं होता। कमलेश्वर में वक्ता की एक बड़ी विशेषता यह है कि वह कुछ ही क्षणों में अपने श्रोता के साथ तादात्म्य का कोई न कोई सीधा सूत्र ढूढ निकालते हैं और बहुत जल्दी ही अपनी बातों को उस सूत्र के अनुरूप ढाल लेते हैं।

कथाकार कमलेश्वर के बारे में इतना कुछ लिखा जा चुका है कि मेरा इस बारे में कुछ भी लिखना शायद मात्र दोहराव हो। उनकी कहानियों को पाठकों आलोचकों और शोधकर्ताओं ने विभिन्न पहलुओं से देखा जाँचा और सराहा है। राजा निरबसिया और खोयी हुई दिशाएँ आज स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय कहानी का प्रतिनिधित्व कर सकती हैं। मैं इनमें देवा की माँ का नाम भी जोड़ना चाहता हूँ। आज भी इस कहानी को पढ़ते हुए मुझे लगता है कि समकालीन कहानी के वे तमाम स्वर, जिन्हें हम प्रतिबद्धता से एक कदम आगे बढ़कर संपूर्ण मानवता के स्तर पर स्वीकारते हैं इस कहानी में मौजूद हैं। देवा की माँ की मानसिक प्रक्रिया एक विशुद्ध भारतीय नारी की संस्कारगत रूढ़ियों को एक तरफ छिटक देने की 'बोल्ड' प्रक्रिया है जो मुझे नयी कहानी और उसके तुरंत बाद के दौर की किसी अन्य कहानी में दिखायी नहीं देती। अकहानी के दौर में भी नारी को सेक्स के सन्दर्भों में काफी उन्मुक्तता दी गयी थी पर यह उन्मुक्तता बहुत उथली क्षणिक और एक वर्ग बुद्धिजीवी तबके तक ही सीमित थी। देवा की माँ का अस्वीकार मुझे अधिक आधुनिक और सार्थक लगता है।

देवा की माँ के बाद मैं लगभग एक पूरा दशक लाँघकर जोखम कहानी पर आ रुकता हूँ। इस कहानी के बारे में एक अंग्रेज़ी समीक्षक ने एक जगह लिखा है कि यह मूड्स' की कहानी है उन बदलते मूड्स को जो समुद्र की लहरों में झलकते रंगों की तरह क्षण भर को सामने रहते हैं फिर गुम हो जाते हैं। लेकिन *'जोखम की माँ इन तमाम मूड्स के ऊपर एक विराट छाया की तरह फली हुई* है। इस माँ में वह सब कुछ है जो अपना है जिसे अपना होना चाहिए और जो कतरा कतरा अपनी मुट्ठियों से फिसलकर सफेद बेजान पत्थर में बदलता जा

रहा है। इस कहानी के बिम्ब और चित्र राहत देने की जगह खून के आँसू रुलाते हैं अहसास पर काँच के टुकड़ों की तरह चुभते और कचोटते चले जाते हैं। माँ के खत अब भी आते थे। उनकी लिखावट बदल गयी थी। इसलिए नहीं कि माँ बूढ़ी हो गयी थी। इसलिए कि जगन्नाथ पोस्टमैन मर गया था। वही मा के खत लिपिबद्ध करता था। जब भी दो एक या तीन चार साल बाद कभी मा के खत की लिखावट बदलती थी मैं समझ जाता था कि बस्ती मोहल्ले का कोई और चल बसा। अक्सर यही होता था। " शायद अधिकाश समीक्षक मुझसे सहमत न हों पर मुझे 'जोखम' कमलेश्वर की आज तक की सबसे अच्छी रचना लगती है।

इधर फिल्मों ने भी कमलेश्वर का बहुत सारा वक्त लेना शुरू किया है। सेंसरबोर्ड के सदस्य होने के साथ साथ उन्होंने फिल्म लेखक और पटकथाकार के रूप में बहुत से ऐसे लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचा है जो साहित्य को लोकप्रिय फिल्म के लिए गैरजरूरी समझते हैं। यहाँ भी यह देखकर कभी कभी मुझे ताज्जुब होता है कि फिल्म की बहुरंगी संस्कृति में भी वे उसी तरह के विशिष्ट आदरके पात्र बनते हैं जो उन्हें साहित्यिक क्षेत्रों में दिया जाता रहा है। फिल्मी दुनिया अक्सर पैसे ही की भाषा बोलती और समझती है परन्तु कमलेश्वर ने उसे एक नयी भाषा सीखने पर मजबूर किया है। और इस भाषा का सीधा सरोकार उस संस्कृति से है जिसकी बात हम अपने साहित्य में करते हैं। शायद यही वह ताकत है जिसकी वजह से फिल्म लाइन के बड़े-बड़े व्यक्ति भी कमलेश्वर को अपने बीच अपने साथ पाकर गौरवान्वित महसूस करते हैं। कमलेश्वर उनके लिए प्रेस्टीज ईशू हैं।

कमलेश्वर को इतनी सारी व्यस्तता के बीच भी इन सारी गोष्ठियों को प्राय मिलता देने का समय मिल जाता है जिसे वे एक साहित्यकार के लिए जरूरी समझते हैं। सभी सामाजिक और राजनीतिक सन्दर्भों को लेकर होने वाली हर गोष्ठी में सक्रिय भाग लेने को वह अन्य व्यस्तताओं से अधिक महत्त्वपूर्ण समझते हैं।

व्यक्तिगत रिश्तों में कमलेश्वर बहुत भावुक हैं ऐसा मेरा अनुभव है। जब भी वक्त आया है उनके दोस्तों ने उनका साथ छोड़ा है पर वे स्वयं तमाम यातनाओं के बाद भी अपने दोस्तों को नहीं छोड़ सके हैं। जो लोग उन्हें करीब से जानते हैं वे सब शायद मुझसे सहमत होंगे।

कमलेश्वर को अपने आपको इतना खपाना नहीं चाहिए।'' उनके कुछ दोस्त कहते हैं। कमलेश्वर को फिल्मों के लिए नहीं लिखना चाहिए। कुछ अन्य कहते हैं। मेरा अपना मत है कि कमलेश्वर को लोगों की सलाहों पर ध्यान

नही देना चाहिए।

"कमलेश्वर आन्दोलन शुरू करने म माहिर है।" एक अ य बुजुग कहते है। मैं स्वय भी डिसएग्री नही करता बल्कि जब स कमलेश्वर न अपन दायर म फिल्मा को समेटा है मैं फिल्म इडस्ट्री म आन्दोलन आन की सुखद स्थिति का इतजार करने लगा हूँ।

•

नयी कहानी आन्दोलन का दार दिल्ली

कमलेश्वर राकेश और राजेन्द्र यादव —यह त्रिकोण छाया हुआ था। अमूमन राकेश और राजेन्द्र यादव म नहा पटती थी। एक रोज राजेन्द्र यादव बेहद नाराज चीखते चिल्लाते कमलेश्वर के पास आये बोले—देख कमलेश्वर तेरे इस राकश स अब मेरी एक मिनट नही पट सकती। अब मैं जब तक राकेश को साहित्य से साफ नही कर लगा, चन नहीं लूगा! इसे नस्त-नाबूद करन म चाहे मुझे दस साल लग जायें पर मैं इसका सफाया करके रहूँगा!

कमलेश्वर न बडी सहजता से कहा— दस साल क्या लगायेगा? राकेश को साहित्य से साफ करना है तो साल भर म हो जायगा!

राजेन्द्र ने किलकारी भरकर कहा—सच! एक साल म! बता यार तेरा दिमाग बहुत चलता है! *बता!*

—तू ऐसा कर! एक साल म जितनी भी कहानियाँ तू लिखे उन्ह राकेश के नाम से छपवा दे राकेश का सफाया अपन-आप हा जायेगा!

•

कु० ज्योति पुनवानी

कमलेश्वर दर्शकों की आत्मा को झकझोर देनेवाला आदमी।

[कमलेश्वर के चाहने वालों के पत्र लगातार और बड़ी मात्रा में आते रहते हैं। आधी रात के बाद तक उनके पास टेलीफोन आते रहते हैं और वह जहाँ भी जाते हैं, उनकी प्रशंसिकाएँ उन्हें घेर लेती हैं। कमलेश्वर एक विख्यात टी० वी० स्टार बन गये हैं। हमारी युवा संवाददाता ज्योति को उनका पूरा इंटरव्यू लेने में २६ दिन लग गये।

अब तक कमलेश्वर ने अपने साप्ताहिक कार्यक्रमों में मजदूर, कामगार, लेखक, गायक, खोंचेवाले, कुली, ठेलेवाले, नाई, मोची, टैक्सीवाले, होटल के बैरे, झुग्गी झोंपड़ी में रहने वाले, क्लीनर, होटलों में काम करने वाले बच्चे, वतन छोड़ने वाली यात्री, अंधे, अपंग, शराबी, जुआरी, मजबूर और मजलूम लोगों को लाकर जो दुनिया पेश की है, उसने बम्बई जैसे महानगर के हाथी दाँत की मीनारों में रहने वालों की भी एक तरह से नींद हराम कर दी है। उनके कार्यक्रम को चाहे कोई पसन्द करे या नापसन्द—पर यह तथ्य है कि इस परिक्रमा कार्यक्रम को कोई देखे बिना नहीं रह सकता—(सम्पादक टी० वी० टुडे)]

उस दिन जब दो बच्चों ने उन्हें सड़क पर पहचान लिया और बाद में उसी दिन एक सब्जी-सब्जी महिला ने अपने बच्चे को इसलिए चाँटा मार दिया क्योंकि उसने भीड़ भाड़ में कमलेश्वर की ओर इशारा किया था, तभी कमलेश्वर ने महसूस किया कि परिक्रमा का जनता के हर वर्ग पर कुछ-न-कुछ प्रभाव अवश्य है। बम्बई के अलग-अलग वर्गों के लोग परिक्रमा के द्वारा अपने-अपने अनुभवों से साक्षात्कार करते हैं।

लोकल ट्रेनों में लोग ताश खेलने की जगह अब पिछली रात की परिक्रमा के

पान वाले या मजदूर की चर्चा करते हैं और इस तरह उस चर्चा के सहारे अजनबी लोग एक दूसरे के करीब आ जाते हैं। उन अजनबी लोगों के पास पिछली रात के 'परिक्रमा' प्रोग्राम की बातें होती हैं जिन्हें वे शेयर करते हैं जिन पर वे बहस करते हैं। हर आदमी भिन्नता में 'परिक्रमा' के जरिए एकता की बात करता है।

लेकिन यह एकता कहाँ है? भारतीय होने की और भारत को समझने की भावना कहाँ है? जो लोग भारतीय संस्कृति का सिर्फ उतना ही समझते हैं जितना उनके इंटीरियर डेकोरेटर उन्हें समझाते हैं उन्हीं लोगों को मैं बताना चाहता हूँ कि हमारी जनता क्या है? वे आम आदमी कितना गहन करते हैं और क्यों संघर्ष करते हैं? मैं उन्हें यह दूसरी संस्कृति दिखाना चाहता हूँ। मैं उन्हें विचलित कर देना चाहता हूँ जिससे वे उस माहौल और व्यवस्था से घृणा करने लगें, जिसने जनता को यंत्रणाएँ दी हैं जिसने हम आदमी को दुःख कष्ट से उपराम कर दिया है।' आगे कमलेश्वर बड़ी शिद्दत से जवाब देते हैं 'हमारी सभी योजनाएँ और कार्यक्रम आम आदमी के नाम पर खड़े हैं मैं दर्शकों के सामने इस आम आदमी को लाना चाहता हूँ। मेरे लिए अणु विस्फोट उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना टेलिविजन पर एक चूरनवाले की आत्मा का विस्फोट है। वह सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक स्तर पर सदियों से नकारा गया है। इसलिए जब वे आम आदमी मेरे कार्यक्रम में स्टूडियो में आते हैं तो कितने उत्साहीन लगते हैं। वे सोचते हैं—ठीक है हम यह कह देंगे वह कह देंगे हम सब कुछ कह देंगे पर इसमें क्या होता है? उन्हें किसी तरह के परिवर्तन का उम्मीद नहीं है। वे अपने अन्दर टूट चुके हैं। इसीलिए मैं अक्सर उन्हें सम्मान देता हूँ उन्हें सहारा दिला देता हूँ। और मेरे दर्शक सोचते हैं कि मैं स्वयं उनके मुँह से बोल रहा हूँ। उनके पास अक्सर भाषा नहीं होती, जिससे वे अपने आपको व्यक्त कर सकें। उनकी इस मजबूरी से मुझे तकलीफ होती है और यही वजह है कि कभी कभी 'परिक्रमा' के बाद मैं सीधा घर जाता हूँ थका थका सा सो जाता हूँ। मैं इसके बाद कोई काम नहीं कर पाता। कभी कभी मेरा मन होता है कि अपने दर्शकों पर बिगड़ जाऊँ लेकिन फिर स्वयं को नियंत्रित कर लेता हूँ और सोचता हूँ कि धीरे धीरे उन्हें समझने दूँ।

कमलेश्वर की जिन्दगी और व्यक्तित्व विरोधाभासों से भरा है। वे उत्तर प्रदेश के एक छोटे से शहर मैनपुरी में पैदा हुए। यह एक ऐसी जगह है जहाँ से लोग खुशी-खुशी बड़े शहरों को जाते हैं और निराश होकर लौट आते हैं। कमलेश्वर जैसे-जैसे बड़े होते जा रहे थे उनके परिवार का सामंती ढाँचा सिकुड़ता और टूटता जा रहा था। जब कमलेश्वर बारह साल के थे तभी उनके बड़े भाई सिद्धार्थ की मृत्यु अठारह साल की उम्र में हो गयी थी। पिता और दादा की मौत तो बहुत पहले हो चुकी थी। पिता की मृत्यु के समय कमलेश्वर की उम्र तीन

साल की थी। उनकी माँ उस टूटते परिवार का सम्मान बचाने के लिए अपने सौतेले बेटे पर काफी खर्च कर रही थी और अपने सगे बेटे कैलाश (कमलेश्वर का घर का नाम) के बारे में मजबूरन कंजूसी बरत रही थी। कमलेश्वर अपने स्कूली साथियों को नयी-नयी किताबों और स्वादिष्ट मिठाइयों में मगन देखते रहते थे और खुद बिसूरकर खाली हाथ लौट आते थे। लेकिन वे हर टर्म में फर्स्ट आते थे। और इसलिए उन्हें छात्रवृत्ति मिलती थी, जिसकी उन्हें बहुत जरूरत थी।

बाद में वे काफी मितभाषी और एकान्तप्रिय हो गये। उन्हें उनके इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रिवाल्यूशनरी सोशलिस्ट पार्टी के मित्रों ने उन्हें पुलिस द्वारा गिरफ्तार किये जाने के लिए अकेला छोड़ दिया था। वे स्वतन्त्रता के बाद पार्टी के कांग्रेस में विलय के कारण भी काफी निराश और असंतुष्ट थे। और उसके बाद वे निरन्तर अकेले पड़ते गये। उनकी मित्र ने यह कहकर किसी दूसरे के साथ शादी कर ली कि—तुम्हें चुनाव करना है तुम जिन्दगी में कुछ भी नहीं पा सकते।' और उन्होंने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और प्रेमचन्द को अपने साहित्यिक वंशधर के रूप में चुन लिया। उन्होंने शादी की अपेक्षा लेखन को प्राथमिकता दी।

आप इस माहौल में जिये हुए आदमी से यह अपेक्षा नहीं कर सकते कि वह ४२ वर्ष की आयु में इतना प्रसिद्ध हो जायगा। जो किसी भी विषय पर इतना अच्छा और इतना सहज होकर बात कर सकता है। जो मृदुभाषी खुशमिजाज और पुरुषत्व से पूर्ण है जो बहुत सहज ढंग से हँस सकता है, जिसमें सहज आत्मविश्वास है जिससे सुबह ८ से ३० तक ही मिला जा सकता है और वह भी घर पर, जिसके पास आपका दन के लिए एक घंटे से अधिक का समय कभी नहीं रहता। उस व्यक्ति से पूरा इंटरव्यू लेने के लिए २६ दिनों में दो दर्जन से अधिक बार टेलीफोन किया गया छह बार मिला गया—कभी आफिस में, कभी टेलिविजन सेंटर के मेक-अप रूम में और कभी घर में। वह एक ऐसा व्यक्ति है जो किसी भी जगह अधिक समय तक नहीं ठहरता जिसे सुनसान और लम्बी सड़कों पर सफर करने का शौक है और जो बाहर जाने पर डाक बँगलों में ठहरना अधिक पसन्द करता है क्योंकि वे पूरी तरह एकान्त में होते हैं।

शायद आप नहीं जानते कि कमलेश्वर ने १५ वर्ष की उम्र में एक बहुत ही खौफनाक दृश्य देखा था। नशे में धुत कुछ अँग्रेज सैनिक एक औरत को नंगा नचा रहे थे और परेशान कर रहे थे। उसी दृश्य से प्रेरित होकर उन्होंने 'मांस का दरिया' शीर्षक कहानी लिखी। वे अपने कमरे में रहते हुए बहुत रात तक विदेशी और भारतीय साहित्य का अध्ययन करते रहते थे। तब वे २० वर्ष के थे और उन्हें लगा था कि यह साहित्य आदमी को अपने वक्त की सच्चाइयों से नहीं जोड़ता। विश्व के महान साहित्यकार आपको उपदेश देने के लिए गुरु तो बन

सकते हैं लेकिन आपकी भावनाएँ समझने वाले मित्र नहीं बन सकते। वे सौंदय शास्त्र के स्तर पर तो महान हो सकते है लेकिन जिन्दगी के स्तर पर नहीं।

दुनिया के प्रति एकाकीपन और असंतोष से हटकर उन्होंने सोचा कि लेखन की इस स्थिति को बदलना चाहिए। तब २२ साल की उम्र म उन्होंने अपनी पहली कहानी राजा निरबसिया लिखी थी।

इसके साथ ही उन्होंने हिंदी साहित्य की चारदीवारी को तोडा और उसे अश्क, अज्ञेय, यशपाल और जनेन्द्रकुमार के घेरे से बाहर निकला। नयी कहानी आन्दोलन ने जन्म लिया और यह आन्दोलन पाचवे और छठे दशक तक चला। नयी कहानी ने हिन्दी साहित्य के स्तर को हमेशा के लिए बदल दिया और कहानी को साहित्य की मुख्य धारा क रूप म स्थापित किया।

और १९६८ स वे लगातार कह रहे है कि मैं अपने वग को धोखा नहीं दे सकता। मैं नहीं चाहता कि हिन्दी के नये कहानीकार मुझे किसी बात के लिए दोषी ठहराय। वे अपने सारे साहित्यिक काय को एक मिशन के रूप मे स्वीकारते है। उन्होंने अपनी कोई भी चीज साहित्यिक शौक के रूप म नहीं प्रकाशित करवायी है। उन्होंने जो कुछ लिखा है पूरे विश्वास के साथ लिखा है। और बम्बई टेलिविजन का परिक्रमा कायक्रम इस बात का सबूत है कि वे निरन्तर अपने वग से जुड़े रहे हैं उस वग क साथ जिसके साथ मिलकर वर्षों तक उन्होंने संघर्ष किया है और जिसे वे भूल नहीं सकते। कमलेश्वर यदि चाहते तो अपने इस प्रोग्राम म मन्त्रियो सेठो सजी धजी महिलाओं को भी पेश कर सकते थ पर कमलेश्वर ने हमेशा मामूली आदमी को ही पकडा। उसके दुख दद लाखो दर्शकों के सामने पेश किये। यही वजह है कि बम्बई के चमचमाते पसे वाले इलाकों के टी० वी० दशक हमेशा कमलेश्वर से चिढते हैं और राह चलते औसत लोग हमेशा अपनेपन और प्यार से उन्हें घेर लेते है।

एक विद्यार्थी जिसने वर्षों तक भूखे प्यासे रहकर महनत की जो भौतिक सुखो के प्रति एक सन्यासी की तरह विरक्त रहा सन ६८ स एक संस्थान से जुडा हुआ है। उनकी पत्नी बताती है कि किस तरह उन्होंने बम्बई म जमने के लिए दिल्ली छोडी। उनके पास कपडो का सिफ एक सूटकेस था जिसम सात जोडी कपडे थे। कहने के लिए आज भी लोग उन्हें एक व्यावसायिक कहानी पत्रिका का सम्पादक कह देते हैं जिसका ध्येय सिफ मालिकों को खुश करना ही होता है जिसे अपने वग की अपेक्षा अपनी नौकरी और स्थिति की ज्यादा चिन्ता होती है।

और कमलेश्वर इन सारे आरोपो का मजाक म उडा देते हैं। इस तरह के आरोप वास्तव म उनकी रातो रात प्रसिद्धि पा लेने के प्रति ईर्ष्या मात्र है और लोगो की एक जिद है कि हम तो हर कीमत पर विरोध करना ही है। पर कमलेश्वर के अनुसार अपने विकृत अनुभवो को लिखना स्वान्त सुखाय तो हो

सकता है लकिन उसका शेष समाज से कुछ भी लेना-देना नही होता। वह लडका जो एक एक चापी और नयी चप्पल के लिए अपन भाई की साल-साल भर तक प्रतीक्षा करता या और बाजारों की सिफ कल्पना ही किया करता था आज वम्बइ के सबसे अधिक व्यस्त व्यक्तिया म से है। बम्बई के एक वहुत बडे हि दी ग्रथ विक्रेता के अनुसार कमलेश्वर की प्रकाशित पुस्तकों की रायल्टी कम से कम एक हजार मासिक है। कमलेश्वर वहुत प्रसिद्ध व्यक्ति हैं और नये लेखका के साथ बहसें करके जि दगी को समझने की ज़िद लिये हुए भी ठहाका लगाकर अपनी सफलता म निरतर वृद्धि करत जा रहे हैं। वे वाडन रोड पर एक किराये के फ्लट म रह रहे हैं एक नयी गाडी है, वरसोवा म भी उनका एक आवास है एक ईमानदार नौकर दिलीप है जो उन्ह मोजे-जूते पहनान उतारन म सुख पाता है एक सुदर सहायिका है जो सुबह उनके टलीफोन पर उत्तर दती है। उन्ह इस बात की खुशी है कि वे जहाँ भी जाते हैं लोग उन्ह पहचान लत हैं। सही या गलत किसी भी सन्दभ म आज सब लोग उनका नाम जानते हैं और इससे भी ज्यादा, उत्तजनापूण सुख यह है कि असख्य महिलाएँ उनकी पत्र मित्र हैं। आधी रात क बाद तक उनके टलीफोन की घटी वजती रहती है। वे जहाँ भी जात हैं उनकी आवाज़ आखो और मुस्कराहटो का पसन्द करन वाली महिलाएँ उन्ह घेर लती हैं। (कुछ न तो उनके सारे परिक्रमा कायक्रम टेप कर लिये हैं।) और अपने पुरुष मित्रा का ध्यान उनकी ओर आकर्षित करती है। कभी कभी उनकी मित्र जसी पत्नी उन्ह चिढाने भी लगती हैं लेकिन उनकी पत्नी ईर्ष्यालु बिलकुल नही हैं। कमलश्वर का कहना है—'वह जानती है कि मैं इस ढग की जि दगी नही जीता। क्यों नही जीता, इसकी भी वजह है। यह सही है कि मुझे भी लडकिया का साथ पसन्द है। यदि मैं किसी को दो घटे क लिए साथ ले जाऊँ तो मुझे अच्छा लगेगा लकिन मैं उसे दे क्या सकता हू ? मैं अपने काम म लगा हूँ, यह काम ही मेरी जिदगी का मिशन है। हालाकि यह सही है कि मैं औरतो को जीतने वाले शब्दो का इस्तमाल ज्यादा अच्छे ढग से कर सकता हूँ लेकिन यह मेरे समय का अपव्यय होगा। महिलाओ को लेकर चाह जो बातें मेरे बारे म की जायें पर मैं शकाओ और प्रश्नो का उत्तर देना जरूरी नही समझता। मेरी जि दगी खुद एक पर्याप्त उत्तर है।'

कमलश्वर जब हिन्दी क रोमांटिक लेखको के नखरो की बातें करत है तब आप हँसे बगर नही रह सकत। उन्ह वे इलाहाबाद दिल्ली से जानत है। वे लाग अमूत मूल्यों और सपनो की असामान्य दुनिया म रहते हैं। कमलेश्वर ऐसे मूल्यो से घृणा करत है। लेकिन वे स्वय भी अपने रख रखाव के प्रति काफी सतक हैं। उनक प्रतिदिन एक दर्जन स भी ज्यादा एपाइटमेंट रहत हैं लकिन वे उनस न तो घबरात हैं और न थकत हैं। सिफ एक ही चीज उन्ह परेशान कर देती है— जब

कोई चीज वसी नही हो पाती जसी मैं चाहता हू ! जसे मैं किसी दिन मन के मुताबिक कोई खास कपडा पहनना चाहता हूँ और वह नही मिलता है तो मैं झुझला जाता हूँ।"

टी० वी० के मक्अप रूम मे जब वे दपण के सामने खडे होकर अपने घने और मुलायम बालो पर हाथ फिराते हैं तो आप उ हें अजीव अजीब चेहरा बनाते हुए दख सकते हैं और खासतौर पर उस समय जब उनकी सहायिका 'परिक्रमा की रिकार्डिंग या ब्राडकास्ट से सिफ बीस मिनट पहल उसम भाग लने वाल लोग से मिलवाती हैं! और इसके बावजूद 'परिक्रमा का हर कायक्रम एक घटना बन जाता है। (बकौल प्रोफेसर निसीम इज़ीकेल) और यही कमलेश्वर की खूबी है कि वे टी० वी० पर 'प्रोग्राम' नहीं, जि दगी' पेश करते हैं !

(टा० वी० टुड से साभार माच १५ सन ७५ अग्रजी से अनुवाद)

•

एक मित्र का घर बम्बई

मित्र को बहुत फख्र था कि उनके केवल तीन बच्च हैं। वे बडी शान से बता रहे थे—कमलेश्वर साहब ! मैंने कुल तीन बच्चे पदा किये—पहला ग्यारह साल का दूसरा छह साल का और तीसरा एक साल का। पचवर्षीय योजना के हिसाब से घर म बच्चे पदा हुए है ! पाँच पाच साल बाद !

—तब तो आपने भी जरूर फॉरेन एड ली होगी ! कमलेश्वर ने चुटकी ली।

•

सुरिंदर सिंह

'परिक्रमा' समाज-चेतना का हथियार

दुनिया म सबको खुश कर पाना तो असम्भव है फिर भी कुछ ऐसी प्रतिभाएँ होती हैं जो बहुजन सुखाय बहुजन हिताय के सिद्धान्त को साकार कर पाती हैं। सगीत के क्षत्र म स्वर्गीय बगम अखतर एक ऐसी हस्ती थी जिनके गाने पर खाँ साहिब और पडित से लेकर झल्ली उठाने वाला सभी झूम जात थे। भारतीय दूरदशन मे कमलेश्वर एक ऐसी शखसियत है जिसके कायक्रम परिक्रमा को यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर से लकर अपढ झुग्गी झोपडीवासी एक-सी रुचि से देखत और सराहते हैं।

कमलेश्वर का सबसे बडा गुण उसकी सहजता है। टेलिविजन स्टूडियो फ्लोर मनजर की हिदायतें और सामन पडे माइक्रोफान—कुछ भी कमलेश्वर को 'टेंस' नही कर पाते। सादा पहरावा, बातचीत का दोस्ताना ढग और बहुत पते की बात कहत हुए भी यह शक न होने देना कि बात पते की हो रही है यह उसके विशेष गुण हैं।

यही कारण है कि 'परिक्रमा म भाग लेने वाले लोग अक्सर अनायास ही अपने दिल की बात कर जाते है। कितनी बार देखा है कि कायक्रम के शुरू मे कमलेश्वर का मेहमान धाक जमाने के मूड म बैठा हुआ है। शायद वह काफी तयारी भी करके आया है कि आज सबको दिखा दिया जायेगा कि वह क्या चीज है।

और फिर कमलेश्वर बडे सहज स्वर मे, बडी सादा-सी बातें शुरू कर देता है। उस खुले स दोस्ताना वातावरण में मेहमान धाक जमाना भूल जाता है और मेरी, तेरी सबकी बात कहने लगता है।

लेकिन कमलेश्वर की सहजता महज आदत नही एक तरकीब है जिसस वह अपने मेहमान से उसके दिल की बात इतहाई सादे शब्दों म उगलवा लेता है। एक परिक्रमा मे चाबी बनाने वाले बुलवाये गये। नौजवान कामकाजी से उसके प्रेम क बारे म, ब्याह के बारे मे घर के बार म कमलेश्वर यू बात करने लगा जसे

वचपन का दोस्त हो। नतीजा साफ है उस बातचीत से हमारे समाज की एक विशेष श्रेणी का ऐसा जीवत चित्र उभरा कि किसी साहित्यकार के नसीब म भी नही हो सकता।

कमलेश्वर की सहजता के साथ उसका दूसरा गुण है उसकी नजर का घेरा। परिक्रमा' के माध्यम से उसने जीवन के हर पहलू को देखा परखा है। साहित्य हो या सिनेमा, कला हो या कामकाजी जीवन दो वक्त की रोटी जुटा पाने के चक्कर म पिसते नर नारी हो या स्वग स्वप्न के व्यौपारी सत सभी को कमलेश्वर न चित्रित किया है कही हँसते हुए कही उनके दु ख म शरीक और कभी-कभार बडे प्यारे ढग से उनकी टाँग खीचते हुए उसने हमारे समाज का चित्रण भी किया है उस पर टिप्पणी भी।

और हर मौके के लिए कमलेश्वर के पास उपयुक्त भाषा है। जब वह किसी के जख्म म उँगली डालने लगता है तो पहले उस पर बहुत सा सहानुभूति और प्यार का मरहम लगा लेता है। परिक्रमा म अकेलेपन पर एक कायक्रम इस कला का क्लासिक उदाहरण था। महानगर के जीवन म जहाँ कुनबा कुटुम्ब पडोस, दोस्त सब अपनी-अपनी मजबूरियो म टूट रहे है या टूट चुके है इसान कमा अकेला पड जाता है। यह विषय किसी दाशनिक के हाथ आता तो वह ग्रन्थ रच डालता, कमलेश्वर ने उसे आधे घटे के छोटे से समय म एसा पेश किया कि वह कायक्रम न केवल उसके लिए एक निजी उपलब्धि बन गया बल्कि दूरदशन के माध्यम की शक्ति का परिचायक बन गया।

जहाँ कमलेश्वर भाषा का धनी है वहाँ उसकी एक विशेष सामाजिक चेतना है और इसलिए भी उसका परिक्रमा' हमे विशुद्ध भौतिक स्तर पर भी प्रभावित करता है। वह अकेलेपन का दु ख भोगने वाले—मजबूर कामकाजी स्त्रियाँ जीवन के कठोर सत्यो से जूझते मजदूर चाबी बनाने वाले टाँगा चलाने वाले मकान की रखवाली करने वाले—सभी के दु ख म शरीक तो होता ही है लेकिन साथ ही उन्ह जन-साधारण से मिलवाकर एक जरूरी सामाजिक काम भी करता है। भारतीय दूरदर्शन की एक ट्रजिडी यह है कि चाहे इसके प्रारम्भिक समथको ने इसके हवा मे बडे बडे दाव किये थ कि दूरदशन से शिक्षा और समाज कल्याण के क्षत्रो म काम किया जा सकेगा, सच यह है कि महानगरो म टी० वी० धनियो के ही मनोरजन का साधन बन रहा है। इसका एक मुख्य कारण है सेट की कीमत, दूसरा यह कि टी० वी० प्राप्ति एक 'सोशल स्टेटस सिम्बल' बन गया है।

यह कमलेश्वर की सूझ का ही नतीजा है कि उसन अपन विशष कायक्रम को इस स्थिति के अनुकल बनाते हुए भी अपने सामाजिक दायित्व को भुलाया नही। कमलेश्वर का जन साधारण म दिलचस्पी है और एक प्रमुख तरक्कीपसन्द लेखक होन के नाते वह उस वग का न केवल चित्रण करना चाहता है बल्कि उसके उत्थान

के हेतु अपनी कलम का इस्तेमाल करना चाहता है यही चाह उसके दूरदर्शन काय क्रम म भी दिखायी पडती है।

इसीलिए कमलेश्वर के कायक्रम म अक्सर ऐसे लोगो को लाया जाता है जिन्हे समाज का धनिक वग देखता तो हमेशा है पर कभी उनकी दिल की आवाज नहीं सुनता और जहां तक हो सके केवल नजरअन्दाज ही करता है। प्रात घटी बजाने वाला दूध वाला, कभी-कभार काम आने वाला घर की मरम्मत करने वाला मिस्तरी, वर्दी पहने उसकी बिल्डिंग की रक्षा करने वाला गुरखा और शायद कभी न दिखने वाली कामकाजी स्त्रियाँ—इन सबके अस्तित्व का एक धुधला सा एहसास तो हम है परन्तु कमलेश्वर का इस बात की दाद देनी पडती है कि उसने हम उनकी महत्त्वाकाक्षाओ और स्वप्नों से परिचित करवाया है।

यह परिक्रमा' की एक विशेष उपलब्धि है। अक्सर वामपथी विचारधारा वाले केवल धनिको को गाली दे देने से ही सतुष्ट हो जाते हैं। लेकिन कमलेश्वर ने दूरदर्शन के सशक्त माध्यम से महालक्ष्मी के पुल' के दो ओर बस रही अमीर और गरीब दुनिया का परिचय करवाया है। परिक्रमा' के कारण न केवल धनाढय वग को कामकाजियों के दिलों की थाह मिली है बल्कि यह भी साबित हुआ है कि हमारे धनी लाग शत प्रतिशत पत्थर दिल नही हैं, कमलेश्वर के सभी कायक्रमो से प्रभावित हो बहुत से लोगों ने कामकाजी वग की सहायता करने के लिए अपनी सेवाए अर्पित की हैं। कमलेश्वर से ही एक बैंक मैनेजर ने कहा, हम सरकारी नीति के अन्तगत पिछडे वग के लोगो को कर्जा देते तो पहले भी थे परन्तु तब केवल आदेश पालन ही हमारा ध्येय था। परन्तु जब स आपके कार्यक्रम देखे हैं अब हम यह समझते हैं कि हम सच म ही एक महत्त्वपूण काम कर रहे हैं।'

लकिन कमलश्वर की नजर एक ही वग पर केन्द्रित हो ऐसा नहीं है। उसन कला की दुनिया, सगीत-जगत, काव्य प्रतिभा, धम और राजनीति—सभी को देखा-परखा है और समय-समय पर एक-से एक खूबसूरत कायक्रम दिये हैं।

और इन सब कायक्रमो मे कमलेश्वर की नजर हमेशा किसी नये कारण को ढूढ लायी है। एक कायक्रम म डोगरी कवियत्री पद्मा सचदेव और मराठी कवियत्री शान्ता शेलके म एक अद्भुत भेंट-वार्ता म भारत की एक समृद्ध भाषा और एक नयी बन रही भाषा का सुन्दर परिचय दिया तो एक धमगुरु के साथ इतहाई respectful वार्तालाप के दौरान मजे मजे मे यह तथ्य भी सामने ला दिया कि बहुचर्चित धमगुरु अपनी कृपा का पात्र कवल बडे-बडे फ्लैटो म रहने वालो को ही बनाते हैं। हर प्रकार के पाखड स हँसते हुए पर्दा उठा देना कमलेश्वर की आदत है। हाल ही म हुई एक सगीत सम्बन्धी चर्चा के दौरान जिसम यह लखक भी भाग ले रहा था को ही लीजिये। एक देवीजी कह रही थी कि बडे होटलो म खाना खाने आये मेहमानों के समक्ष कला प्रदशन म कोई भी एतराज नहीं किया जा

सक्ता क्योंकि सभागृह में भी तो पापी लोग पापकात खाते रहते हैं।' कमलेश्वर ने न उनकी बात काटने का प्रयत्न किया न ही इस oversimplification पर टिप्पणी की, बस बातों ही बातों में उनके मुंह से कहलवा लिया कि दरअसल वह इस दशा से बहुत दु खी थी। इसी प्रकार एक ज्योतिषी महोदय का बिना कुछ कहे केवल एक भेद मुस्कान भर से, कमलेश्वर ने ज्योतिष के पाखंड का एक पुरलुत्फ खंडन कर दिया।

जब टेलिविज़न यहाँ आया तो लोगों ने बहुत ही हल्ला किया कि यह केवल नवकुबेरों की रंगीनियों का एक और यंत्र आ पहुँचा है। बात केवल किसी हद तक सच थी। लेकिन कमलेश्वर की दाद यह है कि उसने नवकुबेरों की रंगीनी के आले को समाज चेतना का हथियार बना डाला—और यह अपने-आप में एक चमत्कार है।

खण्ड : ८
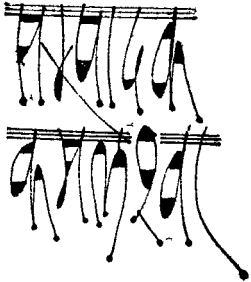
यह बात मुझे 'नई कहानियाँ' के जुलाई अक को देखकर याद आ गयी। मित्र का चेहरा मेरी आँखो म उतर आया है। अपनी इसी कलम से भाई कमलेश्वर के सम्पादन पर कई बार भला-बुरा कहा है।

भाई कमलेश्वर जुलाई अक से नई कहानियाँ' का सम्पादन छोड गये हैं। इसका अजामिल को सचमुच दु ख हुआ। जो भी हो दो-ढाई साल के अरसे म कमलेश्वर जी न 'नई कहानिया के सम्पादन द्वारा अपनी नयी दृष्टि का खुलकर परिचय दिया था। कम मे-कम नये लेखको के लिए किसी व्यावसायिक पत्रिका के तीन-तीन विशेषाक निकाल देना एक बहुत बडे साहस का काम है। इससे एक बात साफ हो गयी थी कि कमलेश्वर अपने सम्पादन और नवलेखन के प्रति जितने ईमानदार थे, अपनी नौकरी के प्रति उतने ही लापरवाह भी। उन्होने यह नही देखा था कि नितात नये लेखको को तीन अको तक सरासर भर देने से साधारण पाठक और पुराने लेखक रुष्ट भी हो सकते हैं। हर व्यावसायिक पत्रिका का सम्पादन अपने म यह साहस नही सहेज सकता। सहजता है तो जोखिम उठाता है। अजामिल ने इसी स्तम्भ म कमलेश्वर के इस काय को एक साहित्यिक उपलब्धि बनाया था और आज भी जबकि कमलेश्वर 'नई कहानियाँ के सम्पादक नही रहे हैं अपनी बात को दुहराता है और उन्ह इस साहसिक और अभूतपूव काय के लिए बधाई देता है। जो भी हो कमलेश्वर अपन को सफल सम्पादक सिद्ध करने के बाद बाइज्जत नई कहानियाँ से अलग हुए हैं और जसा कि जुलाई अक म दिया गया है व्यवस्थापकीय आग्रह पर भी उन्होंने नई

कहानियाँ' का सम्पादन आगे करते रहना अपने लिए सम्भव नहीं समझा। आज जब कि प्रतिष्ठा के किसी भी पद से चिपके रहन का आम फशन है कमलेश्वर ने यह एक और साहस का काम किया। अजामिल उनके द्वारा इस पद से की गयी साहित्य सेवा और सफल सम्पादन के लिए उन्हें हज़ार हज़ार बधाइयाँ देता है और आशा करता है कि भाई कमलेश्वर की परम्परा को जीवित रखते हुए भाई भीष्म साहनी नई कहानियाँ की प्रगति और नवलेखन के विकास के लिए और अधिक प्रयत्नशील रहेंगे तथा इसी तरह की शानदार सम्पादन सफलता के अधिकारी बनेंगे। अजामिल भीष्म साहनी का इस क्षेत्र म स्वागत करता है, हर्ष प्रकट करता है।

—उत्कर्ष मासिक (लखनऊ) के स्थायी स्तम्भकार
अजामिल की टिप्पणी जुलाई १९६५ की साहित्यिकी स।

अजित पुष्कल

कमलेश्वर चिंतन, पत्रकारिता और सपादन के सदर्भ मे

सामजिक सन्दभ म पत्रकार की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण होती है। वह समय-समय पर घटनेवाली घटनाओ की सूचना देकर ही नही मुक्त हो जाता, वरन अपने अर्जित अनुभव ज्ञान और चिंतन से एसे वैचारिक मुद्दे भी पेश करता है जो समय-सापेक्ष होते है और घटनाओ को सही परिप्रेक्ष्य प्रदान करते हैं। पत्रकार की सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक समझ से सम्पृक्त आख्या सामाजिक परिवतन को रेखांकित करती है। इस प्रक्रिया के दौर मे उसके कथ्य और भाषा म एसी शक्ति पैदा होती है जो व्यापक जन समुदाय की मानसिकता को आदोलित करता है तथा उत्पन्न चिंतन म पाठक को सहभागी होने को बाध्य करती है। यह भाषा पाठक को वैचारिक आयाम देती है। उसके बौद्धिक स्तर को विकसित करती है और समय की सही पहचान के लिए शिक्षित भी करती है। भारतीय पत्रकारिता का इतिहास इस कथन की पुष्टि करता है।

ध्यान स देखा जाय तो हिन्दी पत्रकारिता का उद्‌भव सामाजिक परिवतन की अनिवार्यता से ही हुआ है। सामाजिक मुक्ति से लेकर राष्ट्रीय मुक्ति तक उसकी ऐतिहासिक यात्रा रही है। इस यात्रा को आगे बढाने म समय-समय पर समाज-सुधारकों राष्ट्रीय नेताओ सजग पत्रकारो एव साहित्यकारो का महत योगदान रहा है। इनके द्वारा सपादित पत्र पत्रिकाओ म प्रकाशित विचार-सामग्री मे सामयिक परिवतनकामी प्रगतिशील चेतना का प्रस्फुटन होता रहा है। इसीलिए समसामयिक परिवतनकामी चेतना का विकास ही हिन्दी पत्रकारिता का मूलभूत आधार है। यह चेतना इतिहास क अन्तर्विरोधो क बीच जन आकाक्षाओ का प्रतिनिधित्व करती हुई वैचारिक मुद्दे उठाती रही है और सघष की भूमिका तयार करती चली है। पत्रकारिता की परम्परा निर्मित करने तथा आतरिक शक्ति के रूप म यह प्रक्रिया आज भी विद्यमान है। आग भी रहगी। अत प्रबुद्ध एव सार्थक

पत्रकारिता के लिए यह सही कसौटी भी है।

वैसे तो सम्पादन शब्द मे ही चिंतन और पत्रकारिता की परिकल्पना व्याप्त है। फिर समय समय पर चिंतन की प्रक्रिया और विधि बदलती रहती है। अत व्यक्ति विशेष के सम्बन्ध मे सही जानकारी के लिए इन तीनो मुद्दों पर थोडा-बहुत विचार आवश्यक हो जाता है जिससे सम्पादक के क्रमिक विकास को सही रूप म जाना जा सक विशेषकर ऐसा सम्पादक जा लेखक भी हो। क्योंकि लेखक सम्पादक का दायित्व कुछ अधिक हो जाता है। अपनी सृजनात्मक क्षमता के बल पर लेखक सम्पादक साहित्यिक रचनाधर्मिता को युगबोध से सपक्त करने म सक्रिय सहयाग देता है। हिन्दी साहित्य म 'भारतन्दु युग इस सदभ की पुष्टि करता है। इस युग के लेखक सम्पादकों न पहली बार क्रान्तिकारी कदम उठाया था। उन लोगो ने स्वय पत्रिकाओ का सम्पादन करके अपने युग के समान्तर साहित्यिक युग की भी सरचना की थी। आग चलकर 'हस', 'सरस्वती', नया साहित्य', प्रतीक नई कहानियाँ 'सकेत निकष' जसी अनेक पत्रिकाएँ लखको द्वारा सपादित की गयी जिन्होन अपने अपन वचारिक स्तर के आधार पर समयानुकूल रचना बोध को उजागर किया है और अग्रगामी भूमिकाएँ भी तयार की है।

आज पत्रकारिता व्यापार के रूप म बदल गयी है। व्यावसायिक सस्थाना स रोचक और रग बिरगी सामग्री वाली पत्रिकाएँ बडी मात्रा म निकल रही है। रहस्य रोमाच सेक्स से नेकर शिगुफेबाजी तक उनकी अनन्त मुद्राए हैं। पाठक वग पर एसी पत्रिकाआ का रगीन धुध छायी हुई है। इनमे से कुछ ही ऐसी पत्रिकाएँ है जिनमे कभी कभार साहित्यिक स्तर की रचनाएँ दीख पडती हैं। ऐसी स्थिति म आज के जागरूक लेखक सम्पादक का सघप भारतेन्दुयुगीन लेखकों से जटिल एव बडा है। उस समय के लेखको के सामने स्पष्ट लक्ष्य था। आज जसी पूजीवादी व्यवस्था की पेचदगी नही थी। प्रतियागिता नही थी। फिर भी आज हिन्दी मे वचारिक स्तर पर रचनाधर्मिता का पक्ष उजागर करने वाली अनेक पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही है। महानगर नगर और कस्बा से प्रकाशित हो रही हैं। इन पत्रिकाआ क माध्यम स लेखक सम्पादक समसामयिक परिवतनकामी चेतना को ही विकसित करने मे एतिहासिक भूमिका का निर्वाह कर रहे हैं। उनकी सृजनात्मक क्षमता साहित्यिक के लिए मूल्यवान है। मैं छोटे बड ऐसे ही सघपरत चेतना सपन्न सम्पादकों की कतार म एक कडी के रूप म कमलेश्वर को परखन का औचित्य अनुभव करता हूँ। क्योंकि व्यवसायिक पत्रिका से जुड जान मात्र से किसी सम्पादक का सदिग्ध भाव से देखना आँख बन्द करके देखना जसा होगा। सरस्वती कहानी नई कहानिया मतवाला जसी पत्रिकाएँ भी सेठाश्रयी रही हैं। किन्तु इन पत्रिकाओ ने जो साहित्यिक आन्दोलन खड किये हैं जो साहित्यिक

कहानी का आन्दोलन प्रगतिशील साहित्य का ही अभिन्न रूप था। उसकी सारी चिंतना मार्क्सवादी रही है। इस आन्दोलन से सम्बद्ध लेखकों ने अपने ढंग से यथार्थ की अभिव्यक्ति के आयाम खोजे थे। मैं यहाँ पर 'नयी कहानी' के बारे में ज्यादा न कहकर कहानी के सम्बन्ध में कमलेश्वर की सोच को रेखांकित करना चाहूँगा। यथा—

(क) कहानी लिखना मेरा व्यवसाय नहीं—विश्वास है।'

(ख) मेरा जीवन इतिहास सापेक्ष है। उसके तमाम अंतर्द्वंद्वों का साक्षी है—व्यक्ति और उसकी सामाजिकता दोनों का।"

(ग) पिछले दस पन्द्रह वर्षों में कुछ 'गज़टेड आलोचकों' के कारनामों के कारण एकाएक प्रगतिशीलता, जनवादी दृष्टिकोण आदि शब्दों से लेखकों को परहेज हो गया, इतना ही नहीं उन शब्दों से उन्हें डर भी लगने लगा—मेरे लिए ये शब्द डर का कारण नहीं है—वे मेरी शक्ति हैं।'

(घ) 'पश्चिम की कुंठा, कुत्सा, अकेलापन, पराजय और हताशा मेरे लिए चिंता का विषय हो सकता है मेरा वर्ण्य नहीं।'

(ङ) 'आधुनिकता मेरे लिए वही है जो अपने ऐतिहासिक क्रम और सामाजिक संदर्भों में प्रस्फुटित हुई है।

(च) जीवन के प्रति प्रतिबद्ध होना मेरी अनिवार्यता है। इस टूटते, हारते और अकुलाते मनुष्य की गरिमा में मेरा विश्वास है।'

(छ) जिनकी जीत होनी रहेगी, वे क्रूर होते जायगे। इसीलिए मुझे तो लगता है कि मैं हमेशा हारे हुओं के बीच रहने के लिए प्रतिबद्ध हूँ और जब तक यह होता रहेगा, जब तक सब जीत नहीं जायेंगे।'

(आत्मकथ्य—मास का दरिया से)

आत्मकथ्य के ये विचार?

इन विचारों में जन साधारण को सामाजिक प्रताड़ना तथा उत्पीड़न से मुक्त कराने का एहसास है। एक उदात्त भविष्य की सम्भावना पर विश्वास है। व्यक्तिवाद, कुंठा, संत्रास, अकेलापन जैसे प्रतिगामी भावों के प्रति खुली उपेक्षा है। *समाज में 'हारे हुओं' के प्रति प्रतिबद्धता ही नहीं उनके साथ संघर्षशील बने* रहने का समर्पण है। यही तो प्रगतिशील चिन्तन के सही मुद्दे होने हैं। जो इस चिंतन से संपृक्त होता है वह प्रतिक्षण बदलती हुई नवीनता को स्वीकार करता चलता है और वह यह भी समझता है कि सामाजिक परिवर्तन शोषित बहुसंख्यक लोग ही कर सकते हैं। इसीलिए बहुसंख्यक की अपराजेय शक्ति पर उसे विश्वास होता है। वह एक से अनेक में प्रतिबिम्बित होता है। व्यक्तिवाद के सन्नाटे को उपेक्षित कर समय की सही आवाज़ से जुड़ता है। कमलेश्वर में चिन्तन का यह

पक्ष ही प्रमुख है।

कमलेश्वर का यह चिन्तन समय को विश्लेषित करते हुए अपना स्वरूप निश्चित करता चलता है। चिन्तन का यह व्यापक स्वरूप आम आदमी को लेकर पूरे तौर पर मुखर हुआ है। देश-काल के अनुरूप कमलेश्वर 'आम आदमी' के बहाने सर्वहारा के दायरे का अधिक विस्तृत रूप में देखना चाहते हैं। सर्वहारा का शोषक प्रत्यक्ष रूप से उसके समक्ष होता है। मगर व्यवस्था की आंतरिक चालाकियों के बीच अप्रत्यक्ष रूप से न जाने कितने लोगों का शोषण होता रहता है। उन लोगों को साहित्य में रेखांकित करना उन्हें होने वाले शोषण के कारणों से अवगत कराना तथा भविष्य के लिए संघर्षशील बनाना भी बहुत जरूरी मुद्दा है। यही कारण है कि कमलेश्वर मेरा पन्ना' के अन्तर्गत आज का यथार्थ समान्तर संसार' में आम आदमी के जीने और सही रूप से जीने के बीच जो अन्तर्विरोध है उसका खुलकर जायज़ा लेते हैं। उन कारणों का उद्घाटित करते हैं जिन्होंने आदमी की रागात्मक आर्थिक तथा सामाजिक शक्तियों को चूर चूर कर डाला है। पूंजीवादी व्यवस्था की खोखली मानवीयता करुणा, नैतिकता आदि की व्याख्या करते हुए यह माँग करते हैं कि मानवीयता का एक परिवर्तनकामी शक्ति के रूप में रूपान्तरित किया जाय। तथाकथित करुणा, समन्वय और संस्कार सामयिक संदर्भों से कटकर मात्र मुखौटे ही है। क्योंकि जब उत्पादन का स्वरूप बदलता है तो नये सामाजिक आर्थिक रिश्तों के लिए संस्कारों का बदलना भी ज़रूरी है। भारत के सामाजिक परिवेश में निरर्थक संस्कारों को ढोने में गतिहीनता उत्पन्न होती है। अतः ऐसी मानसिकता को बदलने में साहित्य ही कारगर हो सकता है। साहित्य यदि समाज की मानसिकता को बदल सके परिवर्तन वाहक संस्कारों को उत्पन्न कर सके तो मान लेना चाहिए कि वह अपनी सार्थक भूमिका निभा रहा है। प्रतिबद्ध दृष्टिकोण के बावजूद भी साहित्य में संवेदनात्मक भाव की प्रस्तुति का महत्व कम नहीं होता। लेखक के लिए संवेदनाएँ उसके परिवेश से मिलती है। उसी परिवेश से वह अपने पात्र भी चुनता है। प्रामाणिक पात्रों के चुनाव के लिए यही एक रास्ता है। हिन्दी के लेखक मध्यमवर्गीय हैं। मध्य वित्तीय वर्ग में आत्महन्ता प्रवृत्ति भी होती है। यदि संवेदना इस प्रवृत्ति पर टिक गयी तो प्रतिक्रियावादी साहित्य की संरचना की संभावनाएँ मुखर हो उठती है। हिन्दी में सन १९६० के बाद की कहानियों में जिस मैं का उद्भव हुआ वह अन्तर्मुखी 'मैं' था। उसमें आक्रोश खीझ और छटपटाहट तो थी किन्तु संघर्ष की शक्ति नहीं थी। सामने फैले अंधकार को विश्लेषित करने की क्षमता के अभाव में खण्ड-खण्ड होते और टूटते व्यक्तिवादी पात्रों का सृजन होने लगा था। उन कहानियों को पढ़कर पाठक भी ऊबते थे। उस ऊब को कहानी की सार्थकता माना जाने लगा था। और तभी से जागरूक

लेखक और पाठक नयी कहानी की तलाश म थे।

तय है कि एसी कहानी की तलाश तभी पूरी हो सकती थी जब कि वचारिक आधार पर समय सगत मनुष्य की परिस्थिति की व्याख्या की पुन शुरुआत की जाती। जागरूक लेखकों और सम्पादकों ने ऐसी शुरूआत की भी। छोट-छोटे गुटो क द्वारा यह काम हुआ। मगर समग्रता का अभाव बराबर खटकता रहा। ऐसा कोई प्रयास नही हो सका जिसस ज्यादा-से ज्यादा लेखको की एकजुटता हो पाती। किन्तु समान्तर सोच के क्रमश विकास ने बहुत से लखकों को एकजुट किया। कई भारतीय भाषाओ के लेखको न भी इसे स्वीकार किया। फिर भी इसे आन्दोलन की सज्ञा नही दी गयी। क्योकि सभी लेखक य मानते हैं कि समान्तर सोच प्रगतिशील वचारिकता को ही आग बढ़ा रही है। कुल मिलाकर कहना यह चाहता हूँ कि यदि समान्तर सोच म कोई दुर्नीति होती तो ऐसी घोषणा की आवश्यकता न होती। मेरी इस बात की पुष्टि राजगीर मे हुए पाँचवें अखिल भारतीय समान्तर सम्मेलन के प्रस्तावो से हो जाती है। इसम दो रायें नही हो सकती कि इस क्षेत्र म जो कुछ भी हुआ है कमलेश्वर की चिन्तन पद्धति और सगठन शक्ति के कारण। सारिका' तो पहले भी निकलती थी। मगर कहानी और साहित्य की वचारिकता को इस तरह रेखांकित करन का प्रयास पहल कभी नही हुआ था। सम्पादक के रूप म कमलेश्वर की यह बहुत बडी उपलब्धि है जिस नकारा नही जा सकता।

प्रारम्भ से ही कमलश्वर कथाकार के रूप म ही प्रख्यात हुए। यद्यपि समय समय पर उ होने सम्पादन काय भी किया है। किन्तु उनके सम्पादक-व्यक्तित्व का पूण विकास 'सारिका के माध्यम से ही हुआ है।

सवप्रथम हिन्दी 'सकेत मे उन्होने सम्पादक के रूप म काय किया था। उपेन्द्रनाथ 'अश्क उसके नामधारी प्रधान सम्पादक थ। सकेत हिन्दी लेखन की पहचान के लिए महत्वपूण ग्रन्थ था। उपन्यास कहानी कविता तथा अन्य सामग्री के चयन मे सम्पादक की अदभुत सूझ का पता चलता है। यह वह समय था जब प्रगतिशील लेखन की आवाज दबती जा रही थी और व्यक्ति-स्वातन्त्र्य का झण्डा हिन्दी साहित्य मे बुलन्द किया जा रहा था बिखरे और एक-दूसरे पर दोषा रोपण करते प्रगतिशील लेखक अपनी कीली से उतर चुके थे। एसे समय म युवा कमलेश्वर न 'सकेत' के माध्यम से प्रगतिशील रचनात्मकता को एकत्रित करने के लिए सकेत' का मच तयार किया था।

दिल्ली से निकलन वाले साप्ताहिक पत्र इगित' का सम्पादन भी कमलेश्वर ने ही किया। मात्र साहित्यिक पत्र न होने का कारण इस पत्र मे तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक टिप्पणियाँ और निबन्धो का सामयिक महत्व था। कमलेश्वर ने कई उपनामो से इन विषयो पर साथक टिप्पणियाँ और

निबन्ध लिखे हैं। तय है कि उस पत्र के सम्पादन से उनके दृष्टिकोण के विकास के लिए व्यावहारिक क्षेत्र प्राप्त हुआ। सामयिक समस्याओं म गहरी पैठ के साथ अध्ययन का अवसर प्राप्त हुआ। सामयिक राष्ट्रीय तथा अन्तराष्ट्रीय गति विधियों के साथ उनका चिंतन और प्रखर हुआ।

'इंगित' साप्ताहिक की जानकारी बहुतों को नहीं है। पर यह ऐसा पत्र था जो समाचारों को विचारों की पीठिका के साथ प्रस्तुत करता था। यह कहने म कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि कमलेश्वर ही इस पत्र की पचास प्रतिशत सामग्री लिखते थे। अनुवाद करते थे। क्या आपको सुनकर आश्चर्य नहीं होगा कि पर्यवेक्षक उपनाम से कमलेश्वर ही इस पत्र म तीसरी दुनिया के देशों की आर्थिक संयोजना पर टिप्पणियाँ लिखते रहे हैं ? या कि फासिस्ट विरोधी लेख संजय के उपनाम के अन्तगत उन्हीं के लिखे हुए हैं ? सम्प्रदायवाद, अंध राष्ट्रीयतावाद और हिंदूवाद की बखिया कमलेश्वर ही 'हरिश्चन्द्र' के उपनाम से उधेड़ते रहे हैं ? पूँजीवादी अर्थव्यवस्था, युद्धउन्माद और भारतीय बूर्जुआजी की साजिशों को कमलेश्वर ही 'सौमित्र सिनहा' के नाम से बेनकाब करते रहे हैं ?

इतना ही नहीं—जिस समय हिंदी पत्रकारिता म छद्म विद्रोही घुस आये थे और जो अपने मालिकों की बहुओं से सामग्री का चयन कराके अपने नाम पर छापते रहे थे और बाद म नौकरी पर वापस न जा पाने के कारण विकट विद्रोही बनकर अपने आवेश म हिंदी की युवा पत्रकारिता को गुमराह कर रहे थे—उस वक्त उन प्रतिक्रियावादी सेक्सवादी स्वच्छंदतावादी प्रवृत्तियों से कमलेश्वर ने ही विप्र गोस्वामी बनकर लेख लिखा था।

इंगित' म उस समय भगवतशरण उपाध्याय परसाई राही मासूम रज़ा, अमृतराय नागार्जुन रामआसरे, हबीब तनवीर, शरद जोशी, गणेश शुक्ल ओमप्रकाश सिंघल, भूपेश गुप्त ज्ञानी गुरुमुखसिंह मुसाफिर, नवतेज जैसे प्रगतिशील लेखक विचारक लिख रहे थे।

इसके पहले कमलेश्वर ने नई कहानियाँ का सम्पादन सँभाला था। इस काल मे उन्होंने प्रगतिशील रचनात्मकता को रेखांकित करते हुए जिन एकदम नये कथाकारों को छापा था उनमें से कुछ नाम ये भी हैं जो आज हिन्दी साहित्य के चर्चित नाम हैं ज्ञानरंजन रवीन्द्र कालिया दूधनाथसिंह महेन्द्र भल्ला, गिरिराज किशोर देवेन गुप्त विजय चौहान रामनारायण शुक्ल राजकमल चौधरी से० रा० यात्री शानी मेहरुन्निसा परवेज़ प्रबोधकुमार गंगाप्रसाद विमल परेश रमेश उपाध्याय आदि। कमलेश्वर ने कभी भी अपने आगे आनेवाले लेखकों को रोका नहीं बल्कि उनकी रचनात्मकता को रेखांकित किया।

और जब इसी पीढ़ी के अधिकांश लेखक साहित्यिकता के प्रमाद म अपने यथार्थ से कटने लगे और निहायत बनावटी, मानवविरोधी घृणित और रूपवादी

लेखन म 'अकहानी' के अन्तगत पर्यवसित होन लग तो कमलेश्वर न ही इस जहनियत का जमकर विरोध किया— ऐय्याश प्रेता का विद्रोह' लिखकर ।

यह वह समय था जब निमल वमा चीडा पर चाँदनी' लिख रह थे। माकण्डेय अपनी पुरानी किताबें छाप रहे थे। रेणु कितने चौराहे जसी अपरिपक्व कृति स सही राजनीति के बारे म भ्रम पैदा कर रह थे। शिवप्रसादसिंह भारतीय और पाश्चात्य सौन्दय शास्त्र की व्याख्या कर रहे थे राकेश नाटको म शान्द शक्ति पर शोधकाय कर रहे थे और राजेन्द्र यादव अक्षर प्रकाशन के सर्वेसर्वा बनकर अपनी किताबो के विनापन लिख लिखकर स्वय खुद व अपनी पत्नी मन्नू भडारी के कृतित्व को रेखाकित कर रहे थे। नामवरसिंह 'नई कविता म मुक्तिबोध शमशेर केदारनाथ अग्रवाल आदि कवियो को नकार कर अनय रघुवीर सहाय सर्वेश्वर कमलेश आदि को नई कविता का मसीहा बना रहे थ और जोधपुर यूनिवर्सिटी म डा० वी० वी० जान और अज्ञय की सिफारिश पर प्राप्त होन वाल नियुक्तिपत्र की प्रतीक्षा कर रहे थे। भीष्म साहनी उस समय देश स बाहर थे और राजीव सक्सेना हरिशकर परसाई अमरकान्त के अतिरिक्त यदि कोई अन्य व्यक्ति उस समय जनवादी चिन्तन के लिए कृतसकल्प दिखायी पडता था तो उनम स एक प्रमुख नाम कमलेश्वर का ही था।

कथा दशक' के अ तगत जब निमल वर्मा वामपथी राजनीति क अनुभवो को विचित्र अनुभवो की गोल मोल मना दे रहे थ उस समय उसी कथा दशक' म कमलेश्वर प्रगतिशीलता और जनवादी दष्टिकोण को अपनी शक्ति घोषित कर रहे थे।

यहा यह जान लना भी अनावश्यक नही होगा कि जब सन् ५४ म इलाहाबाद से कहानी' पत्रिका का प्रकाशन शुरू हुआ था तो उसके पहले अक से ही कमलेश्वर कहानी पत्रिका के सहयोगी सम्पादक के रूप म श्रीपतराय और श्यामू स यासी के साथ काम करते रह थे और समाजवादी देशा की कहानियो क अनुवाद विशेषत करते रहे थ। यानी कमलेश्वर का बपतिस्मा ही प्रेमचन्द की परम्परा मे हुआ था।

सम्पादन की दृष्टि से कमलेश्वर ने नई कहानियाँ' के जमाने मे जिन प्रतिभाओं का रेखाकित किया वे अपने समय की कुछ अत्यत प्रभावशाली रचनाएँ देकर अकहानी' के जाल म फँसकर लुप्त हो गयी। इसके पीछे सौन्दयवादी, जन विरोधी शक्तियो का हाथ रहा जिन्होने अकहानी को अतिरिक्त प्रोत्साहन देने की भगिमा अपनायी और कहानी को प्रगतिशील नयी कहानी के विरोध म प्रस्तुत करने की हिमाकत की। पर मानवविरोधी जनविरोधी इस बल की जडें पनप नही पायी।

इसी समय 'सचेतन कहानी' जैसी जनमधी और हिन्दूवादी कहानी का उदय हुआ जिसे राजीव सक्सेना जैसे प्रगतिचना विचारक के प्रयत्नो के बावजूद प्रगतिशील वैचारिकता से जोडा नहीं जा सका। सचेतन कहानीकार राजीव सक्सेना के सदप्रयत्नों के बावजूद गुरु गोलवलकर के अनुयायी ही बने रहे और राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ तथा जनसघ के बिल्ले लगाकर सन ६५ म हुए पाकिस्तानी युद्ध के समय हिन्दूवादी मनोवृत्ति का परिचय देते हुए ब्लैक आउट के दिना म सही साहित्य को परिचालित न करके खालसा कालिज दिल्ली के चौराहे पर ट्रफिक कट्रोल करते रहे और लोगो को यह बताते रहे कि यह पाकिस्तान भारत का युद्ध नही, बल्कि हिन्दू मुसलमान का युद्ध है।

उस समय कमलेश्वर सम्पादक नही थे पर उसी समय उन्होंने अपनी 'युद्ध' कहानी लिखी थी जो उनकी सोच को इस सारे सदभ म रेखांकित करती है।

'नई कहानियाँ' साहित्यिक पत्रिका थी जिसके माध्यम से कमलेश्वर को साहित्यिक समस्याओ को उजागर करने का अवसर प्राप्त हुआ। उन्होंने नये कथाकारो को स्थापित किया। 'मेरा हमदम मेरा दोस्त' जैसे कालम से स्थापित लेखको के जीवन के अतरग मदर्भों को पाठको के सामने रखा। नये लेखको की वचारिक समस्याओ को मुखर किया। यही से उनके साहित्यिक सम्पादक का व्यक्तित्व उभरकर सामने आने लगता है। इस सदभ म 'नयी धारा' के समकालीन कहानी विशेषांक की चर्चा बहुत आवश्यक लग रही है क्योंकि इसे उन्होंने विशेष रूप से सम्पादित किया था। इसम नये-पुराने सभी लेखको को समेटा गया था। कहानियो के अतिरिक्त बहुत से लेखको ने 'आधुनिक सक्रमण और लेखन दृष्टि' कहानी परिचर्चा के अतगत अपने-अपने विचार प्रकट किये। कहानी पत्रिकाओं के तीन समय सपादको ने सम्पादन दृष्टि पर अपने अपने वक्तव्य दिये थे। इससे बहुत सारे वैचारिक मुद्दे सामने आये थे। प्रारम्भ से ही ऐसा लगता है कि कमलेश्वर अपने विचारो को प्रखर बनाने के लिए प्रश्नो और समस्याओं के रूप म बुद्धिजीवियो के बीच खुली बहस के लिए छोड देते हैं और तभी किसी सत्य को आत्मसात करके व्याख्यायित करते हैं। इससे उनके चिन्तन को व्यावहारिकता प्राप्त होती है। इस पत्रिका के सजन सन्दर्भ के अतगत लेखको के वक्तव्यो को देखा जाय तो 'समातर' के सम्बन्ध म दिये गये शब्दो को आसानी से समझा जा सकता है। सक्षेप रूप म इस सम्बन्ध म मैं कुछ कहना चाहूँगा। वह यह है कि 'परिवेश से सम्बद्धता' 'वतमान को पूरी तरह से जीना' 'साधारण व्यक्ति के साथ गहरी ईमानदारी के साथ जुडना' 'जीवन से सम्बद्धता' 'इतिहास बोध और जीवन का दण्ड' 'सारे दबावो का प्रभाव' 'दोतरफा जिम्मेदारी का मोर्चा' जसी बातें लेखको की ओर स ही उठायी गयी थी, जिनको वचारिक आयाम दिया गया है। और सारा-का सारा चिन्तन स्वस्थ परम्परा से खीचकर विस्तृत

लेखन म अकहानी' के अन्तर्गत पयवसित होन लगे तो कमलेश्वर न ही इस जहनियत का जमकर विरोध किया— ऐय्याश प्रेतो का विद्रोह' लिखकर।

यह वह समय था जब निमल वर्मा चीडो पर चादनी' लिख रहे थे। माकण्डेय अपनी पुरानी किताबें छाप रहे थे। रेणु कितने चौराहे' जसा अपरिपक्व कृति से सही राजनीति के बारे म भ्रम पदा कर रहे थे। शिवप्रसादसिंह भारतीय और पाश्चात्य सौदय शास्त्र की व्याख्या कर रहे थे राकेश नाटको मे शब्द शक्ति पर शोधकाय कर रहे थे और राजेन्द्र यादव अक्षर प्रकाशन के सर्वेसवा बनकर अपनी किताबो के विनापन लिख लिखकर स्वय खुद व अपनी पत्नी मन्नू भडारी क कृतित्व को रेखाकित कर रहे थे। नामवरसिंह नई कविता म मुक्तिबोध शमशेर केदारनाथ अग्रवाल आदि कवियो को नकार कर अनेय, रघुवीर सहाय सर्वेश्वर कमलेश आदि को नई कविता का मसीहा बना रहे थे और जोधपुर यूनिवसिटी म डा० वी० वी० जान और अज्ञेय की सिफारिश पर प्राप्त होने वाले नियुक्तिपत्र की प्रतीक्षा कर रहे थे। भीष्म साहनी उस समय देश से बाहर थे और राजीव सक्सना हरिशकर परसाई, अमरकान्त के अतिरिक्त यदि कोई अन्य व्यक्ति उस समय जनवादी चिंतन के लिए कृतसकल्प दिखायी पडता था तो उनम से एक प्रमुख नाम कमलेश्वर का ही था।

कथा दशक' के अन्तगत जब निमल वर्मा वामपथी राजनीति क अनुभवो को विचित्र अनुभवो की गोल मोल सना दे रहे थे उस समय उसी कथा दशक मे कमलेश्वर प्रगतिशीलता और जनवादी दृष्टिकोण' को अपनी शक्ति घोषित कर रहे थे।

यहाँ यह जान लना भी अनावश्यक नहीं होगा कि जब सन ५४ म इलाहाबाद से कहानी पत्रिका का प्रकाशन शुरू हुआ था तो उसके पहले अक से ही कमलेश्वर कहानी पत्रिका के सहयोगी सम्पादक के रूप म श्रीपतराय और श्यामू सन्यासी के साथ काम करते रहे थे और समाजवादी देशो की कहानियो के अनुवाद विशेषत करते रहे थे। यानी कमलेश्वर का बपतिस्मा ही प्रेमचन्द की परम्परा म हुआ था।

सम्पादन की दृष्टि से कमलेश्वर न नई कहानियाँ' क जमाने म जिन प्रतिभाओ को रखाकित किया वे अपने समय की कुछ अत्यत प्रभावशाली रचनाएँ देकर अकहानी के जाल म फँसकर लुप्त हो गयी। इसके पीछे सौन्दयवादी जन विरोधी शक्तियो का हाथ रहा जिन्होने अकहानी को अतिरिक्त प्रोत्साहन देने की भगिमा अपनायी और कहानी को प्रगतिशील नयी कहानी के विरोध म प्रस्तुत करने की हिमाकत की। पर मानवविरोधी जनविरोधी इस दल की जडें पनप नहीं पायी।

इसी समय 'सचेतन कहानी' जैसी जनसघी और हिंदूवादी कहानी का उदय हुआ जिसे राजीव सक्सेना जसे प्रगतिधना विचारक के प्रयत्ना के बावजूद प्रगतिशील वचारिकता से जोडा नहीं जा सका। सचेतन कहानीकार राजीव सक्सेना के मन्प्रयत्ना के बावजूद गुरु गोलवलकर के अनुयायी ही बन रहे और राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ तथा जनसघ के बिल्ले लगाकर सन ६५ म हुए पाकिस्तानी युद्ध के समय हिंदूवादी मनोवृत्ति का परिचय देते हुए ब्लक आउट के दिनो म सही साहित्य को परिचालित न करके खालसा कॉलिज दिल्ली के चौराह पर ट्रैफिक कट्रोल करते रह और लोगो का यह बताते रह कि यह पाकिस्तान भारत का युद्ध नही, बल्कि हिंदू मुसलमान का युद्ध है।

उस समय कमलेश्वर सम्पादक नही थे पर उसी समय उन्होने अपनी 'युद्ध कहानी लिखी थी जो उनकी सोच का इस सारे सदभ म रेखाकित करती है।

'नई कहानियाँ साहित्यिक पत्रिका थी जिसके माध्यम से कमलेश्वर का साहित्यिक समस्याओ का उजागर करने का अवसर प्राप्त हुआ। उन्होन नये कथाकारों को स्थापित किया। मेरा हमदम मरा दोस्त' जसे कालम स स्थापित लेखको के जीवन के अतरग सदर्भों का पाठको के सामन रखा। नये लेखको की वैचारिक समस्याओ का मुखर किया। यही स उनके साहित्यिक सम्पादक का व्यक्तित्व उभरकर सामन आन लगता है। इस सदभ म नयी धारा के सम कालीन कहानी विशेषाक' की चर्चा बहुत आवश्यक लग रही है क्योकि इसे उन्होने विशेष रूप से सम्पादित किया था। इसम नये-पुरान सभी लेखको का समेटा गया था। कहानिया क अतिरिक्त बहुत से लेखको ने 'आधुनिक मत्रमण और लेखन दृष्टि' कहानी-परिचर्चा के अतगत अपन-अपन विचार प्रकट किये। कहानी पत्रिकाओं के तीन समय सपादको ने सम्पादन दृष्टि पर अपने अपन वक्तव्य दिये थ। इससे बहुत सारे वचारिक मुद्दे सामन आये थ। प्रारम्भ से ही एसा लगता है कि कमलेश्वर अपन विचारो को प्रखर बनाने क लिए प्रश्नों और समस्याओ के रूप मे बुद्धिजीवियों के बीच खुली बहस के लिए छोड दत हैं और तभी किसी सत्य का आत्मसात् करके व्याख्यायित करते हैं। इमस उनके चिन्तन को व्यावहारिकता प्राप्त होती है। इस पत्रिका के सजन सदभ' क अतगत लखकों के वक्तव्यो को देखा जाय तो समातर' के सम्बन्ध म दिय गय शब्दो का आसानी से समझा जा सकता है। सकेत रूप म इस सम्बन्ध म मैं कुछ कहना चाहूँगा। वह यह है कि परिवेश से सम्बद्धता वर्तमान को पूरी तरह स जानो', साधारण व्यक्ति क साथ गहरी ईमानदारी के साथ जुडना' जीवन स सम्बद्धता, 'इतिहास बोध और जीवन का दण्ड मार व्यावा का प्रभाव, 'इतरफा जिम्मेदारी का मोर्चा जसी बातें लेखको की ओर से ही उठायी गयी थीं, जिनका वचारिक आयाम दिया गया है। और सारा-का सारा चिन्तन स्वस्थ परम्परा स खींचकर विस्तृत

किया गया है। समय के साथ उसे परिभाषित किया गया है। और यह भी सच है कि दृष्टिवान समर्थ सम्पादक ही यह कार्य कर सकता है। समांतर सोच के पीछे यह निरंतरता मौजूद है अत यह कभी निरर्थक नहीं हो सकता। यह हवा में उछाला गया 'नारा' नहीं है। कहानी का यथार्थ किस तरह और किस रूप में सामने आयेगा इसका अनुमान सम्पादक को हो गया था। 'नयी कहानी की भूमिका' के अन्तर्गत जहाँ स्वातंत्र्योत्तर कहानी की व्याख्या की है वहीं अंत में यह भी कहा गया है— वह (लेखक) सिर्फ चिंतन की स्वतंत्रता लेकर अपने परिवेश से आये हुए मनुष्य और उसके मानवीय संकट तथा यथार्थ को यथासंभव प्रामाणिकता से प्रस्तुत करने और निरंतर नयी होती स्थितियों को आत्मसात करने का विनम्र प्रयत्न करता है। इसीलिए उसके सामने प्रश्न अपनी उपलब्धियों का नहीं उपलब्ध चुनौतियों से सामना करने का है।

ये कुछ ऐसी बातें हैं जो काल तथा परिस्थिति से उत्पन्न सत्य को सामने रखती हैं। सारिका के सम्पादक होने के पहले से ही कमलेश्वर इस सत्य का अनुभव कर रहे थे। आगे चलकर विचारों में इनकी परिणति हुई। हर सजग पत्रकार वैचारिक विशिष्टता के लिए सामयिक समस्याओं से जूझकर ही अनुभूत सत्य ग्रहण करता है। कमलेश्वर ने निबंध ढंग से अपने विचारों को सारिका के पन्नों में उजागर किया है। उसे विशिष्टता प्रदान की है।

सारिका क्योंकि व्यावसायिक संस्थान से प्रकाशित होने वाली पत्रिका है अत उसका व्यावसायिक मूल्य भी है। हिंदी में वह अखिल भारतीय भाषाओं की कहानियों की पत्रिका के रूप में स्वीकृत है। अत इसकी सीमाएं भी अलग ढंग की हो सकती हैं। देखने की बात तो यह है कि उन सीमाओं के बीच सम्पादकीय दायित्व को कैसे निबाहा गया है। मतलब,

(क) सम्पादक की हैसियत से कमलेश्वर ने पत्रिका की सीमाओं को कहाँ तक विस्तृत किया है ?

(ख) हिन्दी कहानी को समय से जोड़कर कितना आगे बढ़ाया है तथा किस यथार्थ की खोज की है ?

(ग) नये लेखकों को कैसी दृष्टि और दिशा दी है ?

(घ) साहित्य की गतिविधियों और समस्याओं का कितना आकलन प्रस्तुत किया है ?

(ड) साहित्य सम्बंधी ज्ञान से पाठक को कितना प्रभावित किया है ?

(च) नये भारतीय साहित्य की प्रगतिशील चेतना को भाषाई सीमाओं से उठाकर एक सार्थक और समय संगत 'भारतीय अनुभव' को कैसे एकात्म किया है ? इतना ही नहीं उसे अन्तर्राष्ट्रीय संघर्षशील चेतना से कैसे सम्बद्ध किया है ?

वैसे इन प्रश्नों के उत्तर में मैं आँकड़े प्रस्तुत करने में अपने को असमर्थ पाता

हूँ। हाँ मोटे तौर पर इस सम्बन्ध मे ऐसी सामग्री का उल्लेख किया जा सकता है जो उपरोक्त बोध की स्वीकृति के लिए काफी होगी। और उसी से यह भी आका जा सकता है कि सम्पादक के रूप म कमलेश्वर की क्या दष्टि है ? उनमे कितनी सम्पादकीय क्षमता है और पत्रिका को सजनात्मक साहित्य से कितना जीवत बना सके है ?

आजकल पत्रकारिता का आयाम राष्ट्रीय ही नही अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो तक फला हुआ है। तकनीकी विकास के साथ बहुत सारी सुविधाएँ भी प्राप्त है। प्रबुद्ध पाठको का अपना एक जागरूक वग भी है। जटिल व्यवस्था की समस्याएँ है। *ऐसी स्थिति म साथक सपादन जटिल प्रक्रिया ही नही जोखिम का काम भी* ह। किन्तु कमलेश्वर न वचारिक स्तर पर लेखन के स्तर पर इस जोखिम को उठाया है। शुरू शुरू म जब उन्होने सारिका सँभाली थी तो अजीब सा स नाटा था। किन्तु आग चलकर उन्होने इस स नाटे का तोडा। यह सन्नाटा कई रूपा म तोडा गया। इस सम्बन्ध म सवप्रथम मेरा पन्ना का हवाला प्रासगिक होगा। इस कालम के अन्तगत उन्होन सम्पादकीय लिखना प्रारम्भ किया। सबस पहले उन्होने सातवें दशक की समाप्ति और पहले पाठक की वापसी' की बात उठायी और 'बाँझ बौद्धिकता और दभ पोडित दाशनिकता' को नकारकर अथ शब्दो को छीनने का आह्वान किया। गढी हुई नकली भाषा से विद्रोह किया और यह घोषित किया कि आदमी की पक्षधरता का दायित्व कहानी ही उठायेगी। साथ ही उसके यथाथ को पहचानने, उसकी तलाश की उत्कट तत्परता पर बल दिया। तलाश की तत्परता का ही परिणाम है कि आम आदमी की एक सही तसवीर सामने आ सकी है। 'आम आदमी' को उसकी सामाजिक आर्थिक तथा राजनतिक परिस्थितियों के बीच उजागर किया जा सका है। उसकी जुझारू शक्ति का आँका जा सका है। 'आम आदमी के यथाथ की इस खोज ने बहुत से लेखको को एकजुट किया है।

परिक्रमा के अतगत स्वात त्र्योत्तर हिन्दी कहानी का पुनमूल्याकन हुआ और प्रतिमास प्रकाशित होनेवाली कहानिया की साथकता का जायजा भी लिया जाता रहा। इसके अतिरिक्त छोटी पत्रिकाओ पर बातचीत का सिलसिला भी चलाया गया क्योकि साहित्य निर्माण म लघु पत्रिकाओ का बहुत बडा हाथ होता है। उनकी सही भूमिका स्वीकार करना जिम्मेदारी का काम होता है।

लेखन के स्तर पर कथ्यहीनता और छद्म स अलग जिन्दगी के बीच स ही कहानी की तलाश हुई। और इस क्रम म लम्बी कहानिया प्रकाशित की गयी। इस क्रम म हिन्दी लेखको के अलावा भारतीय भाषाओ और विदेशी भाषाओ की कहानिया भी प्रकाश म आयी।

जसे-जसे सामान्य जन की रूपरेखा स्पष्ट होती गयी वस ही अन्तर्राष्ट्रीय

आधार पर 'सामा यजन और सहयात्री लखक विशेषाक प्रकाशित हुए जिनम 'आजादी के २५ वष सामा य जन सह्यात्री लखक अक निकले जिनम भारतीय भापाओं के लेखको की रचनाए थीं। तीसरी दुनिया सामाय जन और सहयात्री लेखक के अतगत ऐसे आदमी की कहानिया थी जा सदिया अमानवीय स्थितियो का सामना करता रहा है शोषित और अनाचार का शिकार रहा है। इसम अफ्रीका भारत लतीनी अमेरिका और एशिया की कहानिया थी जिनका अपना विशिष्ट महत्त्व था। इसके बाद इस सम्बध म महत्वपूण अक था द्वितीय महा युद्ध के बाद अ तर्राष्ट्रीय कहानियाँ और सामाय जन। इस अक म २५ देशो के लेखको की अप्रतिम कहानियो को प्रकाशित किया गया। अफ्रीकी कथा विशेषाक प्रकाशित हुआ। कुल मिलाकर इन विशेषाको ने सामयिक विश्व साहित्य की जानकारी प्रदान की। इस कम म वियतनामी कहानी विशेषाक पालिश कथा अक तथा चेकोस्लोवाकिया की कहानियो के अक का भी घ्यान आता है। इन अको म कहानिया के अतिरिक्त पोलिश कथा साहित्य तथा चेक साहित्य पर जो लख प्रकाशित हुए थे वे बहुत ही महत्त्वपूण थे और पाठका म उस साहित्य की समझ पदा करने वाले थे।

कथा कहानी का सम्बध मनुष्य के साथ आदिम अवस्था स ही जुडा है। आज भी जन जीवन म प्राचीन गाथाओ का अस्तित्व विद्यमान है। सदिया स चली आती इन कथाआ की जानकारी के लिए विश्व कहानी की खोज से ७५ प्रमुख कहानियो का एक विशिष्ट अक निकला। विश्व म ऐसी कहानी की सजना के पीछे कौन स मूलभूत आधार थे, उनके सहारे धम रामाम सस्कृति और राज नीति को समटकर इन कहानियो ने समय समय पर जो रूप अख्तियार किया है उसका सम्यक विवेचन कमलश्वर ने अपन लख म किया है। यदि गम्भीरता से जाँचा परखा जाय तो यह किसी भी शाध ग्रथ से कम नही प्रतीत हाना। भार तीय भाषाआ के आद्य कथाकारा की खोज इस सिलसिले को आग बढाती है।

पत्रिका को जीवत और रोचक बनाने की जिम्मेदारी भी सम्पादक पर होनी है। उस पत्रिका क लिए ता और भा जिसका कुछ व्यावसायिक मूल्य हो। अक्सर देखा गया है कि राचकता के निरूपण म स्तरहीनता तक की नौबत आ जाती है। सारिका क गणिका अक और देवदासी अक देखकर लागा क मन म ऐसा भ्रम भी उत्पन्न हुआ। इसम भी आपत्ति नही कि ऐसी नारियो के प्रति लोगो की जो मानसिकता है वह स्वय म बडी राचक होनी है। किन्तु प्रश्न यह है कि किसी भी पत्रिका का सम्पादक इह पाठका के सामने किस रूप म पेश करता है। वह इन नारियो के प्रति पाठका की सहानुभूति बटोरना चाहता है वह वासना जागत करना चाहता है या सामाजिक ढाँचे म स्त्री पुरुष के सम्बधा के शोषण का जायजा लना चाहता है? मरी समझ म सारिका' के इन अको म अतिम बात

की पुष्टि की गयी है। प्राचीन ग्र यो से कहानिया समेटी गयी हैं तथा विश्व के महान लेखको ने जो कहानिया लिखी हैं उन्हे भी प्रकाशित किया है। ताकि व्यापक दृष्टिकोण से समस्या का सदभ के साथ समझा जा सके।

पाठक के मन मे अपन लेखक का लेकर कई तरह की जिनासाएँ पदा होती रहती हैं। उसके चिन्तन के सम्बन्ध मे। उसके जावन के प्रमगा के सदभ म। उनके स्वभाव और व्यवहार के बारे मे। पाठक की जिनासा की नप्ति के लिए 'गर्दिश के दिन और अन्तकथा' जसे कालम की शुरुआन से एक ओर ता स्थापित एव समय लेखको के इन्टरव्यू हैं जिनसे उनकी साहित्यिक मान्यनाओ के बारे म सूचनाएँ मिलती हैं दूसरी ओर गर्दिश क दिन' के माध्यम से उनके जीवन सदर्भों की जानकारी होती है।

सम्पादक कमलेश्वर के दष्टिकोण की सफाई के लिए कविरा खडा बाजार म' की चचा न करना असगत हागा। हरिशकर परसाई द्वारा लिखे गये व्यग्य लेखो को प्रकाशित करन का अथ था वामपथी चिन्तन का समथन।

उपन्यास कथा विधा का एक रूप है। प्राय सभी पत्रिकाओ म उपन्यास प्रकाशित होत है। किन्तु ऐतिहासिक घटनाओ की आन्तरिक सगति से लस विचार और जीवन-खड को रेखाकित करने वाले उपन्यास की वास्तविकता से उदभूत मौलिकता बहुत कम उपन्यासो म पायी जाती है। इस दृष्टि मे एक ओर हिन्दुस्तान' तथा लाल पसीना जैसे उपन्यासो का प्रकाशन सम्पादक की प्रबुद्ध समझ का प्रकट करता है।

और अन्त म—यथाथ की खाज का प्रश्न ?

उत्तर समातर सोच।

कला काई भी हो—लेखन की या सम्पादन की, इसके सरय का क्रियाशीलता द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रक्रिया के दरम्यान वास्तविकताओ स जूझकर उन्हे आत्मसात् करना पडता है। मैं यह नही कहूँगा कि समातर सोच कमलेश्वर की निजी वस्तु है। ऐसा नही है। इतना जरूर है कि बदलती हुई परिस्थितियो ने जो सकट और समस्याएँ पदा की उनकी पुन वनानिक चिंतना की पहल कमलेश्वर ने की। बिखरे हुए लेखकों को एकत्रित किया है। समय की नयी वास्तविकताओ पर लगातार चिन्तन का क्रम चलाया है। सम्मेलन हुए। बहसो क बीच मुद्दे साफ किये गये। शहर या गाँव के आम आदमी को पहचानने की कोशिश की गयी। महज रूप से आज की जिन्दगी से उठायी गयी कहानियो का अध्ययन हुआ तब आज के यथाथ के अनेक पहलुओ को प्रकाश म लाया गया। इस सामयिक चिन्तन म सक्रिय रूप स मराठी के दलित साहित्य के लखको का विशिष्ट महयाग रहा। उन्ह वण के सघष स ऊपर उठाकर वग-सघष की भूमिका निरूपित करन म कमलेश्वर ने बाबूराव बागूल, सतीश कालसकर दया पवार,

प्र० श्री नरूरकर, अजुन डागले केशव मेश्राम, नामदेव ढसाल आदि लेखको के साथ अत्यन्त महत्त्वपूण भूमिका अदा की। विचार प्रणाली के बहुत सारे मुद्दे एक जस ही थे। चिन्तन की एकरूपता स यह बल मिला कि समातर सोच कसौटी म खरा उतर रहा है। विभिन्न भारतीय भाषाओ के लेखको के साथ विचार चिंतन की यह प्रक्रिया अब भी जारी है। हिन्दी के अलावा पजाबी मराठी गुजराती कश्मीरी डोगरी तमिल मलयालम, उडिया तेलुगु सिंधी आदि के कितने हा नये पुराने लेखक इसम सक्रिय सहयोग द रहे हैं। इस काय को भी सम्पादन क्षमता म ही शामिल करना होगा। सम्पादक कमलेश्वर अपनी मेज पर बठकर फनवेबाजी के लिए कलम ही नही घिसता वरन साहित्यिक काय के लिए फील्ड वक भी करता है। पूरी धुन क साथ। आम आदमी के लिए कुछ करत रहन की छटपटाहट उसम कभी भी देखी जा सकती है। इसीलिए मैं कमलश्वर को सामयिक परिवतन कामी चेतना को विकसित करन वाले सम्पादको की पक्ति म ही पाता हू।

क्योकि यही चेतना तो भारतीय पत्रकारिता की आधारभूत वस्तु है। यही चेतना तो एक सम्यक भारतीय अनुभव को सामने रखकर भाषाओ की दीवार तोडती है। सम्पादक क रूप मे भारतीय चिन्तन और सम्मिलित भारतीय साहित्य के स्वरूप को भाषाई सीमाओ से ऊपर ल जाकर एकात्म करने का जो ऐतिहासिक दायित्व कमलेश्वर ने निभाया है वह यथाथवादी सोच और प्रगतिशील चिन्तन की परम्परा की ही अगली कडी है। बस।

खण्ड : ९
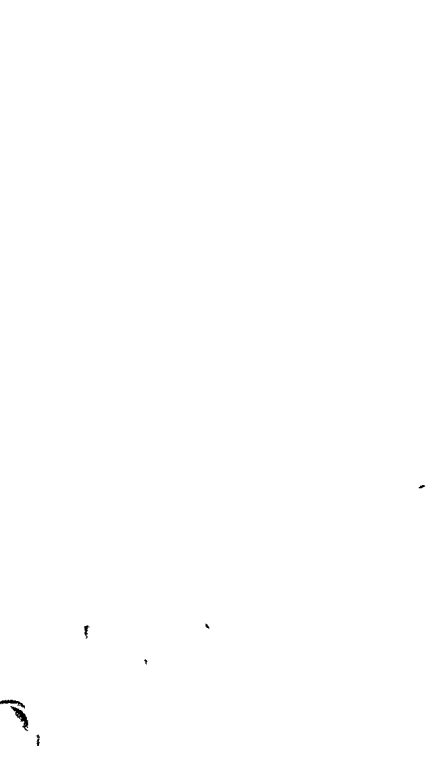
आज फिल्म अभिव्यक्ति का सशक्ततम माध्यम है। विश्व के शीर्षस्थ फिल्मविदों का मत है फिल्म बहुत तेजी के साथ तकनीकी विकास की उस चरमता की ओर बढ़ रहा है जहां अभिव्यक्ति की दृष्टि से उसे अन्य कलाओं के सहयोग और सहायता की अपेक्षा नहीं के बराबर रह जायेगी। फिल्म अपनी अभिव्यक्ति और सम्प्रेषणीयता के एक स्वतन्त्र मुहावरे की तलाश की ओर अग्रसर है। यह फिल्म के कलागत या तकनीकी विकास का पक्ष है। फिल्म एक व्यावसायिक कला (कमर्शियल आर्ट) है। लेकिन दुर्भाग्यवश भारत में हिन्दी फिल्म उद्योग केवल व्यवसाय ही नहीं बल्कि व्यवसाय का अतिव्यावसायिक रूप—सट्टा हो रहा है। अपवाद रूप में यदा-कदा किये गये कुछ प्रयास फिल्मों के इस रूप में कोई परिवर्तन नहीं ला सके हैं। कुछ दिनों से शुभ लक्षण केवल इतना ही है कि अब कुछ फिल्म व्यवसायी फिल्म के कथ्य पक्ष के महत्त्व को न सही लेकिन इसकी जरूरत को पहचानने लगे हैं। हिन्दी फिल्मों में इस परिवर्तन का कुछ श्रेय उन साहित्यकारों को भी दिया जायेगा ही जिनकी कृतियों पर लीक से हटकर फिल्म बनी हैं। लेकिन इस श्रेय के वास्तविक हकदार वे लेखक हैं जो फिल्मों से सम्बद्ध रहकर हिन्दी फिल्मों की अतिव्यावसायिकता को आज की प्रासंगिकता और नये कथ्य की ओर खींचने का सफल प्रयत्न करते रहे हैं और कर रहे हैं।

हिन्दी फिल्मों से सम्बद्ध ऐसे साहित्यकारों में आज सबसे प्रबल नाम है—कमलेश्वर। कमलेश्वर की कहानियों ने फिल्म रूप में फिल्म

ॅयवसाय का कथ्य का महत्व दिया है। हि नी फिल्मो म लेखक 'मुशी' का पर्याय रहा है। कमलेश्वर न साहित्यकार को फिल्म उद्योग म एक सवथा नया मूल्य और नयी प्रतिष्ठा दी। सबसे महत्वपूण बात यह कि कमलेश्वर ने फिल्मो को एक नया वचारिक धरातल देन का सफल प्रयास किया है।

आज हिन्दी फिल्मा म कमलेश्वर एक अपरिहाय नाम और एक निश्चित शक्ति है।

(एक फिल्म समीक्षक के हिन्दी फिल्मा म कथ्य
की तलाश —एक अप्रकाशित लेख का अश)

गिरीश रंजन

कमलेश्वर सही फिल्मों की तलाश

कमलेश्वर! यह नाम सिनमा के परदे पर बहुत तेजी से उभरने लगा है। उन बुद्धिजीवियों के लिए यह नाम नया नहीं है जो पिछले दो दशक से साहित्य की गतिविधियों से परिचित हैं। वर्षों पूर्व जिसने कहानी के क्षेत्र में कदम रखते ही कहानी की मूल धारा को बदलकर रख दिया था! कोई बदलाव या परिवर्तन अकारण नहीं हो जाता है। उसके पीछे छिपा रहता है वर्षों के परिश्रम का क्रम। अपने कर्मरत जीवन में कमलेश्वर ने संघर्ष किये हैं और उसे संघर्ष ने ही संस्कार मुक्त कर दिया है। परिवर्तन की कामना करने वाला व्यक्ति सिर्फ एक क्षेत्र में ही परिवर्तन नहीं चाहता, वह जीवन के विभिन्न अंगों को अपनी गहन अनुभूतियों से देखता है और तब तक उसे संतोष नहीं होता जब तक वह जिन्दगी की लड़ाई को जीत नहीं लेता। रेडियो टेलिविजन की नौकरी से लेकर फिल्मों में कथा पटकथा और संवाद लिखने तक कमलेश्वर ने एक लम्बी दौड़ लगायी है। अभिव्यक्ति का इतना बड़ा माध्यम कमलेश्वर से अछूता कैसे रह जाता! यह एक चलेंज था जिसे कमलेश्वर ने स्वीकार किया।

हिन्दी फिल्मों के इतिहास को अगर हम थोड़ा पीछे जाकर देखें तो पता चलेगा कि फिल्मों में कमलेश्वर का आना अनायास नहीं हुआ है। जिस विधा का जन्म कभी मात्र मनोरंजन के लिए हुआ था वह अभिव्यक्ति का इतना बड़ा माध्यम बन जायेगा इसकी कल्पना कभी किसी ने शायद नहीं की होगी। एक ओर जहाँ विदेशों में फिल्म को कलात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम माना गया वहाँ भारत में खासकर हिन्दी फिल्मों में उसे मात्र सस्ते मनोरंजन का ही एकमात्र साधन बना कर रख दिया गया। ऐसा रूप धारण करने के पीछे बहुत सारे सामाजिक और राजनैतिक कारण भी हैं इसे झुठलाया नहीं जा सकता। पर साथ ही-साथ इस देश का बौद्धिक वर्ग फिल्मों की ऐसी अवस्था को देखकर सिर्फ अपनी बेबसी का इजहार कर सकता था और कुछ नहीं। लेकिन यह बेबसी और कुछ कर डालने

की अकुलाहट बहुत दिनों तक छिपी नहीं रह सकी। इसका विस्फोट हुआ और उसका प्रारम्भ कमलेश्वर की कहानियों और मास निर्देश से ही हुआ। सवाल उठा कि ऐसी फिल्मों को क्या कहा जाय किस नाम से सम्बोधित किया जाय ? यह अलग फिल्म थी अलग किस्म की फिल्म थी जिनमें जीवन का सच्चा रूप था। वह चाहे 'बदनाम बस्ती' हो या फिर भी या 'डाक बंगला' उनमें जीवन का एक अछूता रूप था जिसे सिनेमा के परम्परावादी दर्शकों या कथानकों से अलग माना गया। जिसे आज हम न्यूवेव या समांतर सिनेमा कहते हैं। यह उसी तरह का आंदोलन था जिस तरह का आन्दोलन कमलेश्वर ने वर्षों पूर्व कहानी के क्षेत्र में किया था। समांतर सिनेमा को रूप देने वाला वर्ग जब तैयार हुआ तो उस वर्ग को जरूरत आ पड़ी उन नये कथाकारों की नये ढंग से सोचने समझने वालों की जिनकी विचारधारा मिलती जुलती हो। इस आन्दोलन में वही कथाकार शामिल हुए जिन्होंने कमलेश्वर के साथ मिलकर नयी कहानियों को जन्म दिया था। मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव मन्नू भण्डारी इत्यादि लेखक लेखिकाओं की रचनाओं को नयी दृष्टि से पढ़ा और परखा जाने लगा। मजन की छटपटाहट से आकुल अरुण कौल बासु चटर्जी शिवेन्द्र सिन्हा प्रेम कपूर, कुमारी शाहनी बासु भट्टाचार्य इत्यादि निर्माता और निर्देशकों का जो वर्ग तैयार हुआ उनमें कमलेश्वर का योगदान बहुत प्रभावशाली कहा जा सकता है। कई कमलेश्वर की रचनाओं पर फिल्म बनाने को आतुर थे और कईयों को कमलेश्वर से पटकथा लिखवाने की आवश्यकता थी। राजेन्द्र यादव के 'सारा आकाश' की पटकथा और संवाद कमलेश्वर ने लिखे और फिल्म के 'टाइटल' में कमलेश्वर का नाम तक न था। यह एक तरह की ज्यादती थी जिसे कमलेश्वर ने सहा सिर्फ इसलिए सहा कि समांतर फिल्म का यह आंदोलन आपसी मन मुटाव और झगड़ों में समाप्त न हो जाये। ऐसी और भी कितनी ही फिल्में हैं जिनके संवाद से लेकर फिल्म की पूरी योजना तक में कमलेश्वर ने बिना किसी भी तरह की उम्मीद के सहयोग और परामर्श दिये। किन्तु यह आन्दोलन अति बौद्धिकता और प्रयोगवादी दृष्टिकोण के कारण व्यावसायिक फिल्मों में सामने टिक न सका। जिनकी फिल्में बाजार में टिक गयीं वे आज व्यावसायिक फिल्मों के सफल निर्देशक हैं। ये समांतर फिल्म भले न टिकी हों किन्तु व्यावसायिक फिल्म निर्माता निर्देशकों ने कमलेश्वर की लेखनी को जरूर तलवार की धार माना। उन्होंने यह महसूस किया कि कमलेश्वर ही एक ऐसा व्यक्ति, एक ऐसा लेखक है जो फिल्मों की भाषा समझकर कुछ नयी दिशा देने की क्षमता रखता है और तब जो व्यावसायिक फिल्मों के संवेदनशील निर्देशक थे जो पुरानी परम्परा से अलग हटकर (फार्मूला फिल्मों से अलग) व्यावसायिकता को भी ध्यान में रख कर निर्माण के पक्षपाती थे वे कमलेश्वर की ओर भागे। कल तक जो हिन्दी के लेखकों को मात्र 'मुंशी' का दरजा दिया करते थे वह पूरे सम्मान के साथ कमलेश्वर

के पास दौडे आये। गुलजार ने 'काली आंधी' और 'आगामी अतीत' उपन्यासो पर क्रमश 'आंधी और मौसम' बना डाली। आंधी' इतनी विवादास्पद फिल्म बनी कि फिल्म रिलीज होने के बाद इस पर कुछ महीनो के लिए प्रतिबन्ध लगा दिया गया। राजनतिक व्यग्य के साथ ही यह फिल्म जीवन के मानवीय मूल्यो का एक खुला दस्तावेज था। सामान्य दर्शक से लेकर बौद्धिक वर्ग के अन्य भाषा भाषी लोगो तक ने कमलेश्वर की इस रचना को एक अलग ढग की फिल्म माना। उसके बाद ही आयी मौसम! मौसम' की सवेदना आम आदमी की सवेदना थी। पूरा फिल्म जगत कमलेश्वर के नये नाम से जस चौंक सा उठा। टी० वी० पर 'परिक्रमा' का सम्पादन करने वाला कमलेश्वर कथाकार भी है क्या! जब लोगो ने जाना कि कमलेश्वर पहले कथाकार है और उसके बाद और कुछ तो लोग चौंक से गये। सभी अपनी आगामी योजना को लेकर कमलेश्वर के पास हाजिर हो गये। कोई कहानी लेने तो कोई सवाद लिखवाने, कई तो फिल्म लेखन का पूरा जिम्मा कमलेश्वर के कधो पर देने को आतुर हो उठे। फिल्मी दुनिया मे हर व्यक्ति कुछ नया बनाना चाहता है कुछ नया देना चाहता है किन्तु एक सफल फिल्म की भेडिया धसान की तरह उसी परम्परा की फिल्म चाहता है। कमलेश्वर की कहानिया और उपन्यास शुद्ध साहित्यिक कृतिया है। बगला के कई उपन्यास कारों की तरह उन्होने फिल्म को ध्यान म रखकर साहित्य की रचना नही की है। अत दूसरो की कहानियो पर उन्होने पटकथा और सवाद लिखने का भार ले लिया। 'अमानुष' एक ऐसी फिल्म थी जिसके सिर्फ सवाद कमलेश्वर ने लिखे।

इस फिल्म की चर्चा यहाँ इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योकि न्यू थियेटर्स के युग से लेकर अब भी किसी बगला के उपन्यास और कहानियो पर हिन्दी और बगला म एक साथ फिल्म बनी है हिन्दी के सवाद बगला से अनुवाद हुआ करते थे। 'अमानुष' पहली फिल्म है जिसके सवाद हिन्दी से बगला म अनुवाद किये गये। यह एक उपलब्धि थी पर किसी भी भाषा को छोटा या उपेक्षित करने का उद्देश्य नहा था। यह तो हिन्दी की सहज और सरल अभिव्यक्ति थी जो कमलेश्वर के पास ही थी।

एसी बात नही कि कमलेश्वर हिन्दी के प्रथम साहित्यकार हैं जिन्होने फिल्मो म पदार्पण किया। मुशी प्रेमचन्द अमृतलाल नागर सुदर्शन, भगवतीचरण वर्मा जसे हिन्दी के प्रमुख साहित्यकारो का योगदान भी हिन्दी फिल्मों को रहा। पर ये साहित्यकार आये और एक-दो फिल्म को लिखकर चले गये। वे टिक न पाये। कारण चाहे जो भी रहा हो पर यह जरूर है कि ये महानगरी उन्हे भायी नही, या यो कहें तो अतियुक्ति नही होगी कि इस विधा के साथ व ताल मेल नही बठा पाये। एक और साहित्य जहाँ सिर्फ प्रबुद्ध पाठको को ही अपनी ओर आकर्षित करता है वहाँ दूसरी ओर फिल्म जन मानस तक पहुँचने की क्षमता रखती है।

मुंशी प्रेमचन्द जब मजदूर फिल्म लिखने आये तो उनकी कृति 'सेवा सदन' पर भी फिल्म बनाने का निर्णय लिया गया था। फिल्म बनी भी थी, पर मुंशी प्रेमचन्द को सेवा सदन की पटकथा भायी नहीं और वे हमेशा के लिए फिल्म जगत छोड़ कर लौट गये। यही हाल करीब करीब हिन्दी के उन सारे कथाकारों और कवियों के साथ हुआ जो साहित्य में अपनी धाक जमाकर फिल्म में आये थे। प्रश्न उठता है कि ऐसा क्यों होता है? उत्तर बहुत सीधा-सा है। मूलरूप से दोनों अभिव्यक्ति के साधन हैं। फिल्म की विधा उसकी भाषा एकदम अलग है। एक कथाकार सिर्फ अपनी लेखनी के बल पर ही फिल्मों में नहीं टिक सकता है जब तक कि फिल्म के तकनीकी पक्ष का उसे ज्ञान न हो। जो सिर्फ अपनी कहानियों और उपन्यासों पर आधारित फिल्मों पर सन्तोष कर लेते हैं उनकी बात दूसरी है। लेकिन जो फिल्म के निर्माण में फिल्म के लेखन में अपना योगदान करना चाहते हैं वे तभी फिल्मों में सफल होंगे जब उन्हें पटकथा का अच्छा ज्ञान हो। बहुत सारे कथाकारों की यह मूलधारणा है कि पटकथा अतत नाटक है। पटकथा और नाटक दो अलग और एकदम भिन्न विधाएँ हैं। एक ओर जहाँ नाटक सिर्फ संवाद और अभिनय के बल पर मन को द्रवित करने की क्षमता रखता है वहाँ फिल्मों के अनेक दृश्यों को मन की गहराइयों में उतर जाने का कमाल हासिल रखता है। एक ओर जहाँ प्रकृति के वर्णन में साहित्यकार पेज पर पेज लिख डालता है वहाँ कैमरा उगते हुए सूरज से खिलते हुए फूल तक को एक शॉट से शॉट में दरशा सकता है। जब तक कथाकार कैमरे की आँखों से आँखें मिलाकर नहीं देखता तब तक फिल्म लेखन में उसे सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। जहाँ तक वैचारिकता का सवाल है वह तो बहुत बाद की बात है। एक दिन में ही किसी की काया नहीं पलटी जा सकती। एक फिल्म के योगदान से ही इस घिसे पिटे फिल्म के रूढ़िवादी दृष्टिकोण को नहीं बदला जा सकता। किसी भी क्षेत्र में परिवर्तन की कामना एक दिन में नहीं की जा सकती। धीरे धीरे ही यह लड़ाई जीतनी होगी। फिल्म मात्र कथा का रूपांतर नहीं है उसके पीछे छिपा होता है व्यावसायिक दृष्टिकोण और इस व्यावसायिक दृष्टिकोण को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। कमलेश्वर ने खुद एक दिन बम्बई के यूनियन बैंक एम्पलाइज सोशल एण्ड कल्चरल एसोसिएशन' के अध्यक्षीय भाषण में कहा था फिल्म एक व्यावसायिक कला है। यह स्वतन्त्र कला भी नहीं है बल्कि साहित्य संगीत चित्रांकन आदि माध्यमों के सहयोग से यह सम्पूर्णता प्राप्त करती है। इसमें पैसा लगता है। अंकुर और रजनीगंधा को मैं ऐसी व्यावसायिक फिल्म मानता हूँ जो बाक्स आफिस पर सफल होकर भी अपने सामाजिक दायित्व से जुड़ी रही।' जिन दिनों कमलेश्वर ने यह भाषण दिया था उन दिनों वे फिल्मों में पूर्ण रूप से नहीं आये थे, या यों कहें कि वे बहुत अधिक फिल्म नहीं लिख रहे थे। लेकिन फिल्म की पटकथा और संवाद

लिखन वाले कमलेश्वर ने फिल्म जगन की समस्याओ को अच्छी तरह जाना था और उन्होंने यह भी जाना था कि एक सफल फिल्म के निर्माण पर ही कोई अपनी बात कह सकता है। मैंने कमलेश्वर के दोस्तो और आलोचको का बहुत सुना है कि कमलेश्वर अब साहित्यकार नहीं फ़िल्मी लेखक हो गये हैं। उन्होंने समझौता कर लिया है। सवाल उठता है कि साहित्यकार क्या अपनी स्थिति के साथ समझौता नहीं करते ? प्रेमचन्द ने अपनी महान कृति गोदान को मात्र एक हज़ार रुपये मे प्रकाशक के हाथ सौंप दिया था। शरत ने अपने 'देवदास' को मात्र चालीस रुपये मे न्यू थियेटर्स के हाथो बेच दिया था। इस पूजीवादी अर्थव्यवस्था मे कब किसे, कहाँ समझौता करना पडता है कौन जाने ? जहाँ तक सही फिल्मों की तलाश और वैचारिकता का प्रश्न है अकेले कमलेश्वर यह लडाई नहीं लड सकते। कल तक जिन बुद्धिजीवियो के लिए फिल्म का माध्यम यह फिल्म इण्डस्ट्री अछूत समझी जाती थी आज उसे जरूरत है उन लोगों की जो इस नफरत से न देखकर इस माध्यम को सशक्त बनायें और इसकी महत्ता को पहचाने।

यह सच है कि आजकल कमलेश्वर के पास बहुत सारी फिल्म हैं। वे किसी के कथाकार हैं किसी के पटकथा लेखक तो किसी के संवाद लिखने मे व्यस्त। बी० आर० चोपडा, शक्ति सामंत, रामानन्द सागर विजय आनन्द सुनील दत्त हेमा मालिनी दुलाल गुहा इत्यादि चोटी के निर्माता निर्देशकों की सभी फिल्म आज कमलेश्वर के पास हैं। वह लिखते लिखते थक जाते हैं। अपने इस व्यस्त जीवन मे भी कमलेश्वर हार नहीं है। उनकी कलम निरन्तर चलती ही रहती है। फिल्म की मजबूरियों का उन्हें पता है। लेखन से अधिक वह इसे एक सामाजिक दायित्व मानते हैं। कल की आने वाली फिल्म निश्चय ही बतायेंगी कि हिन्दी फिल्मो को कमलेश्वर की क्या देन है परन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि सही फिल्मो की तलाश मे कमलेश्वर लीन हैं। उन्होंने हिन्दी के कथाकार के नाते हिन्दी को ही नहीं, हिन्दी फिल्मो को भी एक मर्यादा दी है जो सिर्फ कमलेश्वर के व्यक्तित्व से ही सम्भव हो पायी है।

अनाम

कमलेश्वर हिन्दी फिल्मों की ताकत

हि दी का एक लेखक जब हमारी फिल्म इडस्ट्री म आता है तो ताज्जब होता है कि यह वह इतना गुमान से क्यो भरा होता है ? मेरा मतलब उन लेखकों से है जो साहित्य से फिल्मो की ओर आते है। पता नही क्यो हिन्दी का लेखक अपने सीमित दायरे से बाहर नही निकलता ? मेरी समझ से इसकी वजह है उनका आलसीपन। आप हि दी के लेखक और खासतौर स कमलेश्वर बुरा न मानें मैं यह जोर देकर कहना चाहता हूँ कि हिन्दी फिल्मा और हि दी साहित्य को सबसे ज्यादा नुकसान खुद हिन्दी का लेखक पहुँचा रहा है वह डरपोक है अहवादी है (लेखक के अह की मैं इज्जत करता हूँ अहकार की नही) दकियानूस और साहस हीन है। क्या वजह है कि उर्दू की पुरानी पीढी के मुमताज अदीब फिल्मो म आ गये क्या वजह है कि बगला का कोई साहित्यकार फिल्मो स अछूता नही रहा, मलयालम का लखक फिल्मो स परहेज नही कर सका कन्नड मराठी गुजराती क लेखकों ने लगातार अपनी फिल्मो को सहयोग दिया — सिफ हिन्दी का लेखक है जो फिल्मों का अछूत समझता है बल्कि यह कहना ज्यादा सही होगा कि हिन्दी फिल्म इडस्ट्री आज हि दी के लेखक को अछूत समझन लगी है।

ऐस म इडस्ट्री न अपने हिन्दी लेखक पैदा किय — हिन्दी सिफ हिन्दी साहित्य के लेखकों की ही नही है। असल म वे इसी गुमान म डूब हुए है और ये भूल जाते हैं कि हिन्दी करोडो की है उनकी भी है जिनकी मातभाषा हिन्दी नही है। हम जो हिन्दी फिल्म इडस्ट्री म आकर हिन्दी फिल्म बनाते है वो इसलिए नहीं कि हम हिन्दीवाला बनना है बल्कि इसलिए कि करोडो-करोड लाग हिन्दी फिल्म चाहते है। हि दी की उन्ह जरूरत है अगर जनता हिन्दी फिल्म न चाहती होती तो हम हिन्दी म क्यो फिल्म बनाते ? हम कमशियल हैं—पर हम कमशियल बनने की राह पर डाला किसने है ? हम हिन्दी स्क्रिप्ट नही आती—तो इसका मतलब यह तो नही कि आप अपनी स्क्रिप्ट को अपने लिए महफूज रखे रखेंगे ! हम नही आती

तो आप हमें बताइए। हिन्दी के लेखकों ने जब हमें [illegible] दिया तो हमें जो मिला वह हमने खाया। आपने हमें अच्छी कहानियाँ नहीं दीं, उनका और इशारा करना भी ठीक नहीं समझा तो हम कहाँ जाते? बंगला के लेखकों ने ऐसा नहीं किया। पंजाबी मातृभाषा वाले प्रोड्यूसर डायरेक्टर बंगला की [illegible] ढूँढते हैं पर बंगला की साहित्यिक रचनाओं पर वे शानदार हिन्दी फ़िल्में बनाते हैं। क्योंकि ताराशंकर से लेकर समरेश बसु तक अहंकार के मारे हुए नहीं हैं—वे जानते हैं कि अगर उन्हें सचमुच अपनी जनता तक पहुँचना है (जिसका नाम सबसे ज़्यादा हिन्दी लेखक रटता है) तो फ़िल्म मीडियम को नकारना नहीं चाहिए।

मगर हम ग़लत हो सकते हैं। कमर्शियल हो सकते हैं। पैसे की चमक-दमक के मारे हुए हो सकते हैं, हिन्दी लेखक से ज़रा कम ज़हीन भी हो सकते हैं पर इतना ज़रूर कह सकते हैं कि जनता को भूखा रखने का कोई हक़ हिन्दी लेखक को नहीं है।

मैं कमलेश्वरजी की साहित्यिक हैसियत के बारे में ख़ुद नहीं जानता पर जो कुछ औरों ने बताया है उस पर यक़ीन करता हूँ और मानता हूँ कि वे आज़ादी के बाद के दौर के सबसे बड़े और मज़बूत लेखक हैं। सच पूछिए तो इससे हमें कोई मदद नहीं मिलती। हमें फ़ख्र इस बात का है कि हमें हिन्दी में जो कमलेश्वर नाम का लेखक मिला है—वह अपनी जनता को प्यार करता है और उस जनता को अहंकार से नहीं प्यार से अपनी बात समझाना चाहता है—यहीं पर फ़िल्म उसके कंधे से कंधा मिलाकर खड़ी हो जाती है। कमलेश्वर हिन्दी फ़िल्मों की ताक़त बन जाता है। ताज्जुब होता है कि इस शख़्स को कितना-कुछ आता है—इस आदमी का नज़रिया कमाल है, दुनिया-जहान की जानकारी इसे है, किरदारों को समझने और उनकी नस को पकड़े रहने की ज़बरदस्त ताक़त इसके पास है और सबसे बड़ी चीज़ कि हमारा यह लेखक कुंदन की तरह तपा हुआ और ओरिजिनल है। भाषा पर इसका अख़्तियार देखकर अचम्भा होता है। भाषा के ज़रिये को जिस तरह यह लेखक पकड़ता है उससे एकाएक हमें अपनी मिट्टी, अपने लोगों की महक मिलने लगती है। अपने वक़्त की जानकारी झलकने लगती है। कमलेश्वर जब स्क्रिप्ट लिखकर लाते हैं तो आसमान पर चढ़े हुए हमारे दिमाग़ों को धरती की सच्चाइयों की तरफ़ देखने के लिए मजबूर कर देते हैं। हम जान जाते हैं कि कमलेश्वर ने जिस ज़मींदार का ख़ाका खींचा है उसके लिए हम [illegible] से काम नहीं चला सकते—हमें अब आदमी की ख़ासियत से दो-चार होना पड़ेगा और सोचना पड़ेगा कि ज़मींदार क्या चीज़ होता था? कमलेश्वर ने आकर पिछली ज़मींदारी (और हमारे ज़मींदाराना मिज़ाज) को [illegible] तक मुर्दा कर दिया है। हमें इसकी ख़ुशी है क्योंकि चीज़ यहीं से और ऐसे ही शुरू होती है।

कमलेश्वर की सबसे बड़ी ताक़त उनकी ओरिजिनलिटी है। उसमें भी बड़ी

ताक्त है उनकी ताजगी । हम लोग ता किसी ताजादम शायर लेखक को एक ही फिल्म म वासा बना देने मे माहिर हैं—हम कमलेश्वर पर भी अपन वार करते हैं पर यह शरम है कि कुछ न कुछ नया ले ही आता है । हम इस पर इत्मीनान इस लिए होता है कि इस अपने वक्त और अपनी जनता का पता है इसलिए जो यह कहता है उसे हम आनाकानी करके आखिर म मान ही लेत हैं।

अगर एसा न होता ता आज कमलेश्वर के पास फिल्म लिखवानेवालो का सबसे लम्बा क्यू न होता । लोग जानते हैं कि कमलेश्वर के हाथ म फिल्म सौंपकर हम बेफिक्र हा सकत हैं यह शख्स इत्मीनान का है। इधर उधर स उठायेगा नही इसलिए इसकी कहानी या स्क्रिप्ट को लेकर हम यह डर नही सताता कि पता नही कोई इसी थीम पर दूसरी फिल्म शुरू न कर दे।

एक और अच्छी बात इस लेखक म है—यह अपनी साहित्य की दुनिया को भी जानता है बहुत बार मैंने कमलेश्वर के मुह से दूसरे हिन्दी अन्य ो शायरो के नाम बडे पुरजोश तहजे म सुन हैं । उनकी रचनाआ से यह डरता नहा उनका जिक्र ये आदमी बडे फख्र से करता है और धीर स कह देता है—खर अभी न सही दो चार साल बाद आप इन लेखका की रचनाआ का पढने सुनने के लिए मजबूर हाग—तब मुझे लगता है कि यह आदमी बेहद निडर है इत्मीनान का ही नहीं बल्कि इमानदार भी है।

हमारी इडस्टी म काई लखक दूसर लखक का नाम नही लता । दूसर लखक का नाम सुनता है ता उसे काटने की तरकीबें करता है—पर कमलश्वर इस सबसे ऊपर है क्योकि वह अपनी ताकत जानता है और अपनी मेहनत तथा वक्त का सही इस्तमाल करता है । आज कमलश्वर हमारी इडस्ट्री का सबस चर्चित लेखक है—पर मैंने कभी उस पार्टियो म नही देखा । होटला के कमर बुक कराके अपन वक्त को दर्जी की तरह कची स काटत नही देखा कही बठकर गप्पें लडात नही देखा—जब भी देखा ता उसे सिफ काम करत देखा।

यही वजह है कि मरे जसा आदमी भी कमलेश्वर के लिए लाइन लगाने को तयार है । यही वजह है कि मरे हमसफर प्रोड्यूसर डायरेक्टर कमलेश्वर के लिए इतजार करने को तयार हैं । हम यह भी बखूबी जानत है कि उसे हमारा इतजार नहीं है क्याकि वो कभी हमार पास काम मागता हुआ नही आया था और ये उसका बडप्पन है कि उसने कभी हम यह एहसास नही होन दिया कि हम उसके पास लिखवान आये है।

आप हिन्दी वाल बेफिक रहे—कमलश्वर फिल्मा म अकेला नही आया है आप सब उसक साथ आये है—पर उस दिन का इतजार जरूर है जब आप सबकी शक्लें हम भी अपने आस पास दिखायी देन लगेंगी । कमलश्वर हमारे लिए 'हिन्दी' का दूसरा नाम है—वह हिन्दी जो जनता की है।

खण्ड : १०

नवारुण वर्मा
(असमिया के लेखक हिंदी रचनाकार)

कमलेश्वर मेरी दृष्टि मे

कुछ एम क्षण हाते हैं जो सारी जिन्दगी को प्रभावित करते हैं जबकि शेप सारा समय निम्सार, कूडे की तरह बाय बन जाता है वही उन चद क्षणा की मुगध से जिन्दगी मुवामित रहती है वह रगीन सचेतन क्षण उस सदा बहार बनाय रखता है।

बारह साल पहले की वह घटना आज भी मेरे मानस म ताजी है—इलाहाबाद गया या साचा था, हिन्दी के महान साहित्यकारो के दशन कर उनसे कुछ प्रेरणा, कुछ माग-दशन भी लेता चलू। मन म बडी उमग थी सरस्वती के वे वरद पुत्र जो आज ख्याति के शिखर पर पहुँचे हुए हैं, उनका सानिध्य अवश्य ही प्रेरणा और स्फूर्तिदायक होगा। इसके पहले असम के महान अग्नि-कवि अम्बिकागिरी रायचौधुरी का चन्द दिना का सानिध्य मेरे जीवन का असीम प्रेरणा स्रोत रहा। उनके अग्नि मानम म बहती हुई वात्सल्य की करुणा धारा म अवगाहन कर मैं भी धय हुआ था। सभवत इसी कारण राष्ट्रभाषा हिन्दी क महान साहित्यकारो म भी मैं वसा ही कुछ ढूढना-पाना चाहता था। लेकिन इलाहाबाद म मुझे जो कटु अनुभव हुए उनस मेरा मन विषाक्त हो उठा। एक अ-साहित्यिक सज्जन न कहा—'आप बेकार चक्कर लगा रहे हैं। यहाँ सब गुटबाजी म पड़े हुए हैं। सच्ची प्रेरणा देन वाला सहानुभूतिशील एक ही व्यक्ति है—शमशेरबहादुरसिंह। मगर वह कहाँ है पता नही।' मैं भारी मन स लौटना चाहता था। तभी एक सज्जन न बताया— नयी कहानियाँ का सपादक कमलश्वर आया हुआ है। चाहें ता लोक भारती के कार्यालय म मिल सकत हैं। याद आया—कमलश्वर न कही स मरा पता लेकर एक उत्तम असमिया कहानी का अनुवाद 'नयी कहानियाँ' के लिए भेजन को लिखा था। मैंने कहानी भज दी थी और वह नयी कहानियाँ म प्रकाशित भी हुई थी। अत कमलेश्वर स मिलने की उत्सुकता भी जाग उठी।

साचा, चलो, अनुभवो क खात म कडवा या मीठा और भी कुछ जुड ही जाय।

लोक भारती कार्यालय म कमलेश्वर स वह पहली मुलाकात मामान्य म असामान्य की एक झलक थी। कमलेश्वर क चहर मुहरे से मैं कोई खास प्रभावित हुआ था ऐसा तो नहीं लगता। परिचय होते ही कमलेश्वर न हाथ पकडकर कहा—'ओ भाई आप!" इसके बाद कितनी ही चर्चाएँ हुइ। मरे स्वरों म सघष और निराशा का आभास पाकर कमलेश्वर ने कहा था—"आप सघष करते करत आये हैं करते रहिए। समय आयेगा। याद रखिय भाई हम सब एक हैं। मैंने फीकी सी हसी हँस दी थी। कमलश्वर को उसी दिन दिल्ली लौटना था। इसलिए वह कुछ जल्दबाजी म था। वह हाथ पकड मुझे काफी हाउस ले गया। वहाँ कुछ साहित्यिक असाहित्यिक मित्रा से बातें करते ठहाक लगात मुझे भी उस इलाहाबादी काफी का जायका लेने को बाध्य किया। मैं दग होकर साचता रहा—यह कमलेश्वर है। तथाकथित महान साहित्यकारा से कितना अलग ! *विदा लत समय उसने कहा—"कभी दिल्ली आइय ! हाँ, निराश न हो।* मरी जिन्दगी भी तो सघष की ही रही है।

कहना न होगा कि इलाहाबाद की वह शाम मरे लिए मधुर चाँदनी की छटा बन गयी। *मानस म जमी हुई सारी कटु भावनाएँ एक अलग माधुय म घुल गयी।* मैं असम का एक नया साहित्य सेवी हूँ। इस भावना से कमलेश्वर न औरा की भाँति उपक्षा नही की। दूसरे महान साहित्यकारों की भाँति दरवाजे पर से बहाना कर विदा नही कर दिया—बल्कि, भाई कहकर पीठ ठाकी आज जब *य पक्तियाँ लिखने बठा हू तो लग रहा है वह थपकी अब भी* मेरी पीठ पर बसी ही पड़ी हुई है। उस एक ही मुलाकात म कमलेश्वर न मुझे 'दोस्त बना लिया हालाँकि इसक बाद कमलेश्वर स मिलने का मुझे अवसर नही आया हम म बसी *अधिक घनिष्ठता नही हुई परन्तु विभिन्न अवसरो पर लिख कमलश्वर* के जो पत्र मेरे पास हैं उनसे पवित्र मत्री की सुगध सदा आती रहती है। इसी कारण जब 'मरे हमदम मेरे दोस्त' क अ तगत कमलश्वर के और कमलश्वर के बारे म सस्मरण पढने को मिल ता मेरे मन म अजीब सी स्फूर्ति हुई। हाँ हमदम दोस्त तो है यह कमलेश्वर ! मैं उस क्षण भूल ही गया था कि *कमलेश्वर दिल्ली-बम्बई* के प्रतिष्ठित पत्रो का सपादक है और मैं उसस काफी दूर इस गुवाहाटी का एक हिन्दी सेवी ! एक सच्चाई एक अभिन्नता की छाप उसकी टिप्पणियो कृतियो म *मुझे बराबर मिलती रही।*

यो हिन्दी क्षेत्र से काफी फासले पर रहने के कारण हिन्दी साहित्यिका की गुटबदी उठा पटक काट करौवल से मेरा उतना परिचय नही रहा है मगर कभी कभी किसी किसी लघु पत्रिका के झडा बरदार कमलेश्वर के खिलाफ नकली प्रगतिवादी 'पूजावादी का पिछलग्गू' आदि विशेषण जोडते है तो मैं कभी कभी

पशोपेश म पड गया हू—सचाई क्या है ? मोहन राकेश, धर्मवीर भारती और कमलेश्वर के त्रिकोण पर जो पैने हमले लगातार किये जा रहे थे और जा रहे हैं मोहन राकेश तो दिवंगत होकर ही उन हमलों की चुनौती देता विजयी बना, शेष हैं धर्मवीर भारती और कमलेश्वर—उनकी परिणिति क्या है ?

कमलेश्वर की साहित्यिक देन कई दृष्टियों से महान् है पर उसे मैं 'महान साहित्यकार' की पदवी से विभूषित इसलिए नहीं कर पाता कि सचमुच ऐसा होने पर शायद उसका दरवाजा दूसरे महान् साहित्यकारों की भाँति ही कहीं बन्द न हो जाये। मेरे विचार में पूँजीवादी संस्थान में काम करने मात्र से कोई पूँजीवादी या पूँजीवाद का पुछल्ला नहीं बन जाता वह पूँजीवादी तब बनता है जब दिलो दिमाग के दरवाजे खिड़कियाँ बन्द कर लेता है।

कमलेश्वर के रचनाकार और व्यक्ति मानस की मुख्य विशेषता यही है कि उसने किसी भी स्थिति में जनवादी दृष्टि खोयी नहीं है। यह सही है कि कमलेश्वर की भी अपनी सीमाएँ हैं उसका रचनाकार निम्न मध्यवर्ग और कस्बे के आदमी के इर्द गिर्द घूमता रहा है और उसने पूरी निष्ठा से और ईमानदारी से उसका चित्रण किया है राजा निरबंसिया जैसी कहानियाँ से लेकर मांस का दरिया तथा उसके आगे की कथा यात्रा में कमलेश्वर इतना व्यापक हो नहीं सकता कि वह अपने में सब कुछ समेट ले सके। रवीन्द्रनाथ जैसे विश्वकवि ने अपनी अपूर्णता के बारे में स्पष्ट कहा है—

> ताई आमि मेने निइ से निन्दार कथा—
> आमार सुरेर अपूर्णता।
> आमार कविता जानि आमि,
> गेले ओ विचित्र पथ हय नाई से सर्वत्रगामी।' (ऐक तान)

यानि अपने स्वरों की अपूर्णता की बात लेकर मेरी जो निन्दा की जाती है, मैं उसे मान लेता हूँ। जानता हूँ कि मेरी कविता विचित्र मार्गों से होकर गुजरने पर भी वह सर्वत्रगामी नहीं हुई है।

और कमलेश्वर की कृतियों में जैसा कि मैं चाहता हूँ, मुझे शहरी फुटपाथों कारखानों या गावों के शोषित सर्वहारा उपेक्षित इंसानों अछूतों-हरिजनों के चित्र कुछ कम मिलते हैं तो इसके लिए मैं कमलेश्वर को दोषी नहीं मानता। क्योंकि उसने प्रगतिशीलता के नाम पर नारेबाजी का नकली मुखौटा नहीं लगाया। रवीन्द्रनाथ के शब्दों में शौकीन मजदूरी नहीं अपनायी है। कमलेश्वर ने उस वर्ग के इंसानों की दयनीय स्थिति को देखा परखा है जो न अपनी बौद्धिक सीमा से नीचे उतरकर बिलकुल नीचे के सर्वहारा मजदूर वर्ग में आ सकते हैं और न अपने अथक प्रयास के बावजूद उभरकर ऊँचे ही चढ़ पाते हैं। ऐसे इंसानों की नग्नता बीभत्सता और संघर्षशीलता के अंदर उसने करुणापूर्ण आस्था के दर्शन किये हैं।

एक ओर ढहती सामतशाही के खण्डहर ता दूसरी ओर नगरा-कस्बा की गलियो म सडती मानवता, इसी मे कमलश्वर के रचनाकार की दुनिया है निस्सन्देह कमलेश्वर को अपनी इस अपूणता का भान है और 'सारिका' के मेरा पन्ना' की टिप्पणिया मे जब वह अपने दप्टिकोण की व्याख्या कर रहा होता है ता उसी अपूणता की कचोट उसे बेचैन किय रखती है। यही कारण है कि वह कितनी ही बार कितने ही कहानी आन्दोलनों से जुडा और किसी आन्दोलन की मागभ्रष्टता का आभास पात ही उससे अलग हो गया। और अपनी इस ईमानदारी का कम मूल्य उसे नही चुकाना पडा है। नय और पुरानो के पने वाणो की चुभन से उसे कम छलनी होना नही पडा है। मगर यही वह वस्तु है जिसने उसे सदव सक्रिय, रचनाशील बनाये रखा है। और अनेको का भाति वह 'चुका नही है। आज अगर कमलेश्वर समातर लेखक सम्मलन का अगुवा बना है ता मुझे लगता है वह समकालीन लेखकों का जन जीवन से सही माने म जोडन हतु प्रयत्नशील ह। सम्भवत आज वह पार्टी और वाद की नारेबाजी की बजाय सच्ची मानवतावादी दप्टि को अधिक महत्त्व दता ह। आज के लखक के सम्मुख जो द्विधाग्रस्त स्थिति है उसम उबरन का जो चुनौती ह उसका सामना करन का माग भी यही है।

कमलेश्वर की यही मानवतावादी दृष्टि उस सब भारतीय भी बना दती ह। कारयित्री प्रतिभा का वह खोजी रहा है। इसलिए हिन्दी अहिन्दी भेदभाव के बगैर उसन प्रत्येक क्षेत्र के नवोदित लेखको को उचित मर्यादा दी ही है अपने सम्पादन काल म भारत की विभिन्न भाषाआ मे हो रह साहित्यिक आन्दालनो, साहित्य कृतियो को हिन्दी के माध्यम से जोडने का काम उसन किया ह जो हजारा सगाष्ठियो या भाषणो से नही हो सकता था। कमलश्वर की यही व्यापक दृष्टि उस अन्य सपादको स विशिष्ट बना देती है। अपने सपादन काल म उसने नयी कहानियों को भारतीय कथाकारा का मच बना दिया था आज सारिका को भी उसन वही भूमिका प्रदान की ह। भारतीय साहित्य इसके लिए सदा कमलेश्वर का कृतज्ञ रहगा।

कमलश्वर की कृतियाँ तो महत्त्वपूण हैं ही पर तु मरे विचार से उसकी सर्वोत्तम कृति अभी आने को है। और अनक लोगों की भाति मैं भी उसकी प्रतीक्षा म हूँ।

जसवतसिंह विरदी
(पजाबी के प्रख्यात कथाकार)

आईसबर्ग

जहा कहीं भी कहकहा सबसे ऊँचा हो वह कमलेश्वर ही होता ह। वह केवल कहकहा ही नहीं, एक फटक्न भी हैं।

यह तो मुझे नहीं मालूम कि कमलेश्वर का कद (रूँ) कितना है मगर उसे छोटे कद का नहीं कहा जा सकता। हमारे यहा एक कहावत मशहूर है कि लम्बे आदमी की परछाई छोटी होती है। और छोटे कद के बारे म ?

'साहिब! कमलेश्वर जितना धरती से बाहर है उससे तीन गुणे से भी अधिक वह धरती के भीतर है। और इस तरह के लोग भूमि पर कभी भी फिसलते नहीं। उनके पाँव भी नहीं उखडते। बल्कि और बहुत-से लोग उनके तपतेज की ओर देखकर विश्वास का प्रकाश हासिल करते हैं बस, कमलेश्वर इस तरह का ही इनसान है!'

कई बार जब तुंद-तूफानी म बर्फीला समुद्र मेरी आखों के सामने थिरकता है तो उसके ऊपर चमकते हुए आइसबर्ग का चेहरा मुझे तो कमलेश्वर का चेहरा ही नजर आता है जो कि लोगो की खातिर लेखकों के लिए तिल तिल करके खुर रहा है मगर इसका अहसास ?

कमलेश्वर ने मुझे सोच म डूबा हुआ देखकर कहा—'क्या सोच रहे हो ?' फिर हँसकर कहने लगा—'मैं तो यह जानता हूँ कि लम्बा आदमी हमारी अपेक्षा सूर्य के अधिक निकट होता है! इसीलिए वह जल्दी से पिघल जाता है।

कहकहे और कहकहे!

उस समय विशेष कमलेश्वरियन कहकहा समूचे वातावरण म खुब कर रह गया था।

मैं देख रहा हूँ कि कमलेश्वर जल्दी में रहता है। भीड म चलता हुआ भी वह

जल्दी स अपना रास्ता बनाता हुआ आगे की ओर बढता आ रहा है। जसे भीड उसके पीछे पीछे चली जा रही हो। इसलिए उसे लाखों की भीड मे से भी पहचाना जा सकता है। कहानी म भी वह बहुत तीक्ष्ण है। मगर उसकी कहानी म चमत्कार, अकस्मात घटना अथवा अनहोनी बात कोई नहीं होती। पढकर महसूस होता है कि कमलेश्वर देश के लोगा की धडकन म कहीं गहराइ मे समाया हुआ, हम वह धडकनें महसूस करने के लिए बडी शिद्दत से अहसास करवा रहा है। उसकी कहानियो मे भारतीय जीवन के चेहरे ही नही बल्कि इन कहानियो म लोगा की आत्मा अत्मा की पीडा और दिल का दद भी छिपा हुआ है।

उस दिन मरी पडोस की लडकी तोषी, जब कमलश्वर की पुस्तक बयान लौटाकर गयी तो मैंने देखा कि उस पुस्तक म हाशिये पर जगह जगह टिप्पणी लिखी गयी थी। फमला कहानी पर उसने लिखा था— कमलेश्वर अपन पात्रो को ब्लक एण्ड ह्वाइट मे पेश करते हैं जसे कि जीवन म उन्हे देखा हुआ हो।' कहानी रातें के हाशिये पर अकित था—' फैशनेबल वस्तुए जल्दी म बिक जाती हैं वे दिलकश भी दिखायी दती हैं मगर लोगो के प्रति सच्चे मुक्त रहना कमलेश्वर की मुझे सबसे बडी सिफत महसूस हुई है।

पहले एक दिन तोषी ने नीली झील पढकर मुझसे कहा था— कमलेश्वर की रचनाएँ मनुष्य और उसकी प्रकृति को अधिक अच्छी तरह समझन म सहायता करती हैं। क्षण भर के लिए रुककर वह मुसकराई और फिर बडी गम्भीरता क साथ उसने कहा— और यह कोई छोटी बात नही है।'

मैंने केवल इतना ही कहा था— तोषी! ये कहानियाँ रोमास की भूल भुलयाँ नही बल्कि तल्ख हकीकत की खामोश आवाजें है जो कि बाहर की अपेक्षा भीतर पहुँचकर अधिक यातना देती हैं कि हम कुछ कर नही पाते इसीलिए इन्हें पढना शूर वीरता से कम नही है।

यही कारण है कि हिन्दी कहानी क क्षेत्र म पिछले बीस वर्षों म इतनी आंधिया और तूफान चले है मगर कमलश्वर का कोई भी जलजला नही हिला सका। वह मूल रूप म लागा से सम्बन्धित कलाकार है और लागो स जुडे हुए लनक के पास विषय वस्तु की कोई कमी नही हाती। इसी वजह स उसकी कहानियो म विविधता, अनेकल्पना और विलक्षणता भरपूर है।

और भाषाओ क बार म मैं कम जानता हूँ मगर मैंने देखा है कि कमलेश्वर हिन्दी की तरह हा पजाबी म भी प्रसिद्ध है। कुछ पत्रिकाओ वाले उसकी कहानिया के अनुवाद करके साथ म अनुवादक का नाम भा नहीं दत। लगता है कि अब कमलेश्वर हिन्दी क साथ साथ पजाबी म भी लिखन लगा है। हिन्दी के कुछ

लखक, जो कि पजावी भी पढत हैं, पूछत हैं— भई ! कमलेश्वर हिन्दी का लेखक है कि पजावी का ?' इस व्यग्य क पीछे उनकी ओछी हीनभावना स्पष्ट है।

मैंन अक्सर महसूस किया है कि कमलेश्वर की कहानियों मे वडा तीक्ष्ण व्यग्य है मगर उसे समझन के लिए वडी समझ-बूझ की जरूरत होती है।

मेरा विचार है कि विश्व के सभी अस्त्र शस्त्र लोगों को तवाह करने के लिए हैं मगर व्यग्य का हथियार लोगों को जीवित रखने के लिए है। यह वह सजीवनी चमत्कार है जो कि हरेक लखक को नही प्राप्त होता, परन्तु कमलेश्वर इस दौलत स मालामाल है। अव उस और किसी भी बैंक वलेंस की आवश्यकता नही है।

कमलश्वर अपन वारे म अथवा अपनी कहानी के सम्बन्ध म कुछ नही कहता। कारण ? 'जो लोग मुझे मिलेंगे, मुझे जान लेंगे। और अपनी कहानी क वार म मैं क्या कहूँ ? पढकर दख लीजिए।'

मगर जव मैंन उसे कुछ-न-कुछ कहने के लिए विवश किया, तो उसन कहा 'कहानी लिखना मरा व्यवसाय नही विश्वास है। अस्तित्व क सकट को एक क्लर्क या दुकानदार बनकर भी झेला जा सकता था (जो किसी भी रूप म हीन नही था) पर मैं लेखक इसलिए हूँ कि उसे झेलने के साथ साथ ठेन भी सकता हू।'

जव वह गभीरता के साथ वात करता हुआ मुसकराता है तो केवल उसकी मोटी मोटी आखें ही नही समूचा अस्तित्व एक गभीर मुसकान म थिरक रहा होता है। उसन फिर कहा— कहानी लिखना मरे लिए यातना नही है वल्कि उलट यातनापूर्ण है वे कारण जो मुझे कहानी लिखन के लिए मजवूर करत हैं। और यह मजवूरी तभी होती है जव मेरा अपना सकट दूसरों के सकट से सवद्ध होकर असह्य हो जाता है या मेरी अपनी करुणा दूसरो की सवेदना स मिलकर अनात्म हो जाती है।"

उस समय मेरे सामने बठा था वह लेखक जो कि 'राजा निरवसिया' से लकर मानसरावर क हस तक की कथा-यात्रा को वडी शूरवीरता मे तय कर गया मगर अभी तक भी यह वात नही मानता था कि उसकी मजिल आ गयी है।

उसन फिर कहा— कहानी मुझे औरो से जोडती है या यह कहूँ कि वहुतों स जुडने की सास्कारिक स्थिति ही कहानी की शुरुआत है। मेरा जीवन इतिहास सापेक्ष है उसके तमाम अतर्द्वंद्वो का साक्षी है—व्यक्ति और उसकी सामाजिकता दोनो का।'

उस समय मैं मन ही मन म सोच रहा था कि 'बयान' 'जोखिम', 'गर्मियों क दिन' 'वदनाम वस्ती' 'रातें' 'मानसरोवर के हस' 'राजा निरवसिया' तथा और अनेक कहानियों म कमलेश्वर की इतिहास सापेक्ष सूझ का दस्ता-परखा जा

सकता है।

कमलेश्वर ने क्षणभर के लिए अतमन म झाँककर फिर कहा —'जहाँ व्यक्ति के अह की क्रूरता सामाजिकता के यथाथ को नकारती है वहाँ आज की कहानी यानी नयी कहानी अथवा समातर कहानी नहीं हो सकती। वहाँ आग्रह मूलक लेखन ही हो सकता है। ऐसा लेखन जो किसी एक की क्रूरता को साग्रह अग्रसर करने वाला यत्र बन जाता है जीवन के प्रति प्रतिबद्ध होना मेरी अनिवार्यता है।'

मैं सोच रहा था कि और भी बहुत से लेखक जीवन के प्रति प्रतिबद्ध का दावा करते हैं पर जब भी उन्हें कोई छोटा मोटा प्रलोभन दिया गया—बडी नौकरी सुदर बीवी अथवा सामती विधवा महिला का सद प्रेम—तो व अपनी मजिल को ही भूल गये। पर यह कमलेश्वर किस मिट्टी का बना हुआ है ?

इन टूटते हारते और अकुलाते मनुष्य की गरिमा मेरा विश्वास है ' क्षणभर के लिए रुककर उसने फिर कहा— जिनकी जीत होती रहेगी वे क्रूर होते जायेंगे इसीलिए मुझे तो लगता है कि मैं हमेशा हारे हुओ के बीच रहने के लिए प्रतिबद्ध हू और यह तब तक होता रहेगा जब तक सब जीत नहीं जायेंगे और मैं बिलकुल अकेला नहीं रह जाऊँगा।

फिर क्या होगा ?'' मैंने पूछा।

फिर '—तब मुझे न आस्था की जरूरत रहेगी न विश्वास की और '

और क्या ?

और न लिखने की ही

वह फिर मुसकराया वह बहुत गभीर था और उसके शब्दो म बडी दृढता थी माता के दूध जसी पवित्रता भी।

उस समय मैं सोच रहा था कि यदि जीवन म कमलेश्वर को सुख ही सुख मिल जाते तो उसम कभी भी इतनी दृढता न पैदा होती मगर जमाने ने उसे काफी तोडने के प्रयत्न किये है।

और सफलता ?'

सफलता के बारे मे क्या कहा जा सकता है ?

कमलेश्वर की कहानी मे मानव मन की सूक्ष्म गहराइयाँ है। वह कस्बे के बारे म लिख रहा हो या शहर के बारे मे उसके चरित्र बडे सजीव विसगति भरे और अपनी सभी विशेषताओ (गुण अवगुण सहित) के साथ और सही रग रूप मे हमारे सामने खडे होते हैं। प्रेमचद के पश्चात राजेन्द्रसिंह बेदी के अतिरिक्त मुझे बहुत कम लेखक मिले हैं जिनकी रचना सामर्थ्य मे इतनी शक्ति हो। इसीलिए मैं कमलेश्वर का इतना मद्दाह हूँ।

मैं समझता हूँ कि भारतीय कहानी का टाटल इमेज बनाने म कमलेश्वर ने बहुत काम किया है। इसके लिए कोई प्रान्त गर नहीं कोई घर पराया नहो। यही वजह है कि अब पजाबी या मराठी कहानी की जगह कुल हिन्दुस्तानी कहानी की अधिक चर्चा होती है।

दिसम्बर के माह भरे दिन थे।

हम लोग समुद्र तट पर खडे थ सूय डब रहा और अँधेरा बढ रहा था। कमलेश्वर का सावला ताव रगा चहरा (जसे कोई अनत कालीन बुन हा।) रोशनी की चमक से गरिमामय दिखायी द रहा था पर फिर भी उस समय वह मुझे उदास सा लगता था। सुरमई अँधेरे प्रकाश मे इस तरह भी मालूम होता था जसे कि वह समुद्र का ही एक भाग हो जो कि आकाश की ओर उभरा हुआ है और शेष भाग ? और शेष भाग ? तिल तिल करके समुद्र म ही घुर रहा

'कमलेश्वर भाई! क्या बात है?

'यार! यह जिन्दगी का सागर बहुत गहरा है।

मैं भी गम्भीर हो गया। बात कितनी सही और सच्ची थी। उस वक्त मैं सोच रहा था कि जीवन और साहित्य के साथ पक्का नाता। यह बहुत बडी बात है जो कि कमलेश्वर क इमज म उभरकर सामन आत हैं।

फिर उसन मरा कधा झँझोडकर कहा—'मगर मैं कुछ और कहना चाहता हूँ मरा अभिप्राय है कि ।' एक क्षण के लिए वह रुका और फिर उसकी आखो म और भी चमक आ गयी। पजाबी मे आप उसे कहते हैं कि '

उसके मन की बात जानकर मैंने कहा

— दिल दरिया समुदरो डूंघे। कौण दिलाँ दियाँ जाणे!'

'बस दिल की बात जानने स ही शुरुआत होती है।' उसन फिर गभीर होकर कहा— और फिर अहसास होता है कि जिन्दगी इक आग का दरिया है और डूब के जाना है '

उस समय वह खुद भी लावे की तरह ही धधक रहा था।

बडी गहन गम्भीर स्थिति थी। क्या कहना?

अब और भी क्या कहूँ?

कमलेश्वर मरा दोस्त है और दोस्त के बारे म जो कुछ भी कहा जाय, लोग उसको बर्दाश्त नहीं करत। नहीं?

हाँ कभी कभी मन म यह बात अवश्य आती है कि इतन पुरख़ूम दोस्त को बन्दा मार ही द या खुद उस पर ही मर जाय।

आबिद सुरती
(गुजराती की नयी पीढ़ी के विवादास्पद प्रयोगवादी लेखक प्रख्यात चित्रकार और व्यंग्यकार)

गुस्ताखी माफ

कमलेश्वर कहानीकार है। कथाकार है। नाटककार है। आलोचक है। परिक्रमा है। क्या कुछ नही? ठीक है। यह सब आप जानते हैं। मैं भी जानता हूँ। पर कमलेश्वर एक नाजुक दिल भी है यह शायद बहुत कम लोग जानते होंगे। वे खुश होते हैं तो उनकी खुशी किसी से छुपी नहीं रहती। वे दुखी होते है तो उनका चेहरा पोस्टर की तरह जाहिर कर देता है। क्या आप यह सोच सकते हैं कि कमलेश्वर जैसे शख्सियत दस लोगो के बीच भी एक मासूम बच्चे की तरह आँसू बहा सकती है?

वह दिन मुझे आज भी याद है। वह दिन मंगल का था। परिक्रमा कार्यक्रम के लिए मैं उन्ही के घर से उनके साथ हो लिया था। न जाने क्या वे कुछ उखड़े उखड़े से लग रहे थे। यह मेरा स्वभाव नही कि मैं उनसे कारण पूछू। कार मे मैं चुपचाप बैठा रहा। कनखियो से उनके चेहरे को पढता रहा। मुझे एहसास हुआ, यह आदमी अपने गम को कुचलने के भरसक प्रयास कर रहा है मानो यह अपना ही गला घोटकर आंसुओं को रोक रहा हो! पर यह उसके बस की बात कहाँ थी?

टी० वी० सेंटर पहुँचते पहुचते तो उनकी आँख गीली हो गयी। और परिक्रमा कार्यक्रम शुरू हो इससे पहले ही आसू लुढक पडे। तब मुझे पता चला कि उनके एक अजीज दोस्त और हिन्दी के नयी पीढी के गजलकार श्री दुष्यंतकुमार का भोपाल मे हार्ट फेल हो गया था।

हैरानी की बात तो यह थी कि एक मित्र जो उनसे मीलो दूर था एक मित्र जिनसे शायद ही वे साल भर मे एक बार मिल पाते होगे फिर भी उसका इतना गम? लेकिन यह तो मैं पहले ही कह चुका हू—कमलेश्वर एक नाजुक दिल भी है। चाहे मित्र उनके करीब हो या दूर वे उनके हृदय मे समाये रहते है। मित्र

को देखते ही उनका सीना खुशी से फूला नही समाता !

कुछ ही दिना पहले मैं अपने परिवार के साथ वाडन रोड की फुटपाथ पर टहल रहा था। कमलेश्वर की नज़र पड गयी। वे फौरन ही दौडे आय। फिर मुस्कराते हुए कहा—आबिद ! जिस दिशा म तुम जा रहे हो उस दिशा म मेरा भी घर है। मैं उनके चेहरे को देखता रहा। शायद इसलिए कि मैं न कोई प्राडयूसर था न कोई करोडपति ! पर इससे क्या फर्क पडता है ? मेरे सामने जो शख्स खडा था, वह इसान था।

कभी कभी कॉमन फ्रेन्स मेरे स्टूडियो' म आ जाते हैं तो कमलेश्वर का जिक्र भी छिड जाता है। कुछ उन्हें आलोचक की दृष्टि से देखते हैं तो कुछ प्यार की। कुछ उनकी टीका टिप्पणी करते हैं तो कुछ उनकी तारीफ भी। पर एक बात पर सभी सहमत होते हैं। और वह यह है कि पिछले दस सालो म ज़माना काफी वदल गया, पर कमलेश्वर आज भी वही है। सडसठ के कमलेश्वर, जब कि वे नये नये बम्बई आये थे और आज के कमलेश्वर म—जो सफलताओ के कई शिखर विजित कर चोटी पर जा बैठे है कोई फर्क नज़र नही आता। आज भी वे वसे ही मुसकरा कर दोस्तो का स्वागत करते हैं जसे कि वे दस साल पहले किया करते थे।

शायद यही कारण है कि कमलेश्वर को कमलेश्वर जी' कहकर पुकारने वाला म से मैं नही हूँ। अपनो के साथ जी' जोडकर अपनो के बीच दूरी पदा करने की गुस्ताखी करना कम-से-कम मैं तो नही जानता !

चंद्रकान्त बक्षी

(आधुनिक गुजराती कथा साहित्य को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पहुंचाने वाले प्रखर कथाकार विचारक और इतिहासकार)

गतिशील व्यक्तित्व कमलेश्वर

आधुनिक हिन्दी कहानी के दो बहुत स्पष्ट दौर है—कमलेश्वर से पहले और कमलेश्वर के बाद। भाषा प्रवाह संवेदना की दृष्टि से कहानी में जबरदस्त परिवर्तन आया है। तूफानी गति से एक व्यक्ति कहानी के क्षेत्र में प्रकट हुआ जिसे खोयी हुई दिशाओं की तलाश थी और उसने अपनी इस तलाश से तथाकथित आधुनिक को भी अतीत की चीज बना दिया। इस आदमी की जड़ें बहुत गहरी थीं, निगाह बहुत साफ थी नैतिकता का जहर उसके खून में नहीं था और न ही उस सतही सौन्दयवादिता में विश्वास था। विस्तत (अनर्गल) व्याख्याओं से उसकी कला को क्षति पहुँचा सकना नामुमकिन था। उसकी पारदर्शिता चौंधियाने वाली थी।

बम्बई में आने से पहले कमलेश्वर हिन्दी का कहानीकार था, बम्बई ने उसे लिखे जाने वाले और बोले जाने वाले शब्द का भारतीय कलाकार बना दिया। उसने जिस किसी चीज को भी छुआ सम्पूर्ण पेशेवरी से छुआ—चाहे वह परिक्रमा जैसा टेलिविजन कार्यक्रम हो चाहे कोई फिल्म पटकथा या फिर सारिका' का सपादन। सारिका को उसने भारतीय पत्रिका बना दिया जिसमें राष्ट्रीय भाषाओं की श्रेष्ठतम सार्थक रचनाएं स्थान पाने लगीं—लघुकथाएँ कहानियाँ उपन्यास। कहानी ने उसकी बौद्धिकता को लहू लुहान किया था और मेरा खयाल है उसका अंत भी किसी कहानी में ही होगा —अद्ध लिखित।

कमलेश्वर यथार्थवादी है लेकिन यथार्थवादी का खुदरापन इसमें नहीं है। इसलिए का एक मुहावरा इस्तमाल करूँ तो यह कहूँगा कि वह वास्तविकता के कगार में लिखता है लेकिन उसमें अन्तर्लीन आशावादिता भी है। उसके लिए समाज की रुग्णता और त्रासदी का ज्यादा महत्त्व है। व्यक्तिवाद का आधिक्य

शायद पूंजीवादी समाज-व्यवस्था की देन होती है। कमलेश्वर के गद्य का समाजीकरण हो चुका है—लेकिन उसमे मसीहाई अन्दाज नही है।

कमलेश्वर का और मेरा साथ बहुत पुराना है। इन तमाम बरसो मे मैंने उसे अपनी ही इमेज को तोडते और उससे ऊपर उठते देखा है। उसकी रचिया कार्यक्षमता और दृष्टि की स्पष्टता पर मुझे हमेशा हैरत होती रही है। कमलेश्वर मे आस्था और अनास्था का अजीब मिश्रण देखने को मिलता है और उसकी सर्जनात्मक प्रतिभा ने मुझे हमेशा चौंकाया है। कभी कभी एक खयाल मुझे त्रस्त कर जाता है—उसकी लौ बडी प्यारी है लेकिन वह दिन रात जल रहा है। उसकी कमनतिकता की रफ्तार करीब करीब मारक है यह रफ्तार बचन करने वाली है।

कमलेश्वर के विकास क्रम का दृश्य हमेशा मोहक रहा है। वह कभी रुका नही है। वह कभी रुकेगा भी नही।

विमल मित्र

साहित्यकार कमलेश्वर

साहित्यकार कमलेश्वर का मैं शुरू से जानता हूँ। उनको मैंने अनेक रूपा मे देखा है। कलकत्ता म जब साहित्य-समारोह हुआ तब उनका भाषण सुनकर मैं मुग्ध रह गया था। तब मैं एक छोटे पत्र का सपादक था तब मैंने उनकी एक कहानी को बगला म अनूदित कर छापने के लिए उनको पत्र लिखा था। वह कहानी पढकर मैं समझ गया था कि यह लेखक गतानुगतिक नही है। इनका एक अलग अस्तित्व है। उसके बाद जब वे कलकत्ता आये (सारिका के सपादक के रूप म) तब उनके साथ मेरी बहुत ही साहित्य चर्चा हुई। बातचीत से मुझे पता चला कि हिंदी साहित्य म तब तक जो चिंतन चल रहा था उसे बदल देने की उनम शक्ति थी। इसलिए मैं कमलेश्वर को साहित्य का विद्रोही लेखक मानता हूँ। अग्रेजी मे जिसे कहत हैं—VOICE OF DISSENT।' तो कमलेश्वर साहित्य म एक VOICE OF DISSENT हैं। कमलेश्वर परम्परा के शत्रु हैं। यह साहित्य का एक शुभ लक्षण भी है। और वह वतमान समाज सभ्यता एव स्वय अपन ऊपर DISSATISFIED है। 'Dissatisfaction in a writer is always an element of talent कमलेश्वर कभी एक स्थान पर स्थिर बैठ सकत नही। उनका लेखन भी कभी एक आयडिया लेकर चलता नही। मैं साहित्य को साहित्य ही मानता हूँ। जसे फ्रेंच केमिस्ट्री जमन केमिस्ट्री, इगलिश केमिस्ट्री बगला केमिस्ट्री या हिंदी केमिस्ट्री कोई अलग चीज नही होती वस ही फ्रेंच साहित्य जमन साहित्य इगलिश साहित्य बगला साहित्य या हिंदी साहित्य कोई अलग-अलग चीज नही होती। इसीलिए मैंने लिखा कि साहित्य साहित्य ही होता है। उसी साहित्य की दृष्टि से मैं कह सकता हूँ कि कमलेश्वर सचमुच सिर्फ हिंदी साहित्यकार नही विश्व साहित्यकार हैं। मैं कमलेश्वर की सारी रचनाएँ पढने का मौका नही पा सका हूँ। दुनिया म दो किस्म के साहित्यकार होत है—एक है 'Prophet और एक है Preacher। शेक्सपीयर को 'Prophet कहा जाता है और डिकेन्स

को 'Preacher'। रवीन्द्रनाथ ठाकुर बंगला के 'Prophet' हैं और शरतचन्द्र 'Preacher'। पाँच-छह शताब्दियों में कोई एक Prophet आविर्भूत होता है जैसे तुलसीदास, टॉलस्टॉय इत्यादि। लेकिन प्रेमचंद एक शताब्दी में दो-तीन पैदा होते हैं। मेरे निरपेक्ष विचार में कमलेश्वर जी साहित्य के 'डिकेन्स' हैं। कमलेश्वर के किसी भी लेखन में पुनरावृत्ति नहीं पायी जाती। सूर्य एक होने पर भी हर रोज़ प्रत्येक सुबह नव-जन्म लेता है। कमलेश्वर एक लेखक होने पर भी हर लेखन में नव-जन्म लेता है!

मेरा स्वास्थ्य और समय मेरे नियन्त्रण में नहीं है। विगत तीन सप्ताह से मैं डाक्टर के नियन्त्रण के अधीन हूँ। अधिक काम या चिंतन करना भी मना है। जो कुछ लिख रहा हूँ 'डिक्टेशन' के माध्यम से लिख रहा हूँ। भविष्य में यदि मौका मिले तो मैं कमलेश्वर जी के बारे में और कुछ लिखूंगा। मैं अभी वृद्ध हो गया। कमलेश्वर को अपने छोटे भाई के समान मानता हूँ। मैं यह कामना करता हूँ कि महाकाल का जो सुप्रीम कोर्ट होता है उसके विचार में कमलेश्वर को सर्वश्रेष्ठ 'शिरोपा' दिया जायेगा। यह मेरी आन्तरिक शुभकामना है।

शौरिराजन
(तमिल तथा हिन्दी के विख्यात लेखक हिन्दी प्रचारक तथा चिंतक)

एक मे अनेक

एक अनुभवी कवि न बहुत पहले कहा था 'सच्ची बात चाहो तो कह लो, मीठी बात भी खुशी से बोला करो लकिन भूलकर भी कडवी सच्चाई जाहिर न करो।

इस दुनियावी नसीहत का कमिटेड राइटरा पर कोई असर नही पडता। वे कडवी सच्चाई को किसी भी कीमत पर जाहिर करते ही रहते हैं। इसलिए वे ज्यादा वदनाम होत है। ज्यादा बदनाम होना आजकल सही लखक की शिनाख्त हो गयी है। कुछ हसूद लोग जो अपन को लेखक भी मानते हैं और लेखक की तरह दिखत है, उन सही लखको को बराबर बदनामी का टोपा पहनान की ताबडतोड कोशिश करते रहते हैं। राहुल जी मुक्तिबोध यशपाल जसे सही लखका के साथ वही बदसलूकी हुई और अब कमलेश्वर जसे जनवादी प्रगतिशील और सम्यक क्रान्ति के पक्षधर लखको के साथ हो रही है। कमलश्वर से कुढन क लिए और भी वाजिब वजह हैं। वह तेज तर्रार हरफन मौला है सही लखक आला दर्जे का है सही व गहरा नजरिया रखता है इनसानियत का पुरअसर पैरवीकार है हर बात को सामा य जन के हित मे ही पाना चाहता है भाषा पर बेहद बढिया दखल है, हर चीज का अपने ढग से बहुत खूबसूरती के साथ कहन की उसकी अनूठी अदा है उसके पास वतमान का सही बाध है अतीत क बारे म अडिग धारणा है भविष्य क प्रति निर्णायक रुझान है वह हमसफरो के ढील डगा स एडजस्ट नही कर पाता है, वह पक्के यकीन से फुर्ती स आग बढ जाता है मुह का जवाब कटार से दे देता है, कथा साहित्य को नये प्रतिमान और नये आयाम देता रहता है उसका हर कम्म नयापन और मिसाल पेश करता है। वह अपने अन्दर कई प्रतिरूपो को समाता हुआ और हर प्रतिरूप म सफल होता हुआ पनप रहा है। इसलिए कमलेश्वर के दोस्त दोस्त न रह दुश्मन दुश्मन न रह साथी साथी न रहे। वह एक ओर अबूझ पहेली है तो दूसरी ओर साफ खुला प ना भी है। उसका तमाम लेखन एक ईमान

दार, सजग और जनवादी साहित्यकार का उच्छ्वास है। उसका हर बर्ताव अगल-बग़ल के लोगो की भली-बुरी हरकतो का पुख्ता जवाब है। पीछे वालो की वह परवाह ही नही करता, सामने वालो की यह हिम्मत नही होती कि वे इसका सामना करें।

कमलेश्वर को एक सही लेखक के रूप मे सिर्फ लेखन की माफत उस वक्त से जानता हू जब कि उसकी मशहूर कहानी राजा निरबसिया छपी थी। तब से उसे फॉलो करता आ रहा हूँ। कमलेश्वर ने अश्वत्थामाओ की भत्सना की नक्क़ालो के नक़ाब हटाये ऐय्याश मुर्दों का दफनाया आक्रान्तियो की कमर तोडी साथ ही बहतरीन कहानिया लिखी अच्छे उपन्यास लिखे सफरनामे पर चार चाद लगाये, मेरा पन्ना' खोलकर रखा, फिल्मी चमक भी दिखायी।

उसे रुबरू देखने पहचानने का मौका अभी चार साल पहले मुझे मिला। बाद म कइ जगह मुलाकातें हुई साथ ठहरना हुआ बहस गप्प की बठकें जमी। जब कभी कमलेश्वर को देखता हूँ वह मुझे लगता है—एक दक्खिनी किसान का जवान लडका! वही चुस्ती! जिन्दादिली! वही मेहनतपरस्ती, वही सादगी, वही चातुरी वही भावुकता वही हिम्मत वही वाचालता वही आत्मविश्वास वही स्वाभिमान वही स्नेहशील शालीन प्रकृति! मैंने समझ रखा था कि यह क्या लेखन के सिवा और कुछ नही जानता। लकिन धीरे धीरे पता चला कि इसका अध्ययन इतना विशाल गहरा और विविध है कि कोइ विषय इसकी समझ स परे नही है। गोली मारिये साहित्य को रसोइ के बारे म बात छेडिये, बस खानसामा कमलेश्वर आपका तीन घटे तक लगातार पचासो तरह-तरह की खान की चीजा का फहरिस्त, पकाने के तौर-तरीके के साथ एसे पेश करेंगे कि आप मुह बाय ताकत रह जायेंगे। इसके अलावा आप और क्या बात करना चाहेंगे? अदालती मामला पर? लटेस्ट विज्ञान की तरक्की पर, खत खलिहानो पर? दशनशास्त्र पर सौन्दयशास्त्र पर या देश विदेश के चुटकुलो पर? विलायती घुमक्कडी पर फिल्मी दुनिया पर या खेल कूद पर? बिना बोरियत के आपका दो-तीन घटे तक सविवरण सुनान की दक्षता इस कलम के किसान पटठे के पास है।

अब तो कमलश्वर सिर्फ हिन्दी का लेखक नही रहा, भारत की अन्य भाषाओ म भी वह प्रकाशित हो रहा है। तमिल म उसके लेखन का लाने का मौका मुझे मिल रहा है। भविष्य म इतर दक्षिणी भाषाओ क साथ तमिल भी कमलश्वर को पाकर गौरव का अनुभव करेगी। एक जनवादी वामनिष्ठ प्रतिबद्ध क्रान्तिकारी और योद्धा लखक की काई सामा नहीं हो सकती है—भाषाई या प्रान्तीय!

गुलाबदास ब्रोकर
(गुजराती के विश्वविख्यात कथाकार चिंतक और विचारक)

कमलेश्वर

यद्यपि मैं कमलेश्वर को पिछले कई बरसों—कम से कम दस बरसों से जानता हूं फिर भी मैं यह दावा नहीं कर सकता कि मैं उनका दोस्त हूं। इसके बावजूद मैं लेखक कमलेश्वर के बारे में इतना कुछ तो जानता ही हूं कि उनके बारे में एक छोटी सी टिप्पणी लिख सकूं।

कमलेश्वर हिन्दी के उन चार पांच लेखकों में से हैं जिन्होंने कुछ बरस पहले हिंदी कहानी के रूप को बदला। मोहन राकेश राजेंद्र यादव कमलेश्वर आदि के आगमन के साथ हिन्दी कहानी के क्षितिज पर ताजा हवा के झोंके दिखायी पड़ने लगे थे। यह क्षितिज विस्तृत हुआ—पाठक के सामने ऐसे अनेक दृश्य खुलने लगे जिनके बारे में पहले कभी सोचा भी नहीं गया था। इन कथाकारों ने अपनी कहानी को नयी कहानी का नाम दिया था। नाम चल निकला और ये कथाकार भी ख्याति पाने लगे।

कमलेश्वर अब इतने जवान नहीं है। नये लेखक अपनी कहानियों में नये विचार नये रूप लेकर आ रहे हैं और उन्होंने नयी कहानी' के प्रवर्तकों को इसी तरह चुनौती देना शुरू कर दिया है जैसे कभी उन्होंने स्वयं अपने से पहले वाली पीढ़ी के लेखकों को चुनौती दी थी। लेकिन साहित्यिक अनुभव यदि श्रेष्ठ है प्रामाणिक है तो वह सदा जीवित रहता है। यही वजह है कि जैनेन्द्र और यशपाल आदि की कहानियाँ, कमलेश्वर तथा उनकी पीढ़ी की तीव्रतम आलोचना के बावजूद आज जिन्दा हैं—यही वजह है कि नयी पीढ़ी द्वारा तीव्र आलोचना के बावजूद कमलेश्वर तथा उनके साथियों की कहानियाँ भी जीवित है।

कमलेश्वर की कहानियाँ भी जिन्दा हैं इसका कारण यह है कि उनके कथ्य ही श्रेष्ठ नहीं है बल्कि उन्हें जिन रूपों में बांधा गया है वे भी उत्कृष्ट हैं। साथ ही संपूर्ण दलित वर्ग के प्रति उनकी सहानुभूति ने उन्हें पाठकों का प्रिय बना दिया

है। उनकी कलात्मकता से स्पष्ट होता है उनकी संवेदना अत्यंत विस्तृत है, उनका कैनवस बहुत बड़ा है। हिन्दी पाठकों के बीच उनका नाम लम्बे अरसे तक जिन्दा रहने वाला है।

यदि मैंने व्यक्ति कमलेश्वर के बारे में कुछ बातें न कहीं तो यह संक्षिप्त टिप्पणी अधूरी ही रह जायेगी। उनकी विजयी मुसकान उनका खुला हुआ मैत्री-भाव उनका जबदस्त आत्मविश्वास तथा उनका ज्ञान भंडार उनसे मिलने वाले हर आदमी को बाँध कर रख लेता है।

इतना सब कहने के बाद क्या मुझे यह कहने की इजाजत है कि कभी कभी किसी व्यक्ति को यह भी लग सकता है कि कमलेश्वर में हल्का सा गरूर भी है कि अपनी योग्यताओं और क्षमताओं को लेकर वह जरूरत से ज्यादा सचेत है? मैं यह स्वीकारोक्ति करना चाहूँगा कि कम से कम मुझे तो ऐसा ही लगा था।

और मेरा यह एहसास करीब दो साल पहले तक बना रहा। फिर एक बार हमें एक साथ हवाई यात्रा का मौका मिला। हम बम्बई से नागपुर जा रहे थे। हम साथ साथ बैठे थे और बातें कर रहे थे। मैंने उनसे हिन्दी में नयी आयी अच्छी किताबों के बारे में पूछा। उन्होंने तीन किताबों के नाम लिये, जिनमें एक उपन्यास था। जहाँ तक मुझे याद पड़ता है, जिस उपन्यास का उन्होंने जिक्र किया था उसके लेखक भीष्म साहनी थे। मुझे खुशी हुई थी क्योंकि भीष्म मेरे दोस्त बलराज साहनी के छोटे भाई थे। मैंने कमलेश्वर से पूछा 'उपन्यास क्या वाकई इतना अच्छा है?'

'हाँ, बहुत अच्छा' उन्होंने कहा और फिर बोले, 'ब्रोकरजी आपको एक भेद की बात बताऊँ?'

'हाँ,'

'मैं यह मानता हूँ कि भीष्म कई बार मुझसे भी बेहतर लिखते हैं। लेकिन हममें से कइयों को प्रचार बहुत मिल गया है—इसीलिए शोहरत भी ज्यादा मिल गयी है वरना'

कमलेश्वर में गरूर है मेरे इस खयाल को तोड़ने के लिए इतना ही काफी था। उन्होंने जो कह डाला था, बहुत से लेखकों के लिए उसे कह पाना बड़ा मुश्किल होता है।

कमलेश्वर ऐसे ही बरसों कार्यरत रहें—यही मेरी कामना है।

डा० मनुभाई पांधी
(कच्छी के अग्रज लखक और विचारक)

कमलेश्वर छोटे और आम आदमियों के रचनाकार

मैं कह सकता हूँ कि मेरे मित्र कमलेश्वर असाधारण रूप से साधारण व्यक्ति है। उनकी सामान्य जन की सामान्य जिंदगी की तलाश और उसकी अभिव्यक्ति अद्वितीय है। किसी भी तरह उनकी बराबरी किसी और से नहीं की जा सकती। वे सिर्फ लिखने के लिए नही लिखते। कला कला के लिए उनका उद्देश्य नहीं और न कहानी की कलात्मक और सिर्फ साहित्यिक चकाचौंध या सजावट म उनका विश्वास है। उन्होंने वही लिखा है जो वे लिखना चाहते थे। उनके लिए कथा लेखन निर्णय का पर्याय है। उनका विश्वास है कि अपने वक्त का सबसे बडा लेखक वही हो सकता है जो आदमी स सबद्ध है। मैं सही कह रहा हूँ कि कमलेश्वर जन समुदाय की तकलीफो म हिस्सा बटाने म कभी पीछे नही रहते। और सबसे ज्यादा ध्यान देने योग्य बात यह है कि उन्होंने हमेशा सोद्देश्य लिखा है लेकिन कला और सौंदयबोध को कभी धुधला नहीं होने दिया। उन्होंने बदलते हुए हालात म आम भारतीय की मानसिकता और व्यवहार के बदलाव को बडी खूबसूरती के साथ अभिव्यक्ति दी है। उन्होंने कला-साधनो को व्यापक बनाया है। उनके पात्र गाँव, कस्बे नगरो और महानगरो के है। ये पात्र अपनी जिंदगी के पूरे बदलाव के साथ उनकी कहानियो म आये हैं। उन्होंने जो कुछ भी कहा है उसे अनावश्यक दार्शनिकता का जामा पहनाकर नहीं कहा। वे छोटे और आम आदमियो के रचनाकार हैं।

उनके पाठक उनकी कहानियों म अपनी ही अजनबी और अपरिचित स्थितियो स साक्षात्कार करते हैं जो उनकी (पाठको की) अपनी होती है।

कमलेश्वर म मैंने एक विशिष्ट गुण हमेशा महसूस किया है कि वे किसी भी व्यक्ति के दिल म गहरे उतरकर उसकी छिपी हुई बातें बडी खूबी स बाहर निकलवा लेते हैं। एक चुप्पा और शर्मीला व्यक्ति भी यकीनन उनके सामने अपने

रहस्य प्रकट कर देता है। वे आदमी और आदमी के बीच की रुकावटें दूर करने म कुशल हैं। उस समय वे कमलेश्वर नहीं रहते, एक साधारण आदमी बन जाते हैं और असाधारण बातो को भी साधारण बना देते हैं। सही अर्थों म वे अपने वक्त और समकालीन लेखको के प्रतिनिधि हैं। यही बातें किसी भी लेखक के लिए सबसे बडी उपलब्धियां होती हैं और कमलेश्वर म ये सब हैं।

शांतनु आचाय
(उडिया के सशक्ततम कहानीकार और साहित्यिक विचारक)

कमलेश्वर राष्ट्रीय साहित्य के मैक्सिम गोर्की

मैंने कमलेश्वर को १९७१ म बागला देश काड के समय व्यक्तिगत रूप से जाना था। प्रजातन्त्र प्रचार समिति' क तत्वावधान म विश्व मिलन अधिवेशन हुआ था। यह तीन दिन का अधिवेशन था। डा० हरेकृष्ण मेहताब (बबई के भूतपूर्व राज्यपाल) न कमलेश्वर को मुख्य अतिथि के रूप मे आमत्रित किया था। यह एक साहित्यिक और सास्कृतिक अधिवेशन था जो हर साल लेखको कवियो और कलाकारो को एक ही स्थान पर इकट्ठा होने का अवसर प्रदान करता था। कमलेश्वर के कटक आने का समाचार पहले ही से फैल गया था। वे लोग जो इस नाम स पहले से ही परिचित और प्रभावित थ काफी सख्या म इकट्ठे हुए थे और अपने चहेते भारतीय लेखक म साक्षात्कार करना चाहते थे। जो लोग उन्ह नही जानते थे वे शात और तटस्थ भाव स मच की ओर देख रहे थे कि 'ईश्वर' उपनाम वाला वह कौन व्यक्ति है ? कमलेश्वर नही आये और समारोह उनकी अनुपस्थिति मे ही प्रारम्भ हो गया। आयोजको को कोई ऐसा कारण समझ म नही आ रहा था जिसे वे श्रोताओ को बता सकते। वे इस सम्बन्ध म खामोश रहे और कमलेश्वर की जगह किसी अन्य को तलाश लाये। लोगों की नजरें अब भी मच पर थी। उन्हे लग रहा था कि कमलेश्वर कभी भी वहाँ उपस्थित हो सकते हैं। कुछ लोग कयास कर रहे थे कि 'ईश्वर' की तरह वह मच पर कहीं-न-कहीं अवश्य होगे।

कमलेश्वर बहुत देर स आये। सभा समाप्त हो चुकी थी। हम म से कुछ के अलावा कोई नही जानता कि कमलेश्वर डा० एच० के० मेहताब स किये गये वायदे स कैसे विमुख हो गये। बाद म ही सही लेकिन उनसे मिलकर हम बहुत खुशी हुई थी। कमलेश्वर की अनुपस्थिति का कारण एक रहस्यमय इच्छा थी जो उनके अन्तर्मन म पैदा हुई। उन्होंने अचानक पूर्वी सीमा को पार करने का निश्चय किया जब १९७१ का भारत पूर्वी पाकिस्तान युद्ध हुआ। जिस शाम वे डा० हरेकृष्ण महताब के आमत्रण पर मुख्य अतिथि के रूप म उडीसा आ रहे थ

और कलकत्ता से भुवनश्वर के लिए प्राइट पकड़नेवाले थ, उमी शाम उनम यह अनात इच्छा पैदा हुई और वे 'यातना दश' म घुस गय। यही वह रहस्यमय या अनात इच्छा है जिसने उन्हें भारत के समकालीन लेखकों म श्रेष्ठ बनाया है। कोई आश्चर्य नहीं कि इस देश के उनके प्रशंसक उन्हें 'कमलेश्वर' नाम से न पुकार कर 'एक विलक्षण प्रतिभा' के नाम से पुकारें।

मैंने कमलेश्वर को उनकी उड़िया म अनूदित कहानियों के माध्यम से ही पढ़ा है। मुझे हिन्दी का इतना ज्ञान नहीं है कि मैं उनके विशाल कृतित्व म खोज सकूं। फिर भी मैंने उड़िया के माध्यम से उनकी ये श्रेष्ठ कहानियाँ पढ़ी हैं— 'तीनों सीन', 'राजा निरबंसिया', 'नागमणि', 'मास का दरिया'।

किसी भी लेखक की समीक्षा उसके साहित्य के समुचित ज्ञान के अभाव मे सभव नहीं है। अल्पज्ञान के आधार पर किसी के सम्बन्ध म निश्चयात्मक रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। लेकिन इतिहास म ऐसे कई महान नायक हुए हैं जिन्हें उनके थोड़े-से शब्दों के बल पर ही महानायकत्व पद प्राप्त हुआ है। लोगों ने उनके बारे म बहुत कुछ लिखा और कहा है। मैं कमलेश्वर को और उनकी रचनात्मकता को भी इतना ही महत्त्वपूर्ण मानता हूँ।

मैं कमलेश्वर को एक समय 'कवि' मानता हूँ जो शब्दों के द्वारा अपने अनुभवों को मूर्त रूप देता है और पात्रों स्थितियों तथा अवकता के द्वारा कहानियों म ढालता है। यह उनकी कवित्व शक्ति ही है जिसके सहारे उन्होंने कहानियाँ लिखी हैं और पाँचवें दशक के नयी कहानी आन्दोलन के अगुवा बने। कोई आश्चर्य नहीं कि युद्धोत्तर कवि की तरह कमलेश्वर की आत्मा आकाश की ऊँचाइयों से सिद्ध दृष्टि से कुछ तलाश करती रही हो और एक कबूतर की तरह आसमान की शांत नीली गहराइयों म कुछ रही हो। इसी तलाश का नतीजा है कि उनके पात्र साधारण आदमी हैं।

कमलेश्वर की कहानियाँ समकालीन उड़िया कहानी म व्यक्त तकलीफों को वहन करती हैं। इससे साफ जाहिर है कि पूरे देश की रचनाशीलता मजबूती के साथ एक दूसरे से सबद्ध है। इन रचनाकारों का तकलीफों का एहसास एक जैसा है। पूरे देश की सृजनात्मक सोच एक है और हम कमलेश्वर के लेखन को राष्ट्रीय साहित्य कह सकते हैं। राष्ट्रीय साहित्य की इन ऊंचाइयों पर कमलेश्वर का नाम उसी तरह चमक रहा है जैसे रूस म मक्सिम गोर्की का नाम।

हालांकि कमलेश्वर मेरे मित्र हैं फिर भी सन १९७१ की उस शाम से मैं यही सोच रहा हूँ कि उनके नाम का ईश्वर भाग कहाँ है? शायद वह मेरी पकड़ से उसी तरह बच निकला है जैसे वे उस समारोह से बच निकले थे। लोग मच पर उनके होने के एहसास को महसूस कर रहे थे और वहाँ एक ऐसा व्यक्ति बिठा दिया गया था, जो कभी भी कमलेश्वर की जगह नहीं ले सकता।

समरेश बसु

भाषाओं को पास लाना कमलेश्वर का मिशन है

आज से कोई १२ साल पहले प्रबोधकुमार मजुमदार ने लखनऊ में मेरी मुलाकात कमलेश्वर से करायी थी। कमलेश्वर के नाम से मैं वाकिफ था। मुमकिन है वो भी मुझसे गायबानातौर पर परिचित हों मगर पहली ही मुलाकात में वो इस तरह टूट कर मुझसे मिले जैसे बरसों का बिछुड़ा कोई दोस्त मिलता है—कमलेश्वर की इस अदा से मैं बेहद प्रभावित हुआ—थोड़ी ही देर में वो बिलकुल घुलमिल गये। ज़रा ज़रा सी बात पर कहकहा लगाने लगे उनका कहकहा उनकी खुली तबियत और दिलचस्प व्यक्तित्व की पहचान है। साफ दिल वाले ऐसे दिलचस्प आदमी से बेतकल्लुफ होने में कितनी देर लगती है?

कमलेश्वर ने झटपट एक साहित्यिक गोष्ठी का इंतज़ाम किया था जिसमें ज़्यादातर नौजवान लेखक और विद्यार्थी शरीक हुए थे और साहित्य की समस्याओं पर खूब खुलकर बातें हुई थीं। कमलेश्वर का दिमाग जिस कदर रोशन है दिल भी उतना ही बड़ा है। दिल बड़ा नहीं होता तो दूसरी भाषाओं के लेखक या नौजवान कलाकारों को क्यों वे इज़्ज़त बख्शते! उन्होंने हिन्दी के कथा साहित्य में एक आंदोलन को जन्म दिया है। इस आंदोलन की बदौलत उन्होंने सैकड़ों कहानीकारों को उभरने का मौका दिया है। नई कहानियां हों या सारिका—कमलेश्वर के सम्पादन में ये दोनों ही पत्रिकाएँ नये लेखकों का प्लेटफार्म बनीं। इसके अलावा पत्रिकाओं में दिलचस्पी पैदा करना तो कोई उनसे सीखे।

सारिका में उन्होंने गर्दिश के दिन के अंतर्गत लेखकों के निजी अनुभवों को पेश करने का जो सिलसिला शुरू किया है उसके तहत उन्होंने मुझको भी लिखने की दावत दी थी और प्रबोधकुमार मजुमदार से मेरी कहानियों का हिन्दी अनुवाद करने की फरमाइश भी की थी। ये उनकी फराखदिली (उन्मुक्तता) है। असल में वो हिन्दुस्तान की तमाम भाषाओं को एक दूसरे के करीब लाने की कोशिश करते हैं। कोशिश ही नहीं, बल्कि ये उनके मिशन में दाखिल है।

मगर हमें अफसोस है कि उनकी कहानियों का हिंदुस्तान की दूसरी जुबानों खासकर बंगला में ज्यादा अनुवाद नहीं हुआ है। प्रबोधकुमार मजुमदार से मैंने इसका आग्रह भी किया था मगर अभी तक हमारी यह ख्वाहिश पूरी नहीं हुई है। उससे बंगला साहित्य का ही नुकसान हुआ है वरना कमलेश्वर की कहानियाँ हिंदुस्तानी जबानों के अलावा इतालवी, फ्रांसीसी, चेक, रूसी और अँग्रेजी में तर्जुमा हो चुकी हैं और सारी दुनिया उनकी प्रशंसक है।

मुझको दूसरा अफसोस इस बात का भी है कि कमलेश्वर जब कलकत्ता आये थे तो मुलाकात तो उनसे जरूर हुई थी, मगर वे बड़ी मुख्तसर मुलाकात थी और मैं उनकी कोई खातिरमदारत नहीं कर सका था। कारण यह था कि उन दिनों मैं कलकत्ता से पच्चीस मील दूर नई हट्टी में रहता था।

कमलेश्वर खुद जिस उन्मुक्तता और फैयाजी का सबूत देते हैं या वह जितने खुले दिल और दिमाग के मालिक हैं, बस बहुत कम आदमी होते हैं। उनके लोकप्रिय और उनके महान् होने की एक वजह यह भी है, जिस पर उनके दोस्त जितना भी फख्र या ईर्ष्या (अपने अपने हौसले के मुताबिक) करें कम है। मुझको तो इस पर फख्र है।

मगर ऐसे मौके भी अक्सर आते हैं जब कमलेश्वर से ईर्ष्या करने को जी चाहता है। इसकी मिसालें तो और भी बहुत होंगी, मगर मैं एक ही मिसाल दूंगा। टी० वी० पर वो इतना दिलचस्प और उपयोगी प्रोग्राम पेश करते हैं कि जग का तो भला होता ही है, उनका भी होता है—उनका यह होना है कि वो फिल्मी हीरो की तरह पहचाने जाते हैं, यह मैंने खुद बम्बई में देखा है। रास्ता चलते हुए लोग उन्हें पहचान लेते हैं। और लड़के एक दूसरे से कहते हैं कि वो कमलेश्वर जा रहे हैं। लेकिन इससे भी ज्यादा ईर्ष्या की बात यह है कि अपने बालों में सफेदी आ जाने पर भी कमलेश्वर लड़कियों को लुभा सकते हैं।

हरिकृष्ण कौल
(कश्मीरी उर्दू तथा हिन्दी के विख्यात कथाकार)

पूरे हिन्दुस्तान का कहानीकार

समझ म नही आता कि किस कमलेश्वर के बारे म लिखू—कहानीकार कमलेश्वर के बारे म लिखू जिसकी कहानियो ने आज से बीस-पच्चीस वर्ष पहले ही मुझे प्रभावित किया था। राजा निरबसिया और खोयी हुई दिशाए से लेकर बयान और रातें तक जिसकी सारी कहानियाँ उस आम आदमी की दास्तान हैं जिसकी हालत पर बडे बडे कौमी और अतर्राष्टीय वाकयात—आजादी, जम्हूरियत और इन्कलाब के लम्बे चौडे दावे—कोई असर नही डालते जो गुमनाम जिन्दगी जीना और मौजूदा समाज के निजाम की चक्की म पिसा जा रहा है। उस बाशऊर फनकार के बारे लिखू टेक्नीक किये गये जिसके तजुर्बे मौजू के अपनापन और बेमारतगी को धुधला नही करते और जिस वजह से उसकी रचनाए मौजूदा दौर की अहम दस्तावेज बन गयी हैं।

या उस कमलेश्वर के बारे म लिखू जो एक अजीम और पुरकशिश शख्सियत का मालिक है। आम हिदुस्तानी सावली सलोनी सूरत के बावजूद जिसके नुकूश तीखे है। निस्बतन छोटे कद के बावजूद जो अपने साथियो म हर लिहाज से ऊँचा ही नजर आता है। जिसकी इना (अह) साफ है सोच म कोई उलझन नही, इजहार म कोई इबहाम (अमूर्तता) नही बाना म लताफत और नजाकत का हसीन इम्तियाज (मिश्रण) मसाइल का सही तजुर्बा करने की एसी मताहियत कि सारा माहौल मुनव्वर (रौशन) हो जाये जिन्दादिली की एसी महक कि गिरदो पेश मुअत्तर (वातावरण महक उठे) हो जायें। तन्ज की ऐसी चुभन कि दिल म चुभकर रह जाय। पास खडे यार दोस्तों के मुह स हसी की फुलझडियाँ फूट पडें और फिर सबकी हसी को डुबोता उसका जोरदार कहकहा फिजाँ म गूज उठे।

लेकिन कमलेश्वर कहानीकार सपादक और अजीम शख्सियत ही नही, अपने म एक इदारा (इस्टीटयूशन) है। हिदी का लेखक होने के बावजूद उसकी

दिलचस्पी और उसका असर हिन्दी तक ही महदूद नहीं, वह शुरु से ही इस बात की कोशिश मे लगा रहा है कि हिन्दी उर्दू, बंगाली कश्मीरी आदि इलाकाई जुबानों की हदूद से ऊपर उठकर एक ऐसे हिन्दुस्तानी अदब की रचना की जाय जो सच्चे मायनों मे आज के हिन्दुस्तान का आईनादार हो। हिन्दुस्तान की मुख्तलिफ जुबानों मे लिखा जा रहा अदब सभी हिन्दुस्तानियों की मुश्तरका मिराम (सम्पत्ति) हो। मुझे याद है आज से कोई २० साल पहले जब कमलेश्वर इलाहाबाद से शाया होनेवाले सकेत को सपादित कर रहा था, तो उस साहित्यिक विशेषाक के लिए कश्मीरी जुबान की रचनाएँ हासिल करने के लिए श्रीनगर आया था। कश्मीर से लौटकर उसने दीनानाथ नादिम के बारे मे हिन्दी मे एक मजमून छपवाकर आधुनिक कश्मीरी साहित्य के इस मीरे कारवाँ को गैर-कश्मीरियों से जनवाया। मुझे यह भी याद है कि सआदत हसन मटों की वफात पर मटो के एक हमअसर अदीब ने एक मजमून लिखा जो पहले पाकिस्तानी रिसाले नकूश मे छपा और फिर जिसका हिन्दी रूप लखनऊ से शाया होनेवाले मासिक 'नया पथ' मे छपा। इस मजमून मे मजमूननिगार ने इशारे से यह बताने की कोशिश की थी कि वह खुद मटो से बड़ा अदीब है और मटो ने उससे ही सीखकर लिखना शुरू किया था। तब कमलेश्वर ने इस मजमून के जवाब मे एक मजमून लिखकर हिन्दी पाठकों को मटो की अजमत और उसके अदबी कारनामों की सही जानकारी दी थी। कुछ अरसा बाद जब कमलेश्वर ने दिल्ली मे नई कहानियों का सपादन सभाला तो वह इस मासिक पत्रिका मे हिन्दी कहानियों के साथ साथ दूसरी हिन्दुस्तानी जुबानों की कहानियों के अनुवाद भी देने लगा। और कई साल बाद जब कमलेश्वर 'सारिका' का सपादक हुआ तो उसने इस दौदये जेब हिन्दी कहानियों की पत्रिका को भारतीय कहानियों की पत्रिका मे बदल डाला। जिससे मुख्तलिफ इलाकाई जुबानों मे तखलीक हो रहे अफसानवी अदब के दरम्यान एक रब्त (रिश्ता) कायम हो गया। ऐसा रिश्ता जिसे न साहित्य अकादमी कायम कर सकी थी और न ही नेशनल बुक ट्रस्ट। कमलेश्वर की कोशिशों से हमारे सामने हिन्दुस्तानी अफसानों का तसव्वुर उभर कर आ गया। ऐसा हिन्दुस्तानी अफसाना जो हवा मे नहीं लटक रहा है, बल्कि जिसके पाव हिन्दुस्तान की इस सरजमी मे मजबूती के साथ टिके हैं। इस सिलसिले मे कमलेश्वर की वह बात मुझे हमेशा याद रहेगी जो उसने अभी जनवरी '७७ मे अजार (कच्छ) मे हो रही छठी समाचार वार्फेस की बैठक मे कही थी—'हम सभी इलाकाई जुबानों मे लिखे जा रहे अदब को हिन्दुस्तानी अदब की मरकजी (केन्द्रीय) धारा के साथ जोड़ना होगा। मगर शर्त यह है कि यह मरकजी (केन्द्रीय) धारा सही और सेहतमन्द अदब की हो। महज मरकजी धारा की बातें तो फिरकापरस्त लोग भी करते हैं।"

ओम गोस्वामी
(डोगरी के प्रख्यात कथाकार)

कमलेश्वर—मेरी नजर मे

कमलेश्वर का नाम किसी तारीफ का मुहताज नही लेकिन कमलेश्वर के व्यक्तित्व और कृतित्व का लेखा जोखा करते समय सही सच्ची और दिलकश बातें इतनी ज्यादा हो जाती हैं कि तारीफ के अबार लगे दिखायी देते है।

कमलेश्वर एक शख्सियत है कि—

जिसमे कथनी और करनी की एकात्मकता का विहगम दिग्दर्शन मौजूद है। उसने हमारे कालखड की हिप्पोक्रसी के खिलाफ लेखनीय भूमिका से पूरी इमानदारी के साथ दो टूक बातें की हैं।

जिसने बार बार अपने मजमूनो द्वारा कहानीकारो को चेताया है कि कथा लेखन ऐश परस्ती का अखाडा नही अपने समय की विद्रूपताओं को पहचान कर अभिव्यक्त करने की संजीदा पुकार है।

आज की भारतीय भाषाओ की कहानी को सर्वाधिक प्रभावित करने वाली विचार धारा समातर सोच का उन्नयन कमलेश्वर की जरखेज बुद्धिवादिता का नतीजा है। कमलेश्वर के कट्टर विरोधियो म भी आज तक हिम्मत नही हुई कि समातर के विरोध म कुछ ठोस दलील देकर अपना पक्ष सामने लायें। इसका एक ही कारण है कि समातर युगीन परिस्थितियो से उद्भूत एक समय सापेक्ष सच्चाई है। इस सच्चाई को कमलेश्वर ने सन पचास के आसपास भी रखाकित किया था जब जीवन के साथ-साथ कहानी को चलाने की चाह ने 'नयी कहानी' का नाम पाया था। कमलेश्वर उस वक्त भी सही था और आज भी सही है। सश्लिष्ट राजनीतिक परिस्थितियो म व्यक्ति के दायित्वो का विश्लेषण करने की अद्भुत क्षमता से सपन्न कमलेश्वर वह व्यक्ति है जो हमेशा सही होता है। इसीलिए हिन्दुस्तान की तमाम अदबी जुबानो म कमलेश्वर का नाम इज्जत से लिया जाता है।

कथा धारा और जीवन धारा को दो समातर तथा साथ ही विकल्प दनवाली रेखाओ की मानिंद मानकर कमलेश्वर न सृजनात्मकता को नये उपक्रम पर खडा किया है। कहानी म उसकी कलम अपन वक्त की तमाम तल्खीयो को सवेदना के स्तर पर चित्रित करती चलती है। मजमून मे इसी कलम से लावा फूटने लगता है। आमतौर पर देखने म आता है कि कोई बडा अच्छा आलोचक या समय निबन्धकार अच्छी कहानी नही लिख पाता। लेकिन कमलेश्वर म यह विरोधाभास अचम्भे की हद तक यथार्थ दिखता है। इसीलिए कमलेश्वर का नाम उन लेखको म अग्रगण्य है जिनकी लेखनी ने अपने युग को नये मोड और नयी सोचें प्रदान की हैं।

बचपन म मैं फैंटम की चित्र कथा पढा करता था—जिसका नायक लगातार बुराइयो के खिलाफ जूझता रहता है। आज असल जिन्दगी म उस कथा नायक की भूमिका मैं कमलेश्वर को अदा करते देखता हूँ! उसकी कलम ने दोधारी तलवार की तरह बीहडो म रास्त बनाये हैं साहित्यिक अराजकता का बपर्दा किया है और जेनुइन कहानी को अभय प्रदान किया है। विकृत क खिलाफ मैंने उसे हमेशा झडा उठाय बुलन्द आवाज म ललकारत देखा है। यहाँ कमलेश्वर जद्दो जहद करन वाली शख्सियत के रूप म उभरे हैं। आज उन्ह कलम का सिपाही कहा जा रहा है लेकिन कमलेश्वर को कलमेश्वर या कलम का खुदा कहने मे मुझे कोई गुरेज नहीं।

कमलेश्वर मेरे सामन एक दूसर रूप म भी सामने आते ह और वह रूप है उर्दू म उस्ताद शायरो की परम्परा म जिस तरह अनेक तालिब बहारो वजन वगैरा की इस्लाह देत हैं उसी तरह कहानी म कमलेश्वर उस्ताद परम्परा के कहानीकार या कथासिद्ध कहानीकार के रूप म प्रतिष्ठित हैं। यानी व कहानी लिखने के साथ-साथ कहानी पर समालोचना की प्रखर सूझ भी रखत हैं। आज के अनेक प्रतिभाशाली कथाकारो को कमलेश्वर की घनी छत्रछाया और पथ प्रदर्शन हासिल है। नये क्रियाशील कहानीकारो के लिए कमलेश्वर प्रेरणा-पुज या ऊर्जा स्तभ की महत्ता रखते हैं।

पी० एन० भट्टतिरी
(मलयालम के विख्यात लेखक)

भाई कमलेश्वर एक सिद्धात का पुनरुत्थान है !

भाई कमलेश्वर कुशल कहानीकार है उत्तम उपन्यासकार हैं प्रभावी लेखक हैं सक्षम सपादक हैं टी० वी० के सफल प्राडयूसर है हाँ, व वसे बहुत कुछ है। एसे बहुत कुछ वाल और भी तो हैं। किसी ग्रथालय म जाइयेगा किसी सभा गोष्ठी म झाँकियेगा—उन बहुत कुछ वालो की नुमाइश स बच निकलना आपके लिए नामुमकिन होगा मुश्किल होगा। मगर भाई कमलेश्वर बहुत कुछ होने के साथ-साथ और कुछ भी है। यही और कुछ उन बहुत कुछ' वालो से इनको अलग—सिर्फ अलग नहीं, एकदम अलग—खडा कर देता है।

भाई कमलेश्वर एक आइडियालाजी का—सिद्धान्त का पुनरुत्थान हैं। यह कोई अमूर्त वायवी सिद्धा त नही एकदम समूर्त इसी धरती स जुडा हुआ सिद्धात है। इसकी रोशनी चमक गयी थी बुजुर्ग प्रेमच द के जमाने म। उस आग ले जाने की कोशिश भी जार स हुई थी। मगर उसे दबोच लिया, विदेशो स आये रुग्ण तत्त्वा ने। फिर क्या था बहुत दिनो तक उन्ही का बोलबाला था (आज भी है)। नये लेखक—अनजान मे ही—उनकी बनायी लाक स रेंगने लगे—अनाथ बोध का सत्रास का एकाकीपन का कुठा का न जाने एस कितने ही नगटिव—नकारात्मक विचारो का शिकार हो भूले भटके टटोलने लगे अधियारे म। वे एक तरह स दिशाहीन से बन गये—बनाये गये या कहना ही सही होगा। वे समझ नहा पाये कि इन सभी के मूल कारण कुछ और है जब तक वे कारण समाज म मौजूद रहेंगे कुठा का एकाकीपन का ऐसे सब कुछ का बोध बना रहेगा ही नहीं पनपता ही जायेगा। कुछ खास तत्त्व चाहते भी वही थ—और है। व यह नहीं चाहते कि लेखको की नयी पीढी जागे मूल कारणों को पहचाने और उनको मिटाने के लिए लडे खतरे के ऐसे मौके पर ही भाई कमलेश्वर मैदान म उतरे और नयी पीढी की ओर सही राह का इशारा किया—भाई ! कुठा सत्रास

आदि लेकर रोने बिलखने भर से काम नहीं बनेगा। इस हालत को गढ़नेवालों का पर्दाफाश करना होगा। ये तत्त्व समाज के हर तबके में अपने को खपा लेने की कोशिश कर रहे हैं। सजग हो जाइयेगा इसीलिए शुरू में कहा गया, भाई कमलेश्वर एक आइडियोलॉजी का—सिद्धान्त का पुनरुत्थान है। और यही उनको उन दूसरे बहुत-कुछ वालों से भिन्न बना लेता है। और इसकी निशानी समानर लेखक मंच में उभरकर आयी। इसके द्वारा लेखकों की एक ऐसी नयी पीढ़ी का निर्माण हो रहा है जो गिरती लुढ़कती रोती नहीं मगर उठती लड़ती बढ़ती है। यही बात भाई कमलेश्वर की सबसे बड़ी देन मानी जायेगी।

इन पंक्तियों का लेखक भाई कमलेश्वर का 'कहानी' के जमाने से ही पीछा कर रहा है। मगर वे अब जो भूमिका अदा कर रहे हैं वही सबसे महत्त्वपूर्ण उसे लग रहा है।

कुछ लोगों की शिकायत होगी—जलन से नहीं, रोष से उत्पन्न। (क्योंकि वे भोले भालों को गुमराह करना चाहते हैं तभी उनकी चाल बेरोक चलेगी।) यह 'समांतर लेखक आन्दोलन एक 'काटेरी'—गुट है और प्रतिबद्ध है होने दो। निहित तत्त्वों का गुट हो सकता है तो उसके खिलाफ हथियार उठानेवालों का भी गुट क्यों नहीं हो सकता है? उनकी प्रतिबद्धता अच्छी, इनकी बुरी—ऐसा क्यों? ऐसे में समांतर लेखकों की भूमिका बड़ी है। माकूल मौका हाथ लगा है यह सच है। साथ ही जिम्मेदारी भी बढ़ी है भाई कमलेश्वर की और साथियों की।

अब तक भाई कमलेश्वर के नेतृत्व में देश के अलग अलग केन्द्रों में—केरल से लेकर कच्छ तक एक समग्र—खंडित नहीं—चित्र को सामने रखकर आपस में विचार विमर्श किया, और कुछ ठोस निर्णय पर भी पहुँच गये। यह काम कम महत्त्व की बात नहीं है। अजीब संगठन कुशलता की जरूरत होती है। इसका भी चित्र भाई कमलेश्वर ने हमारे सामने रख दिया है।

हाँ भाई कमलेश्वर आपका रास्ता सही है। आगे आगे बढ़ते जाइयेगा अपने मिलिटेंट साथियों के संग। हमें भरोसा है कि आपके हाथ में कलम एक वाकिंग स्टिक नहीं एक तेज तलवार है।

डा० आलमशाह खान

एक मामूली आदमी एक गैरमामूली फनकार कमलेश्वर जो कमल था और पत्थर होकर कमलेश्वर बना

हिन्दी का मायाए-नाज़ अदीब अज़ीम फनकार और मुनफरिद हैसियत का मालिक कमलेश्वर सिर्फ आदमी है। क्योंकि आदमी में ही अदीब और फनकार होने की सलाहियत हो सकती है। अदब के सारे मरहले तय करके और फन की तमाम गहराइयों को पाकर भी आदमी बौना हो जाता है अगर वो आदमियत से दूर हो जाय—उसे भुला दे। कमलेश्वर पहले आदमी है फिर अदीब फनकार या और कुछ। उसने अपनी चौथाई सदी की अन्बी जिन्दगी में बेशुमार चुनौतियाँ—रोटी रोज़ी से अकीदे तक—झेली है लेकिन अपनी आदमियत अकीदे से कभी गुरेज़ नहीं किया है। उसकी कलम की नोक पर आदमी चढ़ा है खून खुशबू प्यार पसीना चाह चोट और इनकलाब पसन्द जो आदमी उसकी तखलीक से उभरा है उसे हिन्दी में कमलेश्वरीय आदमी कहा जा सकता है। कमलेश्वर की कलम ने जिस आदमी की तखलीक की है, उसमें गम है तो गुस्सा भी, गुस्सा है तो प्यार भी प्यार है तो ललकार भी और ललकार है तो जिन्दगी को सिरे से बदल डालने का हौसला भी। ये हौसला 'रोमानी रास्तों से न आकर साइंटिफिक नुक्त ए नज़र के उस मकाम से आया है जिसे हम हिस्टारिकल प्रोसेस आफ ह्यूमन डेवलपमेंट (Historical process of human development) के नाम से जानते हैं।

कमलेश्वर पहले अफसानानिगार है बाद में कुछ और। उसने अफसाना ने सबसे पहले किसी पर चोट की है तो खुद अफसाने पर। सन ५० के आसपास हिन्दी अफसाना एक नयी शाहराह की तलाश में ही नहीं था बल्कि एक नया जनम पाने के लिए बेताब था। पुनर्जन्म की इस घड़ी में वो कमलेश्वर का ही कलम था जिसने उसे खूबसूरत दोशीज़ाओं के रेशमी आंचल की सरसराहट और फसुर्दा और

मुर्गा कद्रों के घरे से ही आज़ाद नहा किया बल्कि फ़िरकेवाराना तंग-नज़र वतन-परस्ती के तहत बनने वाले रजअतपसन्द निज़ाम का भी पर्दाफ़ाश किया। कमलेश्वर न अफ़साने के फन का ही नही उसके फ़िक्र और फ़ार्म (form) को भी इस कदर बदल दिया कि उसके और उसके 'कलमी दोस्तों' के अफ़साना को उस वक्त की रविश में 'नयी कहानी' के नाम और नयी तहरीक से जाना जाने लगा।

कमलेश्वर ठहराव का हामी न होकर बहाव का बानी है। उसने अपने अदबी जहाज़ के पाल कभी नही बांधे। वो समय सागर की रवानी के साथ बहता-बढ़ता चला गया। उसने कभी नही जाना के अब का वक्त की पूरी सच्चाई को पा गया है और उस अब यही ठहरकर जीना और लिखना है। वक्त को कमलेश्वर ने बदला है और कमलेश्वर ने वक्त को। 'नयी कहानी' का बानी बनकर जब वो 'हिंदी नयी कहानी' के अलमबरदारो की सफ के आगे खड़ा था तभी उसने 'नयी कहानी' के ख़िलाफ़ बगावत कर दी। हिन्दी कहानी की तारीख म ये एक बड़ा हादसा है। और फिर 'नयी कहानी के बाद' नाम की अपनी किताब म उसने अपनी नसल और अपन-आप से सवाल किये और फिर अब तक के अपने अदबी सफर को तयशुदा-सफर' करार देकर नयी राहगुज़र की तलाश मे निकल पडा। कमलेश्वर की रफ्तार इतनी तेज़ और उसका ज़हन इस कदर इनकलाबपसन्द है कि उसके साथी उससे कदम मिलाकर नही चल सके। यही वजह है के वो जहां थ वही रह गये और कमलेश्वर आज 'समातर कहानी' तक चला आया है।

'समातर-सोच' की शक्ल म कमलेश्वर न हिन्दी ही नही मुल्क की दूसरी इलाकाई जुबानो म लिखन वाले कलमकारो के खयालात म इनकलाब बरपा कर दिया है। गुज़िश्ता सात साल के वक्फे मे समातर ने बाक़ायदा चलन वाली मुहिम न होकर भी एक ज़बरदस्त तहरीक की शक्ल अख्तियार कर ली है। इससे बडी कामयाबी किसी अदीब के लिए और क्या हो सकती है? लेकिन कमलेश्वर ने 'समातर सोच' का भी एकदम हरफ आख़िर करार नही दिया बल्कि उसे अपने वक्त की सच्चाई को समझने की नज़र और आज की जिन्दगी के शाना बशाना चलने वाला नज़रिया कहा है। आज अदबी दुनिया मे 'समातर-सोच' को लकर बडा वावेला मचा है। नौबत यहाँ तक पहुची है कि कमलेश्वर या समातर सोच' का ज़िक्र किये बगैर आज की कहानी पर चर्चा करना मुहाल हो गया है।

कमलेश्वर ने पहली मरतबा पुरज़ोर अल्फ़ाज म अदीबो से अपनी सोच या ideology की वज़ाहत करने की दरख्वास्त की है। बिना किसी पार्टी से वाबस्तगी के भी अदीब के लिए ये ज़ाहिर करना लाज़िम है कि वो किन लोगो के लिए किन ताकतो से लड़ाई लड रहा है? उसे अब अपनी तरफदारी का इज़हार करना ही पड़ेगा। सियासी अदब और अदबी सियासत एक अर्से म अंधेर मचाये हुए है। अब ये सब चालें टिकने वाली नही। क्योंकि अदब कोई झुनझुना नही है जिससे

आदमी को बहलाकर, थोडी देर के लिए अपने वक्त से काट दिया जाय। बल्कि अदब वो हौसला है जो हथियार न होकर भी हथियार के 'सही निशाने बनाने वाल की जेहनियत है। बात बहुत साफ है कि अदब रायफल न होकर रायफल के टिगर को सही वक्त पर दबाने के हौसले का नाम है। फन के नाम पर अंधी गोलियाँ फेंककर कागजी दफ्तियाँ बनाने का काम अब अदीब नही करते मजमेबाज करते हैं।

समातर सोच के खिलाफ हल्ला बोलने वाले ज्यादातर ऐसे लोग हैं जो तरक्की पसन्दगी का नकाब पहनकर समाज दुश्मन अनासिर के हाथो म खेलते हुए अपने मखसूस फन्नी अन्दाज म इनकलाब की राह क रोडे बन हुए हैं। समातर ने इन ताकतो और उनके बदो को बेनकाब किया है। मजहबी एहसास अदबी शऊर अखलाकी नुक्तनजर और तग दिल वतन परस्ती के नारे उछालकर चद नामनिहाद अदीबो न सरमायदारों के इशारे पर 'अदना आदमी' को गरीबी की लकीर (line of poverty) के भी नीचे लाकर खडा कर दिया है। फिर भी उनकी ख्वाहिश है कि वो वही रहे। उसी जेहनियत म जिन्दा रहे—जो कुछ हुआ है और आगे जो कुछ होना है उसे अपना मुकद्दर मानकर बैठ जायें। समातर-अदब न इस साजिश को नगा किया है। रिवायती तहजीब और बुर्जुआ जेहनियत का चश्मा चढाकर मुखालफीन इस नगेपन को देखकर छी छी तो करते हैं, लेकिन ये बताने से कतराते हैं कि इसानियत के इस नगेपन के लिए जिम्मेदार कौन है? समातर सोच ने इन्ही खुदमाख्ता नक्कादों और मोहज्जब अदीबो की पैंतरबाजी को समझा है और उसे कमलेश्वर और उसके साथियो न साफ अल्फाज म इन्सान दुश्मन एजेंसियो के सरगरमन करार देने का हौसला दिखाया है।

समातर कलमकारो की इस आइडियोलाजिकल अकीदतमन्दी के इजहार को मुखालफीन ने सियासी हरबा जैसे फतवे देकर उस पर तरह-तरह के लेबल लगाये हैं। सच तो य है कि समातर' पर कोई फतवा आयद होता है तो वो सिर्फ ये कि—समातर-सोच और तखलीक अदना आदमी की तरफदार है और अगर उसका कोई लेबिल है तो उस पे लिखा है—'बराबरी की इन्सानी जिन्दगी जीने का हक हर आदमी को है—जिन्दगी जीने के लिए कोई शर्त नही हो सकती—ना दीन मजहब की ना सरमाये सियासत की और न रंग जात की। आदमी सिर्फ इसलिए बडा है कि वो आदमी है। फनकार या खुद फन का भी दर्जा आदमी से बडा नही है। यही कमलेश्वर मामूली आदमी के हक म खडा गैरमामूली अदीब होकर भी खुद को अदना आदमी मानने म फख्र महसूस करता है।

'समातर सोच' अब अकेले कमलेश्वर का कमाल नही रहा। इससे अब पचासो नौजवान मश्क और ताजादम अदीब जुडे हुए हैं। ये बात अलग है कि समातर सोच' को बुलदी पर पहुँचाने का शर्फ कमलेश्वर को हासिल है। कमलेश्वर न सारिका'

म लिखे गये मेरा पन्ना' म 'समातर सोच की सही तशरीह की है और आलम ये है कि 'सारिका' म अफसानो से पहले मेरा पन्ना की लोग तलाश करते हैं।

समातर सोच' म शरीक लाग वसे तो किसी मखसूम नुक्त-ए-नज़र से बधे नहा हैं लेकिन जिन्दगी को दखने और उसकी अदब म अक्कासी करने का उनका नजरिया तकरीबन एक सा है। इसी रिश्ते से समातर साथी बधे हुए हैं। ये रिश्ता बराबरी का रिश्ता है। उनम कोई छोटा-बडा नही। यही वजह है कि समातर सोच' का अगुआ होकर भी कमलेश्वर सिफ एक समातर अदीब है। उसकी बात समातर के साथी सुनते तो ह पर जरूरी नही कि उसे तस्लीम कर ही लें और कमलेश्वर को खुशी इस बात की है कि उसकी बात मानी नहीं जाती, उस पर बेलाग तनकीद और बहस होती है—सच्चाई को जानने के लिए।

कमलश्वर के इस जमहूरी रवैये न न सिर्फ हिन्दी बल्कि उर्दू पजाबी मराठी, गुजराती, बगाली उडिया और तमिल, तेलुगु और मलयालम वगैरा मुख्तलिफ जुबानो के अदीबो की तवज्जो मुनतफिस की है बल्कि आज 'समातर' एक ऑल इण्डिया किरदार का अदबी फोरम बन गया है।

छोटे की तरह बडा अदीब भी तो आखिर मरता ही है। सबके साथ कमलश्वर का भी एक दिन मादूयन है। लेकिन कमलेश्वर इस लिहाज से भी एक बहुत बडा अदीब बना रहेगा कि जहाँ दूसरे अदीब सिफ अपनी किताबो म जिन्दा रहते हैं वहा वो अपनी किताबो के अलावा आगे आने वाली नस्ल के अदीबो म भी जिन्दा रहेगा।

कमलेश्वर एक बेहद जिद्दी और तल्ख आदमी है। उसकी जिद है कि इन्सान के कोने म जो आदमी पैदा हुआ है उस इन्सान का मरतबा मिलना ही चाहिए। वो तल्ख है उस निजाम के लिए जो आदमी और आदमी मे तफरीक करता है।

कमलेश्वर की कलम म वो जादू है जो चाह तो दो साल म चार गुलशन नदा' बनाने वाली चालीस किताब पैदा कर दे। लेकिन इसके लिए उसे उभरे हुए मलाईदार सीना, हसीन शानो प लहराते गेसुओ गुदाज बाहा और मरमरी रानो के दलदल म एयाश निगाहा का कमल बनना पडेगा जो उसे हरगिज कबूल नही। उसके दिन का कमल तो मशीन जिन्दगी की चौखट पर सर मारकर अदना आदमी की किस्मत का जादू जगाते जगाते खुद पत्थर बन गया है और उसका नाम हो गया है—कमलश्वर। हमारी दिली ख्वाहिश है कि वो पत्थर ही बना रह क्योंकि तिलस्मातपुर जिस फिल्मी दुनिया म आज उसका गुजर है वो उसकी इमेज (image) को तोडना चाहे तो खुद टूट जाये और पत्थर का कमलेश्वर बरकरार रहे—अपनी उसी अदना आदमी की धज के साथ।

कृष्ण चन्दर
(उर्दू के शीपस्थ कहानीकार)

कमलेश्वर

कमलेश्वर का शुमार आधुनिक हिन्दी साहित्य की प्रथम पक्ति के उन अदीबो मे होता है जिसमे रेणु भारती माहन राकेश राजेन्द्र यादव निमल वर्मा और दूसरे शीपस्थ कहानीकारा के नाम आते हैं। नयी हिन्दी कहानी म कमलेश्वर ने बहुत नुमाया रोल अदा किया है। वो उसे घर की चहार दीवारी स बाहर निकालकर खेत चौपाल, सडक के फुटपाथ पर ले आया है। कमलेश्वर के अफसानो म हम २०वी सदी के हिन्दुस्तान के मसायल की धमक महसूस होती है।

कमलेश्वर का अदाज भी निराला और दिलकश है। वो हिन्दी को जनता की सतह पर ले आये हैं। और ऐसे लहजे म बात करते हैं कि आम लोगो को वो कहानी अपनी कहानी मालूम होती है। मुश्किल लहजे म बात करना आसान है लेकिन आसान लहजे म गम्भीर और मुश्किल बात करना बहुत मुश्किल है। कमलेश्वर ने अपनी स्पष्ट शक्ति से इस मसले का बखूबी हल कर लिया है।

बम्बई टी० वी० पर उनका 'परिक्रमा' प्रोग्राम भी बेहद लोकप्रिय है। मैंने कलकत्ता टी० वी० श्रीनगर टी० वी० के बहुत से प्रोग्राम देखे हैं लेकिन गरीब जनता के लहजे को अपनाने और उनके दुखो को उन्ही की जुबान म ड्रामाई अदाज और खोखली भावुकता के बगैर पेश करने म उनका सानी और उनकी कला का मुकाबला करनेवाला किसी को नहीं पाया।

कोमला वरदन
(तमिल लेखिका व चित्रकार)

एक और सन्देश

श्री कमलेश्वर के बारे में कुछ शब्द लिखने के लिए मिले इस अवसर पर मैं बहुत खुश हूँ। उनसे मेरा परिचय ज्यादा पुराना नहीं है। हमारी मुलाकात तब हुई थी जब उन्होंने अपने प्रख्यात टी० वी० कार्यक्रम 'परिक्रमा' में मुझे इंटरव्यू किया था—यह नवम्बर १९७५ की बात है। इंटरव्यू की तयारी के लिए समय बिलकुल नहीं था लेकिन कमलेश्वर जी ने जिस तरह के सवाल मुझसे किये और १५ मिनटों के भीतर ही जिस तरह उन्होंने मेरे पूरे व्यक्तित्व की सम्पूर्ण तस्वीर दर्शकों के सामने उकेर डाली, उससे उनकी प्रतिभा का भरपूर परिचय मुझे मिल गया था। उस इन्टरव्यू की खास बात यह थी कि वह मुझसे हिन्दी में सवाल कर रहे थे और मैं अंग्रेजी में जवाब दे रही थी—क्योंकि हिन्दी का मेरा ज्ञान बड़ा सीमित है। फिर भी कमलेश्वर जी ने उस कार्यक्रम को प्रभावशाली बना दिया था।

मैं तमिल में लिखती हूँ लेकिन इस व्यक्ति के लिए मेरे मन में अगाध श्रद्धा है—जिसने हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में तो नाम कमाया ही है जो सच्चे मायनों में रचनात्मक प्रतिभा का मालिक भी है। रोजमर्रा की जिन्दगी में आने वाली विभिन्न स्थितियों में विभिन्न लोगों की क्या प्रतिक्रियाएं होती हैं उनकी क्या मानसिक स्थितियां होती है अपनी कहानियों में इसी का चित्रण करने में मुझे भी विश्वास है। इसीलिए मेरा खयाल है कि लीक से हटकर लिखने और नयी जमीन तोड़ने के खयाल से नये और युवा लेखकों को कमलेश्वर जी जैसे अग्रगामी लेखक का अनुसरण करना चाहिए ताकि उनकी कहानियाँ गढ़ी हुई होने के बजाय यथार्थवादी बन सकें।

कमलेश्वर जी के बारे में चन्द शब्द लिखते हुए मैं सचमुच गौरवान्वित अनुभव कर रही हूँ।

कृष्ण चन्दर
(उर्दू के शीर्षस्थ कहानीकार)

कमलेश्वर

कमलेश्वर का शुमार आधुनिक हिन्दी साहित्य की प्रथम पंक्ति के उन अदीबों में होता है जिसमें रेणु, भारती, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा और दूसरे शीर्षस्थ कहानीकारों के नाम आते हैं। नयी हिन्दी कहानी में कमलेश्वर ने बहुत नुमाया रोल अदा किया है। वो उसे घर की चहार दीवारी से बाहर निकालकर खेत, चौपाल, सड़क के फुटपाथ पर ले आया है। कमलेश्वर के अफसानों में हमें २०वीं सदी के हिन्दुस्तान के मसायल की धमक महसूस होती है।

कमलेश्वर का अंदाज भी निराला और दिलकश है। वो हिन्दी को जनता की सतह पर ले आये हैं। और ऐसे लहजे में बात करते हैं कि आम लोगों को वो कहानी अपनी कहानी मालूम होती है। मुश्किल लहजे में बात करना आसान है लेकिन आसान लहजे में गम्भीर और मुश्किल बात करना बहुत मुश्किल है। कमलेश्वर ने अपनी स्पष्ट शक्ति से इस मसले का बखूबी हल कर लिया है।

बम्बई टी० वी० पर उनका 'परिक्रमा' प्रोग्राम भी बेहद लोकप्रिय है। मैंने कलकत्ता टी० वी०, श्रीनगर टी० वी० के बहुत से प्रोग्राम देखे हैं लेकिन गरीब जनता के लहजे को अपनाने और उनके दुखों को उन्हीं की जुबान में ड्रामाई अंदाज और खोखली भावुकता के बगैर पेश करने में उनका सानी और उनकी कला का मुकाबला करनेवाला किसी को नहीं पाया।

कोमला वरदन
(तमिल लेखिका व चित्रकार)

एक और सन्देश

श्री कमलेश्वर के बारे मे कुछ शब्द लिखने के लिए मित्र इस अवसर पर मैं बहुत खुश हूँ। उनसे मेरा परिचय ज्यादा पुराना नही है। हमारी मुलाकात तब हुई थी जब उन्होने अपने प्रख्यात टी० वी० कार्यक्रम परिक्रमा म मुझे इन्टरव्यू किया था—यह नवम्बर १९७५ की बात है। इन्टरव्यू की तैयारी के लिए समय बिलकुल नही था, लेकिन कमलेश्वर जी न जिस तरह के सवाल मुझस किय और १५ मिनटो के भीतर ही जिस तरह उन्होने मेरे पूरे व्यक्तित्व की सम्पूर्ण तस्वीर दशकों के सामन उकेर डाली उससे उनकी प्रतिभा का भरपूर परिचय मुझे मिल गया था। उस इन्टरव्यू की खास बात यह थी कि वह मुझसे हिन्दी म सवाल कर रहे थे और मैं अंग्रेजी म जवाब द रही थी—क्योंकि हिन्दी का मेरा ज्ञान बडा सीमित है। फिर भी कमलेश्वर जी न उस कार्यक्रम को प्रभावशाली बना दिया था।

मैं तमिल म लिखती हूँ लेकिन इस व्यक्ति के लिए मेरे मन म अगाध श्रद्धा है—जिसने हिन्दी साहित्य के क्षेत्र म ना नाम कमाया ही है जो सच्चे मायना में रचनात्मक प्रतिभा का मालिक भी है। रोजमर्रा की जिन्दगी म आन वाली विभिन्न स्थितियो म विभिन्न लोगो की क्या प्रतिक्रियाए होती हैं उनकी क्या मानसिक स्थितियाँ होती हैं अपनी कहानियो म इसी का चित्रण करन म मुझे भी विश्वास है। इसीलिए मेरा खयाल है कि लीक से हटकर लिखन और नयी जमीन तोडन के खयाल स नय और युवा लखको को कमलेश्वर जी जसे अग्रगामी लखक का अनुसरण करना चाहिए ताकि उनकी कहानियाँ गढ़ी हुई होन के बजाय यथार्थवादी बन सकें।

कमलेश्वर जी के बारे म चन्द शब्द लिखते हुए मैं सचमुच गौरवान्वित अनुभव कर रही हू।

परिशिष्ट

कमलेश्वर

क्षय विवरण तथा रचनाएँ सन १९७६ तक

नाम कमलेश्वर
पूरा नाम कमलेश्वरप्रसाद सक्सेना
जन्म ६ जनवरी १९३२
जन्मस्थान २२९ कटरा मैनपुरी (उ० प्र०)
शिक्षा हाई स्कूल गवनमट हाई स्कूल मनपुरी, सन १९४६
इण्टरमीडिएट, के० पी० इंटर कालिज इलाहाबाद, सन १९५०
एम० ए०, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, सन १९५४
(मुख्य पठित विषय भौतिकी रसायनशास्त्र गणित अथशास्त्र, भूगाल और हिन्दी)

गुरु-शुरु की रचनाएँ

पहली कहानी कामरेड सन् ४८ मे प्रकाशित एटा (उ० प्र०) से प्रकाशित एक पत्रिका म।

पहला उपन्यास एक सडक सत्तावन गलियाँ हम (इलाहाबाद) के बृहत् अंक म प्रकाशित सन् १९५६ में। यही उपन्यास हिन्दी प्रचारक (वाराणसी) ने अपनी पाकेटबुक्स म इसी नाम से तत्काल प्रकाशित किया। बाद म यही उपन्यास पजाबी पुस्तक भण्डार (दिल्ली) ने गलत नाम 'बदनाम गली' के नाम स प्रकाशित किया—जो अब तक चला आ रहा है। आशा है, अगले सस्करण स यह अपन सही नाम को अपना पायेगा।

शुरू-शुरू की कहानियाँ (अब अप्राप्य) कानपुर से प्रकाशित 'साप्ताहिक जय भारत' में।

मुख्य पत्रिकाएँ जिनमें शुरू शुरू में लिखते रहे : कल्पना (हैदराबाद), हंस (इलाहाबाद), संगम (इलाहाबाद) ज्ञानोदय (कलकत्ता), वसुधा (जबलपुर), ज्ञानोदय (कलकत्ता) सुप्रभात (कलकत्ता), समाज कल्याण (दिल्ली) आजकल (दिल्ली), लहर (अजमेर), नई कहानियाँ (इलाहाबाद दिल्ली)।

कार्य तथा नौकरियाँ

प्रकाश प्रेस मैनपुरी में प्रूफरीडिंग तथा स्थानीय पत्र में यदा कदा लेखन।

'जनक्रान्ति' (कानपुर इलाहाबाद) में अवैतनिक कार्य और विधिवत लेखन। वैज्ञानिक मार्क्सवाद से परिचय की भूमिका की तैयारी।

बहार मासिक (इलाहाबाद) में पचास रुपये माहवार पर सम्पादन कार्य।

शहनाज आर्ट साइनबोर्ड पेंटर्स (इलाहाबाद) में साइनबोर्ड पेंटिंग अनियमित तनख्वाह पर।

राजा आर्ट (इलाहाबाद) में कागज़ पर डिब्बा आदि की डिज़ाइनें तैयार करने का ड्राइंग का काम, अनियमित तनख्वाह पर।

युवब्राण्ड चाय के गोदाम (इलाहाबाद) की रातपाली की चौकीदारी दूसरे नाम से।

'कहानी' मासिक (इलाहाबाद) में एक सौ रुपये माहवार पर नौकरी।

राजकमल प्रकाशन (इलाहाबाद) में साहित्य सम्पादक के रूप में डेढ़ सौ रुपये माहवार पर।

सेंट जोसेफ्स सेमिनरी (इलाहाबाद) में भारतीय तथा विदेशी कैथलिक फ़ादर्स के लिए हिन्दी अध्यापन एक सौ पच्चीस रुपये माहवार पर।

श्रमजीवी प्रकाशन की शुरुआत। बत्तीस हज़ार का कर्ज़ा चढ़ जाने के कारण ठप्प। अन्य प्रकाशकों की पुस्तकें सप्लाई करके पैसा न पा सकने के कारण।

आल इण्डिया रेडियो (इलाहाबाद) में स्क्रिप्ट राइटर दो सौ पचहत्तर रुपये माहवार पर।

टेलिविज़न (दिल्ली) में स्क्रिप्ट राइटर दो सौ पचहत्तर रुपये माहवार पर।

नई कहानियाँ (दिल्ली) का सम्पादन।

इंगित साप्ताहिक (दिल्ली) का सम्पादन।

सारिका का सम्पादन मार्च सन् ६७ से।

अन्य फुटकर कार्य

आकाशवाणी के लिए लगभग सात सौ स्क्रिप्टस का लेखन।
टेलिविज़न के लिए लगभग ढाई सौ स्क्रिप्टस का लेखन।
टेलिविज़न दिल्ली के लिए समाचार तथा अन्य कार्यक्रमों का प्रस्तुतीकरण।
टेलिविज़न पर साहित्यिक कार्यक्रम 'पत्रिका' की शुरुआत।
आकाशवाणी तथा टेलिविज़न पर रनिंग कामेंट्री का प्रस्तुतीकरण।
भारतीय टेलिविज़न के लिए पहली फिल्म 'पन्द्रह अगस्त' का निर्माण।
भिवण्डी (महाराष्ट्र) में हुए हिन्दू मुस्लिम दंगों पर भारतीय टेलिविज़न के लिए फिल्म का निर्माण।
बांगलादेश मुक्ति-संग्राम में बीस दिन मुक्तिवाहिनी के साथ।
स्वतन्त्र पार्टी के विरोध में राजस्थान में चुनावों के दौरान प्रगतिशील उम्मीदवारों के लिए प्रचार कार्य।
बांगलादेश मुक्ति संग्राम के लिए विदेशों में जाकर प्रचार-कार्य।

नाम उपनाम

कमलेश्वर ने जरूरत पड़ने पर उपनामों से भी लिखा है

विप्र गोस्वामी
संजय
हरिश्चन्द
सौमित्र सिनहा
पयबन्त

रचनाएँ

कहानी-संग्रह

राजा निरबंसिया (कहानी संग्रह), राजकमल प्रकाशन में प्रकाशित सन ५६ में (अब अप्राप्य)।
कस्बे का आदमी (कहानी संग्रह) राजकमल प्रकाशन से प्रकाशित सन् ५८ में (अब अप्राप्य)।
राजा निरबंसिया ('कस्बे का आदमी' सम्मिलित है), अब भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली में प्रकाशित।
खोई हुई दिशाएँ भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली में प्रकाशित।

मास का दरिया, अब शब्दकार दिल्ली से प्रकाशित।
जिन्दा मुर्दे राजपाल एण्ड सस, दिल्ली से प्रकाशित।
बयान, लोकभारती इलाहाबाद से प्रकाशित।
मेरी प्रिय कहानियाँ, राजपाल एण्ड सस, दिल्ली से प्रकाशित।
समातर रचनाकार कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियाँ, पराग प्रकाशन, दिल्ली से प्रकाशित।
आधी दुनिया समातर सहयोग मद्रास से प्रकाशित।

उपन्यास

एक सडक सत्तावन गलिया 'बदनाम गली' क गलत नाम से पजाबी पुस्तक भण्डार, दिल्ली द्वारा प्रकाशित।
डाक बगला राजपाल एण्ड सस दिल्ली।
तीसरा आदमी राजपाल एण्ड सस, दिल्ली।
लौटे हुए मुसाफिर, राजपाल एण्ड सस दिल्ली।
समुद्र म खोया हुआ आदमी राजपाल एण्ड सस, दिल्ली।
काली आँधी राजपाल एण्ड सस, दिल्ली।
आगामी अतीत, शब्दकार दिल्ली।

आलोचना

नई कहानी की भूमिका शब्दकार दिल्ली।
नई कहानी के बाद शब्दकार दिल्ली से प्रकाश्य।
मेरा पन्ना समातर सोच, शब्दकार दिल्ली से प्रकाश्य।

यात्रा विवरण

खण्डित यात्राए शब्दकार दिल्ली।

नाटक नाटय रूपातर

अधूरी आवाज आत्माराम एण्ड सस, दिल्ली।
रेगिस्तान (अभी अप्रकाशित)।
चारुलता (रवीन्द्रनाथ ठाकुर क नष्ट नीड का रूपातर), शब्दकार, दिल्ला।

खड़िया का घेरा (मूल लेखक ब्रेख्त) अनुवाद, अक्षर प्रकाशन दिल्ली।
गोदान गबन, निर्मला के नाट्य रूपांतर, अप्रकाशित और अप्राप्य।
बाल-नाटक चार संग्रह कुछ अप्राप्य कुछ प्राप्य आत्माराम एण्ड संस दिल्ली तथा शकुन प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित।

सम्पादित

नई धारा समकालीन कहानी विशेषांक।
संकेत वृहद् साहित्यिक संकलन नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद।
समांतर १ प्राप्ति स्थान लोक भारती, इलाहाबाद।
मेरा हमदम मेरा दोस्त नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
"दिशा के दिन राजपाल एण्ड संस से प्रकाश्य।
आद्य कथाकार राजपाल एण्ड संस से प्रकाश्य।
प्रगतिशील कहानियां तीन खण्डों में शब्दकार दिल्ली से प्रकाश्य।

फिल्म

बदनाम बस्ती एक सड़क सत्तावन गलियां' उपन्यास पर आधारित, निर्देशक प्रेमकपूर।
फिर भी तलाश' कहानी पर आधारित कहानी, पटकथा, संवाद लेखन निर्देशक शिवेंद्र सिनहा।
अमानुष संवाद लेखन निर्देशक शक्ति सामंत।
आंधी काली आंधी उपन्यास पर आधारित निर्देशक गुलजार।
मौसम 'आगामी अतीत उपन्यास पर आधारित निर्देशक गुलजार।
यहां के दो हाथ पटकथा और संवाद लेखन, निर्देशक बी० आर० चोपड़ा।
पति-पत्नी और वह पटकथा और संवाद लेखन निर्देशक बी० आर० चोपड़ा।
आनंद आश्रम संवाद लेखन, निर्देशक शक्ति सामंत।
तुम्हारी कसम पटकथा और संवाद लेखन, निर्देशक रवि चोपड़ा।
वही बात कहानी पटकथा और संवाद लेखन, निर्देशक विनय शुक्ल।
मृगतृष्णा संवाद लेखन, निर्देशक के० के० शुक्ला।
राम-बलराम पटकथा और संवाद लेखन निर्देशक विजय आनंद।

मांस का दरिया, अब शब्दकार, दिल्ली से प्रकाशित।
जिन्दा मुर्दे राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली से प्रकाशित।
बयान, लोकभारती, इलाहाबाद से प्रकाशित।
मेरी प्रिय कहानियाँ, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली से प्रकाशित।
समान्तर रचनाकार कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियाँ, पराग प्रकाशन, दिल्ली से प्रकाशित।
आधी दुनिया, समान्तर सहयोग मद्रास से प्रकाशित।

उपन्यास

एक सड़क सत्तावन गलियाँ 'बदनाम गली' के गलत नाम से पंजाबी पुस्तक भण्डार, दिल्ली द्वारा प्रकाशित।
डाक बंगला राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली।
तीसरा आदमी राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली।
लौटे हुए मुसाफिर, राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली।
समुद्र में खोया हुआ आदमी राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली।
काली आँधी राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली।
आगामी अतीत शब्दकार दिल्ली।

आलोचना

नई कहानी की भूमिका शब्दकार, दिल्ली।
नई कहानी के बाद शब्दकार दिल्ली से प्रकाश्य।
मेरा पन्ना समान्तर सोच शब्दकार दिल्ली से प्रकाश्य।

यात्रा-विवरण

खण्डित यात्राएं शब्दकार, दिल्ली।

नाटक नाट्य रूपान्तर

अधूरी आवाज आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली।
रेगिस्तान (अभी अप्रकाशित)।
चारुलता (रवीन्द्रनाथ ठाकुर के 'नष्ट नीड' का रूपान्तर), शब्दकार, दिल्ली।

खडिया का घेरा, (मूल लेखक ब्रेख्त) अनुवाद, अक्षर प्रकाशन, दिल्ली।
गोदान, गबन निर्मला के नाट्य रूपांतर अप्रकाशित और अप्राप्य।
बाल-नाटक चार संग्रह कुछ अप्राप्य कुछ प्राप्य आत्माराम एण्ड संस दिल्ली तथा शकुन प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित।

सम्पादित

नई धारा समकालीन कहानी विशेषांक।
संकेत बृहद साहित्यिक संकलन नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद।
समांतर १, प्राप्ति स्थान लोक भारती, इलाहाबाद।
मेरा हमदम मेरा दोस्त नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
गर्दिश के दिन राजपाल एण्ड संस से प्रकाश्य।
आद्य कथाकार राजपाल एण्ड संस से प्रकाश्य।
प्रगतिशील कहानियाँ तीन खण्डों में शब्दकार दिल्ली से प्रकाश्य।

फिल्म

बदनाम बस्ती एक सड़क सत्तावन गलियां उपन्यास पर आधारित, निर्देशक प्रेमकपूर।
फिर भी तलाश' कहानी पर आधारित कहानी, पटकथा, संवाद लेखन निर्देशक शिवेंद्र सिनहा।
अमानुष संवाद लेखन निर्देशक शक्ति सामंत।
आँधी काली आँधी उपन्यास पर आधारित निर्देशक गुलजार।
मौसम 'आगामी अतीत उपन्यास पर आधारित निर्देशक गुलजार।
पहा के दो हाथ पटकथा और संवाद लेखन, निर्देशक बी० आर० चोपड़ा।
पति-पत्नी और वह पटकथा और संवाद लेखन निर्देशक बी० आर० चोपड़ा।
आनंद आश्रम संवाद लेखन निर्देशक शक्ति सामंत।
तुम्हारी कसम पटकथा और संवाद लेखन निर्देशक रवि चोपड़ा।
यही बात कहानी, पटकथा और संवाद लेखन निर्देशक विनय शुक्ल।
मृगतृष्णा संवाद लेखन, निर्देशक म० के० शुक्ला।
राम-बलराम पटकथा और संवाद लेखन, निर्देशक विजय आनंद।